भारतीय फिल्म वार्षिकी '92

1

भारतीय फिल्म वार्षिकी '92

वर्ष : एक * अंक : एक

प्रकाशन : मध्यप्रदेश फिल्म विकास निगम मर्या.
ई-1/90 अरेरा कॉलोनी, भोपाल - 462 016 फोन : 566908/563810

हमारे से सम्बद्ध

बम्बई:

- ☐ सुधीर नांदगाँवकर
- ☐ जगदीश कुमार निर्मल
- ☐ बद्रीप्रसाद जोशी

पुणे:

- ☐ शशिकांत किणीकर

दिल्ली:

- ☐ ब्रजेश्वर मदान
- ☐ विनोद भारद्वाज
- ☐ बच्चन श्रीवास्तव

जयपुर:

- ☐ महेश जोशी
- ☐ श्याम माथुर

जबलपुर:

- ☐ अजय वर्मा

बंगलौर :

- ☐ बाबू सुब्रमण्यम

राजकोट (गुजरात) :

- ☐ डॉ. यासीन दलाल

लखनऊ:

- ☐ गिरधारीलाल पाहवा

त्रिवेन्द्रम :

- ☐ विजयकृष्णन्

भारतीय फिल्म वार्षिकी 1992 के इस अंक में प्रकाशित लेखकों, समीक्षकों और फिल्मकारों के विचार अपने निजी हैं। उनसे प्रकाशक अथवा सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं हैं।

चित्र तथा सामग्री सौजन्य और आभार

* राष्ट्रीय फिल्म संग्रहालय (पुणे) * भारतीय फिल्म समारोह निदेशालय (दिल्ली) * फिल्म इण्डिया * सिनेमा विज़न * फिल्मफेअर * माधुरी * सिनेमा इण्डिया इंटरनेशनल * सिनेमा इन इंडिया * भारतीय सिनेमा का इतिहास (मनमोहन चड्ढा) * धर्मयुग * स्क्रीन * सेवंटी फाइव इयर्स ऑव इंडियन सिनेमा (टी.एम. रामचन्द्रन) * नई दुनिया (इन्दौर) * शशिकांत किणीकर (पुणे) * बद्रीप्रसाद जोशी (बम्बई) * फिल्म अल्मेनक (बी.झा. कलकत्ता) * इम्पा * सीसीसीए * राज्यों के फिल्म विकास निगम और फिल्म संस्थाएं * प्रीतम मेंघाणी

कम्पोज़िंग : भाषा ग्राफ़िक्स, भोपाल फोन: 564049

मुद्रक : भंडारी ऑफसेट, भोपाल फोन: 563769

कीमत : 40 रुपये • 100 रुपये (सजिल्द)

हमारी ओर से ....

कहने को भारतीय सिनेमा भी विश्व सिनेमा के साथ शीघ्र ही अपनी उम्र के 100 वर्ष पूरे करने जा रहा है लेकिन जहाँ तक सिनेमा सम्बन्धी साहित्य तैयार करने और सिनेमा क्षेत्र की गतिविधियों के दस्तावेजीकरण की बात है, यह चाहे खुद के साथ ही सही यह मानना होगा कि विश्व सिनेमा से वर्षों पीछे हैं। हिन्दी और कहें कि सभी भारतीय भाषाओं में जहाँ सिनेमा के क्षेत्र में अपसंस्कृति के प्रचार में अपनी सार्थकता खोजनेवाले पत्र बहुतायत से उपलब्ध हैं वहाँ सिनेमा के प्रामाणिक आकलन का कोई नियमित और स्तरीय पत्र नहीं ही हैं। हाँ कभी-कभार सिनेमा गतिविधियों के दस्तावेजीकरण के इक्का-दुक्का प्रयत्न भारतीय भाषाओं में जरूर हुए हैं लेकिन वे भी चिंगारी की चमक तक ही सीमित रहे। समूचे भारतीय सिनेमा के आकलन और दस्तावेजीकरण का कोई प्रयत्न कभी नहीं हुआ है और इसीलिए इक्का-दुक्का प्रयत्नों से सिनेमा आंदोलन को कोई सार्थक मदद भी नहीं मिली।

मध्यप्रदेश फिल्म विकास निगम ने भारतीय सिनेमा के इस बड़े और निरन्तर खटकनेवाले अभाव को दूर करने का दायित्व विनम्रता के साथ ग्रहण किया है। 1986 के आखिर में हमने सिनेमा के शास्त्र पर एकाग्र विचार-पत्र **पटकथा** की शुरूआत की थी और **पटकथा** के प्रयत्न को बहुआयामी करते हुए सिनेमा सम्बन्धी पुस्तकों के प्रकाशन का सिलसिला भी आरंभ किया गया है लेकिन सिनेमा की उपलब्धियों, प्रवृत्तियों, गतिविधियों और रूझानों के प्रामाणिक रेखांकन/आकलन का अनिवार्य और अहम कार्य शुरू ही नहीं हो पा रहा था। देश-दुनिया के सामने अव्यवस्थित भारतीय सिनेमा की एक व्यवस्थित तस्वीर रखी जा सके जिससे जहाँ सिनेमा के बारे में सूचनाएँ दी जा सकें वहीं भारतीय सिनेमा को खुद भी व्यवस्थित करने में सक्रिय मदद मिल सके ऐसा कोई मंच अब तक नहीं है। अतः निगम ने **भारतीय फिल्म वार्षिकी** के रूप में एक छोटी-सी कोशिश इस दिशा में भी करना चाही है। हम जानते हैं कि हमारी यह कोशिश अभी मुक्कमल नहीं है और उसमें अभी भी परिष्कार और पूर्णता की जरूरत है। हमारा निरन्तर प्रयत्न होगा कि आनेवाले दिनों में **भारतीय फिल्म वार्षिकी** को हर कठोर मापदंड पर खरा उतरने के लिए तैयार कर सकें। फिर भी हमें विश्वास है कि भारतीय सिनेमा के एक बड़े अभावपूर्ण क्षेत्र को पूरा करने की दिशा में यह प्रयत्न उल्लेखनीय जरुर साबित होगा।

भारतीय फिल्म वार्षिकी के पहले अंक में हमने हिन्दी, मराठी, गुजराती, उड़िया, तेलुगु, मलयालम, कन्नड़ भाषा के सिनेमा दृश्य, शासकीय और अशासकीय संस्थाओं/निगमों की गतिविधियों, देश में होनेवाले अंतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय फिल्म महोत्सवों, बाल चलचित्र महोत्सव, मध्यप्रदेश फिल्मोत्सव श्रृंखला, राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार तथा फिल्म - फेअर, दादा साहब फालके, लता मंगेशकर और प्रादेशिक पुरस्कारों के साथ मध्यप्रदेश फिल्म विकास निगम के राष्ट्रीय पुरस्कारों की जानकारी, भारतीय सिनेमा का इतिहास तथा पितृ-पुरूष पर एक पुनरवलोकी दृष्टि, प्रमुख फिल्म निर्माण केन्द्रों और देश में फिल्म सोसायटी आंदोलन की दशा-दिशा सम्बन्धी सूचनाएँ, वर्ष 1991 के प्रमुख घटनाक्रम, फिल्मोग्राफी तथा फिल्म संस्कृति से सम्बन्धित अन्य सूचनाएँ विन्यस्त की हैं। इसी के साथ वर्ष 1991 में सिनेमा के क्षेत्र में उल्लेखनीय उपलब्धि अर्जित करने वाले फिल्मकार श्री सत्यजीत राय पर लेख तथा मणि कौल, गोविन्द निहलानी, मनमोहन देसाई और अमिताभ बच्चन के साथ विशेष बातचीत भी एकत्र करने का प्रयत्न किया है।

हमारा यह प्रयत्न भी होगा की **भारतीय फिल्म वार्षिकी** का अगले वर्ष से हिन्दी के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा में भी संस्करण प्रकाशित किया जाये ताकि यह और भी व्यापक पाठक समुदाय को सम्बोधित हो सके।

हम आभारी हैं कि अल्प सूचना पर लेखक मित्रों ने तत्परतापूर्वक मूल्यवान सामग्री हमें भेजी हैं। पहले अंक के लोकार्पण के साथ हम विनम्रतापूर्वक यह विश्वास भी दिलाना चाहेंगे कि **भारतीय फिल्म वार्षिकी** के प्रकाशन को महज संयोग न समझा जाये हम **भारतीय फिल्म वार्षिकी** को निरंतर्य और विस्तार देना चाहेंगे। हमारा विश्वास है कि इसके बहाने मध्यप्रदेश भारतीय सिनेमा की सृजन सक्रियता और गतिविधियों का केन्द्रीय प्रदेश भी बन सकेगा।

24 फरवरी 1992

ओ.पी. दुबे
प्रबंध संचालक

भारतीय फिल्म वार्षिकी '92

□ अनुक्रम

खण्ड एक : फिल्म सर्वेक्षण

खण्ड दो : संस्था परिचय

खण्ड तीन : फिल्म समारोह

खण्ड चार : आवरण कथा

खण्ड पाँच : फिल्म पुरस्कार

खण्ड छ : फिल्म इतिहास

खण्ड सात : शिखर पुरूष

खण्ड आठ : फिल्म स्टुडियो

खण्ड नौ : फिल्म सोसायटी

खण्ड दस : फिल्म कल्चर

खण्ड ग्यारह : विशेष साक्षात्कार

खण्ड बारह : फिल्मोग्राफी '91

रीता नहीं सिर्फ बीता 1991

☐ विनोद तिवारी

एक और साल यह आभास देकर निकल गया कि फिल्म जगत् में सब कुशल है। वैसे भी, जिसे आप रोज देखते हों उसके बारे में यही अनुमान होता है। कौन किस तरह तिल-तिल कर रीत रहा है, पता नहीं चलता। न ही यह अनुमान हो पाता कि अंकुर कब पौधों में और पौधे कब विकसित होकर गुल्मों में परिवर्तित हो गये। लगता है कि सब सामान्य चल रहा है। यह आभास सिर्फ सतह देती है। अंदर-अंदर समय अपने गुल खिलाता रहता है।

अभी-अभी बीते साल ने साल भर बड़ी मेहनत की। अब जाकर वह केंचुल उतरने लगी है जिससे छुटकारा पाने की कोशिश फिल्म-कला को अब से बहुत पहले कर लेनी चाहिए थी। यह केंचुल है उन उपलब्धियों से चिपके रहने की जो अब रीत चली हैं। जिनकी उपयोगिता ख़त्म हो चुकी है। उन्हें सहेजे रखने में न तो कला आगे बढ़ती और न व्यापार। इनके दायरे में अभिनय, निर्देशन, संगीत सभी कुछ का समावेश है।

फिल्मजगत् में ऐसे निर्माताओं की संख्या पिछले कुछ सालों से बढ़ ही रही है और पिछले वर्ष तो और भी बढ़ी है जिनका व्यवसाय फिल्म बनाना नहीं है। इनमें से बहुत से ऐसे भी हैं जिनके बारे में यह पता लगाना मुश्किल है कि उनका असली धन्धा क्या है? फिल्म उनके लिए शगल है, आवरण है। दिल बहलाव है-कोई कला नहीं है। इसलिए उनकी किसी कोशिश के पीछे न तो कोई सोच है और न ही जी-जान लगा कर सृजन की उत्कंठा। उनके लिए फिल्म शुद्ध जुआ है, जिनमें हीरो, हीरोइन, लेखक, डायरेक्टर, संगीतकार सभी पाँसे हैं। सबको मुट्ठी में हिलाकर समय की बिसात पर छोड़ दो। सीधे पड़ गये तो पैसा बटोर लो, वरना अपने धंधे में वापस। ऐसे लोग जब फिल्म बनाने उतरते हैं, तो उन बड़े नामों के पीछे दौड़ते हैं, जिनके बारे में वे बरसों से सुनते-पढ़ते आये हैं। कहानी और मनोरंजन के नाम पर उनकी अपनी परिकल्पनाएँ होती हैं। इन परिकल्पनाओं को जो हवा दे सके, वही उनके लिए योग्य निर्देशक है। यह *'योग्य'* निर्देशक उनके मनचाहे सितारों को इस कहानी के साथ जोड़े, उसमें अपनी निर्देशन कला मिला जो कुछ परोस दे, वही सिनेमा कला है।

पिछले साल को जो मेहनत करनी पड़ी है वह इन्हीं *'कला'* फिल्मों की कारस्तानियाँ भुगतने में। अपने बच्चों की शादियाँ करके, उनके बच्चों को गोदी खिलाने वाले हीरो फिल्म के पर्दे पर कुँआरे बने शादी के नाम से शरमाते रहे, बेटियों को ससुराल भेजने की चिंता करती हीरोइनें पर्दे पर पहली मुहब्बत के अहसास को नाच गानों में उतारती रहीं और फिल्म-कला बिसूरती रही। इस क्रम को पिछले साल जो ज़बरदस्त धक्का लगा है उसका सबसे ज्यादा असर दिखाई देता है। काफी समय से चले आ रहे धर्मेन्द्र, डिंपल कापड़िया, जीतेन्द्र, जयाप्रदा जैसे कलाकारों पर। बॉक्स ऑफिस पर इनकी हर फिल्म का दम तोड़ देना इस बात का प्रमाण है कि अधेड़ अवस्था को चुलबुली जवानी में बदल दर्शक को अब ज्यादा दिन भरमाया नहीं जा सकता।

धर्मेन्द्र जहाँ एक ओर 'माँ, मैं अभी शादी नहीं करूँगा —, मार्का नवयुवा झिझक को अभिव्यक्ति देते रहे हैं वहीं फिलट का पंप हाथ में लिये किसी गंदी दुकान में मक्खियाँ मारने वाले की तरह मशीनगन थामे, मनुष्यों को भूनने वाला वह देशभक्त *'नौजवान'* भी बनते रहे हैं, जिसका कोई अस्तित्व कहीं संभव नहीं। यह तथाकथित *'ही मेन इमेज'* उन्हें बड़ी प्रिय रही है। *हुकूमत* फिल्म में उन्होंने यही किया था और फिल्म चली खूब थी। जरूरी नहीं कि उसके चलने की वजह हिंसा का यह अतिरेक ही हो लेकिन धर्मेन्द्र पर से उसका *'हैंग ओवर* उतरा नहीं। अकेले धर्मेन्द्र को ही इसका दोष क्यों दिया जाये? उन्हीं की तर्ज़ पर मारामारी करते सभी हीरो, मसलन *रजनीकांत, जैकी श्रॉफ* तथा इन सभी नायकों को हिंसक भूमिकाओं की आग में झोंक देने वाले सभी निर्देशक भी इसी नशे में रहे कि *रामायण* और *महाभारत* पसंद करने वाला दर्शक हिंसाचार का दीवाना है। इन सीरियलों का दूसरा हर पक्ष अनदेखा कर, केवल हिंसा पर अटकने का नतीज़ा सिवा इसके और क्या होता कि इन सबके कैरियर पिछले साल ऐसी जगह आकर अटक गये जहाँ से उन्हें उबारना किसी बड़ी हिट के लिए भी सहज संभव नहीं होगा।

पश्चिमी आभिजात्य

पिछले वर्ष का विश्लेषण सुप्रतिष्ठित समझे जाने वाले कई कलाकारों की असफलता का वह तथ्य स्पष्ट कर गया जो फिल्म-जगत् की सतह पर सहज दिखाई नहीं देता। जैसे आम मान्यता यही है कि धर्मेन्द्र या जीतेन्द्र अब भी स्टार हैं और डिंपल कापड़िया अतीव सुंदरी, आधुनिका, आकर्षक, अभिनय प्रतिभा संपन्न अभिनेत्री। पिछले वर्ष ने दर्शकों की रुचि की कसौटी पर इस धारणा की चिंदियाँ उड़ा दी हैं। डिंपल, धर्मेन्द्र के साथ ही नहीं, लगभग हर हीरो के साथ फ्लॉप हुई हैं। *अजूबा, मस्त कलंदर, रणभूमि, नरसिम्हा* यहाँ यह सवाल उठाया जा सकता है कि अगर अब वे लोकप्रिय नहीं रहीं तो उनके बारे में ऐसी धारणा बनी ही कैसे? इसका बहुत सीधी-सादी और साफ वजह हैं अंगरेजी की फिल्म पत्रिकाएँ। पश्चिमीपन का आभिजात्य दिखावा उन्हें बहुत भाता है। ऐसी हर हीरोइन और ऐसा हर हीरो इन्हें सहज ही प्रभावित कर सकता है, जिसकी प्रेरणा के स्रोत विदेशों में हो। डिंपल जैसे कुछ अन्य कलाकार भी हैं, जो लोकप्रियता की वजह से नहीं बल्कि पत्रिकाओं की इसी मानसिकता के बल पर प्रचार पाते रहते हैं जैसे नीलम। पिछले वर्ष इन सबकी कलई भी काफ़ी खुली है।

धर्मेन्द्र से बहुत दूर नहीं हैं जीतेंद्र तथा विनोद खन्ना। उम्र में भी और इमेज में भी। उम्र से मेरा मतलब, पहले पहले प्यार में पागल हो जाने वाले प्रेमी का साथ अब उनकी अनुभवी उम्र नहीं दे पाती। नायकों के लिए इस स्थिति को स्वीकार कर पाना सबसे मुश्किल काम है। पहले तो वे खुद ही इस बात को सही नहीं मानते कि वे लड़के नहीं रहें। रही-बची कसर वे तथाकथित निर्माता पूरी कर देते हैं जिनका जिक्र मैंने पहले किया है। उन्हें तो किसी भी तरह बड़े नाम जोड़-जाड़ कर फिल्म नहीं, फिल्म का प्रपोजल बनाना होता है जिसे
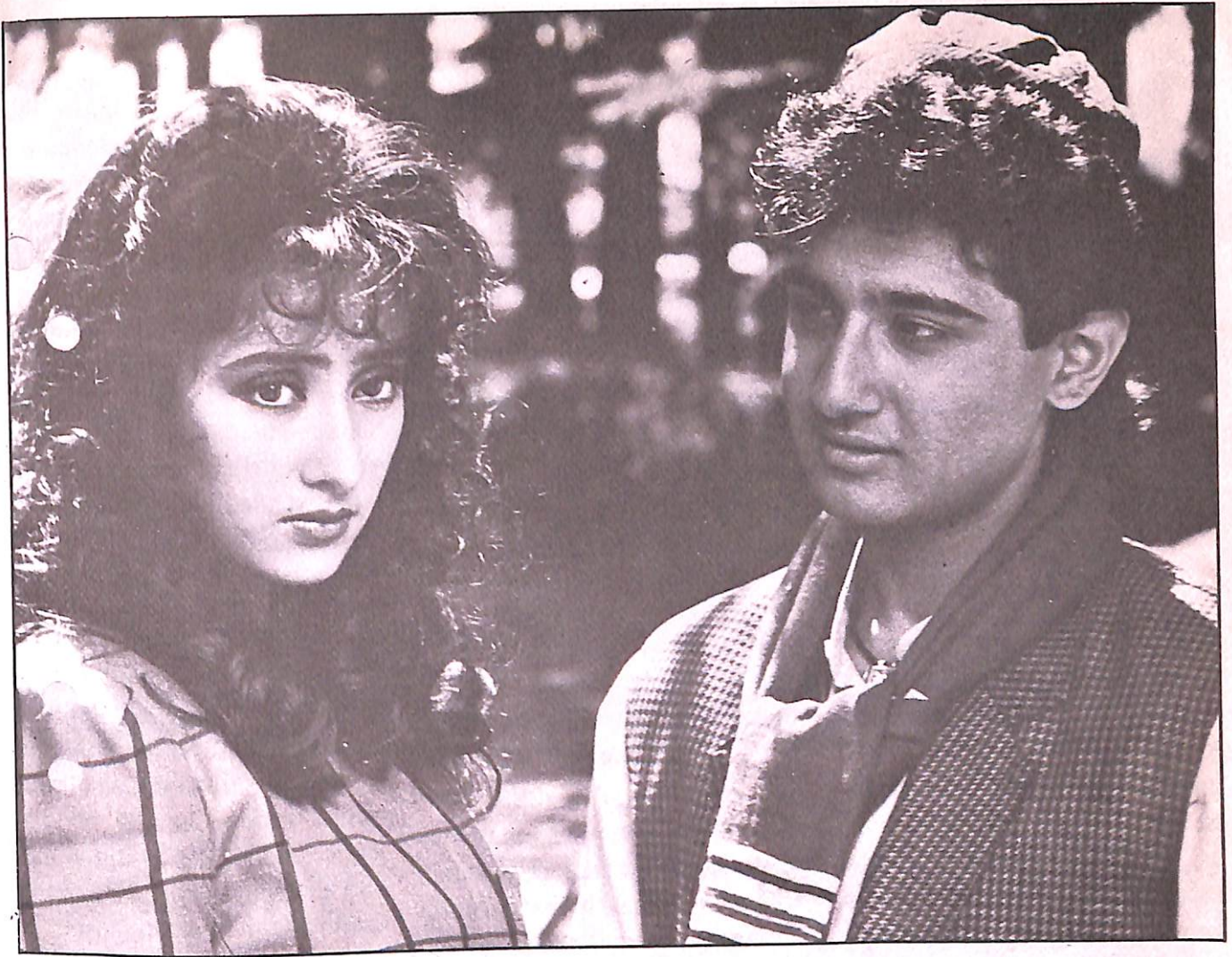
1991 की सफल नई जोड़ी : मनीषा कोईराला और विवेक मुश्रान

वितरकों के हाथ बेचा जा सके। फिल्म कैसी बनेगी, कब बनेगी इसकी चिंता उन्हें नहीं होती।

विनोद खन्ना, जीतेंद्र या रजनीकांत से थोड़े अलग इसलिए हैं कि ठेठ व्यावसायिक जोड़-तोड़ के बीच वे एक आध फिल्म ऐसी भी ले लेते हैं जहाँ पैसे से ज्यादा प्रसिद्धि प्राप्त करने का मौक़ा दिखाई देता हो। तमिल फिल्म *नायकन* में कमल हासन ने जो अपार लोकप्रियता बटोरी थी उसे हिंदी *दयावान* में भुना लेने की कोशिश उन्होंने उन्हीं लाभों के मद्देनज़र की थी जिसने उन्हें *अचानक* और *इम्तहान* जैसी फिल्में करने के लिए प्रेरित किया था। हालाँकि दोनों ही फिल्में अपने समय में सुपरहिट नहीं थीं लेकिन विनोद को पर्याप्त प्रशंसा मिली थी। *नायकन* की हिन्दी प्रस्तुति *दयावान* मुँह के बल गिरी। फिर भी विनोद ने गुलज़ार की प्रयोग प्रधान फिल्म *लेकिन* में काम करना स्वीकार किया। यह फिल्म भी पिछले साल की असफल फिल्मों में से ही है लेकिन इसने पुरस्कार जीत कर तो तारीफ़ें बटोरी उनका कुछ हक़दार विनोद खन्ना अपने आप को भी साबित कर ही सकते हैं। वरना न वे *दयावान* में माधुरी के साथ चुंबन दृश्य का मोह छोड़ सके न अन्य युवा हीरोइनों के साथ हीरो बनना अस्वीकार कर पाते। यदि वे थोड़े मेच्योर रोल की ओर मुड़ जाएँ और स्वयं को भी अभी नौजवान समझना भूल जाएँ तो *चाँदनी* सी व्यापारिक और *लेकिन* सी कलात्मक सफलता उनका साथ देती रह सकती है।

पिछले साल के विश्लेषण को आगे बढ़ाने के पहले मैं एक बात स्पष्ट करना चाहूँगा किसी दूसरे क्षेत्र के मुक़ाबले अभिनय पक्ष का जिक्र इसलिए ज्यादा होता है कि वह सितारों के साथ जुड़ा है। हीरो-हीरोइन के मुताबिक ही पूरी फिल्म का दाम आँका जाता है। लेकिन विश्लेषण में चूँकि हर किसी का नाम नहीं गिनाया जा सकता इसलिए धर्मेन्द्र, डिंपल, जीतेन्द्र, रजनीकांत अथवा विनोद खन्ना जैसे नाम मात्र व्यक्तिगत नाम नहीं रह जाते, प्रवृत्तियों के नाम हो जाते हैं। बढ़ती उम्र के बावजूद युवा भूमिकाओं में बने रहने का आकर्षण मानवीय कमज़ोरी है। इसे किसी के दुर्गुण या दुराग्रह के रूप में नहीं लिखा जा रहा। यह प्रवृत्ति जीतेन्द्र-ऋषि कपूर में भी है और रेखा-जयाप्रदा में भी। बीते कल के कलाकारों में भी थी। आने वाले कल में भी रहेगी। साल की फ्लॉप फिल्मों की सूची यह स्पष्ट कर देती है कि कौन-कौन इसका शिकार है और शिकार हुआ है।

बूढ़ी घोड़ी, लाल लगाम

बूढ़ी घोड़ी लाल लगाम से उकताये दर्शक ने अगर

सुपर सितारा धर्मेन्द्र फ्लॉप : श्री देवी टॉप

कलाकारों की फिल्में अस्वीकार कर दीं, तो साथ ही अपनी बदली हुई रुचि का परिचय भी अनायास ही दे दिया। अगर उसे अधेड़ उम्र के कलाकारों को पहले-पहले प्यार के प्रतिनिधियों के रूप में देखना पसंद नहीं था, तो इसका मतलब, बिना कुछ कहे भी कहीं दर्शक यह कह रहा था कि यह सब उन्हीं को करने दो जिन्हें यह शोभा देता है। दर्शक इस बात से अपरिचित नहीं था कि जवाँ उम्र के पहले प्यार की तीव्रता क्या होती है और उसके सजीव चित्रण में कितनी कशिश होती है। आखिर *बॉबी* और *लव स्टोरी* जैसी प्रेम कहानियाँ इसी दर्शक वर्ग के बलबूते हिट हुई थीं और इसी ने *मैंने प्यार किया* को ऐतिहासिक लोकप्रियता दिलाई थी। इन फिल्मों की कहानी पुरानी थी, सभी जानते हैं। लेकिन कलाकारों में उम्र की जो ताज़गी थी, दुनिया की तकलीफों से अनजान, जो अबोध भाव उनके चेहरों से टपकता था उसे किसी बनावट की जरूरत कहाँ थी? यही ताजगी दर्शकों को भा गयी और फिर प्रेम कहानियों का जो दौर चला उसने सारा परिदृश्य ही बदल कर रख दिया। पिछले साल लगभग 188 फिल्में शुरू हुई जिनमें से सिर्फ 48 में वे कलाकार लिये गये जो सितारे माने जाते हैं। बाकी सारी फिल्में नवोदित नायक-नायिकाओं की झोली में आ गिरीं।

जिस दर्शक वर्ग ने धर्मेन्द्र, रजनीकांत, विनोद खन्ना, जैकी श्रॉफ जैसे मर्दाने नायकों को अपार प्यार दिया, वही पिछले वर्ष उनसे विमुख क्यों होता चला गया? क्यों इनकी फिल्मों को उन्हीं ने अस्वीकार कर दिया जो इनके लिए ब्लेक में टिकट खरीदा करते थे? यह परिवर्तन कलाकारों के प्रति किसी ग़लत धारणा की वजह से नहीं बल्कि सामाजिक परिप्रेक्ष्य की वजह से भी आया है। इस पृष्ठभूमि को समझ लिया जाय तो पिछले वर्ष के परिवर्तनों के कई आयाम स्वयं स्पष्ट हो जायेंगे। फिल्में चलती हैं मनोरंजन चाहने वालों की वजह से। मनोरंजन का सबसे ज्यादा अभाव है समाज के निचले तबके में, जो अपनी जरूरतों के अभाव से ही पिसा रहता है। कुछ समय पहले तक मारामारी उसके लिए मनोरंजन भी था क्योंकि वह अन्याय के प्रतिकार के लिए जो कुछ खुद नहीं कर पाता था उसे फिल्म के हीरो को करते देखकर आत्म-संतुष्टि महसूस करता था। लेकिन पिछले डेढ़-दो साल से देश में हिंसा का जो ताँडव चल रहा है, जिस तरह खून खराबा हो रहा है, जिस तरह निर्दोष लोग जहाँ तहाँ गोलियों का शिकार बन रहे हैं और जिस तरह आतंक का साया हर शहर में हर किसी पर मँडराता जा रहा है, उसे महसूस करने के बाद हिंसा या मारामारी किसी के लिए मनोरंजन नहीं रह गया। दहशत तो मनोरंजन नहीं हो सकती न।

इसी वजह से वे सब नायक जो कई बरस से हिंसाचार के अभिनय के बल पर चल रहे थे, वे सब निर्देशक जिनकी कहानी हिंसा के अतिरेक से ऊपर नहीं उठती थी दर्शक की निगाह में बेमानी हो गये। खून का बदला खून कुछ बलशालियों का सिद्धांत हो सकता था, दो जून की रोटी की फिराक में दुबले हो रहे लोगों का नहीं। इन सबको शांति की तलाश थी। मारामारी के साथ चलने वाला, रणभूमि के लिए उपयुक्त संगीत इसीलिए पिछड़ा और उसकी जगह सकून दिलाने वाले संगीत ने ली। कहानियों में प्रेम, हल्की-फुल्की छेड़छाड़ और मानवीय मूल्यों का पुट *(दिल है कि मानता नहीं)* लौट आया। पिछला सारा साल इस बात का गवाह है कि समाज में जितनी ही हिंसा बढ़ी है उतना ही झुकाव भजनों, आरतियों, प्रार्थनाओं की ओर बढ़ा है। साहित्य की तरह फिल्में भी समाज का दर्पण ही हैं। वे अपने प्रेरणा स्रोत ढूँढ़ने कहीं बाहर नहीं जातीं, जा ही नहीं सकतीं।

नवोदितों की बहार

नवोदित कलाकारों की संख्या पिछले साल इतनी ज्यादा रही कि आज तक भी इनमें से किन्हीं दो-चार को भविष्य के स्टार या सुपरस्टार निरूपित कर पाना मुश्किल है। दरअसल एक या दो फिल्में हिट हो जाना किसी कलाकार की प्रतिभा का मानदंड नहीं माना जा सकता। *लव स्टोरी* और कुमार गौरव तथा विजयिता पंडित का उदाहरण सबके सामने है। कलाकार को मेच्योर होने के लिए भी दो-तीन फिल्मों का अनुभव चाहिए। पिछले एक साल में जितने हीरो-हीरोइन रुपहले पर्दे पर अवतरित हुए उतने इसके पहले के किसी एक साल में एक साथ नहीं आये। इसके साथ ही इसी साल में ढेर सारे अनुबंधित भी किये गये। उनके साथ जो फिल्में शुरू की गयीं, उनके परिणाम इस साल सामने आयेंगे।

इन सारे नवोदितों में से कुछ ऐसे हैं, जो उन परिवारों से आये हैं जो किसी न किसी रूप में फिल्म निर्माण से जुड़े हुए हैं। पहले जहाँ फिल्मी सितारों के बेटे ही अभिनय जगत में आये थे पिछले वर्ष अभिनेत्रियों की बेटियाँ—काजोल (तनूजा), प्रतिभा (माला सिन्हा) करिश्मा (रणधीर-बबीता) ने तो फिल्मों में क़दम रखा ही फाइट मास्टर वीरू देवगन के पुत्र अजय देवगन, डांस डायरेक्टर कमल और सुजाता के पुत्र इरफान, संगीतज्ञ मित्रा के पुत्र संजय मित्रा, हेमामालिनी की नज़दीकी रिश्तेदार मधु, प्रोड्यूसर राजकुमार कोहली के पुत्र अरमान कोहली, अभिनेत्री शर्मिला टैगोर के पुत्र सैफ, जॉय मुखर्जी के बेटे
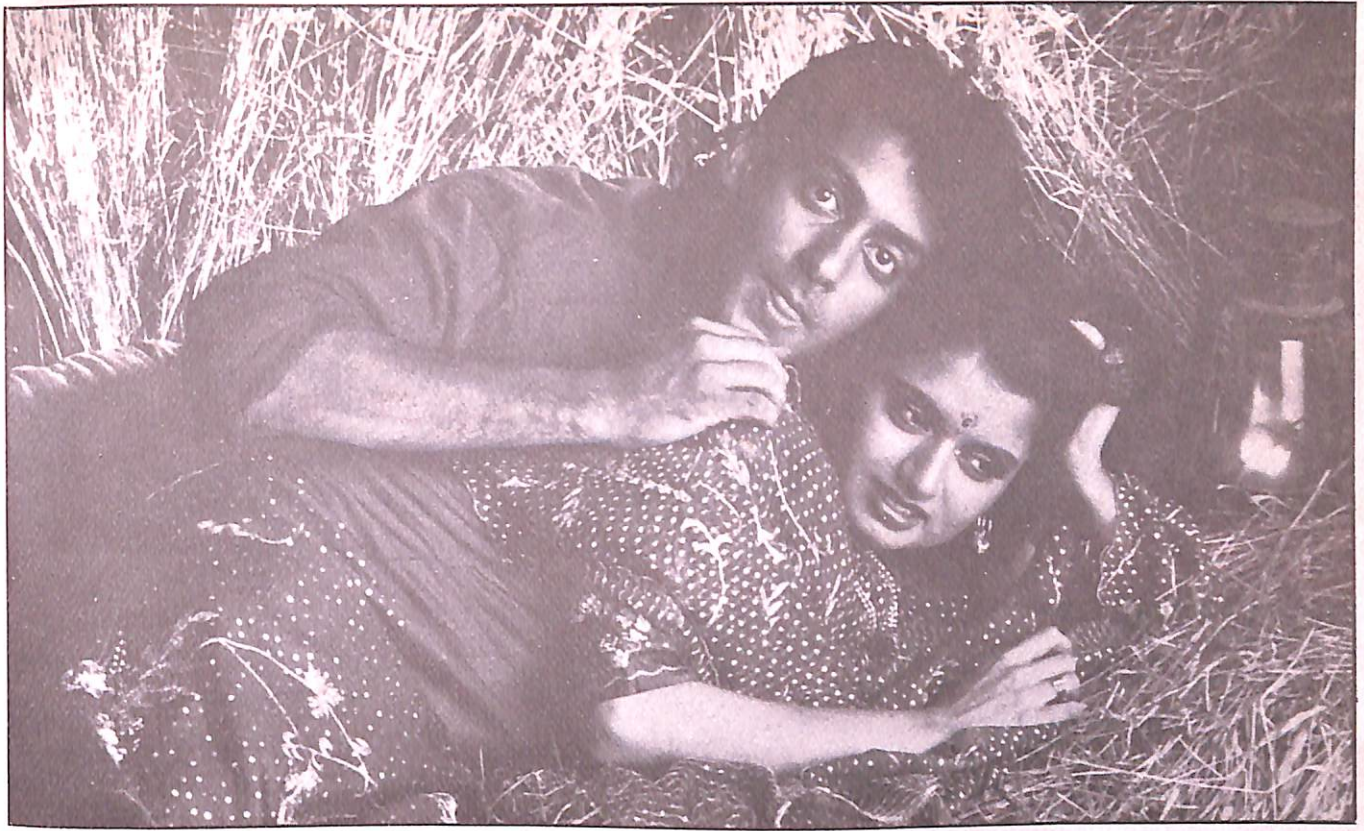
सलमान शिखर पर : भाग्यश्री की वापसी

बॉय मुखर्जी भी अनुबंधित किये गये हैं। इन सब की प्रतिभा की परख अभी होनी बाक़ी है जबकि निर्देशक रवि टंडन की पुत्री रवीना ने इस साल स्वयं को सफल साबित कर दिखाया।

विवेक मुश्रान और *मनीषा कोईराला की जोड़ी को इस साल की सबसे सनसनीखेज* जोड़ी बनाने की जो जुगत निर्माता निर्देशक सुभाष घई ने अपनी फिल्म *सौदागर* में की थी उसे आंशिक सफलता ही मिल सकी। *सौदागर* अच्छी चली लेकिन *मैंने प्यार किया* जैसी ऊँचाइयाँ नहीं छू सकी। वर्षों बाद इस वर्ष दिलीपकुमार और राजकुमार को फिर एक साथ पेश करने का श्रेय भी इसी फिल्म को हासिल हुआ। *शो मेन* कहलाने की आकांक्षा में सुभाष अपनी फिल्मों का जो अतिशय प्रचार करवाते हैं, उसका नुकसान इस वर्ष की इस बड़ी फिल्म को उठाना पड़ा, इसमें शक नहीं।

जो अन्य कलाकार इस वर्ष में अपनी पहचान बना सके हैं, उनमें प्रमुख हैं दिव्या भारती, ज्योत्सना सिंह, रुखसार, नगमा, उर्मिला, अक्षय आनंद और शाहरूख़ खान। स्व. राज कपूर के बैनर आर. के. फिल्म्स की रणधीर कपूर निर्देशित *हिना* की नायिका जेबा बख़्तियार को देखने का इंतज़ार भी हालाँकि इसी वर्ष पूरा हुआ लेकिन दर्शकों के दिल में कोई हलचल वे नहीं मचा सकीं।

लोकप्रिय सितारे

इतने सारे नये कलाकारों को मौक़ा मिल सकना एक सुखद आश्चर्य है। ताज़गी के असर की जो बात मैंने पहले की है वह अपने आप में एक बड़ी वजह ज़रूर है लेकिन यह भी सही है कि ऐसे अनेक कलाकार अभी मैदान में मौजूद हैं जिनके प्रति दर्शकों का आकर्षण खत्म नहीं हुआ है। अमिताभ बच्चन, श्रीदेवी, अनिल कपूर, जूही चावला, संजय दत्त, आमीर खान, सलमान खान, माधुरी दीक्षित ..... यानी प्रतियोगिता कोई कम नहीं थी। लेकिन संयोगों को जब सुखद होना होता है, तो रास्ते खुद बन जाते हैं। अमिताभ ने फिल्मों से काफी समय दूर रहने की घोषणा तो इस साल बार-बार की ही, अब उन्होंने उम्र को स्वीकारने का सही कदम भी उठा लिया है। वैसे भी इन दिनों उनकी सिर्फ एक फिल्म निर्माणाधीन है *खुदा गवाह* फिर नवोदितों का उनसे कोई सीधा मुकाबला होता भी नहीं। जिनसे हो सकता था– उनकी या तो कोई बड़ी फिल्में सारे साल रिलीज ही नहीं हो सकीं और अगर हुई भी तो उन्हें कोई प्रतिष्ठा नहीं दे सकीं। गोविंदा, चंकी पांडे, नीलम, सनी देओल, सबके दरवाजे यह साल खतरे की घंटी बजा गया है। श्रीदेवी और अनिल कपूर जैसे कुछ सितारे अपनी आने वाली बड़ी फिल्मों *(रूप की रानी चोरों का राजा)* के इंतजार में दिन काटते रहे। अपने दिन फिराने की उम्मीद उन्हें इन्हीं फिल्मों से है जो पिछले 2-3 सालों से बन रही हैं। वरना पिछला साल तो उन्हें भी हताश ही कर गया *(बंजारन* और *लम्हे)* माधुरी अपनी दो-दो हिट फिल्मों *100 डेज* (जैकी-माधुरी) और *साजन* (संजय-माधुरी-सलमान) के साथ नंबर वन की पोजिशन के आसपास आ पहुँचीं। सलमान ने भी सावनकुमार की *'सनम बेवफा'* और *'साजन'* के बाद हर किसी को पीछे छोड़ जाने के दावे मजबूत कर लिए।

यह कहना पूरी तरह सही नहीं है कि मात्र ताजगी ही सफलता का सारा रहस्य है। नये चेहरों की ताजगी पूरी ताजगी का एक हिस्सा है। ताजगी के बाकी प्रमुख अंग हैं निर्देशन, गीत-संगीत, नृत्य और लोकेशन। इनका सुन्दर समन्वय किये बगैर

आमिर खान : पूजा भट्ट : दिल है कि मानता नहीं

अजय देवगन और मधु : फूल और काँटे की मुस्कान

अनिल कपूर : फिर से जमीन पर

अकेले नये चेहरों के बल पर कोई बड़ा करिश्मा कर दिखाना मुमकिन नहीं है। निर्देशक यश चोपड़ा ने तो बगैर नये चेहरे लिये, 'चाँदनी' में तीन साल पहले वह करतब कर दिखाया, जो विनोद खन्ना और ऋषि कपूर जैसे बासी हो चले कलाकारों के लिये किसी और फिल्म में दिखा पाना संभव नहीं हुआ। हालांकि श्रीदेवी की वह लोकप्रियता जो पिछले सारे साल डगमगाई रही है, उस साल चरम पर थी लेकिन उसी साल सिर्फ श्रीदेवी के भरोसे रहने वाले निर्माताओं ने मात भी खाई थी। कहने का मतलब यह कि ताजगी या लोकप्रियता का जादू भी तभी चलता है जब अन्य पक्ष भी इस ताजगी का सही साथ दे सकें।

संगीत का साथ

क्या मशहूर संगीतकार बदलते माहौल का सही साथ दे सके? सफल फिल्मों की सूची उनके पक्ष में गवाही नहीं देती। बप्पी लहरी के पश्चिमी लय-ताल वाले जिस तेज रफ्तार संगीत का जादू साल-दो साल पहले सिर चढ़ कर बोलने लगा था, इस साल सही रफ्तार पकड़ ही नहीं पाया। *'नंबरी आदमी', 'कोहराम', 'फरिश्ते', 'नाचने वाले गाने वाले', 'हाय मेरी जान'* सभी का पिट जाना साबित करता है कि फिल्म संगीत के शौकीनों के दिल-दिमाग से शोरदार संगीत का असर इस साल में उतर चुका था। बप्पी के संगीत वाली इन फिल्मों के सितारे भी ज्यादातर वही थे जिनकी टूटती साख का जिक्र पहले हो चुका है धर्मेन्द्र-विनोद खन्ना-जयाप्रदा *(फरिश्ते),* धर्मेन्द्र-चंकी-सोनम *(कोहराम),* मिठुन-किमी काटकर *(नंबरी आदमी)* वगैरह। इसके अलावा, यह बात तो बिना बताये भी सभी जानते हैं कि बप्पी ने अपने संगीत के साथ गीतों के बोलों को कभी महत्व नहीं दिया। जबकि पिछला साल गीतों के मधुर बोलों और उनकी सशक्त कविता के लिये खासतौर पर याद किया जायेगा।

संगीत जगत की पिछले वर्ष की सबसे बड़ी घटना लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल के एकछत्र साम्राज्य की नींव हिल जाना है। कल्याणजी-आनंदजी तो ख़ैर इसके भी पहले गुमनाम हो चले थे और पिछले साल *धर्म संकट* (विनोद खन्ना, राज बब्बर, अमृता सिंह) की असफलता ने सूची में उनका स्थान और नीचे ही खिसकाया लेकिन लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल की पकड़ एकाएक इतनी ढीली हो जायेंगी, इसका
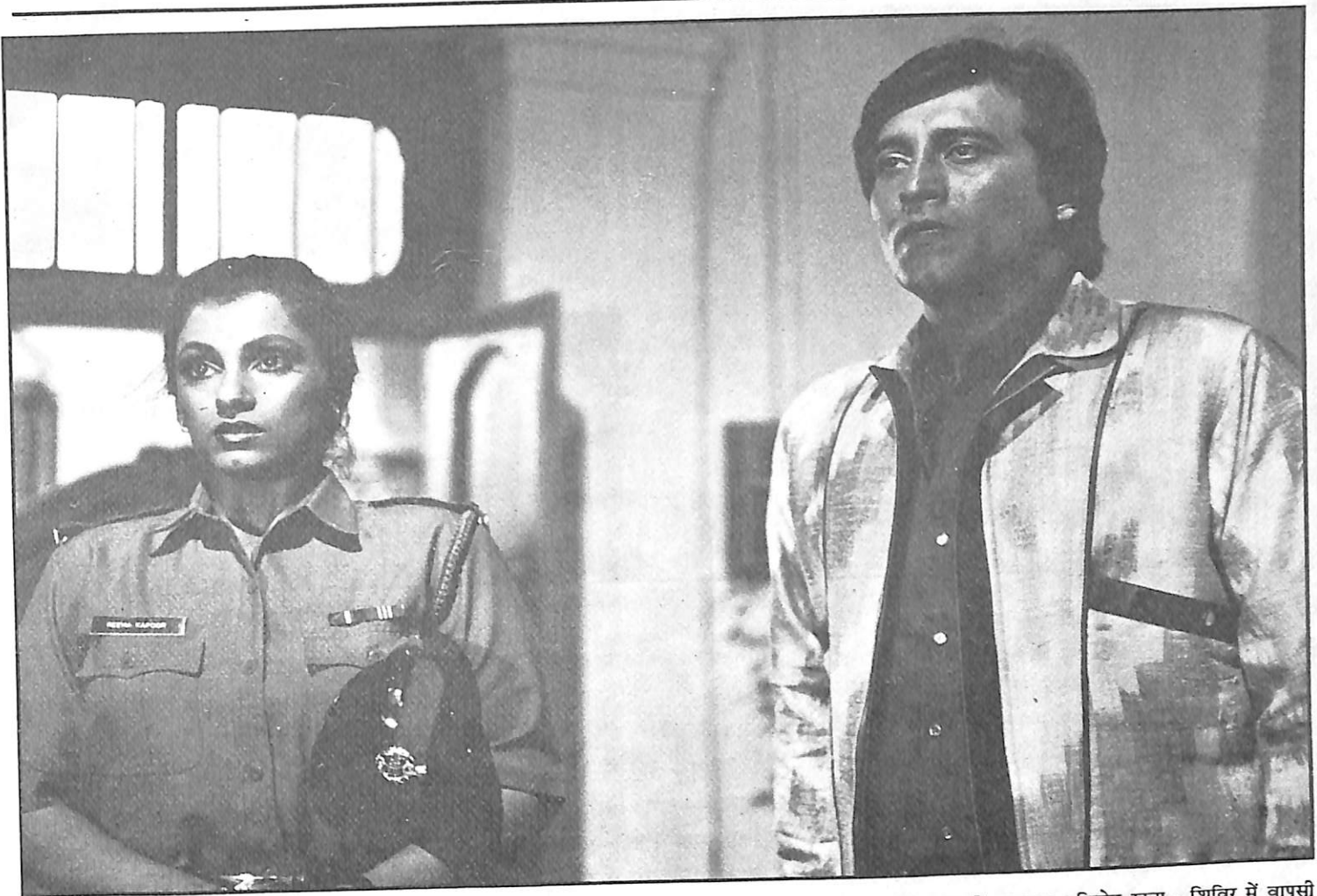
डिम्पल की सफल कला फिल्म-यात्रा : विनोद खन्ना - शिविर में वापसी

अनुमान शायद ही किसी को रहा हो। एक ओर उनकी ओर से मौलिक धुनें नहीं आयीं, दूसरी ओर उनकी फिल्मों को सितारे भी चुके हुये मिले। *अजूबा* (अमिताभ-डिंपल), *खून का कर्ज* (विनोद खन्ना, रजनीकांत, डिंपल, किमी) *मस्त कलंदर* (धर्मेन्द्र, डिंपल), *प्यार हुआ चोरी चोरी* (मिठुन-गौतमी), *रणभूमि* (जीतेन्द्र, शत्रुघ्न सिन्हा, डिंपल, ऋषि कपूर) सभी नयेपन के अभाव का शिकार साबित हुईं। इन फिल्मों में कहीं यह प्रयत्न झलकता भी नहीं कि गीत-संगीत पर कोई विशेष मेहनत करने की कोशिश की गयी है।

विदेशी संगीत से उठाई हुई एक ही धुन पर लक्ष्मीकांत ने *हम* के लिए *चुम्मा जुमा दे दे चुम्मा* और बप्पी लहरी ने *थानेदार* के लिए *'तमा तमा लोगे तमा'* रच कर एक-दूसरे से बाज़ी मार ले जाने की निरर्थक कोशिश जरुर की, लेकिन इस *कंट्रोवर्सी* से सिवा इसके और कुछ नहीं हुआ कि दोनों ही चोर साबित हो कर रह गये। यह गाना कोई ऐसा तो था नहीं कि भारतीय सुगम संगीत में इससे कोई इन्कलाब आने वाला था, फिर भी फिल्म की पत्रिकाओं को, जिनमें वीडियो फिल्म मैगजीनें भी शामिल रहीं, खासा मसाला मिलता रहा।

व्यावसायिकता की दृष्टि से लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल का साम्राज्य बहुत दिन चला लेकिन उनके साथ ही साथ राजेश रोशन अपेक्षाकृत मधुर संगीत देकर अपने पिता की परंपरा को कुछ हद तक निभाने लगे थे। पिछला साल उनकी इस छवि को मलिन कर गया। साल के असफल संगीतकारों में ही नाम जुड़ गया उनका। *विष्णु देवा* (सनी देओल, आदित्य पंचोली, नीलम), *शिवराम* (जीतेन्द्र, आदित्य पंचोली, संगीता), *स्वर्ग यहाँ नर्क यहाँ* (मिठुन,-सुमलता) जैसी बड़ी-बड़ी फिल्मों का संगीत फीका रह जाने की वजह से ही उन्हें वह जगह नहीं मिल सकी, जो सफल रहने पर, लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल की असफलता के बाद बिना किसी प्रयत्न के मिल जाती।

अन्नू मलिक *इज्ज़त* (जैकी, संगीता) और *शिकारी* (मिठुन, वर्षा) में तथा दो बरस पहले से सुपर हिट आनंद-मिलिंद *त्रिनेत्र* (मिठुन, शिल्पा) और *प्रेम क़ैदी* (हरीश, करिश्मा कपूर) में अपनी-अपनी जगहों से कहीं आगे नहीं जा सके। न ही रवींद्र जैन को *हिना* वह रंग दिला सकी जिसका इस गुणी संगीतकार को इस साल विशेष इंतजार था।

दो साल पहले ही इस बात का अनुमान होने लगा था कि फिल्म संगीत को लेकर दर्शक तथा श्रोता की रुचि बदल चुकी है। *लाल दुपट्टा मलमल का* तथा *फिर लहराया लाल दुपट्टा* के संगीत में मेलोडी की वापसी का जो प्रयोग आनंद-मिलिंद ने किया था, उसे शोर शराबे से उकताए श्रोता ने हाथों हाथ उठा लिया। इस प्रयोग को पूरा बल मिला मजरूह सुल्तानपुरी और रवीन्द्र रावल

एक नज़र चाहिए आशिकी के लिए : अनु अग्रवाल-राहुल रॉय

जैसे गीतकारों की मधुर रचनाओं से जिनमें शब्द तथा भाव, दोनों का मधुर संगम था। उसी साल में *दिल* के संगीत की सफलता ने इस दौर को आगे बढ़ाया। पिछले साल की शुरूआत के पहले पहले नदीम श्रवण *आशिकी* के संगीत के साथ खम ठोक कर मैदान में आ गये और देखते-देखते फिल्म संगीत के आकाश पर छा गये। तब से अब तक जो दौर चल रहा है वह इस बात का परिचायक है कि थोड़े समय के लिए विदेशियत के असर ने भारतीय संगीत को भले ही ग्रस लिया हो लेकिन उसका तन डुलाने वाला गुण, भारतीय संगीत की मन डुलाने वाली मादकता को कभी मात नहीं दे सकता। कई दशक पुराने जिन गीतों को गुनगुनाते श्रोता आज भी नहीं थकते, उन्हीं के दर्जे का संगीत इस बीते साल की बड़ी देन है। *दिल है कि मानता नहीं (आमिर खान, पूजा भट्ट)* और *साजन* (संजय दत्त, माधुरी, सलमान) के संगीत की अपूर्व सफलता गत वर्ष परवान चढ़े सुमधुर संगीत के प्रेम को जरूर बरसों बरस जलाये रखेगी।

नये कलाकारों की नई आवाज़ें

इसे एक सुखद संयोग ही मानना चाहिए कि जिन दिनों नौजवान संगीतकार नये प्रयोग करके माधुर्यपूर्ण संगीत की वापसी में जुटे हुये थे उन्हीं दिनों दो नये गायकों—कुमार शानू और उदित नारायण का उदय भी हुआ। फिल्म संगीत को इससे जो ताजगी मिली थी उसका भरपूर असर पिछले वर्ष दिखाई दिया। 'किशोरकुमार की आवाज' कहे जाने वाले कुमार शानू ने विविधता लाने की कोशिश की और अपना एक स्टाइल विकसित किया जो आने वाले वर्षों में और स्पष्ट होकर उभरेगा। यह ध्यान रखने की बात है कि अपने कैरियर के प्रारंभ में किशोर कुमार भी सहगल से प्रभावित थे और उन्हीं की तरह गाने की कोशिश करते थे। कुमार शानू ने पिछले वर्ष में जो लोकप्रियता पायी और जिस तरह किशोरकुमार से धीरे-धीरे अलग होने की शुरूआत की वह उनके लिए तथा फिल्म-संगीत के लिए शुभ लक्षण है जिसके लिए पिछला साल विशेष रूप से याद किया जायेगा।

गीतकारों में मजरूह सुल्तानपुरी और रवीन्द्र रावल का जिक्र मैं पहले कर चुका हूँ लेकिन समीर और फैयाज अनवर के बगैर बात पूरी नहीं होती। समीर को तो पिछले साल से भी पहले अच्छे मौक़े मिल गये थे और उनमें उन्होंने स्वयं को योग्य पिता (अनजान) का योग्य पुत्र साबित कर दिया था। लेकिन फैयाज को गत वर्ष सुपर कैसेट्स की फिल्मों में जो मौके मिले, उनमें उन्होंने प्रतिभा की पर्याप्त झलक दिखा कर यह साबित कर दिखाया कि बुजुर्ग हो चुके हसरत जयपुरी और आनंद बख्शी जैसे गीतकारों की जगह लेने नयी पौध तैयार हो चुकी है।

अभी-अभी बीत चुका साल अगर गरीब रहा है तो निर्देशकों के मामलें में। सेल्यूलॉयड पर कहानी कहने की कला में किसी के तेवरों में वह दम नजर नहीं आता जो फिल्म निर्माण की धारा को विशिष्ट ऊँचाई पर ला खड़ा करें। महेश भट्ट इस साल के सबसे व्यस्त और सबसे सफल *(दिल है कि मानता नहीं)* निर्देशक माने जाने जा सकते हैं क्योंकि *दिल है कि... आशिकी* के लगभग तुरंत बाद उनकी बड़ी सफलता थी। *साथी* को भी उम्मीद से ज्यादा सफलता मिली लेकिन इस सबके बावजूद महेश के निर्देशन में न कोई नवीनता थी न कोई विशिष्टता। लेकिन *दिल है कि मानता नहीं* उन्होंने *चोरी-चोरी* से सीधे सीधे उठा ली यह जग जाहिर है। लेकिन फिल्म *दिल है कि...* चली, महेश भट्ट भी चल रहे हैं और अब इसी मार्ग पर चल रहे हैं जहाँ उनकी आगामी फिल्में किसी न किसी हिन्दी-अंगरेजी फिल्म से साफ साफ प्रेरित हैं। ऐसी *प्रेरणा* को अब बुरा नहीं माना जाता लेकिन मुश्किल यही है कि पिछले साल का कोई और निर्देशक ऐसी *प्रेरणा* का धनी भी साबित नहीं हो सका। पार्थो घोष की *100 डेज़* और लॉरेंस डिसूजा की *साजन* हिट होने के बावजूद अपने निर्देशकों को बेजोड़ नहीं कहलवा पायीं। इन्हें अभी अपनी प्रतिभा को पुनः सिद्ध करना होगा। उद्योग को तभी यह विश्वास होगा कि इनकी सफलता सिर्फ संयोग नहीं साधना हैं। ●

मलयालम सिनेमा रजत से स्वर्ण की ओर

□ विजय कृष्णन्

निःसंदेह बंगला भाषा उत्कृष्ट फिल्मों के निर्माण में अग्रणी रही है। किन्तु इधर भारतीय सिनेमा के परिदृश्य में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए है। पिछले कुछ वर्षों में मलयालम भाषा ने बंगला भाषा को उत्कृष्ट फिल्में बनाने में पीछे छोड़ दिया है। मलयालम् भाषा में न केवल प्रयोग किए गए हैं, बल्कि कलात्मक और चित्रात्मक उत्कृष्टतापूर्ण फिल्में भी बनी हैं। व्यवसायिक रूप से सफल अधिकांश मलयालम फिल्में दूसरी भाषाओं की श्रेष्ठ फिल्मों की तुलना में तकनीकी दृष्टि से और कलात्मक दृष्टि से श्रेष्ठ हैं।

आरंभ से ही मलयालम सिनेमा को सामाजिक जागरुकता, प्रतिबद्धता और संवेदनशीलता से संपन्न अनेक महान अनेक निर्देशकों का वरदहस्त प्राप्त होता रहा है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि राष्ट्रपति का स्वर्ण पदक प्राप्त करने वाली सर्वप्रथम दक्षिण भारतीय फिल्म थी मलयालय में बनी फिल्म **चेम्मीन**।

राष्ट्रपति का पहला स्वर्ण पदक : चेम्मीन (1965)

विश्व में पहली बोलती फिल्म के जन्म के एक वर्ष बाद मलयालम में 1928 में पहली फीचर फिल्म का जन्म हुआ।

जे.सी. डेनियल द्वारा निर्देशित पहली मलयालम फिल्म 'विगट कुमारन्' एक मूक फिल्म थी, जिसमें केरल की विख्यात युद्धकला कलारिपायट्टु का कुशलतापूर्वक प्रदर्शन किया गया था। लोकप्रियता के बावजूद व्यावसायिक दृष्टि में यह फिल्म असफल रही।

दूसरी मलयालम फिल्म **'मार्तण्ड वर्मा'** भी मूक फिल्म थी। वह भी व्यावसायिक दृष्टि से असफल रही।

1932 में एस. सुंदर राज ने सी.वी. रामन् पिल्लई के एक उपन्यास पर फिल्म बनाई। इस फिल्म के साथ मलयालम में साहित्यिक कृतियों पर आधारित फिल्मों के निर्माण का युग आरंभ हुआ।

पहली बोलती मलयालम फिल्म **'बालन्'** 1938 में रिलीज हुई। इस फिल्म का निर्माण सालेम के मॉडर्न थिएटर्स के लिए टी.आर. सुंदरम् ने किया था। यह फिल्म व्यावसायिक दृष्टि से सफल रही।

'विगट कुमारन' से लेकर 'जीवित नौका' (1951) तक की अवधि मलयालम सिनेमा की आदि अवधि थी। उन दिनों सिनेमा घर बहुत कम थे, संसाधन कम थे। वित्तदाताओं की कमी थी। दर्शकों के लिए सिनेमा का अर्थ था तमिल सिनेमा। कलात्मक उत्कृष्टता, माध्यम के प्रति जागरूकता, यथार्थवादी चित्रण आदि के अभाव के बावजूद मलयालम् सिनेमा अन्य क्षेत्रीय फिल्मों से भिन्न था। जबकि क्षेत्रीय फिल्में पौराणिक और मारधाड़ वाली कहानियों पर आधारित हुआ करती था। मलयालम् फिल्मों का झुकाव सामाजिक कथा वस्तुओं की ओर था।

मलयालम् सिनेमा में नीलक्कुयिल (1954) से आगे की ओर सुधार के लक्षण दिखाई देते हैं। फिल्म नीलक्कुयिल रामू करियत और पी. भास्करन् का प्रथम निर्देशकीय उपक्रम थी। उसकी कहानी सुप्रसिद्ध मलयालम उपन्यासकार उरूब ने लिखी थी। उसमें एक सवर्ण हिन्दू लड़के और एक हरिजन लड़की के प्रेम की कहानी कही गई थी। इसमें सामाजिक जागरुकता और यथार्थवाद के लक्षण दिखाई देते थे। मलयालम सिनेमा में परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहा था। सिनेमा को गंभीर रूप में लेने वाले निर्देशक यथार्थवादी चित्रण करना पसंद करते थे।

साहित्य के साथ सिनेमा का संगम सोने में सुगंध जैसा साबित हुआ। लेखकों का एक समूह अपने आमूल परिवर्तनवादी राजनीतिक विचारों को लेकर आया, जिनकी पटकथाओं में सामाजिक जागरुकता झलकती थी।

मलयालम् फिल्में सामाजिक सच्चाईयों के प्रति

अडूर गोपालकृष्णन की फिल्म मथिलुकल

'बेशक संवेदनशील थीं, किन्तु उनमें कलात्मक और सौंदर्यपरक मूल्यों का अभाव था। एक नई चलचित्रीय भाषा की खोज बाकी थी। निर्देशक यह समझ नहीं पाए थे कि सिनेमा में कलात्मकता भीतर से ही आनी चाहिए। यदि उनकी फिल्मों में कलात्मकता थी तो वह उस साहित्य के प्रभाव से थी जिसे कि वे फिल्में जुड़ी हुई होती थीं।

इस अवस्था की दूसरी खामी यह थी कि कोई भी निर्मात-निर्देशक बंधे बंधाए फार्मूले से हटकर चलना नहीं चाहता था। अच्छे और बुरे सिनेमा के बीच के विभाजन की जो समझ तृतीय प्रावस्था में दिखाई देती है वह द्वितीय प्रवस्था में नहीं दिखाई देती। द्वितीय प्रावस्था की अधिकांश फिल्में निर्देशकों की प्रतिभा के कारण सफल नहीं थीं, बल्कि उन संघटकों के कारण सफल थीं जिन्हें लेकर फिल्में बनाई जाती थी।

नीलक्कुयिल से लेकर ओलवुम थीरवुम तक की द्वितीय अवस्था में निर्मित नीलक्कुयिल, न्यूज़ पेपर बॉय, ररिचन एन्ना पौरन, मुडियानया पुत्रन्, ओडयिल नित्रु, चेम्मीन, इरुत्तिन्ते आत्मवु, अनुभवगल पलिचकल, ओरु पेन्निन्टे कथा, भार्गवी निलयम, नगर में नंदी, प्रिया आदि फिल्मों को दर्शकों से सम्मान प्राप्त हुआ। इस अवधि के दौरान बनी अंतिम फिल्म ओलवुम थीरवुम (1970) दो अवस्थाओं के बीच की खाई को पाटती है। उसमें भाषा की प्रांजलता और शैलीगत परिवर्तन के दर्शन होते हैं, किंतु दूसरी बातों से वह द्वितीय प्रावस्था की अन्य फिल्मों से भिन्न नहीं थी।

इस अवधि के प्रख्यात फिल्म निर्माता है के.एस. सेतुवाधवन्, रामू करियत, पी. भास्करन्, विन्सेन्ट, मधु, पी. एन. मेनन आदि।

सेतु माधवन् की फिल्मों में सीधा-सादा कथन, शैलीगत साहस और सामाजिक परिप्रेक्ष्य दृष्टिगोचर होता था। उन्हें प्रसिद्ध मलयाली साहित्यिक रचनाओं पर फिल्में बनाने से बहुत दिलचस्पी थी। उन्होंने सुप्रसिद्ध मलयालम अभिनेता सत्यन् की प्रतिभा को पहचाना और परवान चढ़ाया।

रामू करियत की फिल्म **'चेम्मीन'** दक्षिण भारतीय फिल्मों में एक महान घटना थी। इस फिल्म को राष्ट्रपति का स्वर्ण पदक प्राप्त हुआ था। करियत के आदर्श निर्देशक तथा प्रेरणा स्रोत डेविड लीन थे। समुद्रतटीय लोगों के जीवन का चित्रण फिल्म चेम्मीन' में बड़ी कुशलता से करने के बाद उन्होंने अपनी फिल्म 'नेल्लू' में वन नेत्रों के जीवन का चित्रण किया। द्वीप में उन्होंने द्वीपवासी लोगों की उदासी की गहराईयों को उजागर किया है। कोन्डागली में उन्होंने एक पर्वतीय गाँव और उसके लोगों का चित्रण किया है।

पी. भास्करन् ने सिनेमा में एक गीतकार की हैसियत से प्रवेश किया। आगे चलकर सिनेमा के सभी पहलुओं पर उनका प्रभाव देखा गया। नीलक्कुयिल उनके निर्देशन में बनी पहली फिल्म थी और वह रामू करियत की भी पहली फिल्म थी। बाद में उन्होंने अकेले ही ररिचन एन्ना पौरन् (1938) का निर्देशन किया। इरुत्तिन्टे आत्मवु (1969) उनके द्वारा निर्देशित एक अन्य प्रसिद्ध फिल्म हैं।

विन्सेन्ट ने वैकोम मुहम्मद बशीर की कहानी पर आधारित फिल्म भार्गवी निलयम् (1964) के निर्देशक के रूप में सिनेमा में प्रवेश किया। इस फिल्म ने उन्हें इस अवधि का एक प्रख्यात निर्देशक बना दिया। मुरप्पेन्नु, अश्वमेघम् और नगरमे नन्दी जैसी फिल्मों में उनकी कुशलता दर्शनीय हैं।

मधु ने फिल्म 'मूदुपदम्' में एक अभिनेता के रूप में अपने कैरियर की शुरूआत की। नाटकों की पंक्ति में वे सत्यन् और नजीर के बाद तीसरे स्थान पर थे। चेम्मीन और ओलवुम् थीरवुम के जरिए वे एक उत्कृष्ट अभिनेता के रूप में स्थापित हो गए। 1970 में उन्होंने अपनी पहली फिल्म 'प्रिया' का निर्देशन किया जो कि एक भिन्न शैली में बनाई गई थी। सिंदूरचेप्पू (1971)और सती (1972) में उनकी निर्देशन प्रतिभा दिखाई देती हैं।

1970 में प्रदर्शित ओलवुम थीरवुम् मलयालयम् फिल्मों के भाग में एक मोड़ था। इस फिल्म ने पी.एन. मेनन को एक प्रख्यात फिल्म निर्माता के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया। यह वह पहली फिल्म है जिसमें मलयाली लोगों को वास्तविक चलचित्रीय भाषा का परिचय दिया गया है। फिल्म 'स्वयंवरम्' के अधिकांश सौंदर्यपरक तथा चलचित्रीय गुण ओलवुम थीरवुम में बहुत पहले ही व्यक्त हो चुके थे। पी.एन.मेनन ने एम.टी. वासुदेवन नायर की पटकथाओं को एक कविसुलभ दृष्टिकोण से अपनाया था। ओलवुम थीरुवरम् मलयालम् सिनेमा की दी विभिन्न अवधियों को जोड़ने वाला सेतु हैं। यह फिल्म सफल साहित्यिक कृतियों पर आधारित फिल्मों के युग के अन्त की और एक नए युग के आरंभ की द्योतक है। उनकी परवर्ती फिल्में हैं कुट्टियेदाती और अप्पु साक्षी।

जी. अरविंदन की फ़िल्म ओरिडथ (1987)

मलयालयम् सिनेमा की इस द्वितीय अवस्था में सिनेमा और साहित्य के बीच गहरा संबंध रहा। इस अवधि की फिल्में उनकी महान अभिनेताओं के कारण उल्लेखनीय थीं। इस प्रावस्था में सिनेमा की केवल एक ही धारा थी, किन्तु 1970 के दशक में कला फिल्मों और व्यावसायिक फिल्में के बीच एक स्पष्ट विभाजन दिखाई देता है।

1950 के दशक में मध्य के बाद 1970 के दशक का आरंभिक काल भारतीय सिनेमा का एक अन्य संक्रमण काल था। इस अवधि में नए सिनेमा के आरंभ को द्योतित करने वाला नया सिनेमा आंदोलन अस्तित्व में आया।

अडूर गोपाल कृष्णन् के निर्देशन में बनी फिल्म स्वयंवरम् (1972) इस आंदोलन में मलयालम् भाषा का योगदान था। यह मुख्यधारा से अलग-थलग थी। उनकी दूसरी फिल्म कोडियट्टम अपने कथन की सादगी की दृष्टि से उत्कृष्ट थी। उनकी तीसरी फिल्म **एलिप ययम** (1972) चलचित्रीय उत्कृष्टता का अद्वितीय प्रतिमान थी। उन्होंने कोडियाट्टम के यथार्थ वाद से एलिपथयम की अति यथार्थवादी गहराईयों तक की यात्रा की है। उनकी चौथी फिल्म मुखामुखम् (1984) में अनेक राजनीतिक आयाम है। अपनी फिल्म अनंतरम् (1987) में उन्होंने जादुई यथार्थवाद की तकनीक का सफल प्रयोग किया है। इन फिल्मों के जरिए उन्होंने भारतीय सिनेमा में अपनी स्थाई जगह बना ली है।

जी. अरविन्दन ने फिल्म जगत् में अपनी फिल्म उत्तरायणनम (1974) के जरिए प्रवेश किया। यह फिल्म सत्यजीत राय और मृणाल सेन की फिल्मों से बहुत प्रभावित थी। अरविन्दन् ने कांचन सीता में रामायण के मुख्य पात्रों संबंधी पारंपरिक संकल्पनाओं में रुपांतरण और परिवर्तन किया है। उनकी फिल्में विषयों की विविधता के लिए उल्लेखनीय हैं। उन्होंने केरल के सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओं को उजागर किया है।

अपनी तीसरी फिल्म थेम्पू में अरविन्दन् ने सर्कस कलाकारों के जीवन और संघर्ष की कहानी कही है। फिल्म कुमट्टी (1979) अंतर्राष्ट्रीय बाल वर्ष के प्रति उनका योगदान थी। इस्थप्पन् (1979) में उनका तत्वमीमांसीय अनुसरण प्रकट होता है। पोक्कुवेयिल (1982) में एक कवि के माध्यम से सर्जनशील मन की गहराइयाँ दिखाई गई हैं। फिल्म चिदंबरम् (1985) सी.वी. श्रीरामन् की लघुकथा पर बनाई गई है। अरविन्दन् ने साहित्यिक कृतियों पर अच्छी फिल्में बनाई हैं। फिल्म 'चिदंबरम् में और वाद में 'ओरिडेडथ' में उनका जो दृष्टिकोण है वह साधारण दर्शकों को भी स्वीकार्य है।

अरविन्दन् ने कथा वस्तुओं की विविधता के जरिए मलयालम् सिनेमा के क्षितिज को व्यापक किया है। अनेक फीचर फिल्मों में व्यस्त रहने के बावजूद उन्होंने सामाजिक प्रासंगिकता वाली अनेक डॉक्यूमेन्टरी फिल्में बनाई हैं।

जॉन अब्राहम एक आज ऐसे मलयालम फिल्म निर्माता है जो अपने जीवन काल में ही दंतकथा बन गए। इनकी चार फिल्मों में अच्छी फिल्में भी हैं और बुरी फिल्में भी हैं। उनकी फिल्मों में मौलिकता

इण्डियन पेनोरमा 1992 में प्रदर्शित फिल्म भरथम्

हैं, आडंबर नहीं है और उनकी निर्देशकीय पहचान है। उनकी दूसरी फिल्म अग्रहारत्तिल कजुथई सामाजिक प्रतिबद्धता की दृष्टि से अन्य भारतीय फिल्मों से श्रेष्ठ है। अपनी फिल्म चेरियो चेन्टे क्रूरकित्यन्गाल' (1983) में उन्होंने कुट्टमडु की कृषि भूमियों का विषय लिया है। उनकी अंतिम फिल्म अम्मा अरियन् (1980) का निर्माण जनता की सह भागिता से हुआ। जॉन अब्राहम् कुट्टनाडन ईसाई हैं, फिर भी उनमें हिन्दू दर्शन का गहरा प्रभाव दिखाई देता हैं। 'अम्मा अरियन' जैसी फिल्म में भी हिंदू धर्म की मातृ देवी की संकल्पना पाई जाती है।

के.पी. कुमारन् की फिल्म 'अतिथि ' (1974) के साथ मलयालम् में फैन्टेसी पर आधारित फिल्मों का श्री गणेश हुआ। पवित्रन् की फिल्में 'यारों ओरल' और विजय कृष्णन् की फिल्म 'निधियुडे कथा' इसी प्रवर्ग की फिल्में हैं।

के.जी. जॉर्ज (स्वप्नतानम, यवनिका, इराकल), के. आर. मोहन (अश्वत्यामा पुरूषार्थम) और पी.ए भास्कर (कवमिनाडि चुवन्नप्पोल, चुवन्न विथुकल) ने कलात्मक मूल्यों वाली फिल्मों का निर्माण किया हैं पद्मराजन् और भारतन् ने कलात्मकता को कायम रखते हुए भी लोकप्रियता का ध्यान रखा है। उनकी फिल्मों में काव्यात्मक और चाक्षुष मूल्य हैं (ओरिदथोरू फयलवान पेरुवजिअंबलम न्यान गंवधर्वन आदि)। भारतन की फिल्में चाक्षुष सौंदर्य के लिए विख्यात हैं। उनमें सेक्स को सुंदरतापूर्वक प्रस्तुत किया है। (मुरमरन्, ओर्मक्कयि, वैशाली आदि)। हरिहरन, शिवि मलयाली, मोहन, लेनिन राजेन्द्रन, आई.वी. शशि, सत्यन्, अंतिकौड आदि जैसे निर्देशक सौंदर्यपरक मूल्य वाली फिल्में बनाने की कोशिश करते हैं।

यद्यपि दक्षिण भारत में मलयालम् में फिल्मी सितारों में हाल ही के वर्षों में मोहनलाल और मेम्मूरी सुपर स्टार के रूप में उभरे हैं।

केरल में सर्वाधिक संख्या में फिल्म सोसाइटियां है। और अच्छी फिल्मों के दर्शकों की संख्या भी विशाल है। परिणामस्वरूप लगभग सभी अच्छी फिल्में पर चर्चा परिचर्चाएं होती है। फिल्म विषयक साहित्य में क्षेत्र में भी वांछनीय परिवर्तन हुआ है पहले-पहल फिल्मों की आलोचना फिल्मों की कहानी का सारांश देने और कलाकारों के अभिनय पर इक्की-दुक्की टिप्पणियाँ करने तक ही सीमित हुआ करता था, किन्तु अब फिल्मों का गहराई से अध्ययन और विश्लेषण किया जाता है। जब विजय कृष्णन् द्वारा लिखित चलचित्र समीक्षा को 1982 में फिल्में संबंधी श्रेष्ठ पुस्तक का राष्ट्रीय पुरस्कार मिला तो मलयालम् में रचित फिल्म साहित्य को राष्ट्र स्तरीय मान्यता मिली। 1984 में केरल सरकार ने भी फिल्म साहित्य के लिए पुरस्कार स्थापित किए हैं।

गुजराती सिनेमा : उम्र 60 वर्ष

तासीर
तस्वीर
और
तवारीख

☐ डॉ. यासीन दलाल

मैंने जिस समय पहली गुजराती फिल्म देखी तब मेरी उम्र 4-5 वर्ष की रही होगी। उपलेटा के सेन्ट्रल सिनेमा में उन दिनों गुजराती फिल्म कभी-कभार ही आती थी और एक फिल्म तीन-चार दिनों से ज्यादा नहीं चलती थी। पूरे सप्ताह तो बहुत खुश किस्मत फिल्म ही चल पाती थी। फिल्म का प्रचार करने के लिए हाथ गाड़ी पर दो बोर्ड लगा कर ढोल-ढमाके के साथ पूरे गाँव में घुमाए जाते थे। फिल्म के प्रचार के लिए परचे बाँटने का काम विनय नामक एक युवक करता था। "वेवीशारु" (सगाई) फिल्म के परचे गुलाबी रंग के थे यह मुझे अब भी याद है। उन्हें पढ़ कर ही मैं फिल्म देखने गया था। यह जमाना 1948, 49 तथा 50 का था। इन दिनों हिंदी फिल्मों के साथ ही गुजराती फिल्मों की भी काफी धूम थी। उन दिनों में गुजराती की 'गुण सुंदरी', 'गाड़ा नो बेल' 'वे विशाल', 'ननद भोजाई', 'रा' नवघण', 'वारसदार', 'मंगल फेरा', 'गोरख धंधा', 'दीवा दांडी', 'गोरा कुम्हार', 'मारे ते गामड़े एक बाद आवजो' तथा 'तमे थोड़ा थोड़ा वरणागी" के गीत घर-घर में गूँज रहे थे। गीता दत्त की आवाज में गुजराती गीत बिल्कुल गुजराती लगते थे। मनहर देसाई और निरूपारॉय की जोड़ी दिलीप कुमार कामिनी कौशल जैसी ही मशहूर थी। बाबू राजे और छगन रोमियो की कॉमेडी देख कर हम लोग हँसते-हँसते पेट पकड़ लेते थे। 'दिवा दांडी' के गीत 'तारी आँख नो अफीणी' सुन कर नशा सा छा जाता था। आशा भोसले तथा लता मंगेशकर भी गुजराती गीत हिंदी जैसी ही मिठास और अधिकार के साथ गाती थी। आज की तरह उच्च तथा मध्यम वर्ग गुजराती फिल्मों से तब विमुख नहीं था।

मेरे बचपन का समय आजादी के बाद का समय था जब तक बात उत्कृष्ट होती थी। हिंदी और गुजरादी दोनों भाषाओं मे बढ़िया फिल्में बनती थीं। 'मंगल फेरा' और 'करियावर' जैसी फिल्में लगभग हर गुजराती घर के सभ्यों ने देखी होगीं। 'राख न रमकड़ा मारा रामे रमता राख्या (मेरे भगवान ने मिट्टी के खिलौने खेलने के लिए छोड़ दिए है) जैसे गीतों में गुजरात की सामाजिक अस्मिता व्यक्त होती थी। लेकिन इसके बाद कोई गुजराती फिल्म देखने का मौका ठेठ 1960 में 'मेंदी रंग लाग्यो' के साथ मिला। इस फिल्म के द्वारा विपिन गज्जर ने गुजराती फिल्मों में फिर चमक पैदा कर दी। 'हूँ हरती-फरती रस्ते रझकती वार्ता' जैसे गीतों के साथ उसका संगीत भी लोकप्रिय हुआ। लेकिन विपिन की अगली फिल्म 'सत्यवान-सावित्री' असफल रही। सन् 1964 में मनहर रसकफरे ने 'अखंड सौभाग्यवती' में नए रंग भरे और कल्याणजी-आनंदजी ने उसमें मुकेश से बहुत ही मधुर गीत गवाए।

कई गुजराती फिल्में की सूची बड़ी मजेदार, विचित्र तथा रसप्रद हैं। 'मोजि लूँ मुंबई' तथा 'मारी धणियाणी' 'मारी धणियाणी' के नायक का नाम है अमभालाल। गुजराती फिल्मों के पितामह द्वारकादास संपत की दो फिल्मों के नाम थे 'अक्कल ना बारदान' तथा 'घर जमाई' और होमी मास्टर द्वारा बनाई गई कई फिल्में में से नाम की दृष्टि से विशिष्ट थीं।

'धाकड़ो फितूरी' तथा 'शेठ नो साको सन् 1927 में बनी एक मूक फिल्म भी 'सूरत नो शाहुकार' 1948 में होमी मास्टर ने 'लग्न ना उम्मीदवार' तथा 1949 में व्ही.एम. व्यास ने जहाँ 'गुणियल गुजरातण' बनाई वहीं 1958 में उन्होंने ही 'भारत नी वाणी' भी बनाई।

इनके अलावा 'होभल पक्षणी', 'सदेवंत सावकिंगा', 'कुँवर बाई नो मामेरो', 'जेसल वोरल', 'कादू मकराणी', 'शेणी विजानंद', 'राजा भर्तृहरि', 'राजा हरिशचन्द्र', 'भक्त नरसैंयो' की कहानियाँ और फिल्में सुपरिचित है। इनमें से कई कहानियाँ और फिल्में बारंबार गुजराती परदे पर आई हैं।

गुजराती फिल्में प्रारंभ में हिन्दी सिनेमा के समानांतर ही चलती रहीं। बंबई के फिल्म उद्योग में कई अग्रणी निर्माता-निर्देशक गुजराती थे। चिमनलाल देसाई, मोहनलाल दवे, विजय भट्ट, चंदूलाल शाह तथा मेहबूब वगैरह सब गुजराती ही थे। इनके अलावा आर्देशिर ईरानी भी गुजराती थे। उनके द्वारा 1931 में हिन्दी में पहली सवाक् फिल्म 'आलम आरा' बनाए जाने के अगले ही वर्ष गुजराती 'नरसिंह मेहता ' भी रिलीज हुई और इस तरह हिंदी के लगभग साथ ही गुजराती फिल्मों की नींव भी पड़ गई। लेकिन इसके बाद गुंजराती फिल्में हिंदी के साथ तालबद्ध हो आगे नहीं बढ़ सकीं। वे पैर घसीटती आगे बढ़ने की कोशिश करती रहीं और पूरी तरह जमी दोज हों इसके पूर्व उन्हें राज्य सरकार की कर-मुक्ति का सहारा मिल गया। लेकिन कर मुक्ति की बैसाखी मिलने के बावजूद गुजराती फिल्मों से अंधविश्वासों, बेतुकी लोक कथाओं तथा स्तरहीन परीकथाओं की बू आती रही। वास्तविक जीवन की खुशबू इन फिल्मों में कभी कभार ही दिखालाई पड़ी। अभी हाल में परवेज मेरवान की 'परसी' फिल्म देख कर मन में यह सवाल उठा कि आखिर गुजराती में ऐसी बढ़िया, कलात्मक और वास्तविक फिल्में ज्यादा क्यों नहीं बन पाती। एक-आध वर्ष पूर्व दूरदर्शन पर गुजराती फिल्म 'कलापी' प्रसारित हुई थी जिसमें गुजरात के इस प्रख्यात कवि की जीवनी पर आधारित फिल्म में संजीव कुमार जैसे सफल अभिनेता के होते हुए भी कमजोर पटकथा और निर्देशन के कारण फिल्म कोई खास प्रभावित नहीं कर पाई। अच्छे संगीत के लिए कलापी की बढ़िया गजलें तैयार मिलने के बावजूद बेकार हो गईं। पत्रकार दिगंत ओझा भी फिल्मों के प्रति आकर्षित हुए लेकिन 'लाखों फुलाणी' के बाद वे फिर हिम्मत नहीं जुटा पाए। ईश्वर पेटलीकर की कृति पर सूरत के फीरोज सरकार ने 'जन्मटीप' बनाई थी। ये सभी प्रयोग उल्लेखनीय हैं लेकिन गुजराती फिल्मों के इतिहास में ऐसे प्रयोग प्रत्येक दस-पन्द्रह वर्षों के बाद ही हुए है।

हिन्दी की तरह गुजराती फिल्मों का भी स्वतंत्रता के तत्काल बाद का समय बहुत अच्छा रहा। लेकिन जहाँ सन् 1948 में 26 गुजराती फिल्में बनीं वहीं 1949 में यह आँकड़ा घट कर 17 रह गया। इसके बाद के वर्ष में 13 तथा 1951 में मात्र छः फिल्में बनीं। सन् 1952 में यह और ज्यादा घट कर दो पर आया तथा 1953-54 में तो गुजराती फिल्मों का निर्माण बंद ही हो गया।

इसके बाद 1955 में तीन फिल्में, छप्पन में तीन, 1957 में शून्य तथा 1958 में एक फिल्म बनी। सन् 1960 में दो फिल्में आई और दोनों ही उल्लेखनीय थीं। पहली थीं 'कादू मकराणी' तथा दूसरी थी 'मेंदी रंग लाग्यो'। इन दोनों के निर्देशक मनहर रसकपुरे थे जो मंदी के इस दौर में भी एक-दो फिल्में बनाकर गुजराती सिनेमा में प्राण वायु का संचार करते रहे। ऐसा ही एक उल्लेखनीय वर्ष था 1969 जबकि 'बहुरूपी' तथा 'कंकु' (कांतिलाल राठौर) का निर्माण हुआ। इसके बाद ठेठ 1980 में 'काशी नो डीकरो' और 'भवनी भवाई' (केतन मेहता) तथा 1990 में 'परसी' आती हैं। इस बीच कर मुक्ति का लाभ होने की कोशिश में कई महत्वहीन निर्माता फिल्म निर्माण में उतर पड़े और उन्होंने सौराष्ट्र की लोक-कथाओं का सारा भंडार एक तरह से खाली कर डाला। ग्रामीण परिवेश, वेशभूषा, पगड़ी, तलवार तथा चोइक चूड़ीदार पजामा आदि चीजें गुजराती फिल्मों की पहचान बन गई और हिन्दी की तरह उनका भी एक निश्चित फार्मूला बन गया। इस फार्मूले में लोककथा से ली गई कहानी, थोड़े से चमत्कार, रास गरबा तथा दोहे शामिल थे। रामानंद सागर ने भी इसी दौर में गुजराती फिल्म बनाई और इसी फार्मूले के चलते अमजद खान जैसे कलाकार की प्रतिभा को बरबाद किया। ऐसा लगने लगा मानो 'वीर मांगड़ा ता को', 'वीर एमलवाको' तथा 'कादू मकराणी' ही गुजरात के सच्चे प्रतिनिधि हों। धीरे-धीरे ऐसी फिल्मों का ही एक अलग ग्रामीण दर्शक-वर्ग तैयार हो गया और शिक्षित तथा शहरी दर्शकों ने गुजराती फिल्म के नाम से ही नाक-भौं चढ़ाना शुरू कर दिया।

सन् 1934 में एक फिल्म 'संसार लीला' आई थी। इसमें खानपान की इज्जत बहू का चित्रण था। यह आदर्श बहू कितनी ही विपरीत परिस्थितियों में मजदूरी करते हुए अपने कुटुंब का पालन-पोषण करती है। आदर्श नारी का यह पात्र गुजराती फिल्मों में सतत् आता रहा। संसार के सादे गुण जिस नारी में हों वही गुण सुंदरी कहलाती है। इसीलिए 'गुण सुंदरी' गुजराती की एक प्रतिनिधि फिल्म है। फिल्म का नाम चाहे 'पानेतरं' हो, 'मंगल फेरा' हो या 'काशी नो डीकरो', उसमें एक गुण सुंदरी का होना जरूरी होता था। वर्षों बाद 'गुण सुंदरी नो घर संसार' आई लेकिन 'सरस्वती चंद्र' हिन्दी में बनी। इसे गुजराती में बनाने का साहस किसी ने क्यों नहीं किया?

गुजराती फिल्मों के नारी पात्रों के बारे में जो सर्वेक्षण अहमदाबाद की प्रो. इला पाठक ,रमा शाह ने किया उसके नतीजे बड़े दिलचस्प रहे। इस सर्वेक्षण के लिए 26 गुजराती फिल्में चुनी गई थीं। इनके कुल 49 स्त्री-पात्रों में से 36 पात्र गृहिणियों के थे। इनमें से अधिकांश गृहिणियों को परवश, लाचार तथा निःसहास ही चित्रित किया गया था। परदे की हिंदी नारी की तरह ये गुर्जर नारियाँ भी पति परायण, उसके पैरों में गिरने वाली, आँसू बहाती पराधीन नारियाँ ही हैं। कुछ लोक कथाओं में जो राजपूतानी का पात्र आता है वह अपवाद स्वरूप ही है। इनके अलावा स्त्री-पात्र पर किसी मुसीबत के आते ही वह भजन गाता है या भगवान की मूर्ति के पास दौड़ पड़ता है। स्वतंत्र व्यक्तित्व का धनी कोई स्त्री पात्र कभी-कभी देखने को मिलता है। नारी अपने बल पर शायद ही कोई निर्णय ले पाती है। स्त्रियों को बाँध रखना या उनसे मार-पीट करना गुजराती फिल्मों में सामान्य बात है। पौराणिक तथा लोक-कथाओं पर आधारित फिल्में बेतुके चमत्कारों से भरपूर होती हैं।

उन्नीस सौ चालीस के असें में रणजीत कंपनी ने 'अछूत' फिल्म हिन्दी के बाद गुजराती में भी बनाई और दोनों की नायिका 'गोहरबानू' थीं। गुजराती फिल्मों की पहली उल्लेखनीय अभिनेत्री होने का श्रेय उन्हीं को प्राप्त है। उन्होंने इस वर्ष की कुछ अन्य फिल्मों में भी काम किया। इस तरह गौहरबानू तथा निरूपारॉय दोनों को हम द्विभाषी अभिनेत्रियाँ कह सकते है। ऐसी अभिनेत्रियाँ ज्यादा नहीं हैं जिनकी खोज तथा विकास गुजराती फिल्मों ने ही किया हो। वैसे, प्रारंभ काल की अधिकांश अभिनेत्रियाँ असल गुजरात की थीं और उनमें निरूपारॉय सबसे अधिक प्रभावशाली थीं। 1948 में 'गुण सुंदरी' से प्रारंभ होने के बाद उन्हें बरसों गुजराती परदे पर देखा गया। बाद में गुजराती फिल्मों में मंदी का दौर प्रारंभ होने पर वे क्षेत्रीय से बढ़ कर राष्ट्रीय हस्ती बन गईं। 'मंगल फेरा', 'गाड़ा नो बैल' तथा 'करियावार' (दहेज) जैसी फिल्मों में गरबा घूमती निरूपा बेन गुजरातियों के दिलों में बस गईं। बीते बरसों में हिन्दी-गुजराती फिल्मों में आना-जाना करने वाली अभिनेत्रियों में सबसे महत्वपूर्ण नाम अरूणा ईरानी का है जिन्होंने असरानी तथा दूसरों के साथ कई फिल्मों में अभिनय किया। वे संजीव कुमार के साथ भी नायिका बन कर आईं। कुछ फिल्मों में जयश्री टी भी दिखलाई दी। 'काशी नो डीकरो' (काशी का वेश) की रागिनी गुजराती फिल्मों की आदर्श नायिका बन सकती थीं लेकिन उनकी पहली पसंद रंगमंच के साथ होने से फिल्मों को उनका लाभ नहीं मिल पाया। मल्लिका साराभाई भी काफी प्रतिभाशाली थी और किरणकुमार के साथ उनकी जोड़ी एक जमाने से काफी मशहूर मगर क्षणिक ही रही। 'मेंदी रंग लाग्यो' में राजेंद्र कुमार की नायिका उषा किरण थीं। 'अखंड सौभाग्यवती' के द्वारा आशा पारेख ने भी जोरदार धमाका किया था। लेकिन 'कुलवधू' जैसे एक-आध अपवाद को छोड़ वे भी गुजराती चलचित्रों से दूर ही रहीं। प्रारंभिक दौर में जो स्थान निरूपारॉय का था वही 1970 के दशक में स्नेह लता का रहा लेकिन निरूपारॉय के विपरीत वे कर्नाटक की थीं। उपेन्द्र त्रिवेदी तथा स्नेह मिला दें लता की जोड़ी ने काफी समय तक गुजराती परदे पर राज किया। स्नेहलता देखने में तो आकर्षक थी हीं, धीरे-धीरे उन्होंने गुजराती भाषा पर भी काफी नियंत्रण पा लिया था। उन्नीस सौ सत्तर के दशक में अनेक बाहरी कलाकारों का प्रवेश हुआ। स्नेहलता, असरानी तथा किरण कुमार के अलावा नसीरूद्दीन शाह, स्मिता पाटिल तथा संजीव कुमार जैसे राष्ट्रीय स्तर के कलाकारों का आगमन हुआ। संजीव कुमार 'जिगर अने अमी', 'कलापी' तथा 'मारे जबुं पेले पार' जैसी गुजराती फिल्मों में भी खूब चमके।

गुजराती फिल्मों के उद्भव और विकास में यो तो कई लोगों का योगदान रहा लेकिन कुछ नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय रहे। इनमें सबसे पहला नाम द्वारकादास संपत का है। संपत ने कोहनूर फिल्म कंपनी के झंडे तले कई मूक तथा 'अकल नो बारदान' नामक सवाक् फिल्म बनाई। ऐसे लेकिन कुछ अनजान से सर्जक थे मणिलाल जोशी। वे भी मूक-फिल्मों में सक्रिय रहे लेकिन 1927 में 34 वर्ष की उम्र में उनका आकस्मिक निधन हो गया। बहुत कम लोगों को पता होगा कि महा गुजरात आंदोलन के प्रणेता इंदुलाल याज्ञिक ने 'पावागढ़ नो प्रलय' नामक फिल्म बनाई थी। विट्ठलभाई पंचोरिया ने 'महात्मा गाँधी पर एक वृत्त चित्र तथा विख्यात लेखक जयंति दलाल ने 1934 में 'बिखरे मोती' बनाई थी। सागर फिल्म्स वाले चिमन लाल देसाई का योगदान भी काफी महत्वपूर्ण है। रणजीत के चंदूलाल शाह तथा रणजीत

तारिका गौहर का माचिस की डिबिया पर मुद्रित दुर्लभ चित्र

छोड़ कर आने वाले रतिभाई पूनाहर भी गुजराती फिल्मों के विकास में भागीदार बने। चिमनलाल तथा क.मा. मुंशी, दोनों भरूच के रहने वाले थे।

गुजराती फिल्मों के साठ वर्ष के इतिहास में दस-बारह फिल्मों के नामोल्लेख के बाद ही पूर्ण विराम या प्रश्नवाचक चिन्ह लग जाता है। जिन फिल्मों का जिक्र ऊपर दिया गया है उनके अलावा 'मां खोडल तारो चमत्कारो' तथा 'चंदन चावांकी' 'मारी हेल उतारो राज' तथा 'बहुरुपी' भी है जिसे पुरस्कार भी मिला लेकिन बिंदु की भूमिकावाली 'जमाई राज' अभी डिब्बों में ही बंद है। अफसोस की बात तो यह है कि हमारे यहाँ दूसरे समाज की समस्याओं को प्रतिबिंबित करने वाली फिल्में बन ही नहीं पाती। गुंजरात में बेकारी भी है, तंगदिली हैं, सरकारी भ्रष्टाचार, जातिवाद, संप्रदायवाद हैं तथा स्त्रियों को त्रास भी दिया जाता है। नर्मदा बांधों ने पर्यावरण जैसी समस्याएँ भी खड़ी की है। इनकी तरफ विधायकों से लेकर मुख्यमंत्री तक सभी अंगुली उठाते हैं लेकिन गुजराती फिल्मों में ये सवाल क्यों नहीं उठाए जाते? गुजरात के फिल्म निर्माताओं ने क्यों यह शुतुरमुर्गपन अपना रखा हैं? गुजरात के नव निर्माण आंदोलन तथा अन्य आंदोलनों की चर्चा सारे देश में हुई मगर गुजराती फिल्मों ने उनका कोई नोटिस नहीं लिया। हमारे सिनेमा का हमारे सम-सामायिक जीवन के साथ कोई संबंध नहीं हैं।

गुजरात में फिल्म अभिनय तथा दिग्दर्शन का प्रशिक्षण देने की भी कोई व्यवस्था नहीं हैं। पुणें के संस्थान में भी ज्यादा गुजरातियों का प्रवेश नहीं होता। गुजरात में फिल्म विकास निगम है लेकिन वह क्या करता है यह कोई नहीं जानता। दो-चार फिल्म समारोहों के अलावा उसका कोई खास काम नजर नहीं आता। गुजराती फिल्मों का कोई प्रमाणिक इतिहास भी हमारे पास नहीं हैं। पुरानी फिल्मों के प्रिंट, गीतों के रिकार्ड तथा अन्य साम्रगी के संग्रह तथा संरक्षण की हमने क्या व्यवस्था की है? 'अछूत' या 'गुण सुंदरी' फिल्में यदि कोई अब देखना चाहे तो वे उसे कहाँ मिलेगी? पुरानी गुजराती फिल्मों के गीत कहाँ सुने जा सकते हैं? गुजराती फिल्मों के मणिलाल जोशी, द्वारका दास संपत, मोहनलाल दवे या चिमनलाल देसाई जैसे निर्माताओं की तस्वीरें कहीं भी देखने को क्यों नहीं मिलतीं? गुजरात फिल्म विकास निगम इन मामलों में अच्छे समीक्षकों और जानकारों की सेवाएँ क्यों नहीं लेता आदि प्रश्न महत्वपूर्ण है और उनके उत्तर खोजे जाने चाहिए। ●

• तेलुगु सिनेमा

अचम्भे से भरा साल

तेलुगु फिल्म उद्योग ने अपनी सफलता को बड़े बजट वाली, सितारों से भरी फिल्मों के जरिए पाया है और नायकों का बोलबाला रहा है। किंतु 1991 में एक नई प्रवृत्ति दिखाई दी है। छोटे बजट वाली, नए और कम जाने पहचाने कलाकारों वाली फिल्मों का निर्माण हुआ है। सफल फिल्मों की संख्या लगभग यही रही जो कि पिछले वर्षों में थी।

निःसंदेह यह वर्ष दो अभिनेताओं का वर्ष था एक तो नया उभरता हुआ नायक था और दूसरा एक अनुभवी अभिनेता।

नरेश ने लगभग एक दशक पूर्व अभिनय आरंभ किया, किंतु उन्हें सफलता इसी वर्ष मिली। ऐसी सफलता तेलुगु फिल्मों में किसी भी अन्य अभिनेता को नहीं मिली। कहते हैं कि एक छोटे बजट वाली फिल्म 'चित्रम् भलरे विचित्रम' ने, जिसमें नरेश ने **मुख्य** भूमिका की है, उसमें निर्देशित धनराशि से पाँच गुनी धनराशि एकत्रित की। वह अनेक केन्द्रों में बढ़िया चल रही है। चित्रम भलरे विचित्रम् का निर्देशन पी. एन. रामचन्द्र राव ने किया है, जो कि उतने लोकप्रिय नहीं हैं।

नरेश की 'प्रेम एन्था मधुरम्', प्रेम चित्रम् पेल्लि विचित्रम्' पिच्चि पुल्लैय्या' जैसी कुछ फिल्में व्यावसायिक दृष्टि से अच्छी नहीं रहीं किंतु उनकी फिल्में 'ने तेरा पोलिस' 'बाबा बाबा पत्रीस' व्यावसायिक दृष्टि से अच्छी रहीं और उन्होंने नरेश को शीर्षस्थ नायकों की पंक्ति में ला दिया। चित्रम् भलरे विचित्रम् उनकी पहली सिल्वर जुबली फिल्म है।

तथापि, खलनायक से नायक बने मोहन बाबू ने शीर्षस्थ नायकों को भौचक कर दिया। मोहन बाबू लगभग 300 फिल्मों में अभिनय कर चुके हैं और शीर्षस्थ खलनायक हैं। 1991 में उनकी लगातार तीन फिल्में सुपरहिट हुई।

मोहन बाबू की पहली सुपर हिट फिल्म थी अल्लुडुगारु थी, जिसमें उन्हें एक धनी व्यक्ति की सुंदर बेटी का पति बनकर इसलिए रहना पड़ता है कि धनी व्यक्ति बेटी का विवाह न कर पाने के दुख में मर न जाए। के. राघवेन्द्र राव द्वारा निर्देशित इस फिल्म को मोहन बाबू, शोभना और राम्य कृष्णनन् के साथ अपने कंधे पर लादकर विजय स्तंभ तक ले गए।

फिर उनकी फिल्म 'असेम्बली राउडी' आई जिसमें राज्य विधान सभाओं में होने वाली घटनाओं की निर्मम विवेचना है और राजनीतियों तथा पुलिस के परिसंबंध पर तीखी टिप्पणियाँ हैं। जब टी.डी. पी के सदस्यों ने अभिनेता के विरुद्ध विशेषाधिकार प्रस्ताव लाना चाहा और इस फिल्म पर बंदिश लगानी चाही तो इस फिल्म में नाम को लेकर सत्ताधीन आंध्रप्रदेश विधान सभा में दो दिन तक बहस हुई। आखिरकार सब कुछ प्रचार प्रपंच साबित हुआ और बॉक्स ऑफिस पर इसका अद्भुत असर हुआ। दिव्या भारती के बेधड़क प्रदर्शन ने इस फिल्म का व्यवसायिक मूल्य बढ़ा दिया।

रौडीगारि पेल्लाम नामक फिल्म के साथ मोहन बाबू ने हैट ट्रिक कर दी। इसमें वे मुख्य भूमिका में हैं और उनकी जोड़ीदार शोभना ही है। यह फिल्म पूरे राज्य में सफल रही। दर्शकों के मन को यह बात नहीं खटकी कि यह फिल्म एक सफल तमिल फिल्म 'पुथिया पथई' की निकृष्ट पुनर्निर्मिति थी।

इस वर्ष की एक अन्य सफल फिल्म थी सीतारामैय्यागारि मनवरालु, जिसमें नागेश्वर राव ने नई अभिनेत्री मीना के साथ काम किया है। इसका निर्देशन क्रांति कुमार ने किया। यद्यपि नागेश्वर राव इस वर्ष नन्दी पुरस्कार पाने से वंचित रह गए तथापि उन्हें प्रतिष्ठापूर्ण दादासाहेब फाल्के अवार्ड प्राप्त हुआ।

ए. नागेश्वरराव की नवीनतम फिल्म : सीता रमैया गिरी मनवारालु

• उड़िया सिनेमा

सिर्फ दो सफल फिल्में

वर्ष 1991 उड़िया फिल्म निर्माताओं, कलाकारों और तकनीशियनों के लिए निराशा लेकर आया। इस वर्ष में न्यूनतम निर्माण हुआ, न्यूनतम सफलता मिली और अधिकतम असफलताएँ मिली। वर्ष के दौरान रिलीज हुई आठ उड़िया फिल्मों में से दो फिल्में हिट हुई और एक फिल्म व्यावसायिक दृष्टि से औसत रही।

वर्ष की उल्लेखनीय फिल्म थी **'वस्त्रहरण'** जिसकी तुलना **'माहेरची साड़ी'** (मराठी) और **बेदेर माये ज्योतसाना** (बंगला) से की जा सकती है। वस्त्रहरण ने बॉक्स ऑफिस पर लगभग 60 लाख रु. की राशि एकत्र की।

शिशिर मिश्र द्वारा निर्देशित और रवीन्द्र साहू द्वारा निर्मित वस्त्रहरण में उत्तम मोहन्ती, मिहिर दास, हारा पटनायक, महाश्वेता , अपराजिता, वैशाली, दुखीराम, ग्लोरिया मोहन्ती और सुजाता आनंद जैसे अनेक लोकप्रिय सितारे हैं।

वस्त्रहरण की कहानी एक सताई गई औरत के इर्दगिर्द घूमती है जो कि आखिर में बदला लेती है। यह फिल्म मारधाड़ और मसाले से भरी फिल्म है। इस फिल्म में संवाद शीर्षानन्द दास कानूनगो ने लिखे हैं, गीत निज़ाम तथा शीर्षानंद के हैं, संगीत किशोर - तिलकराज का है। इस फिल्म को सभी ने सराहा।

वर्ष की दूसरी हिट फिल्म थी **'की हेवा सुआ पोशिले'** । इसका निर्माण रवि साहू ने किया और निर्देशन वसंत साहू ने। इसमें न तो व्यावसायिक प्रपंच हैं और न तकनीकी गुणवत्ता है। यह कम बजट वाली मनोरंजक फिल्म है और इसने लगभग 30 लाख रु. की राशि एकत्रित की। भावुकतापूर्ण कहानी वाले पारिवारिक नाटक और मधुर गीतों ने **'की हेवा सुआ पोशिले'** को सफल बनाया। अभिनेता विजय मोहन्ती, अभिनेत्री अनिता दास, संवाद लेखक विजय मिश्र और गीतकार - संगीतकार स्वरूप नायक ने इस फिल्म को सफलता दिलाई।

'अमा घरा अमा संसार' नामक एक अन्य पारिवारिक मनोरंजक फिल्म ने 25 लाख रु. की औसत राशि एकत्रित की। इसका निर्माण प्रद्युम्न लेन्का ने किया। निर्देशन रवि किनागी ने और इसके कलाकार हैं उत्तम मोहन्ती, अजित दास, विजय मोहन्ती, सुजाता आनंद, गोपा और प्रयुक्ता। यह दो भाइयों और उनकी पत्नियों की कहानी है, जो कि संघर्ष, भ्रम, रोमांस, हिंसा और भावुकता से भरी हुई है और सुखांत हैं। अक्षय मोहन्ती के अच्छे संगीत और राजन किनागी की फोटोग्राफी ने इस फिल्म की मनोरंजकता को बढ़ाया है। रवि किनागी द्वारा निर्देशित **'परदेशी चढ़ेल'** प्रशांत नंदा द्वारा निर्देशित **'लूट तरज'** और मोहम्मद मोहसिन द्वारा निर्देशित **तू बिना अन्य गति नाहीं** कुछ क्लैप फिल्में हैं।

वर्ष के दौरान कुछ उल्लेखनीय फिल्में निर्माणाधीन थीं जो की 1992 में रिलीज होंगी। **'माँ'** , जिसमें राखी ने काम किया है, अभिनेता हेमन्त दास की पहली फिल्म 'सुलोचना' हला पटनायक द्वारा निर्देशित 'कपाला लिखाना' और अशोक शर्मा द्वारा निर्देशित' ममतारा मंदिर 'शामिल हैं।

इंडियन पेनोरमा 1992 में प्रदर्शित : आदि मीमांसा

● फिल्म सर्वेक्षण : मराठी

चौराहे पर खड़ा है मराठी सिनेमा

☐ सुधीर नांदगाँवकर

सुपरहिट 'माहेरची साड़ी' में उषा नाडकर्णी और अलका कुबल

मराठी सिनेमा के लिए 1991 का वर्ष काफी निराशाजनक रहा। वर्ष के प्रथम 6 माह में कोई भी फिल्म बॉक्स आफिस पर उल्लेखनीय सफलता प्राप्त न कर सकी। गुणवत्ता में गिरावट चिंताजनक थी क्योंकि अशोक सराफ तथा लक्ष्मीकान्त बेर्डे जैसे सुपर सितारों वाली फिल्में भी फ्लॉप हो गयीं। असफलता का कारण था अनगढ़ हाथों में कारण विषय तथा कहानी का सत्यानाश होना। पतन के कारणों की व्याख्या करने वाले के एक पक्ष के अनुसार मराठी फिल्मों को उत्कर्ष के शिखर पर पहुँचाने वाली *कॉमेडी* का असर खत्म होने लगा था। कतिपय विख्यात लेखक एवं निर्देशक कॉमेडी से ऊब कर नये विषयों एवं प्रस्तुति शैलियों को तलाशने लगे थे।

वर्ष 91 के प्रथम 6 माहों में 14 फिल्में प्रदर्शित हुई तथा लगभग सभी असफल रहीं क्योंकि उनमें दर्शकों के लिये न तो नवीनता थी और न ही आकर्षण। *कॉमेडी* जो पिछले कई वर्षों से मराठी सिनेमा की ताकत बनी हुई थी, पूरी तौर पर निचोड़ी जा चुकी थी। व्यंग्य, विनोद, हास्य-परिहास, तथा चुहल रोमांस का पूरा शोषण किया जा चुका था। शायद इसीलिए वर्ष की उक्त अवधि में कोई कॉमेडी प्रदर्शित नहीं हुई। जो फिल्में प्रदर्शित हुई, वे सभी पिछले वर्षों में प्रदर्शित हुई बुरी से बुरी फिल्मों से भी बुरी थीं।

इस दयनीय स्थिति पर फिल्म निर्माताओं को गंभीरता से विचार करना चाहिये तथा स्थिति से उबरने की कोशिशों का सिलसिला शुरू करते हुए नये विषयों एवं कहानियों की तलाश करनी चाहिये। ऐसा करने पर ही अगले वर्ष बॉक्स ऑफिस पर सफलता की उम्मीद की जा सकती है।

वर्तमान कॉमेडी लहर के प्रणेता अभिनेता व निर्देशक सचिन भी अब *सीरियो-कॉमिक* विषयों की ओर मुड़ रहे हैं। उनकी नयी फिल्म *आत्या* घरट घरोबा सन 1948 में प्रदर्शित हिन्दी फिल्म *पगड़ी* से प्रभावित कही जा रही है। सचिन इस फिल्म के निर्माता व निर्देशक तो हैं ही साथ ही अशोक सराफ, लक्ष्मीकान्त बेर्डे एवं सुप्रिया के साथ मुख्य भूमिका भी कर रहे हैं। यह फुटपाथ पर बसर करने वाले ऐसे व्यक्ति की कहानी है जिसे हर साल तीन माह तक अमीर आदमी की तरह शानदार जिन्दगी बिताने का मौका मिलता है।

बुजुर्ग निर्माता बालासाहब सरपोलदार की नयी फिल्म झेड.पी. (ज़िला परिषद) वर्तमान सामाजिक भ्रष्टाचार पर केन्द्रित है। इसमें हिन्दी फिल्मों के विख्यात खलनायक सदाशिव अमरापुरकर की मुख्य भूमिका हैं। फिल्म का निर्देशन 76 वर्षीय अनन्त माने कर रहे हैं। बताया जाता है कि फिल्म के सभी पक्ष उत्तम हैं।

अभिनेत्री से निर्माता बनी स्मिता तलवलकर जिसकी फिल्म *कलत-नकलत* को पिछले वर्ष राष्ट्रीय अवार्ड मिला था उनकी नयी फिल्म *चौकट राजा* है। उसे बंगलौर के 23वें अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह के इंडियन पेनोरमा में शामिल किया गया था। यह एक ऐसे व्यक्ति की कहानी है जिसका मस्तिष्क एक दुर्घटना के कारण प्रभावित हो जाता है। उसे बस अपनी स्कूल की उस साथिन की याद बाकी रह जाती है जो विवाहित हो चुकी है।

कई वर्षों के बाद दोनों की मुलाकात होती है। लीक से हटकर इस नये विषय पर निर्देशन का काम भी बिलकुल नये निर्देशक संजय सुरकर ने किया है जो नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा से प्रशिक्षित है। फिल्म में स्मिता तलवलकर की स्मरणीय भूमिका है।

अभिनेता निर्देशक महेश कोठारे ने अब तक कुल चार फिल्में बनाई हैं तथा चारों ही हिट रहीं। शतप्रतिशत सफल कथा का यह नायक भी अब कॉमेडी का पल्लू छोड़कर कैशोर्य वय की प्रेम कथाओं की ओर मुड़ गया है। उनकी नयी फिल्म

अरविन्द सामन्त की *जीवलागा* है। फिल्म में नायक-नायिका भी नये हैं तथा किशोर वय के हैं। तुषार दलवी एवं रेशमा रिपानिस ने इससे पहले किसी फिल्म में काम नहीं किया था। महेश ने इस फिल्म में अभिनय नहीं किया है।

दादा कोण्डके के भतीजे विजय कोण्डके जो अब तक अंकल फिल्मों के वितरण का काम देख रहे थे स्वयं भी निर्माण के क्षेत्र में उतर आये हैं। उन्होंने *माहेरची साड़ी* नामक फिल्म का निर्देशन किया है। यह फिल्म पारिवारिक ड्रामा है तथा गंभीर विषय पर आधारित हैं। इसकी सफलता चौंकाने वाली है। हलकी-फुलकी हास्य फिल्में बनाकर सफलता अर्जित करने वाले अंकल के इस भतीजे ने पूरे आत्मविश्वास के साथ गंभीर विषय पर फिल्म बनाने का साहस किया है।

महाराष्ट्र सरकार की मनोरंजन कर वापसी योजना से आकर्षित होकर कई ग़ैर महाराष्ट्रीय लोगों ने भी मराठी फिल्मों के निर्माण क्षेत्र में कदम रखा है। हिन्दी फिल्मों के जाने-माने निर्माता प्रकाश मेहरा ने मराठी फिल्म सगले सरकेच के निर्माण की घोषणा की है। उन्होंने फिल्म के निर्देशन का कार्य प्रदीप दीक्षित को सौंपा है जो फिल्म इन्स्टीट्यूट के डिप्लोमाधारी हैं। मराठी फिल्मों की ओर जहाँ एक ओर हिन्दी के निर्माता आकर्षित हो रहे हैं वहीं दूसरी ओर मराठी फिल्मों के कलाकार हिन्दी की ओर मुड़ रहे हैं। अश्विनी भावे, वर्षा उसगाँवकर, लक्ष्मीकांत बेर्डे, तथा अन्य कई मराठी कलाकारों को हिन्दी फिल्मों ने इतना व्यस्त कर दिया है कि उनके पास मराठी फिल्मों को *डेट्स* देने का भी वक्त नहीं रहा। अशोक सराफ तो फिल्मों से नाता तोड़ थियेटर की ओर मुड़ चुके हैं। अमोल पालेकर, डॉ. जब्बार पटेल, विजया मेहता आदि जो समानान्तर सिनेमा के महारथी माने जाते थे अब मातृभाषा में कोई फिल्म नहीं बना रहे हैं। विजया मेहता ने स्वयं को रंगमंच पर व्यस्त कर लिया हैं। अमोल दूरदर्शन धारावाहिकों में उलझे हैं तथा जब्बार पटेल भारत सरकार के लिये डॉ. अम्बेडकर के जीवन पर फिल्म बना रहे हैं।

उम्मीद की किरणों के रूप में रंगमंच से सिनेमा की ओर हाल ही में मुड़े कुछ व्यक्तित्व हैं। इन नयी प्रतिभाओं की उपलब्धियों का आकलन तो आने वाले दिनों में हो सकेगा। ●

● मार्जिनल सिनेमा

राजस्थानी सिनेमा : रेत पर पाँव के निशान

□ **श्याम माथुर**

वर्ष 1991 राजस्थानी सिनेमा का स्वर्ण जयंती वर्ष था, मगर पचास साल का यह सफर इतना निराशाजनक रहा है कि अन्य क्षेत्रीय भाषाई सिनेमा से राजस्थानी फिल्मों की तुलना करना बेमानी लगता है। एक तरफ जहाँ तेलुगू, तमिल, मलयालम, कन्नड़, मराठी, गुजराती, असमिया, उड़िया, पंजाबी आदि भाषाओं में हर साल कई फिल्में बन रही हैं वहीं दूसरी तरफ राजस्थानी फिल्मों का यह हाल है कि इनका निरंतर निर्माण भी नहीं हो रहा है। पिछले पचास सालों में कुल 47 फिल्में राजस्थानी भाषा में बनी और इनमें भी गुणवत्ता और सिनेमाई मूल्यों के लिहाज से एक भी फिल्म उल्लेखनीय नहीं कहीं जा सकती। अमूमन हर राजस्थानी फिल्म का कथानक पारम्परिक लोक कथाओं और दैवी चमत्कारों पर आधारित होता है और उनका प्रस्तुतिकरण पूरी तरह बम्बइया फार्मूला फिल्मों से प्रभावित होता है। अपनी माटी की गंध और अपनी संस्कृति की झलक उनमें नहीं के बराबर होती है।

पहली राजस्थानी फिल्म 1942 में प्रदर्शित हुई। *नजराना* शीर्षक से बनी इस फिल्म के निर्देशक थे जी.पी. कपूर और इसका निर्माण अनुपम चित्र के बैनर तले हुआ था। महिपाल इस फिल्म के नायक थे और नायिका थीं नसीम। इस फिल्म को हिन्दी में भी प्रस्तुत किया गया पर दोनों ही भाषाओं में यह फिल्म असफल रही। हिन्दी सिनेमा के विख्यात अभिनेता महिपाल का फिल्मी कैरियर इसी फिल्म से शुरू हुआ था।

पहली फिल्म की असफलता का परिणाम यह हुआ कि बाद में दो दशकों तक किसी ने राजस्थानी भाषा की फिल्म का निर्माण करने में जरा भी रुचि नहीं दिखाई। 1960 में पंडित इन्द्र ने इस ओर ध्यान दिया और उनके प्रयत्नों के फलस्वरूप 1961 में *बाबा सारी लाडली* प्रदर्शित हुई। आदर्श लोक संस्था के झण्डे तले बनी यह फिल्म पं. इन्द्र के नाटक *देवता* पर आधारित थी। हीरालाल, नाना पलसीकर और हेलेन जैसे कलाकारों ने इस फिल्म में अभिनय किया था। फिल्म का गीत-संगीत पक्ष मजबूत होने के कारण फिल्म मे सफल रही। तब घर-घर में इस फिल्म के गीत गूँजा करते थे। *बाबा सारी लाडली* की सफलता से उत्साहित होकर कुछ और निर्माता-निर्देशक आगे आये और 1963 में तीन राजस्थानी फिल्में प्रदर्शित हुई- *बाबा रामदेव, बाबा रामदेव पीर* और *नानी बाई को मायरो*। पहली दो फिल्में एक ही दिन प्रदर्शित हुई थीं और इनका कथानक भी एक-सा था। प्रस्तुतीकरण में विभिन्नता होने के कारण *'बाबा रामदेव'* तो सफल रही जबकि *बाबा रामदेव पीर* फ्लॉप हो गई। *बाबा रामदेव* का निर्माण रामराज नाहटा ने किया था और निर्देशक थे मणिभाई व्यास। भरत व्यास और नवल माथुर भी इस फिल्म से जुड़े हुए थे। कमल दाधीच के निर्देशन में बनी *नानी बाई को मायरो* को आंशिक सफलता ही मिल पायी।

अगले साल (1964 में) भी तीन राजस्थानी फिल्में प्रदर्शित हुईं। पहली फिल्म *गणगौर* का निर्देशन कमल दाधीच ने किया था। लोक कथा पर आधारित होने के कारण यह फिल्म सफल रही। फिल्म के गीत भी खूब चले। हिन्दी सिनेमा की विख्यात अभिनेत्री *अनिता गुहा* ने इस फिल्म में केन्द्रीय भूमिका निभाई थी। बाकी दो फिल्में *ढोला-मरवण* और *धणी लुगाई* बुरी तरह पिट गयी, हालाँकि इन फिल्मों में महिपाल, नसीम बानो, जगदीप, राजेन्द्र नाथ, जयपाल और भगवान जैसे कलाकारों ने काम किया था। 1965 में *गोपीचंद भरथरी* नाम से एक ही फिल्म आई और वह भी असफल रही।

राजस्थानी फिल्मों की लगातार असफलता से हताश होकर निर्माता-निर्देशकों ने इस ओर रुचि लेना फिर छोड़ दिया। चार साल तक खामोशी रही, फिर 1969 में *गोगाजी पीर* प्रदर्शित हुई और असफल रही। चार साल तक फिर कोई फिल्म नहीं आयी। 1973 में राजस्थानी भाषा की पहली रंगीन फिल्म *लाज राखो राणी सती* प्रदर्शित हुई। इसके निर्माता थे विक्रम और निर्देशन कांतिलाल दवे का था। इस फिल्म में अनुपमा, राजन, दुलारी, रजनीबाला आदि गुजराती कलाकारों ने काम किया था। पर यह फिल्म

भी दर्शकों पर कोई छाप नहीं छोड़ सकी और बुरी तरह असफल रही। इसका परिणाम यह हुआ कि आठ साल तक किसी निर्माता-निर्देशक ने राजस्थानी फिल्म बनाने का साहस नहीं किया।

सत्येन के निर्देशन में बनी *सुपातर बीनणी* 1981 में प्रदर्शित हुई। इसे अब तक की सर्वाधिक सफल राजस्थानी फिल्म माना जाता है। इसकी सफलता का एक बड़ा कारण यह था कि दर्शकों को एक लम्बे अर्से बाद अपनी भाषा की फिल्म देखने को मिली थी। फिल्म के गीत भी काफी चर्चित रहे। शिरीष कुमार और नीलू फिल्म के नायक-नायिका थे। नायिका प्रधान फिल्म होने के कारण नीलू का नाम, खूब चमका और उसे कई फिल्मों के लिए साइन कर लिया गया। इस फिल्म की सफलता से प्रेरित होकर हिन्दी फिल्मों की अभिनेत्री *विद्या सिन्हा* ने भी 1982 में एक राजस्थानी फिल्म प्रदर्शित की। मूल गुजराती फिल्म *जीवी रैबारण* को उन्होंने राजस्थानी में डब करके *सती सुहागण* शीर्षक से प्रस्तुत किया। यह फिल्म सिर्फ जोधपुर में ही प्रदर्शित हो पायी। वहाँ भी बुरी तरह पिटने के कारण इसे अन्य क्षेत्रों में प्रदर्शित ही नहीं किया गया। इसी वर्ष *वीर तेजाजी* और *गणगौर* भी प्रदर्शित हुई। यहं दोनों फिल्में व्यावसायिक दृष्टि से सफल रहीं। *वीर तेजाजी* में रामेश्वरी, दीपक सेठ, नीलू आदि कलाकारों ने काम किया था। इस फिल्म से नवल माथुर की भी स्वतंत्र निर्देशक के रूप में पहचान बनी।

कुछ फिल्मों की सफलता के बावजूद फिल्म निर्माण की गति धीमी ही रही। 1983 में भी सिर्फ तीन फिल्में ही प्रदर्शित हुईं और तीनों को कोई खास सफलता नहीं मिली। इस साल प्रदर्शित *म्हारी प्यारी चनणा* में सत्यजीत पुरी, पूजा सक्सेना, रमेश तिवारी, बीना, श्याम आदि कलाकारों ने अभिनय किया था। फिल्म का तकनीकी पक्ष भी प्रबल था। *सुहागण रो सिणगार* में गजानन मानव, शेखर पुरोहित, टुनटुन और मधुमालिनी जैसे कलाकार थे पर ये भी फिल्म को सफल नहीं बना पाये। श्रीकृष्ण मूवीज की *प्रिया मिलण री आस* भी इसी साल प्रदर्शित हुई। प्रेमनाथ असावा इस फिल्म के निर्माता थे और कंवर जगदीश निर्देशक। अभिषेक, सुहासिनी, अनुश्री, अशोक सक्सेना आदि कलाकारों ने इसमें अभिनय किया था। मनोरमा, मोहन चोटी, बीरबल, मनमौजी जैसे बम्बइया कलाकारों को भी इस फिल्म में शामिल किया गया था फिर भी फिल्म को आंशिक सफलता ही मिली। बाद के दो वर्षों में *रामू चनणा, चोखो लागै सासरियो, सावण री तीज, देराणी-जेठाणी* आ और *नणद-भोजाई* आदि फिल्में आयी और बिना कोई प्रभाव छोड़े चली गयी।

पिछले पाँच वर्षों में ,*बाई चाली सासरिए बेटी राजस्थान री, बींदणी वोट देणन चाली, रमकूड़ी झमकूड़ी, दादो सा री लाडली, सुहाग री आस, भोमली* और *बंधन वचना रो* जैसी फिल्में प्रदर्शित हुई लेकिन इनमें से कोई फिल्म टिकट खिड़की पर धूम नहीं मचा सकी। अलबत्ता *बाई चाली सासरिए* और *दादो सा री लाडली* ने औसत व्यवसाय किया।

अब स्थिति यह है कि राजस्थान के लोगों में भी अपनी भाषा की फिल्मों के प्रति उत्साह नहीं रहा हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि राजस्थानी फिल्म के नाम पर उन्हें देखने मिलेंगे, वही बासी कहानी, ऊबाऊ लटके-झटके, द्विअर्थी संवाद और अश्लील गीत। उनमें अपना परिवेश, अपनी संस्कृति तलाश करने पर नाकामी ही हाथ लगती है। हर बार वही चमत्कारों में रची-बसी, अंधविश्वासों को बढ़ावा देने वाली फिल्में उन्हें देखने को मिलती हैं। पिछले तीस वर्षों से राजस्थानी सिनेमा से जुड़े निर्माता-निर्देशक

राजस्थानी फिल्मों के लाडले : मोहन चोटी

नवल माथुर इसे फिल्मकार की व्यावसायिक मजबूरी बताते हैं। मगर वे कहते हैं कि कुछ फिल्मकार चमत्कारों के जरिये भी कुछ न कुछ आदर्श पेश करने की कोशिश करते हैं। अंधविश्वास के पीछे छुपे तर्क को भी दर्शाते हैं लेकिन दिक्कत वही है कि दर्शक चमत्कार ही देखना चाहते हैं, नहीं दिखाएँ तो फिल्म पिट जाती है।

फिल्मकार सरकारी मदद की कमी का रोना भी खूब रोते हैं। यही सही है कि प्रदेश सरकार की तरफ से उन्हें कोई उल्लेखनीय सहायता हासिल नहीं हो पाती। राजस्थानी फिल्म को मनोरंजन कर से भी पूरी छूट नहीं मिलती। अन्य राज्यों में जहाँ सरकारें भाषाई सिनेमा को भरपूर सहूलियत और मदद देती हैं, वहीं राजस्थान सरकार इस दिशा में कोई पहल नहीं करती। सरकारी नुमाइंदों का कहना है कि जिस तरह की फिल्में बन रही हैं, उन्हें देखकर लगता है कि क्या इस तरह की फिल्मों को सिर्फ इस आधार पर सहायता उपलब्ध कराई जाए कि उनकी भाषा राजस्थानी है? यह तो देखना ही होगा कि जिसे राजस्थानी फिल्म बताया गया है उसमें यहाँ का शौर्य, यहाँ का गीत-संगीत और यहाँ की विशिष्टताओं के दर्शन अवश्य हों। सिर्फ खिचड़ी भाषा का इस्तेमाल करने से ही कोई फिल्म राजस्थानी फिल्म नहीं हो जाती। ●

अब तक प्रदर्शित राजस्थानी फिल्में

वर्ष	फिल्म	निर्देशक
1942	*नजराना*	जी.पी. कपूर
1961	*बाबा सा री लाडली*	आदर्श
1963	*बाबा रामदेव*	रामराज नाहटा
1963	*बाबा रामदेव पीर*	एस.पी. कल्ला
1963	*नानी बाई को मायरो*	कमल दाधीच
1964	*गणगौर*	मणिभाई व्यास
1964	*ढोला मरवण*	मणिभाई व्यास
1964	*धणी लुगाई*	आदर्श
1965	*गोपीचंद भरथरी*	कमल दाधीच
1969	*गोगाजी पीर*	आनंद दसानी
1973	*लाज राखो राणीसती*	कांतिलाल दवे
1981	*सुपात्तर बीनणी*	सत्येन
1982	*वीर तेजाजी*	नवल माथुर
1982	*सती सुहागण*	श्रीधर प्रसाद
1982	*गणगौर*	हरीश टाक
1983	*म्हारी प्यारी चनणा*	जतिन कुमार
1983	*सुहागण रो सिणगार*	गजानन मानव
1983	*पिया मिलण री आस*	कंवर जगदीश
1983	*चोखो लागै सासरियो*	सैयद पीर
1984	*रामू चनणा*	शिरीष कुमार
1984	*सावण री तीज*	नवल माथुर
1985	*देराणी - जेठाणी*	विजय चौहान

वर्ष	फिल्म	निर्देशक
1985	*नणद भोजाई*	प्रभाकर मंडलोई
1985	*डूगर रो भेद*	बाल फिल्म समिति
1987	*थारी म्हारी*	आर.एल. मिश्रा
1987	*धरम भाई*	शांतिलाल सोनी
1987	*जय बाबा*	रामदेव ऋषिराज
1988	*करमा बाई*	उदयकिशन पुरोहित
1988	*नानी बाई को मायरो*	रमनेश पुरी
1988	*बाई चाली सासरिए*	मोहन सिंह राठौड़
1988	*जोग संजोग*	आर.के. जोशी
1988	*बिकाऊ टोरडो*	प्रदीप सक्सेना
1988	*ढोला मारु*	मेहुल कुमार
1989	*बाई सा रा जतन करो*	आर.के. जोशी
1989	*सतवादी राजा हरिश*	चन्द्र शांतिलाल सोनी
1989	*घर में राज लुगायाँ को*	संदीप वैष्णव
1989	*रमकूड़ी झमकूड़ी*	मोहन सिंह राठौड़
1989	*बेटी राजस्थान री*	नवल माथुर
1989	*चाँदा थारे चाँदणै*	मोहन कविया
1989	*माँ म्हने क्यूँ परणाई*	सुरेन्द्र बोहरा
1989	*बींदणी वोट देणन चाली*	सुदर्शन लाल
1990	*वारी जाऊँ बालाजी*	रमनेश पुरी
1990	*दादो सा री लाडली*	मोहन सिंह राठौड़
1991	*भोमली*	मोहन सिंह राठौड़

• खण्ड दो

भारत का फिल्म एवं टेलीविजन संस्थान

☐ शशिकांत किणीकर

फिल्म निर्माण के विभिन्न पहलुओं की संगठित एवं व्यवस्थित शिक्षा प्रदान करने के लिए सन् 1960 में 'फिल्म इन्स्टीट्यूट ऑफ इण्डिया का गठन किया गया है। नियमित प्रशिक्षण कार्यक्रमों की शुरुआत में पूर्व में यहाँ तीन माह की संक्षिप्त अवधि के रिफ्रेशर पाठ्यक्रमों का आयोजन प्रयोगात्मक तौर पर किया गया है। इन पाठ्यक्रमों में फिल्म उद्योग में कार्यरत तकनीशियनों को आधुनिक उपकरणों एवं विधियों की जानकारी दी गई है। जुलाई 1961 से संस्थान में नियमित पाठ्यक्रम शुरू हुए है।

संस्थान को अक्टूबर 1974 में 'आटोनोमस सोसायटी' घोषित कर दिया गया, जिससे वह अपनी नीतियों एवं योजनाओं का निर्धारण स्वयं कर सके। ऐसे विषयों पर निर्णय एकेडिमक काउंसिल करने लगी तथा वित्तीय मामलों पर फैसले का अधिकार 'फाइनेंस कमेटी' को दिया गया । संस्थान पेरिस की सिलेक्ट (CILECT) से सम्बद्ध है एवं यूनेस्को के क्षेत्रीय प्रशिक्षण केन्द्र के रुप में भी मान्यता प्राप्त है। सन् 1974 से संस्थान में 'टेलीविजन विंग' भी जुड़ गया नया नामकरण हुआ 'फिल्म एण्ड टेलीविजन इन्स्टीट्यूट ऑफ इण्डिया।

संस्थान फिल्म निर्माण से जुड़ी सभी तकनीकों का प्रशिक्षण देता है। इसके प्रमुख उद्देश्यों में जिन बिन्दुओं को सम्मिलित किया गया है वे निम्नानुसार हैं।

(अ) फिल्म निर्माण एवं उससे जुड़े सारे पहलुओं पर प्रशिक्षण।

(ब) निर्धारित पाठ्यक्रम पूरा करने वाले सफल प्रशिक्षणार्थियों को 'डिप्लोमा' तथा 'प्रमाण पत्र' प्रदान करना।

(स) भारत में फिल्म तकनीशियनों की प्रशिक्षण गतिविधियों में समायोजन करता ।

संस्थान ने उपरोक्त लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए तीन वर्षीय पाठ्यक्रमों को प्रारंभ किया। निम्नलिखित विषयों में पाठ्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं।

(1) फिल्म निर्देशन

(2) फिल्म छायांकन

(3) ध्वनि रेकार्डिंग एवं इन्जीनियरिंग

(4) फिल्म एडिटिंग

प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए पूर्णकालिक शिक्षकों की नियुक्ति की गई तथा साथ ही देश एवं विदेश के विशेषज्ञों को अतिथि व्याख्याता के रुप में आमंत्रित करने की परम्परा भी है। विद्यार्थियों की नियमित उपस्थिति पर विशेष ध्यान दिया जाता है। समयबद्ध टेस्ट भी लिए जाते हैं। डिप्लोमा पाठ्यक्रम के अंत में फिल्म का निर्माण करना होता है। इन फिल्मों को कई बार राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म महोत्सवों में भेजा जाता है। ऐसी फिल्मों को अक्सर 'अवार्ड' एवं 'प्रशंसाएं' मिली है। इस प्रकार संस्थान दिनों दिन राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय पहचान बना रहा है। यहाँ के छात्र, अध्यापन एवं अध्यापक विधियाँ चर्चित और अनुकरणीय बन गई हैं।

तीन दशकों की अवधि में ही संस्थान से प्रशिक्षित फिल्मकारों ने फिल्मोद्योग में विशिष्ट स्थान प्राप्त कर लिया । अदूर गोपालकृष्णन , केतन मेहता, सुभाष घई, सईद मिर्जा, के.के. महाजन; विनोद चोपड़ा ऐसे नाम हैं, जो भारतीय फिल्मोद्योग में कीर्ति पताका फहरा कर संस्थान का नाम रोशन कर रहे है। ध्वनि रेकार्डिंग लेबोरेटरियाँ तो पूरी तौर पर संस्थान के फिल्म विंग के डीन जॉन शंकरानन्द तथा नेशनल फिल्म आर्काइव के निर्देशक इन्जीनियर इसी संस्थान के पूर्व छात्र है।

शैक्षणिक वर्ष 1990-91 में यहाँ 94 छात्रों के नाम दर्ज हुए जिनमें 9 विदेशी हैं। संस्थान के लिए स्वीकृत बजट एवं खर्च के तीन सालों के ऑकड़ों पर नजर डालने से यहाँ की स्थिति की साफ तस्वीर सामने आती है।

(रुपये लाखों में)

सन्	स्वीकृत बजट	वास्तविक खर्च
1986-87	183.85	189.06
1987 - 88	203.44	216.95
1988-89	252.76	238.90

संस्थान के पास 22 हजार पुस्तकों का विशाल संग्रह है। लगभग 100 पत्र-पत्रिकाएं भी नियमित आती है। यहाँ 1900 देशी, विदेशी फिल्मों के प्रिन्ट भी है जिनमें लघु एवं फीचर फिल्में हैं। फिल्म एण्ड टेलीविजन इन्स्टीट्यूट की कार्यशैली काफी भिन्न है। जब संस्थान 'आटोनॉमस' नहीं था तब प्रमुख प्राचार्य कहलाता था। अब यह पद निदेशक कहलाता है लगभग सारे अधिकार निदेशक के पास हैं। पिछले तीस वर्षों में निदेशक (प्राचार्य) के पद पर जो लोग रहे उनका विवरण निम्नानुसार है।

	नाम	अवधि
1.	श्री गजानन जागीरदार	1961 - 1962
2.	श्री जगत मुरारी	1962 - 72
3.	श्री डी.एन. दीक्षित	1972 - 73
4.	श्री गिरीश कर्नाड	1974-75
5.	श्री एन.वी. के मूर्ति	जन. 1976 से सित. 1976

6.	श्री जगत मुरारी	अक्टूबर 1976 से 1979
7.	श्री एन.वी. के मूर्ति	1979 - 84
8.	श्री लाल जसवानी	1984 - 86
9.	के.जी. वर्मा	1986 से जून 91
10.	श्री वी.बी. चन्द्रा	जून 1991 से

यह एक रोचक तथ्य है कि कोई भी प्राचार्य अथवा निदेशक अपने कार्यकाल में चैन से काम नहीं कर पाया। एक ओर तो उन्हें छात्रों द्वारा विभिन्न मांगों के लिए चलाए गए अभियानों में जूझना पड़ता साथ दूसरी ओर प्रशासन एवं स्टॉफ द्वारा निर्मित समस्याओं का सामना करना पड़ता था। इन कारणों से कई बार उनके सामने संकट आए तथा विवश होकर उन्हें पद त्याग करना पड़ा। संस्थान में शोध एव शोध प्रकाशन के लिए पृथक पद है मगर पिछले तीन दशकों में इस दिशा में भी कोई खास काम नहीं हुआ है। सिर्फ दादा साहब फालके पर थोड़ा बहुत शोध कार्य किया गया है।

संस्थान का दीक्षांत समारोह पूर्व में काफी आकर्षक एवं भव्य हुआ करता था। फिल्म उद्योग की बड़ी-बड़ी हस्तियाँ यहाँ आती थीं ताकि नई प्रतिभाओं को खोज कर उनका उचित उपयोग कर सके। फिल्म निर्माण के केन्द्र नगरों मे 'ट्रेड शो' भी आयोजित किए जाते थे ताकि फिल्म निर्माता संस्थान के छात्रों की प्रतिभा को रूबरू देख सके एवं उन्हें उचित काम मिल सके। किन्तु अधिकारियों की अनिश्चित एवं उदासीन नीति के कारण अब ऐसे 'शो' बन्द हो गए हैं।

यह शैक्षणिक संस्थान जो अपने आप में विशिष्ट एवं विशाल है तथा एशिया में अपने किस्म का अकेला हैं कई मामलों में लाभप्रद स्थितियों में है। प्रभात फिल्म कम्पनी के परिसर में आधुनिक उपकरणों एवं प्रशिक्षित अध्यापकों से सज्जित हैं। यदि यहाँ की समस्याओं पर गंभीरता से ध्यान देकर उन्हें दूर कर दिया जाए, तो प्रगति के पथ पर पूरी तेजी से चल पड़ेगा।

पुणे फिल्म संस्थान के प्रथम प्राचार्य गजानन जागीरदार, अतिथि रामानंद सागर और संचालक जगतमुरारी
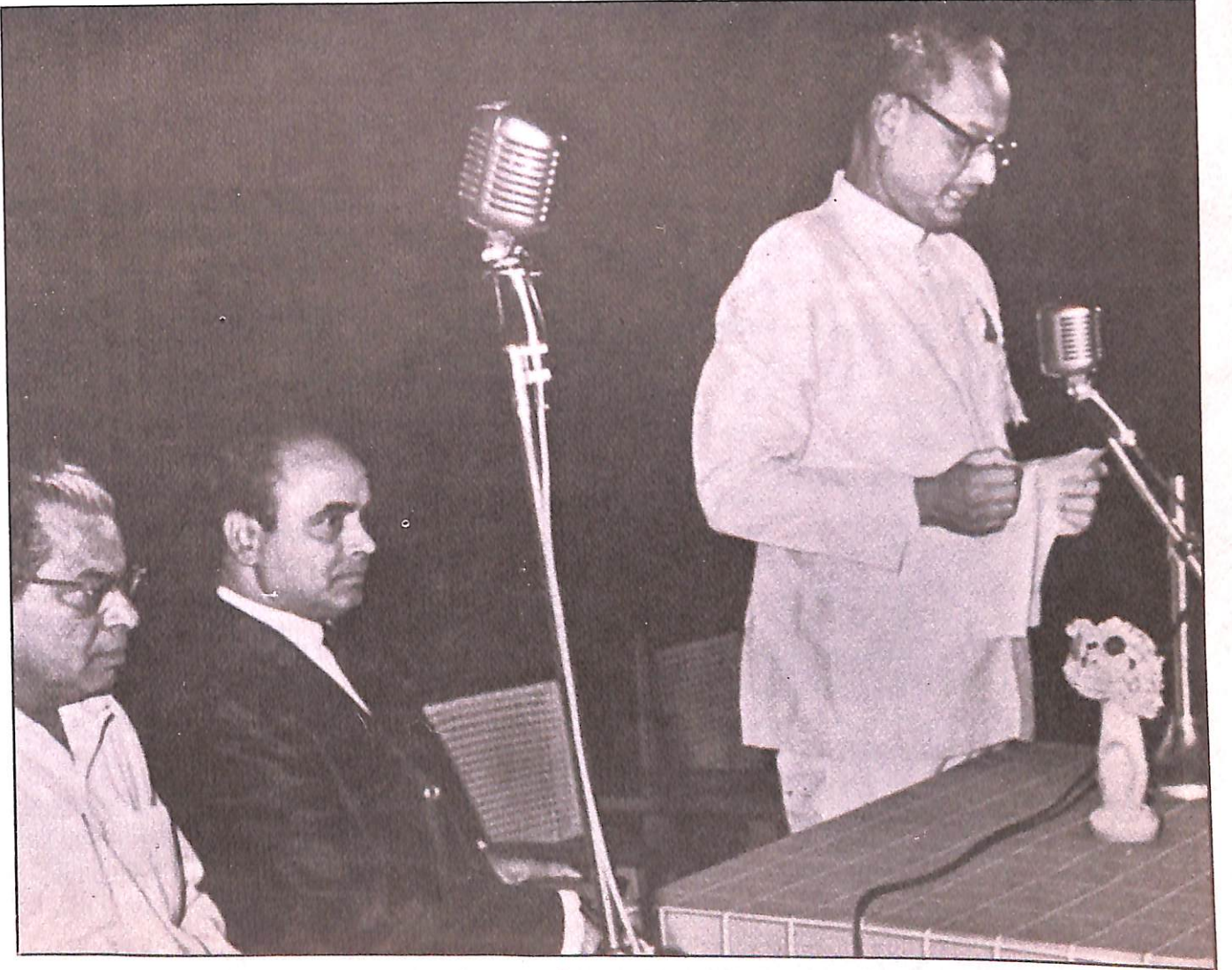
दूरदर्शन के लिए प्रशिक्षण संस्थान

दूरदर्शन प्रशिक्षण संस्थान : बाह्य दृश्य

दूरदर्शन आम आदमी की रोजमर्रा की जिन्दगी में अहम् भूमिका अदा करता है। सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय की पहल से इस माध्यम का भारत में अत्यंत तीव्र गति से विस्तार हुआ है। विश्व में सर्वाधिक तीव्र गति से विस्तार के कारण आवश्यक उपकरणों एवं प्रशिक्षित कर्मचारियों की कमी की समस्या यहाँ प्रमुख हो गई। समस्या के निवारण के लिए सरकार द्वारा ठोस कदम उठाए गए। दिल्ली के मण्डी हाउस एवं पूना के 'फिल्म एण्ड टेलीविजन इन्स्टीट्यूट ऑफ इण्डिया में 'गहन प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। पूर्व में यह संस्थान केवल 'फिल्म इन्स्टीट्यूट' कहा जाता था। टेलीविजन को महत्व देकर प्रशिक्षण कार्यक्रम में सम्मिलित करने के कारण इसे नया नाम दिया गया।

संस्थान के 'फिल्म प्रभाग' एवं 'दूरदर्शन प्रभाग' में प्रवेश की अर्हताएं भिन्न हैं। फिल्म विभाग में सामान्य लोगों को निर्धारित शर्तों के अन्तर्गत प्रवेश मिलता है किन्तु दूरदर्शन प्रभाग में केवल नियमित कर्मचारियों को ही प्रशिक्षण के लिए प्रतिनियुक्ति पर भेजा जाता है। केवल कर्मचारियों के लिए ही यहाँ संक्षिप्त अवधि के 15 से 20 सप्ताह वाले पाठ्यक्रम संचालित होते हैं जिनमें पटकथा लेखन, छायांकन, प्रकाश एवं ध्वनि व्यवस्था तथा रिकार्डिंग प्रमुख हैं। प्रयास यही है कि दूरदर्शन से सम्बन्धित सारी तकनीकी जानकारी प्रारंभिक स्तर पर इन पाठ्यक्रमों के जरिए प्रदान कर दी जाए। फिलहाल इस संस्थान में निम्नानुसार प्रशिक्षण पाठ्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं।

* दूरदर्शन कार्यक्रम निर्माण

* दूरदर्शन तकनीकी चालन (आपरेशन)

* ग्राफिक्स
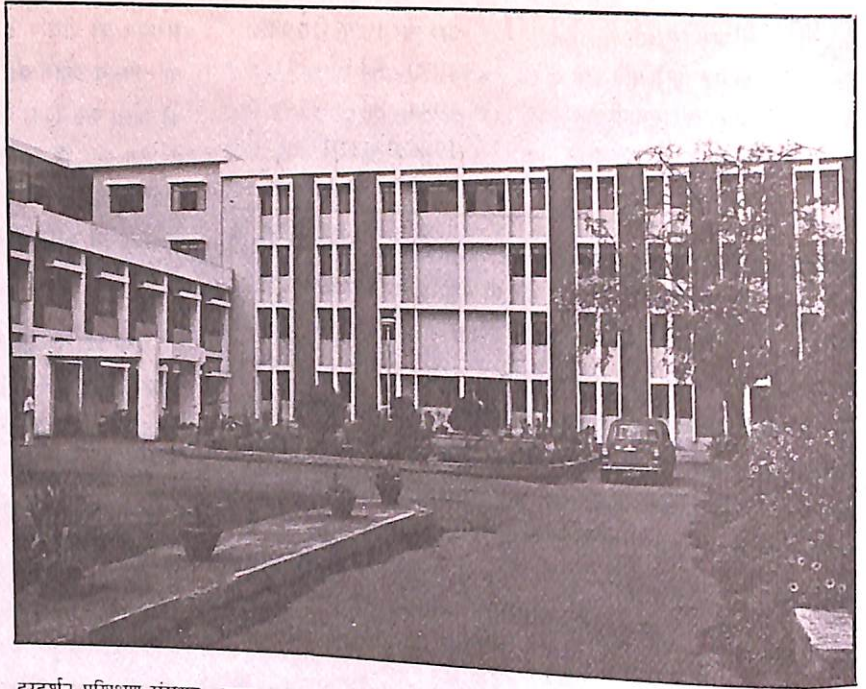
* टी.वी. फिल्म

फिल्म एवं दूरदर्शन कार्यक्रमों के निर्माण में काफी समानताएं हैं इसीलिए यहाँ आधारभूत सामग्री की उपलब्धि सरल है। यह संस्थान दूरदर्शन केन्द्रों के द्वारा भेजे जाने वाले कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने में सक्षम सिद्ध हो रहा है। यहाँ का दूरदर्शन प्रभाग 'प्राथमिक निर्माण विधि एवं तकनीकी आपरेशन' का प्रशिक्षण देने के साथ एशिया पैसिफिक इन्स्टीट्यूट फार ब्राडकास्टिंग कुआलालम्पूर (मलेशिया) के साथ मिलकर विशिष्ट पाठ्यक्रमों का संचालन भी करता है।

सन् 1989 में जो आंतरिक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम सम्पन्न हुआ था उसमें 96 कर्मचारियों ने प्रशिक्षण प्राप्त किया। सन् 1990 वाले पाठ्यक्रमों में भी संख्या लगभग यही रही। एआइ.बी.डी. कुआलालम्पूर ने क्षेत्रीय पाठ्यक्रम स्टेगिंग एन्ड डिजाइन फॉर टेलीविजन आयोजित किया इसमें बुनाई, मलेशिया, सिंगापुर, श्रीलंका नेपाल एवं भारत के सात प्रशिक्षणार्थियों ने भाग लिया। इसी प्रकार तीन सप्ताह का एक विशेष पाठ्यक्रम 'फिल्म एण्ड टेलीविजन प्रोडक्शन ओरिएण्टेशन' आयोजित किया जिसमें 'इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ मास कम्युनिकेशन के पन्द्रह प्रोबेशन अधिकारियों ने हिस्सा लिया।

संस्थान के वर्तमान ढाँचे एवं भावी योजनाओं पर प्रकाश डालते हुए निर्देशक वी.सी. चन्द्रा ने कहा, "यह दुहराने की कोई जरूरत नहीं कि भारत सरकार को दूरदर्शन कार्यक्रमों के लिए प्रशिक्षित कर्मचारियों को उपलब्ध करा पाने में अत्याधिक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। फिलहाल ऐसे पाँच हजार प्रशिक्षित कर्मचारियों की जरूरत है। इसीलिए दूरदर्शन ने ऐसा ही एक प्रशिक्षण केन्द्र लखनऊ में खोला है।

आठवी पंचवर्षीय योजना में यदि सरकार हमारे साधनों में वृद्धि का प्रावधान करें तब हम पाठ्यक्रम में परिवर्तन कर अधिक प्रशिक्षणार्थियों को शामिल कर सकेंगे।

हमारी योजना हे कि छः माह की अवधि का एक पाठ्यक्रम शुरू किया जाए जिसमें 'स्पेशलाइजेशन' पर अधिक बल दिया जाए। हमें पूरा विश्वास है कि फिल्म विंग की तरह संस्थान का टी.वी. विंग भी भविष्य में यश एवं प्रतिष्ठा प्राप्त करे।"

भारत का राष्ट्रीय फिल्म अभिलेखागार

फिल्मों को हमारे देश में मात्र साधारण लोगों के मनोरंजन का साधन माना गया। सरकार एवं फिल्म निर्माताओं ने इस शक्तिशाली माध्यम को गंभीरता से कभी लिया ही नहीं। इस उपेक्षा के कारण किसी ने भी फिल्मों के प्रिन्ट तथा निर्माण से जुड़ी सामग्री को सुरक्षित रखने की चेष्टा नहीं की। स्वाधीनता के पश्चात इस विषय पर गंभीरता से सोचा गया। 14 फरवरी 1964 को पुणे में नेशनल फिल्म आर्काइव ऑफ इण्डिया की स्थापना हुई। इस संस्थान की स्थापना का मूल उद्देश्य भारत में निर्मित फिल्मों को उपलब्ध कराना एवं उन्हें सुरक्षित रखना है। फिल्म संस्कृति का विस्तार, फिल्मों पर शोध, सन्दर्भ सामग्री एवं पुस्तकों पत्रिकाओं को विषयवार व्यवस्थित करना संस्थान के अन्य कार्यों में शामिल है।

इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संस्थान ने पिछले वर्षों में काफी उल्लेखनीय काम किया है। योरोप तथा उत्तर अमेरिका के आर्काइवों की शैली पर विकसित इस संस्थान ने एशिया के विशालतम आर्काइव के रुप में प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली है। अब तक यहाँ ग्यारह हजार फीचर एवं लघु फिल्में बहत्तर हजार फिल्म स्टिलस छः हजार पोस्टर्स, बीस हजार स्क्रीन प्ले, दो हजार ग्रामोफोन डिस्क, दस हजार बुकलेट्स, पाँच सौ वीडियो कैसेट तथा ऐसी ही अन्य सामग्री जमा की है। फिल्म सम्बन्धी बीस हजार पुस्तकों एवं पत्रिकाओं वाला यहाँ का पुस्तकालय, फिल्म एवं टेलीविजन संस्थान के छात्रों को बहुमूल्य सन्दर्भ सामग्री प्रदान करता है। फिल्मी विषयों पर शोध करने वाले लोग यहाँ देश - विदेश में सन्दर्भ सामग्री प्राप्त करने आते हैं। इन सारी वस्तुओं को संग्रह करने के लिए आर्काइव ने अब तक पचास लाख रुपए व्यय किए हैं।

शुरुआत के सालों में एन.एफ.ए. आई. को फिल्म इन्स्टीट्यूट का हिस्सा माना जाता था। सन् 1974 में यह इन्स्टीट्यूट से पृथक होकर स्वतंत्र इकाई के रूप में कार्य करने लगा है। इसके बाद आर्काइव का आधुनिक भवन निर्मित हुआ। आदर्श, उपयोगी एवं उपयुक्त भवन की रुपरेखा कई विदेशी भवनों का निरीक्षण करने के उपरान्त तय की गई। ढाई करोड़ रुपए का प्रोजेक्ट बना। भवन में फिल्मों की सुरक्षा के लिए 'एयरकण्डीशनर वाल्ट' फिल्मों की चेकिंग एवं रीकण्डीशनिंग के उपकरण, थिएटर, शोध करने वालों के लिए सुविधाएं तथा अधिकारियों के लिए सज्जित कक्षों की व्यवस्था है। भवन में जो थिएटर हैं उसमें 300 लोग बैठ सकते हैं। एन.एफ.एआई. ने पूरे भारत में फिल्म संस्कृति का विस्तार करने के लिए फिल्म सोसायटियों तथा ऐसी ही अन्य संस्थाओं के गठन को प्रोत्साहित किया है। उन्हें आर्काइव की फिल्मे प्रदान की जाती रही हैं तथा विख्यात फिल्मकारों के इन्टरव्यू लेकर उन्हे आर्काइव में सुरक्षित रखा जाता है। समय - समय पर फिल्म महोत्सव, प्रदर्शन आदि आयोजित कर दुर्लभ फिल्मों को दिखाया जाता रहा है। अपने कार्यक्षेत्र का विस्तार करते हुए आर्काइव ने देश के तीन महानगरों में क्षेत्रीय कार्यालय खोले हैं। कलकत्ता, बंगलूर एवं त्रिवेन्द्रम में खोले गए इन कार्यालयों के जरिए आर्काइव की गतिविधियों का विस्तार हुआ है। तकनीकी एवं गैर तकनीकी कुल मिलाकर 70 कर्मचारियों का यह संगठन कुशलतापूर्वक अपना दायित्व निर्वाह कर रहा है।

विदेशी फिल्म आर्काइवों से सम्पर्क स्थापित कर संस्थान ने 'अदल बदल' अथवा खरीदी कर कई महत्वपूर्ण विदेशी फिल्मों के प्रिन्टों को प्राप्त किया है। उपलब्ध फिल्मों की प्रतियाँ तैयार करवा कर उन्हें फिल्म वितरण लाइब्रेरी के माध्यम से विभिन्न स्थानों में प्रदर्शित करवाया गया। आर्काइव में फिल्म निर्माताओं को सहयोग देने के लिए उनकी फिल्मों के रीकण्डीशनिंग एवं संक्षिप्तीकरण का काम भी किया जाता है।

आर्काइव का प्रमुख संचालक स्तर का अधिकारी होता है। अप्रैल 1991 में सर्वप्रथम संचालक पी. के नायर रिटायर हुए। चार माह के लिए प्रभाकर पेंढारकर ने यह पद संभाला। सम्प्रति वाय. एन. इंजीनियर अतिरिक्त संचालक का कार्य देख रहे हैं।

गप्ट्रीय फिल्म संग्रहालय पुराना भवन

फिल्म-सिटी अर्थात् भारत में हॉलीवुड

□ जगदीश कुमार निर्मल

महाराष्ट्र की राजधानी बम्बई को भारत की फिल्म राजधानी होने का गौरव प्राप्त है। प्रारंभ से ही भारत के प्रमुख फिल्म स्टूडियो बम्बई में ही स्थापित हुए। बाम्बे टाकीज, फिल्मिस्तान, मिनर्वा, रणजीत, कारदार, श्री साउण्ड, प्रकाश, मोहन, आर.के., राजकमल, फेमस, सेन्ट्रल जैसे अनेक छोटे-बड़े स्टूडियो सारी बम्बई में फैले हुए थे। महाराष्ट्र के भूतपूर्व मुख्यमंत्री स्व. बसंतराव नाईक एक विकास पसंद व्यक्ति थे। बम्बई महानगर के व्यवस्थित-विकास तथा उसके आधुनिकीकरण में उनकी काफी रुचि थी। जिस तरह अमरीका का फिल्म उद्योग केलीफोर्निया के हालीवुड में स्थित है, उसी नमूने पर बम्बई में भी सारा-फिल्म उद्योग एक ही स्थान पर केन्द्रित हो इस दृष्टि से फिल्म-सिटी की योजना को आकार मिला। बसंतराव नाईक संचमुच ही फिल्मसिटी को बम्बई का हालीवुड बनाना चाहते थे। इसीलिए गोरेगाँव स्थित आर्य कालोनी के निकट का विस्तृत परिसर इसके लिए चुना गया। प्रारंभिक रूप में सरकार द्वारा एक बड़े स्टूडियो व रिकार्डिंग थिएटर की स्थापना हो तथा उसके बाद आकर्षक शर्तों पर कम मूल्य में फिल्म निर्माताओं को अपना-अपना उद्योग वहाँ लगाने के लिये स्थान तथा सुविधाएँ उपलब्ध कराना निश्चित किया गया।

सन् 1975 में फिल्म स्टूडियो व रिकार्डिंग थिएटर बनकर तैयार हो गए एवं उन्हें व्यावसायिक रूप से कार्यरत कर दिया गया हैं।

महाराष्ट्र चित्रपट, रंगमंच व सांस्कृतिक विकास महामंडल मर्यादित की स्थापना 1977 में हुई और फिल्म सिटी को उसे हस्तांतरित कर दिया गया। महाराष्ट्र राज्य की सभी सांस्कृतिक गतिविधियों के स्वतंत्र रूप से विकास हेतु एक केन्द्रीकृत संस्था की आवश्यकता बहुत दिनों से अनुभव की जा रही थी अतः उक्त महामंडल की स्थापना से वह कमी दूर हो गयी।

महामंडल की स्थापना के तीन प्रमुख उद्देश्य थे:-

- प्रदेश की विभिन्न सांस्कृतिक विधाओं को गतिमान बनाना।
- फिल्म, विशेषकर प्रादेशिक सिनेमा को प्रोत्साहन तथा विकास में योगदान करना।
- रंगमंच व अन्य सभी लोक कलाओं के विकास हेतु प्रयत्न व सभी प्रकार से प्रोत्साहन देना।

फिल्म सिटी का विकास 1977 से फिल्मसिटी महामंडल की व्यवस्था के अन्तर्गत कार्यरत है और तब से अब तक उसका उल्लेखनीय विकास हुआ है।

दो विशाल स्टुडियो के अतिरिक्त रिकॉर्डिंग थियेटर तथा एडीटिंग रूमस् की सुविधाओं से सम्पन्न फिल्म-सिटी के पास 346 एकड़ वन्य भूमि का परिसर है। इस परिसर को एक खुले स्टूडियो का रूप दिया गया है। यही फिल्म सिटी का सबसे बड़ा आकर्षण है कि एक ही स्थान पर आउटडोर व इनडोर दोनों शूटिंग हो सकती है। स्टूडियो में मनचाहे सेट्स का निर्माण तथा बाहर वन-उपवन व ग्रामीण वातावरण के निर्माण की सुविधाओं ने फिल्मसिटी को फिल्म निर्माताओं के मध्य काफी लोकप्रिय बनाया है।

स्टुडियोज में सेटिंग व चित्रीकरण के सभी उपकरण व यांत्रिक सुविधाएं उपलब्ध हैं तथा उन्हें उचित दरों पर निर्माताओं को दिया जाता है। सबसे बड़ी सुविधा तो प्रादेशिक भाषा (मराठी) की फिल्मों तथा डाक्युमेन्ट्री आदि लघु चित्रपटों को दी गई हैं उन्हें सभी सेवा सुविधाएँ आधे दामों में उपलब्ध करायी जाती हैं। फिल्म सिटी में आधुनिकतम सुविधाएँ उपलब्ध है और वहाँ सिनेमा स्कोप, 35 एम.एम. फिल्म उपकरणों से लेकर 16 एम.एम. व वीडियो फिल्म शूटिंग के लिए आवश्यक यंत्र सामग्री उपलब्ध है। यहाँ निर्माणाधीन फिल्म के पूर्व प्रदर्शन हेतु एक प्रिव्यू थिएटर का निर्माण भी किया गया है। फिल्म सिटी की सेवाओं को अधिक सुविधाजनक बनाने की दृष्टि से प्रभादेवी स्थित रवीन्द्र-नाट्य मंदिर में एक आधुनिकतम रिकार्डिंग थिएटर के निर्माण की योजना विचाराधीन है।

वर्ष 1991 में लगभग 400 फिल्म्स तथा टी.वी. फिल्म्स की शूटिंग हुई है। इनमें प्रमुख हैं - सौदागर, विश्वात्मा, 100 डेज, ज़िद और हम। इसके अतिरिक्त टीवी फिल्म्स चंद्रकांता, मृगनयनी और चाणक्य का निर्माण भी यहीं हुआ है।

महामंडल का अभिनव आयोजन है प्रदेश के जिला नगरों में सिनेटोरिया का निर्माण। सिनेटोरिया एक ऐसा सांस्कृतिक संकुल होगा जिसमें सिनेमागृह के साथ-साथ नाट्यगृह, नाट्य तथा लोककलाओं के लिए रिहर्सल का स्थान तथा प्रवासी कलाकारों के लिये आवास व्यवस्था एक ही परिसर में उपलब्ध होगी। पेन्टिंग आदि अन्य कलाओं के प्रदर्शन हेतु एक आर्ट गैलरी का भी उसमें समावेश होगा। इस व्यवस्था के द्वारा प्रत्येक जिले में सिनेटोरिया वहाँ की सांस्कृतिक गतिविधियों का एक स्थानीय केन्द्र होगा।

मंडल की एक अन्य फिल्म गतिविधि मराठी रंगमंच के सुप्रसिद्ध नाटकों का चित्रीकरण है। मराठी रंगमंच एक अतिविकसित नाट्य मंच है। उसकी परंपरा में पिछले सौ वर्षों से मंचित हो रहे अति जनप्रिय नाटक है। इन नाटकों का चित्रीकरण संग्रहण की दृष्टि से किया जा रहा है इसमें मराठी रंगमंच के सुप्रसिद्ध नाटककारों, निर्देशकों लेखकों व कलाकारों द्वारा निर्मित प्रसिद्ध नाटकों का समावेश होगा। कुछ चुने हुए नाटकों के शीर्षक है *नटसम्राट, तो मी नव्हेच, वाडा चीरे बंदी*, आदि। ●

महाराष्ट्र शासन द्वारा मराठी फिल्मों को प्रोत्साहन

महाराष्ट्र-शासन में फिल्म सम्बन्धित कार्य सांस्कृतिक विभाग के अंतर्गत आता है। सांस्कृतिक कार्यक्रमों संचालनालय फिल्म-रंगमंच तथा अन्य लोक कलाओं के विकास का कार्य देखता है। विभिन्न उत्सवों व सांस्कृति कार्यों का आयोजन, श्रेष्ट कृतियों को पुरस्कार आदि देकर प्रोत्साहित करने तथा कलाकारों की कल्याण योजनाओं का संचालन आदि कार्य उसके अंतर्गत आते हैं। शिक्षाप्रद व समाज के लिए लाभकर फिल्म्स के प्रदर्शन पर मनोरंजन कर मुक्ति सांस्कृतिक सचिव के अन्तर्गत आते हैं। महाराष्ट्र राज्य चित्र पर महोत्सव तथा उसमें उत्कृष्ट चित्रों को पुरस्कार देने का कार्य सांस्कृतिक कार्य संचालनालय करता है।

महाराष्ट्र शासन प्रारंभ से ही चलचित्रों के विकास के लिए प्रयलशील रहा है। महाराष्ट्र भारतीय चित्रपट-निर्माण का जनक है। 17 मई 1913 को प्रथम भारतीय चित्रपट राजा हरिशचन्द्र का प्रदर्शन हुआ। तब से लेकर अब तक बम्बई भारतीय चित्रपट उद्योग की राजधानी बना हुआ है। दादा साहेब फालके, बाबूराव पेंटर और मास्टर विनायक जैसी फिल्म प्रतिभाओं की परंपरा कायम रखने के लिए उनके नाम से महाराष्ट्र शासन ने पुरस्कार स्थापित किए हैं। 1963 से महाराष्ट्र राज्य चित्रपट महोत्सव प्रारंभ हुआ जिसमें वर्ष भर में निर्मित फिल्मों में से सर्वेत्कृष्ट व उत्कृष्ट तीन फिल्मों के निर्माताओं व निर्देशकों को पुरस्कृत किया जाता है। इसके अतिरिक्त उत्कृष्ट अभिनेता, अभिनेत्री संगीत निर्देशक, गीतकार, पार्श्व गायक, गायिका, छायाकार, ध्वनिमुद्रक इत्यादि कलाकारों को पुरस्कृत कर प्रोत्साहित किय जाता है।

महाराष्ट्र चित्रपट रंगभूमि व सांस्कृतिक विकास महामंडल मुंबई की स्थापना भी शासन ने इसी दृष्टि से की है। क्षेत्रीय फिल्म निर्माण को प्रोत्साहन मिले इस दृष्टि से महामंडल के व्यवस्थान्तर्गत संचालित फिल्म सिटी में उपलब्ध सभी सेवाएँ जैसे स्टूडियो, कैमरा आदि यंत्र सामग्री व रिकॉर्डिंग तथा एडीटिंग सम्बन्धी सुविधाएँ हिन्दी-फिल्म्स की आधी दरों पर उपलब्ध करायी जाती हैं। इससे मराठी-फिल्म्स की निर्माण लागत काफी कम हो जाती है।

मराठी फिल्म निर्माताओं के लिए दूसरी प्रोत्साहन योजना है, फिल्म के प्रदर्शित होने पर सरकार द्वारा प्राप्त मनोरंजन कर की वापसी। मनोरंजन कर की राशि फिल्म निर्माता को तभी लौटाई जाती है जब वह दूसरी मराठी फिल्म का निर्माण शुरू करता है। इसका अर्थ यह होता है कि जब एक मराठी फिल्म निर्माता दूसरी फिल्म शुरू कर रहा होता है तो उसे लागत का आधे से अधिक भाग कर की वापसी के रूप में सरकार देती है।

इसी क्रम में महाराष्ट्र शासन की नई योजना सिनेमागृह निर्माण के बारे में है। नये सिनेमागृह-निर्माण के लिए यदि कोई फिल्म निर्माता प्रयत्नशील हैं, तो उसकी पहली फिल्म की मनोरंजन कर की रकम इस कार्य के लिए भी दी जा सकती हैं।

क्षेत्रीय फिल्मों को बड़े सिनेमागृहों में प्रदर्शित किया जा सके इसलिए शासन द्वारा सभी सिनेमागृहों में वर्ष भर में एक निश्चित समय के लिए प्रादेशिक फिल्म दिखाना अनिवार्य कर दिया गया है।

महाराष्ट्र शासन के वृत्त चित्र

विभिन्न शासकीय उपक्रमों, विकास कार्यों व सामाजिक सांस्कृतिक गतिविधियों पर, महाराष्ट्र राज्य शासन के माहिती व जनसंपर्क महासंचालनालय के अंतर्गत चित्रपट विभाग द्वारा डाक्यूमेन्ट्री फिल्म्स व समाचार चित्रों का निर्माण किया जाता है। चित्रपटों के विषय व संस्था, विभिन्न शासकीय विभागों की आवश्यकता पर अवलंबित होते हैं। प्रदेश की प्रमुख घटनाओं को चित्रित कर विभाग प्रतिमाह एक समाचार चित्र भी बनाता है जिसे प्रदेश के सिनेमाघरों में फिल्म डिवीजन, भारत सरकार के वितरणाधीन प्रदर्शित किया जाता है। इसी व्यवस्था के अन्तर्गत फिल्म्स डिवीजन प्रदेश सरकार की डाक्यूमेन्ट्री फिल्म्स भी प्रदेश के सिनेमाघरों में वितरित करता है। माहिती व जनसंपर्क महासंचालनालय इन चित्रपटों को स्वतंत्र रूप से 16 एम.एम. प्रोजेक्टर्स द्वारा भी जनता में प्रदर्शित करता है।

चित्रपट विभाग बम्बई में होने के कारण अधिक क्षमता से कार्य करता है। योग्य निर्माताओं का उसका अपना पेनल है। विभाग में भी प्रशिक्षित तकनीशियन कार्यरत हैं। इसीलिए फिल्म अच्छे स्तर की होती है तथा अनेक फिल्म्स को राज्य व अखिल भारतीय स्तर पर पुरस्कृत भी किया गया है। वर्ष 1991 में लगभग 7 डाक्यूमेन्ट्री फिल्म्स तथा 12 समाचार-चित्रों का निर्माण किया गया। (ज.नि.)

फिल्म्स डिवीजन : अतीत और भविष्य का सेतु

☐ अनिल त्रिपाठी एवं इन्द्रजीत त्रिपाठी

भारत सरकार के सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के अधीन एक प्रभाग के रूप में फिल्म्स डिवीजन की स्थापना 1948 के पूर्वार्द्ध में बंबई में हुई थी। उसी समय से यह शहर फिल्म्स डिवीजन का मुख्यालय बना हुआ है। फिल्म्स डिवीजन एक प्रभाग के रूप में कार्यरत है परन्तु अपने विस्तृत कार्य क्षेत्र प्राचीन सभ्यता, जाति-धर्म, रीति-रिवाज, रहन-सहन, परंपरा आदि के निरंतर चित्रण एवं प्रदर्शन के कारण आज देश का पर्याय-सा बन गया है।

एक सर्वेक्षण के आधार पर युनेस्को ने अपनी रपट 'रिपोर्ट्स एंड पेपर्स ऑन मास कम्यूनिकेशन नं. 68' में फिल्म्स डिवीजन की सराहना की है। इस रिपोर्ट के अनुसार फिल्म्स डिवीजन दुनिया भर में वृत्त चित्र बनाने वाले प्रमुख संगठनों में से एक है। इसकी तुलना नेशनल फिल्म बोर्ड ऑफ कनाडा, दि स्वीडिश फिल्म इंस्टीट्यूट, दि ब्रिटिश फिल्म इंस्टीट्यूट दि फ्रेंच सेंटर नेशनल डे ला सिनेमाग्राफिक और पॉलिस फिल्म इंडस्ट्री से की गयी है।

देखा जाये तो फिल्म्स डिवीजन की स्थिति अब एक सार्वजनिक क्षेत्र के किसी उपक्रम जैसी हो गई है। पिछले 43 वर्षों में फिल्म्स डिवीजन ने वृत्त चित्रों की प्रगति की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किये हैं।

वृत्त-चित्रों की दुनिया में अंतरराष्ट्रीय ख्याति के जॉन ग्रियर्सन ने फिल्म्स डिवीजन का वर्णन अपने प्रभावपूर्ण शब्दों में इस प्रकार किया है।' फिल्म्स डिवीजन परंपरागत अतीत की उपलब्धियाँ, वर्तमान की अनेक समस्याएँ और भविष्य की कई संभावनाएँ अपने में समेटे हुए है।'

संगठनात्मक ढाँचा

फिल्म्स डिवीजन का मुखिया प्रधान निर्माता होता है, जिसका कार्यालय बंबई में है। इसके तीन विभाग हैं-निर्माण, वितरण और प्रशासन।

मुख्यालय के अलावा तीन और निर्माण केन्द्र दिल्ली, कलकत्ता और बंगलौर में हैं। इस विभाग के चार मुख्य अनुभाग है वृत्तचित्र, समाचार चित्र, ग्रामीण जनता के लिए विशेष रूप से बनने वाले छोटे चलचित्र और कार्टून फिल्म्स।

वृत्तचित्रः कृषि, कला, वास्तु शिल्प, उद्योग, अंतरराष्ट्रीय घटनाएं, त्यौहार, खाद्य पदार्थ, स्वास्थ्य, आवास, व्यापार, यातायात, विज्ञान, तकनीकी, खेलकूद, सामाजिक प्रगति, सहकारिता, अनुसूचित एवं जन-जातियों, के कल्याण तथा मानव जीवन के हर पहलू वृत्त चित्रों में समाहित किए जाते हैं।

समाचार-चित्रः इस विभाग का प्रधान संयुक्त मुख्य निर्माता होता है, जिसके अधीन कई निर्देशक, न्यूज रील अधिकारी और सहायक काम करते है। यह पूरी टीम मुख्य शहरों, नगरों, राज्यों, केन्द्र शासित प्रदेशों तथा उनकी राजधानियों में समाचार एकत्र करने के लिए जुटी रहती है। इस एकत्रीकरण से पाक्षिक न्यूज मैगजीन और पुरालेखीय सामग्रियों के संकलन का काम किया जाता है।

कार्टून-चित्रः फिल्म्स डिवीजन की कार्टून फिल्म यूनिट बंबई में 1957 में स्थापित हुई। इस यूनिट ने कार्टून चित्रों के निर्माण कार्य में बड़ी सफलता हासिल की है। यह वृत्त चित्रों और न्यूज मैगजीन के लिए कार्टून कथाएँ भी तैयार करती है। अब इसके पास कठपुतली चित्रों के निर्माण के लिए भी साज-सामान उपलब्ध हो गए है।

ग्रामीण जनता के लिए लघु-चित्रः फिल्म्स डिवीजन ग्रामीण जनता के लिए ग्राम्य जीवन पर आधारित विषय जैसे कृषि, लघु-उद्योग, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण एवं लघु कथा चलचित्रों का निर्माण करता है।

इन फिल्मों का निर्माण मुख्य रूप से हिन्दी या अंग्रेजी भाषा में किया जाता है। इन फिल्मों को अन्य चौदह प्रमुख भारतीय भाषाओं में 'डब' करने का काम कामेंट्री अनुभाग करता है। यह अनुभाग आवश्यकतानुसार फिल्मों को विदेशी भाषाओं में भी 'डब' करता है।

इसके अलावा कई और अनुभाग हैं जो सहायक विभाग के अन्तर्गत आते है।

निर्माण यूनिट नयी दिल्ली : यह यूनिट परिवार कल्याण विभाग तथा खाद्य एवं कृषि मंत्रालय के लिए शिक्षाप्रद एवं प्रेरणार्थक फिल्मों का निर्माण करती है।

रक्षा फिल्म *अनुभागः* यह पूर्ण रूप से रक्षा-प्रशिक्षण संबंधी फिल्मों का निर्माण करता है। इसके पास एक आडोटोरियम, लाइब्रेरी, पूर्व दर्शन थिएटर, रिकॉर्डिंग थिएटर तथा फिल्मों की प्रिंट तैयार करने वाली एक लैबोरेटरी भी है।

16 एम.एम. फिल्में: ग्राम्य जीवन के अनुरूप (कलकत्ता और बंगलौर) छठीं पंचवर्षीय योजना के अंत में फिल्म्स डिवीजन ने विकेंद्रीयकरण कर अपने क्षेत्र का विस्तार कलकत्ता और बंगलौर में भी किया। इन दोनों स्थानों पर ग्राम्य जीवन के अनुरूप 16 एम.एम. फिल्मों के निर्माण का कार्य प्रारंभ हुआ है। इन फिल्मों के प्रदर्शन का समय एक घंटा रखा गया। ऐसी फिल्मों का निर्माण एक खास मकसद से प्रेरणादायक और शिक्षाप्रद प्रसंगों को लेकर शुरू हुआ, जिससे दर्शकों में राष्ट्रीय भावना का विकास हो। परिवार कल्याण और राष्ट्रीय चेतना संबंधित विषयों के अलावा दहेज, छुआछूत, बाल विवाह और बंधुआ मजदूर जैसी सामाजिक कुप्रथाओं एवं बुराइयों को लेकर यहां फिल्में बनायीं गईं।

वितरणः मुख्यालय के अलावा देश के अन्य भागों में इस विभाग की दस शाखाएं खोली गई हैं। थिएटर के क्षेत्र में फिल्म्स डिवीजन द्वारा किए जाने वाले प्रदर्शनों के महत्व का अंदाजा सिनेमाघरों और टूरिंग थिएटरों की बढ़ती संख्या से ही लगाया जा सकता है। इनकी संख्या 1952 में जहाँ 3,348 थी, वह 1991 में बढ़कर 13,000 से ऊपर हो गयी है। चलचित्र अधिनियम और चलचित्र नियम के अधीन हर सिनेमाघर को एक अनुमोदित चलचित्र का प्रदर्शन करना आवश्यक है, जिसकी लंबाई 609.60 मीटर से अधिक न हो। इसी शर्त पर

सिनेमाघरों को लाईसेंस दिया जाता है। फिल्म्स डिवीजन देश के सभी थिएटरों को प्रति सप्ताह नियमित रूप से वृत्त-चित्रों और न्यूज रीलों का वितरण करता है। फिल्म्स डिवीजन वृत्त-चित्रों और सिनेमाघरों को लाईसेंस दिया जाता है। फिल्म्स डिवीजन देश के सभी थिएटरों को प्रति सप्ताह नियमित रूप से वृत्त-चित्रों और न्यूज रीलों का वितरण करता है। फिल्म्स डिवीजन वृत्त-चित्रों और

समाचार चित्रों की 100 से अधिक प्रिंटों को देश की पंद्रहों भाषाओं में रिलीज करता है।

आजकल वीडियो की बड़ी धूम मची हुई है। इस दिशा में फिल्म्स डिवीजन ने कदम बढ़ाया है। आशा है कि इस वर्ष के अन्त तक लगभग 15000 लाइसेन्सशुदा वीडियो पार्लरों की व्यवस्था हो जाएगी। इसके बाद प्रतिवर्ष 500 वीडियो पार्लर बढ़ते रहेंगे।

जहाँ फिल्मों के प्रदर्शन की व्यवस्था नहीं है, वहां फिल्म्स डिवीजन चल-यूनिट का इस्तेमाल करता है। इस तरह की 257 इकाइयाँ फिल्म प्रचार निदेशालय द्वारा संचालित की जाती है। इसके अलावा केन्द्र तथा राज्य सरकारों द्वारा भी इस तरह की इकाइयों का प्रयोग किया जाता हैं, जिनकी संख्या हजारों में है। इनके अलावा फिल्मस डिवीजन के वृत्त-चित्र दूरदर्शन के क्षेत्रीय और राष्ट्रीय कार्यक्रमों में भी दिखाये जाते है। आजकल फिल्म्स डिवीजन ने अपनी फिल्मों का विक्रय वीडियो कैसेट के रूप में शुरू कर दिया है।

विदेशों में फिल्मों के प्रदर्शन के लिए विदेश मंत्रालय का विदेश प्रचार विभाग फिल्म्स डिवीजन की फिल्मों की प्रिंट को विदेशों में स्थित भारतीय मिशनो को भेजता है। रायल्टी के आधार पर इन फिल्मों को अन्य देशों के दूरदर्शनों को भी देने की व्यवस्था है।

निर्माण कार्यक्रमः फिल्म्स डिवीजन को प्रतिवर्ष थिएटरों में प्रदर्शित करने के लिए 26 वृत्त चित्र और 30 विशेष फिल्में, जिन्हें थिएटर में नहीं दिखाया जा सकता, बनानी होती है। इनमें से चार कार्टून फिल्में होती है। नयी दिल्ली स्थित यूनिट को कृषि से संबंधित 35 रील, सुरक्षा से संबंधित 30 रील तथा परिवार कल्याण से संबंधित 24 रीलें बनानी होती है। क्षेत्रीय निर्माण केन्द्रों को लगभग एक घंटे अवधि की आठ फीचर फिल्में बनानी होती है।
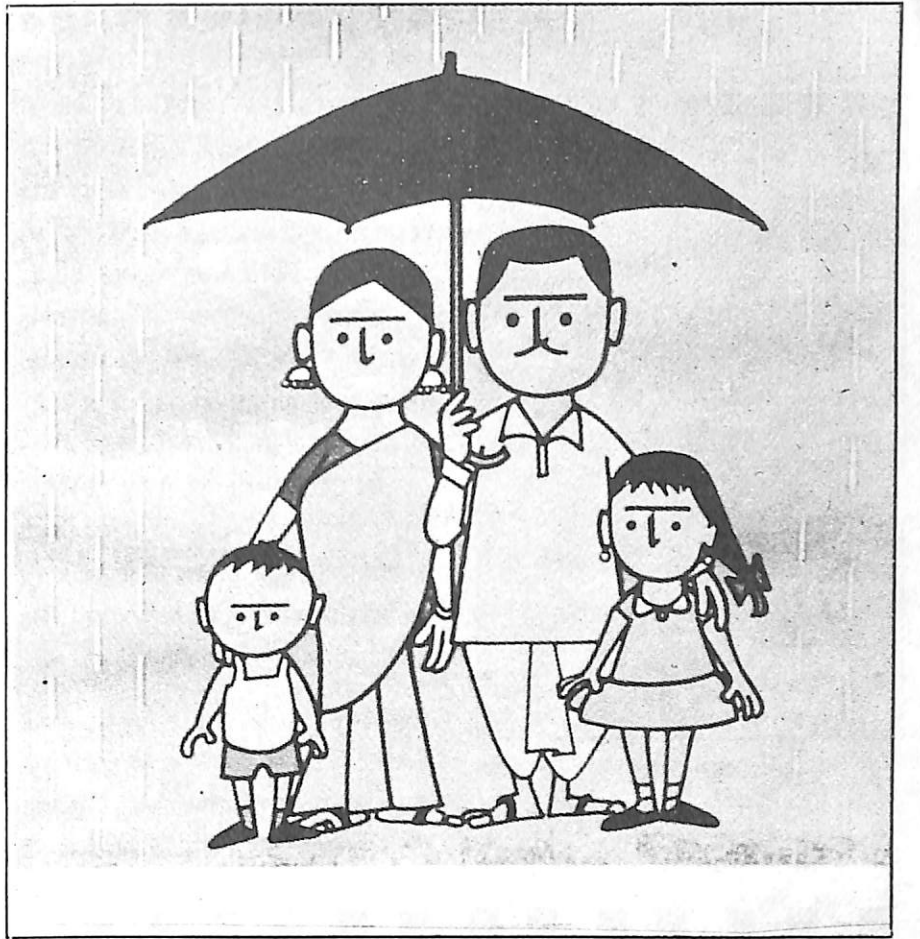
अम्ब्रेला : परिवार नियोजन पर श्रेष्ठ फिल्म

पुरस्कार और सम्मानः समय-समय पर देश-विदेशों में फिल्मोत्सवों के दौरान फिल्म्स डिवीजन की फिल्मों को पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। इसके निर्माण-गुणवत्ता की राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बड़ी सराहना की गई है।

भावी योजनाएँः फिल्म्स डिवीजन ने आठवीं पंचवर्षीय योजना में योजना आयोग को सोलह प्रस्ताव भेजे थे, जिनमें निम्नलिखित को अनुमोदित किया गया है।

- ग्रामीण दर्शकों के लिए बनी विशेष 16 एम.एम. की फिल्में।
- पुरालेखीय फिल्मी-वस्तुओं का संरक्षण और पुनरुद्धार।
- बंबई में द्वितीय फेज बिल्डिंग का निर्माण।
- बंबई और नयी दिल्ली में सिनेमा उपकरणों का प्रतिष्ठापन और संवर्धन।
- दूरदर्शन केन्द्रों और थिएटरों में दिखाई जाने वाली रंगीन प्रिंटों की आपूर्ति तथा फिल्मों के वितरण के लिए पाँच नयी शाखाओं का आरंभ।
- फिल्म्स डिवीजन की कार्य प्रणाली में कम्प्यूटर का प्रयोग।
- 'फीड बैंक सेल' की मजबूती और आवर्धन।

फिल्म्स डिवीजन के पास अतीत और वर्तमान के बेहतरीन वृत्त चित्रों का भंडार है, जिसके प्रदर्शन द्वारा युवा-पीढ़ी के दर्शकों में नवजागृति और राष्ट्रीय चेतना का संचार हो सकता है। बहुमुखी प्रगति और समय की मांग को ध्यान में रखकर भविष्य की अपेक्षाओं की पूर्ति के लिए विकसित तकनीक और संचार व्यवस्था से मेल रखने के लिए फिल्म्स डिवीजन को अपनी निर्माण योजनाओं का पुनर्निर्धारण करने की आवश्यकता है। ●

बाल चलचित्र समिति

समिति की अध्यक्ष : जया बच्चन

भारत सरकार द्वारा गठित फिल्म जाँच समिति की सिफारिशों पर मई, 1955 में बालचित्र समिति की स्थापना हुई। वह एक स्वायत्त संस्था है। वह भारत सरकार द्वारा प्रायोजित संस्था है और भारत सरकार द्वारा ही उसकी वित्त व्यवस्था की जाती है। वह भारत सरकार को सूचना तथा प्रसारण मंत्रालय के प्रशासनिक नियंत्रण के अन्तर्गत है। वह संस्था पंजीयन अधिनियम (1860 का रा) के अधीन एक संस्था के रूप में पंजीयित हुई है। इस समिति का मुख्य उद्देश्य विशेष रूप से निर्मित, विदेशों से प्राप्त, डब की गई, विपरीत और प्रदर्शित फिल्मों के जरिए अधिक से अधिक बच्चों को स्वस्थ मनोरंजन प्रदान करना और उन्हें व्यावसायिक सिनेमा के प्रतिकूल प्रभावों से बचाना है।

पंडित एच.एन. कुंजरु , आर. के दिवाकर, श्रीमती इंदिरा गाँधी, श्रीमती हंसा मेहक, श्री गोपाल रेड्डी, श्रीमती नंदिनी सतपथी, श्रीमती कामिनी कौशल, डॉ. वी. शांताराम, अमोल पालेकर, शबाना आजमी ने इस समिति की अध्यक्षता की है और इसे मार्गदर्शन प्रदान किया है। वर्तमान में **श्रीमती जया भादुड़ी बच्चन** इसकी अध्यक्ष हैं।

भारतीय बाल चित्र समिति ने अपने स्वयं के यूनिट के जरिए फिल्मों का निर्माण किया है जो कि बंबई में स्थित है। यह समिति प्रख्यात फिल्म निर्देशकों से विशेषित क्षेत्रीय भाषा की फिल्में , कार्टून फिल्में , पपेट फिल्में तदर्थ आधार पर बनवाती है। विदेशी संस्कृति से परिचय प्राप्त करने के लिए बाल चित्र समिति 1975 से विभिन्न विदेशों से बच्चों की फिल्मों का आयात करती रही है। बाल चित्र समिति द्वारा इस प्रकार निर्मित और आयातित फिल्मों को विभिन्न भारतीय भाषाओं में डब किया जाता है। बाल चित्र समिति के पास कुल 300 फिल्में हैं जिनमें 110 फीचर फिल्में और लघु फिल्में और 200 कार्टून पपेट तथा प्रायोगिक फिल्में शामिल है। इनमें से 120 फिल्में विदेशों से प्राप्त की गई है।

यह प्रसन्नता का विषय है कि बाल चित्र समिति द्वारा संगठित अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह को इन्टरनेशनल सेन्टर ऑफ फिल्म फॉर चिल्ड्रन एण्ड यंग पीपुल, पेरिस द्वारा 'ए' प्रवर्ग प्रदान किया गया है।

बाल चित्र समिति की विपणन/वितरण के प्रधान क्रियाकलाप है। (क) सिनेमाघरों में प्रदर्शन (ख) शालेय प्रेक्षागृह में फिल्म दिखाना, (ग) एक सप्ताह के बाल फिल्मोत्सव का आयोजन करना (घ) प्रायोजित फिल्मों का संचालन करना (ड़) फिल्म क्लब (च) 14 नवम्बर से बच्चों के लिए दस दिवसीय प्रदर्शन (छ) ग्रामीण क्षेत्रों के लिए मोबाइल यूनिट के जरिए फिल्मों का प्रदर्शन । (ज) अंतर्राष्ट्रीय बाल फिल्म उत्सवों में भाग लेना।

बाल चित्र समिति द्वारा निर्यातित फिल्में

बाल चित्र समिति ने वर्ष (1979) से विभिन्न देशों को फिल्मों का निर्यात आरंभ किया है। बाल चलचित्र समिति नवम्बर 1991 तक भारत के विभिन्न नगरों में सात अंतर्राष्ट्रीय बाल फिल्म समारोहों का सफलतापूर्वक आयोजन कर चुकी है।

■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■

मध्यप्रदेश माध्यम

मध्यप्रदेश माध्यम, मध्यप्रदेश शासन की एक स्वायत्त संस्था है जो जनसंचार के क्षेत्र में कार्यरत है। संस्था की स्थापना वर्ष 1983 में हुई। समाचार पत्र प्रकाशन, मुद्रण, आकल्पन, विज्ञापन और फिल्म निर्माण के क्षेत्र में संस्था सक्रिय है। मध्यप्रदेश माध्यम के प्रशासनिक प्रमुख प्रबंध संचालक होते हैं। वर्तमान में ओ.पी. रावत, प्रबंध संचालक है। माध्यम की फिल्म इकाई, निर्देशक फिल्म के नेतृत्व में कार्य करती हैं। पूना फिल्म और टेलीविजन संस्थान से प्रशिक्षित राजेन्द्र जांगले, निर्देशक के पद पर कार्यरत हैं।

मध्य प्रदेश माध्यम ने पिछले आठ वर्षों में पचास से अधिक लघु फिल्मों का निर्माण किया है। माध्यम द्वारा निर्मित इन लघु फिल्मों का प्रदर्शन दूरदर्शन पर लगातार होता रहा है। माध्यम द्वारा निर्मित दो फिल्मों को राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। एक पुरस्कार श्रेष्ठ फिल्म के लिए। माध्यम द्वारा निर्मित फिल्में मुख्यतः सूचना के विस्तार का प्रामाणिक कार्य करती हैं, साथ ही राज्य शासन की जन संचार आवश्यकताओं की पूर्ति में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। माध्यम द्वारा निर्मित फिल्मों के कलात्मक पक्ष को दर्शक वर्ग व समीक्षकों ने सराहा है।

■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■

फ़िल्म संस्थान : शासकीय

एडवर्टाइज़िंग एंड विज़ुअल पब्लिसिटी
पी.टी.आय. बिल्डिंग
तीसरी मंजिल, पार्लियामेंट
स्ट्रीट, नई दिल्ली - 1

सेंट्रल बोर्ड ऑफ फिल्म सर्टिफिकेशन
भारत भवन
91, वालकेश्वर रोड
बम्बई - 6

सेंट्रल बोर्ड ऑफ फिल्म सर्टिफिकेशन
शास्त्री भवन, 35 हेडोज रोड
मद्रास -6

सेंट्रल बोर्ड ऑफ फिल्म सर्टिफिकेशन
8, एस्प्लेनेड (ईस्ट)
कलकत्ता - 69

सेंट्रल बोर्ड ऑफ फिल्म सर्टिफिकेशन
एम.एल.ए. क्वाटर्स के सामने, आदर्श नगर,
दमयंती कॉम्पलेक्स
दूसरी मंजिल
हैदराबाद

सेंट्रल बोर्ड ऑफ फिल्म सर्टिफिकेशन
27, रोशनी, इन्फेंट्री रोड
बंगलौर -1

सेंट्रल बोर्ड ऑफ फिल्म सर्टिफिकेशन
चलचित्र कला भवन
त्रिवेंद्रम - 14

चिल्ड्रन फिल्म सोसायटी ऑफ इंडिया
फिल्म्स डिवीजन कॉम्प्लेक्स,
24, डॉ. जी देशमुख मार्ग
बम्बई - 26

दूरदर्शन
दूरदर्शन भवन
मंडी हाउस,
नई दिल्ली - 1

दूरदर्शन
वर्ली, बम्बई - 25

फिल्म डिवीजन
24, डॉ. जी. देशमुख मार्ग
बम्बई - 26

फिल्म फेस्टिवल डायरेक्टोरेट
लोक नायक भवन
चौथी मंजिल, खान मार्केट
नई दिल्ली -3

फिल्म एंड टेलीविजन इंस्टीट्यूट ऑफ इंडिया
ला कालेज रोड,
पुणे - 411 004 (महाराष्ट्र)

नेशनल फिल्म आर्काइव ऑफ इंडिया
लॉ कालेज रोड,
पुणे-411 004 (महाराष्ट्र)

राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम लि.
डिस्कवरी ऑफ इंडिया
नेहरू सेंटर, छठी मंजिल
डॉ. एनी बेसेंट रोड
वर्ली, बम्बई - 18

राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम लि.
शिव सागर स्टेट, ब्लाक-डी
पाँचवी मंजिल
डॉ. एनी बेसेंट रोड
वर्ली, बम्बई - 18

राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम लि.
प्लाजा थिएटर बिल्डिंग
कनाट सर्कस
नई दिल्ली - 1

राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम लि.
भवानी मेंशन नं. 3
स्ट्रीट - 4
नंगमबक्कम हाई रोड
मद्रास-34

राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम लि.
शांति निकेतन, 8,
पोस्ट बॉक्स नं. 16043
कलकत्ता - 17

महाराष्ट्र फिल्म स्टेज एंड कल्चरल डेवलपमेंट कारपोरेशन
फिल्म सिटी, गोरे गाँव (ईस्ट)
बम्बई - 65

☐ प्रस्तुति : बद्रीप्रसाद जोशी एवं शशि शर्मा

• मध्यप्रदेश फिल्म विकास निगम

सार्थक सिनेमा के नए आयाम

सिनेमा को लेकर हमारे दर्शक की समझ काफी व्यापक है। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसके बारे में दर्शक हमेशा जानना और समझना चाहते हैं। हुआ यह है इस जिज्ञासा को शान्त करने के ऐसे प्रयास कभी नहीं हुए कि देखने वाला प्रश्नों का समाधान पा सके। यदि ऐसा होता तो निश्चय ही धारणा बना पाता। सिनेमा से सम्वाद की सम्भावनाएँ इसी वजह से क्षीण होती गई। हिन्दी से इतर दूसरे क्षेत्रों में उन भाषाओं की फिल्मों के दर्शक वर्ग को लगातार बेहतर आस्वाद की फिल्में मिलीं। उनको उत्कृष्ट फिल्में उपलब्ध कराने और सम्वाद सूत्र जोड़ने के लिए वहाँ की फिल्म सोसायटियों तथा फिल्म विकास निगमों का योगदान उल्लेखनीय रहा। पश्चिम बंगाल और क़ेरल में यह का काम काफी आगे था।

मध्यप्रदेश में एक दशक पूर्व तक सिनेमा को लेकर कोई क्रियात्मक दृष्टि नहीं बन पाई थी। मध्यप्रदेश फिल्म लेखक समीक्षक संघ की इन्दौर में फिल्म सोसायटी ने 12 अगस्त 1973 से कार्य करना शुरु किया था। प्रदेश में फिल्म आन्दोलन को अभिरूचि के स्तर पर सफल बनाने के उद्देश्य से ग्वालियर, जबलपुर, कटनी, उज्जैन में फिल्म सोसायटी कायम हुई लेकिन अभिरुचि के स्तर पर ही उत्साहवर्धक नतीजे न मिलने से ये बन्द भी हो गई। केवल इंदौर में फिल्म सोसायटी 15 वर्षों तक लगातार काम करती रही। बाद में यह भी बन्द हो गई।

हिन्दी क्षेत्रों में सिनेमा अभिरुचियों के प्रति जिम्मेदार प्रयासों के रूप में जब मध्यप्रदेश फिल्म विकास निगम की स्थापना हुई तब यहाँ का वातावरण फिल्म जिज्ञासा के स्तर पर काफी स्निग्ध था। पूरे प्रदेश में न केवल हिन्दी सिनेमा बल्कि दूसरे प्रदेशों से यहाँ आकर बस गये लोगों सहित एक बड़े दर्शक वर्ग के लिए फिल्म संस्कृति विकसित करने का उद्यम, निगम ने उठाना शुरू किया। देश की बहुभाषी सिनेमा संस्कृति और उसके प्रतीक स्वरूप उत्कृष्ट फिल्मों को प्रदेश के लिए सुलभ कराने का प्रयास निगम द्वारा किये गये। बेहतरीन फिल्में न केवल बड़े शहरों में बल्कि छोटे नगरों में पहुँचें इसके लिए राजनांदगाँव, मन्दसौर, जावरा, रतलाम, खरगोन, खण्डवा आदि जगहों पर फिल्म समारोह हुए। आदिवासी बहुत क्षेत्रों में बच्चों के लिए रोचक फिल्में ले जाई गई। तब निगम के अपने और परिणाम-जनक लक्ष्य निर्धारित थे। दूसरे राज्यों में काम पहले से चल रहा था और मध्यप्रदेश की संस्था ने शुरुआत ही की थी। तब से अब तक लगातार उतार-चढ़ावों और सीमित संसाधनों के माध्यम से मध्यप्रदेश फिल्म विकास निगम ने लगातार अपने आपको प्रतिष्ठित किया। न केवल अपने आपको बल्कि उत्कृष्ट सिनेमा और सिनेमा के रहस्य को भी। आज यह गौरव की बात है कि देश के, जो कुछ फिल्म विकास निगम कार्यरत हैं (कुछेक क्षीण सम्भावनाओं के चलते बन्द भी हुए) उनमें मध्यप्रदेश की यह संस्था सक्रियता और फिल्म आन्दोलन के लिए जानी जाती है।

पिछले वर्षों में लगातार निगम के कार्यों का विस्तार हुआ है। सार्थक और उद्देश्यपूर्ण सिनेमा के प्रोत्साहन में निगम के कार्यकलाप निरन्तर बढ़े हैं। यों निगम के आयोजनों में **मध्यप्रदेश फिल्मोत्सव, सिनेमा विषयक परिसंवाद, व्याख्यान, पाठ्यक्रम** और **कार्यशालाएँ** सम्मिलित हैं लेकिन इसके साथ-साथ सिनेमा के विचार पत्र नियमित त्रैमासिक प्रकाशन **पटकथा** एवं सिनेमा एवं महत्वपूर्ण सिने हस्तियों पर केन्द्रित **मोनोग्राफ** के प्रकाशन भी अपनी गरिमा रखते हैं। **पटकथा**, सिनेमा के दर्शन पर प्रकाशित होने वाली भारतीय भाषाओं की एकमात्र पत्रिका है जिसने अल्प समय में ही सिनेमा विशेषज्ञों और चिन्तकों के बीच प्रतिष्ठा अर्जित की है। पटकथा के कई विशिष्ट अंक बहु-अर्थों में सिनेमा के पाठक एवं विद्यार्थी के लिए मूल्यावान दस्तावेज हैं इस प्रकार के अंकों में विशेष रुप से **सत्यजीत राय, दादा साहब फालके, सेर्गेई मिखालोविच आइजेंस्ताइन, मनुष्यता का संकट और सिनेमा, आलें रॉब्ब ग्रिये, हिन्दुस्तानी सिनेमा की चुनौतियाँ, नूतन, श्याम बेनेगल** पर केन्द्रित अंक शामिल हैं। **स्व. बिमल राय, गुरुदत्त, शतरंज के खिलाड़ी, राजकपूर** पर केन्द्रित मोनोग्राफ का प्रकाशन हिन्दी, सिनेमा में सन्दर्भ सामग्री के अभाव को दूर करने का उपक्रम हैं।

मध्यप्रदेश फिल्मोत्सव, निगम का एक महात्वाकांक्षी राज्य स्तरीय फिल्म समारोह है। उल्लेखनीय है कि मध्यप्रदेश ऐसा एकमात्र राज्य है जो इस प्रकार फिल्मों के प्रदर्शन की राज्य स्तरीय श्रृंखला आयोजित करता है। वर्ष 1985 से अंतर्राष्ट्रीय फिल्म महोत्सव के भारतीय पैनोरमा खण्ड और अन्य श्रेष्ट फिल्मों के चयन पर आधारित फिल्मोत्सव श्रृंखला प्रदेश के सम्भागीय मुख्यालयों में आयोजित होती है। यही नहीं विश्व की श्रेष्ठ और क्लॉसिक फिल्मों का दर्शकों को रसास्वाद कराने के उद्देश्य से **फ्रेंच, अमेरिका, कोरियाई, पोलिश, जर्मन, सोवियत सिनेमा** के सत्र भी निगम के आयोजनों में प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त दर्शक की रचनात्मक अभिरुचियों को दृष्टिगत रखते हुए **मणिपुरी, बंगला, डाक्यूमेंट्री, बाल एवं लघु फिल्मों, बन्य जीवन, भारतीय चित्रपट** और **प्लेटिनम जुबली फिल्मों** के विशेषीकृत समारोह भी आयोजित किये गये हैं। अब तक कोई 104 फिल्म समारोहों में 1405 स्थानों पर 866 फिल्मों के लगभग 3120 प्रदर्शन किये जा चुके हैं। प्रदर्शित फिल्मों में हिन्दी की 450 तथा अन्य भाषाओं की 416 फिल्में शामिल हैं।

उद्देश्यपूर्ण एवं कलात्मक फिल्मों के निर्माण को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से निगम ने न केवल अपना सहयोग दिया है बल्कि स्वयं भी फिल्म निर्माण के क्षेत्र में प्रभावपूर्ण कदम रखा है। मध्यप्रदेश की अस्मिता के संरक्षण और परम्परा के नव-प्रवर्तन की दृष्टि से अनेक फिल्म परियोजनाओं पर कार्य किया जा रहा है। ख्याल गायकी की परम्परा पर **कुमार शहानी** निर्देशित कथा फिल्म **ख्यालगाथा** का निर्माण ऐसा ही एक रचनात्मक दखल हैं। ये फिल्म **हूबर्ट बाल्स फंड राटरडम** के समारोह में सराही गई है और इसे फिल्मफेअर के **क्रिटिक्स सम्मान** से भी अलंकृत किया गया है। ये फिल्म **लन्दन, न्यूयार्क, पिसारो, ताशकन्द** आदि देशों में भी प्रशंसित हुई है। बाण सागर बाँध परियोजना पर **राजेन्द्र जांगले** निर्देशित **संकल्प**, पुरातात्विक सम्पदा पर **सुधांशु मिश्र** निर्देशित **निशान** व **भोजपुर शिवमंदिर** पर **प्रताप पाण्डे** निर्देशित वृत्तचित्र भी निगम द्वारा निर्मित किये गये है। इसके अलावा दूरदर्शन पर प्रसारित लोकप्रिय धारावाहिकों **कब तक पुकारूँ (सुधांशु मिश्र)** एवं **मृगनयनी (अमोल पालेकर)** को वित्तीय सहायता भी निगम ने प्रदान की है।
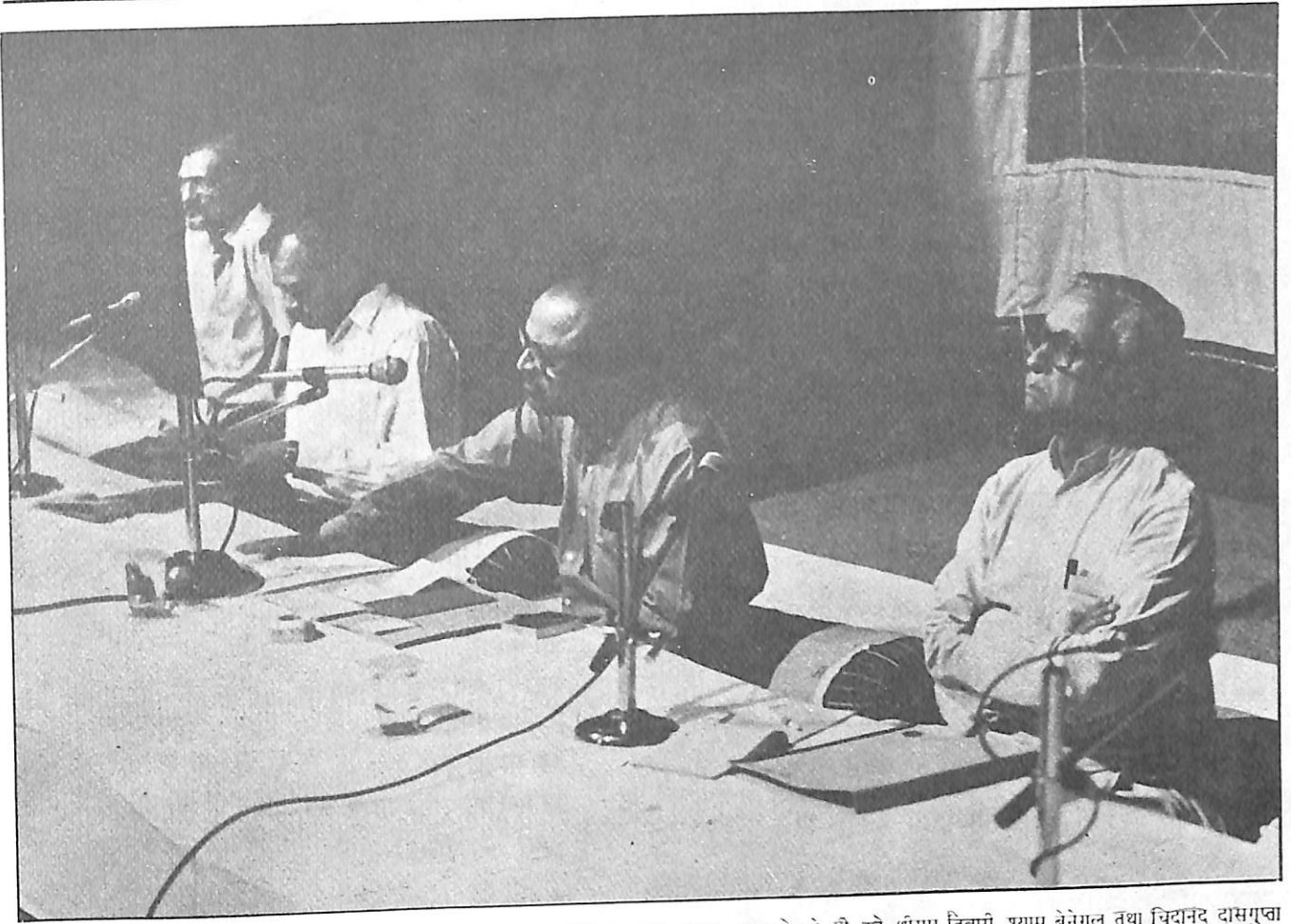
श्याम बेनेगल प्रसंग 1991 : बाएं से ओ. पी. दुबे, श्रीराम तिवारी, श्याम बेनेगल तथा चिदानंद दासगुप्ता

सिनेमाघर वित्त निर्माण योजना के अन्तर्गत निगम द्वारा स्थायी सिनेमाघरों की स्थापना के लिए वित्तीय सहायता योजना भी संचालित की जा रही है। इस योजनान्तर्गत अब तक प्रदेश के 32 सिनेमाघरों के लिए ऋण स्वीकृत किया गया है। इसी के साथ ही जर्जर सिनेमाघरों के पुनर्निर्माण के लिए भी निगम ने आर्थिक सहायता का प्रावधान किया है। यही नहीं फिल्मों की डबिंग और पैराडबिंग के लिए भी संस्था आर्थिक सहायता देती हैं।

भोपाल में उत्कृष्ट एवं कलात्मक सिनेमा के दर्शकों के लिए **फिल्म क्लब** एवं **वीडियो क्लब** का संचालन स्थानीय स्तर पर निगम का महत्वपूर्ण कार्य है। फिल्म क्लब में प्रतिमाह दो क्लॉसिक और दुर्लभ फिल्मों के प्रदर्शन किये जाते हैं। प्रतिमाह दिखायी जाने वाली दो फिल्मों में एक फिल्म हिन्दी एवं एक विदेशी भाषाओं की होती हैं। इन फिल्मों को देखने वाले सृजनशील दर्शकों का बड़ा समुदाय है। इसी प्रकार अत्यल्प दरों पर महत्वपूर्ण तथा बहुलोकप्रिय फिल्मों के कैसेट वीडियो क्लब के अन्तर्गत दर्शकों को उपलब्ध कराये जाते हैं। वीडियो क्लब के संग्रह में दर्शकों आस्वाद के लिए हिन्दी, अंग्रेजी, बंगला, मराठी, फ्रेंच, इटालियन, रशियन, स्वीडिश, जर्मन आदि भाषाओं के 600 से भी अधिक कैसेट्स उपलब्ध हैं।

सिनेमा के क्षेत्र में सृजनात्मक उपलब्धियों के आकलन, संरक्षण और प्रोत्साहन के लिए राष्ट्रीय और राज्य स्तरीय पुरस्कारों की स्थापना भी निगम द्वारा की गयी है। राष्ट्रीय सम्मान के रुप में **सर्वश्रेष्ठ हिन्दी फिल्म पुरस्कार** (51 हजार रुपये एवं प्रतीक चिन्ह), **सर्वश्रेष्ठ हिन्दी फिल्म निर्देशक पुरस्कार** (31 हजार रुपये एवं प्रतीक चिन्ह), **सर्वश्रेष्ठ हिन्दी फिल्म पुरस्कार** (11 हजार रुपये एवं प्रतीक चिन्ह), **सर्वोत्तम हिन्दी सिनेमा पुस्तक पुरस्कार** (11 हजार रुपये एवं प्रतीक चिन्ह), की स्थापना की गई है जबकि **सर्वोत्तम हिन्दी पटकथा पुरस्कार** (11 हजार रुपये एवं प्रतीक चिन्ह) व **पटकथा समीक्षा पुरस्कार** (5 हजार रुपये एवं प्रतीक चिन्ह) राज्य स्तरीय सम्मान हैं।

उल्लेखनीय है कि वर्ष 1991 के लिए सर्वश्रेष्ठ हिन्दी फिल्म पुरस्कार **अरुण कौल** निर्देशित फिल्म **दीक्षा** को, सर्वश्रेष्ठ हिन्दी फिल्म निर्देशक पुरस्कार **नाना पाटेकर** को फिल्म **प्रहार** के लिए एवं **गुलजार** निर्देशित फिल्म **लिबास** को द्वितीय सर्वश्रेष्ठ हिन्दी फिल्म के पुरस्कार दिए जाएंगे।

मध्यप्रदेश फिल्म विकास निगम, राज्य में सिनेमा के उत्कर्ष का एक महत्वपूर्ण केन्द्र है। इसके कार्यकलाप भारतीय सिनेमा और सिनेमा विधा के सम्पूर्ण तत्वों के स्थापत्य को जनरुचि के विषय बनाने का कार्य कर रहे हैं। आने वाले वर्षों में फिल्म के निर्माण और संरक्षण के साथ-साथ पठनीय एवं दर्शनीय दुर्लभ सामग्रियों का संचयन भी निगम के लक्ष्य हैं। मध्यप्रदेश की गौरवशाली परम्पराओं पर एकाग्र फिल्म निर्माण और प्रदर्शन की **मध्यप्रदेश दर्शन** भी निगम के कार्यक्षेत्र की प्रमुख प्रस्तावित योजना है।

मध्य प्रदेश फिल्म विकास निगम लि.

निगम के अध्यक्ष एवं कार्यकाल

श्री ब.व. कारन्त	14 जून 83 से 27 मई 86
डॉ. अरुण कुमार सेन	8 जून 86 से 7 अगस्त 88
श्री अशोक वाजपेयी	18 अगस्त 88 से 9 दिसम्बर 88
श्रीमती केसर जमां	10 दिसम्बर 88 से 4 मार्च 90
श्री आनंद बर्नाड	26 दिसम्बर 90 से निरन्तर

निगम के प्रबन्ध संचालक एवं कार्यकाल

श्री एस.के. मिश्र	24 जून 82 से 24 जनवरी 83
श्री सुदीप बनर्जी	24 जनवरी 83 से 22 सितम्बर83
श्रीमती इन्दिरा मिश्र	22 सितम्बर 83 से 2 जुलाई 84
श्री अशोक वाजपेयी	2 जुलाई 84 से 31 जुलाई 84
श्री सत्यानंद मिश्र	31 जुलाई 84 से 4 जून 87
श्री एके. सुराना (कार्यकारी)	4 जून 87 से 9 जून 88
श्री के.के. चक्रवर्ती	9 जून 88 से 30 जून 88
श्री जे.एल. अजमानी	30 जून 88 से 7 अक्टूबर 89
श्री एल.के. जोशी	7 अक्टूबर 89 से 21 नवम्बर 90
श्री ओ.पी. दुबे	21 नवम्बर 90 से निरन्तर

मध्यप्रदेश फिल्म विकास निगम मर्यादित

कुल कार्यरत स्टाफ : 25

आनंद बर्नाड	अध्यक्ष
ओ.पी. दुबे	प्रबन्ध संचालक
श्रीराम तिवारी	महाप्रबंधक (प्र.)
एम.एम. मथाई	उप प्रबन्धक (प्र.)
संजय यादव	सहायक प्रबन्धक
नित्यानन्द श्रीवास्तव	सहायक प्रबन्धक
राजेश कोहली	वरिष्ठ लेखापाल
मधुसूदन गारवे	लेखापाल
सुनील मिश्र	सहायक सम्पादक
अनिल कुमार एन.	विकास सहायक
प्रदीप अग्रवाल	आशुलिपिक
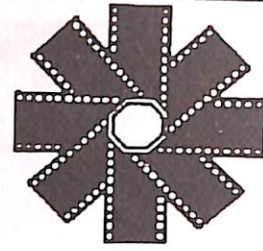
वर्तमान संचालक मण्डल

सर्वश्री

- **रघुबीर यादव**
  एच.सी/1, हिन्दुस्तान टाइम्स अपार्टमेन्ट
  मयूर विहार फेस-1
  दिल्ली - 110091
- **अनिल पंडित**
  प्रबन्धक
  राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम लि.
  डिस्कव्हरी ऑफ इंडिया
  6वीं मंजिल, नेहरु सेंटर
  डॉ. एनी बेसेन्ट रोड, वरली
  बम्बई - 400 018
- **गुलजार**
  91-ए, काजीहोम सोसायटी
  251, पाली हिल
  बान्द्रा, बम्बई-50
- **एस. लक्ष्मीनारायण**
  संयुक्त सचिव (फिल्म्स)
  सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय
  शास्त्री भवन, ए" विंग
  नई दिल्ली
- **अशोक सक्सेना**
  एम आई जी 58
  पुराना सुभाष नगर
  भोपाल
- **टी.एन. श्रीवास्तव**
  सचिव
  मध्यप्रदेश शासन
  वाणिज्यिक कर विभाग
  सचिवालय, भोपाल

प्रगति के सोपान और राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम

☐ एस. के. मिश्र
सचिव
मध्यप्रदेश शासन
संस्कृति विभाग
सचिवालय, भोपाल

☐ एल.के. जोशी
आयुक्त
बस्तर सम्भाग
बस्तर

☐ शशिकान्त सक्सेना
उप सचिव
मध्यप्रदेश शासन
वित्त विभाग
सचिवालय, भोपाल

☐ ओ.पी. दुबे
प्रबन्ध संचालक
मध्यप्रदेश फिल्म विकास निगम
भोपाल

☐ आनंद बर्नाड
अध्यक्ष
मध्यप्रदेश फिल्म विकास निगम
भोपाल

☐ कृष्ण मोहन श्रीवास्तव

ग्यारह वर्ष पूर्व फिल्म वित्त निगम तथा भारतीय फिल्म निर्यात निगम को मिलाकर **राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम** की स्थापना हुई थी। सन् 1980 से इस निगम ने फिल्म निर्माण के सम्बद्ध कई अलग-अलग विभागों का तेजी से विस्तार किया है।

इस एक दशक में राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम ने फिल्म से संबंधित जिन विभागों को विस्तारित किया है उनमें सबसे पहले वित्त विभाग। इस विभाग के अंतर्गत राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम उभरते हुई फिल्म निर्माताओं-निर्देशकों को स्वस्थ्य उद्देश्यपूर्ण तथा अच्छी पटकथाओं पर फिल्म निर्माण हेतु कर्ज देता है। दूसरा विभाग इस निगम के अंतर्गत सुप्रसिद्ध फिल्म निर्देशकों के साथ फिल्म निर्माण करता है। इसी तरह की एक अन्य योजना के अंतर्गत फिल्म विकास निगम दूरदर्शन तथा प्रतिष्ठित विदेशी फिल्म निर्माताओं के साथ संयुक्त फिल्म निर्माण भी करता है। लघु तथा वित्त फिल्मों के लिए निर्माण प्रस्तुवि की भी एक अन्य योजना है।

पटकथा प्रतियोगिताएँ भी आयोजित की जाती है जिससे अच्छी पटकथा को प्रोत्साहित किया जा सके। इस प्रतियोगिता में चुनी गई पटकथाओं को कर्ज देने या फिल्म विकास निगम द्वारा फिल्म निर्माण भी किए जाने की योजना है।

सुप्रसिद्ध गायकों तथा वादकों पर लघु फिल्म निर्माण की योजना है। इस प्रकार की पहली फिल्म का निर्माण उस्ताद बिस्मिल्लाह खान को लेकर पूरा हुआ है। इन योजनाओं के अलावा राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम फिल्म संबंधी आधुनिक उपकरणोंकी खरीदी, सिनेमाघरों के निर्माण आदि के लिए भी आर्थिक सहयोग देता है। सिनेमा इन इण्डिया नामक मासिक पत्रिका के प्रकाशन द्वारा फिल्मों के विभिन्न पहलुओं की जानकारी भी दी जाती है।

फिल्म निर्माण हेतु आर्थिक सहायता

फिल्म निर्माण हेतु आर्थिक सहायता देने के लिए राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम की देश में दस शाखाओं में व्यवस्था हैं। ये शाखाएं दिल्ली ,कलकत्ता, मद्रास, बंगलौर, हैदराबाद, त्रिवेन्द्रम, भुवनेश्वर, रांची तथी गोहाटी में स्थित है। आर्थिक सहायता के लिए निगम के निर्धारित फार्म पर आवेदन करने की व्यवस्था है। फार्म के साथ निगम एक पुस्तिका भी देता है जिसमें आर्थिक सहायता से लिए सभी जानकारियाँ रहती है।

थियेटर फाइनेंस

अच्छे सिनेमा को प्रोत्साहित करने के लिए निगम ने सन् 1979 से एक योजना

शुरु की हैं। इस योजना के अंतर्गत नये सिनेमाघरों के निर्माण, सिनेमा उपकरणों के बदलाव तथा पुनर्निर्माण के लिए आर्थिक सहायता देने की व्यवस्था है। इस योजना के अंतर्गत अभी तक लगभग 147 सिनेमाघरों को सहायता दी जा चुकी है। इनमें से 88 ने तो काम करना भी शुरू कर दिया है।

संयुक्त योजना

राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम की एक संयुक्त योजना है। आर्थिक सहायता को और अधिक विस्तारित करने के उद्देश्य से राज्य सरकार, तथा राज्य फिल्म विकास निगम तथा व्यावसायिक बैंकों के साथ मिलकर संयुक्त रुप से आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है।

सस्ते दरों पर सिनेमाघरों के मॉडल

सस्ते दरों पर सिनेमाघरों के मॉडल राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम के किसी भी कार्यालय से प्राप्त हो सकते हैं। इन सिनेमाघरों में दर्शकों की संख्या 410 तक रहती है, जो बढ़ाकर 615 तक की जा सकती है।

शूटिंग के लिए कच्चा माल

फिल्मों की शूटिंग के लिए कच्चा माल (रॉ स्टाक) राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम के लिए भी कार्यालय से प्राप्त किया जा सकता है। निगम इसके लिए लेबोरेटरी के पास आवश्यकता तथा उपलब्धता के आधार पर आदेश जारी करता है। इस आधार पर ईस्टमेन ,फूजी ,गेवा अथवा आंखो कलर का कच्चा माल शूटिंग के लिए प्राप्त किया जा सकता हैं।

तकनीकी योजना

निगम के कुछ चुने हुए कार्यालयों द्वारा तकनीकी सहायता भी देने की योजना है। निगम के कलकत्ता कार्यालय द्वारा 16 मि.मी.कैमरा शूटिंग के लिए उपलब्ध कराया जाता है। इसके अलावा अत्याधुनिक इलेक्ट्रानिक माइक्रो प्रोसेसर भी उपलब्ध है जिससे 16 मि.मी. तथा 35 मि.मी. निगेटिव प्रोसेसिंग जल्दी तथा अच्छी की जा सकती हैं।

बम्बई कार्यालय के अंतर्गत 35 मि.मी. तथा 16 मि.मी. पर दूसरी भाषाओं में सबटाइटिलिंग की व्यवस्था है। यहाँ यू-मेटिक वी. एच.एस तथा वीडियो पर साफ तथा पठनीय सबटाइटिलिंग की व्यवस्था हैं। इसके अलावा डुप्लिकेटिंग तथा संपादन की भी सुविधा है।

मद्रसा कार्यालय के अंतर्गत 16 मि.मी. तथा 35 मि.मी. से यू मेटिक मास्टर करने की सुविधा है इसके अलावा वीडियो की अपनी सुविधाएं भी उपलब्ध हैं। इन तीनों केन्द्रों से अन्य जानकारियां प्राप्त हो सकती हैं।

वीडियो वितरण

राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम अच्छे दर्जे के विदेशी फिल्मों के वीडियो कैसेट तथा चुनी हुई भारतीय फिल्मों के वीडियो कैसेट अपने निर्धारित वीडियो वितरकों के माध्यम से उपलब्ध कराता है। इसकी जानकारी बम्बई कार्यालय से हासिल की जा सकती है।

सिनेमा इन इण्डिया

राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका सिनेमा इन इण्डिया निगम के किसी भी कार्यालय से वार्षिक शुल्क देकर घर बैठे प्राप्त की जा सकती हैं। इसमें ग्यारह मासिक अंक तथा एक वार्षिक अंक होता है जो अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह के अवसर पर प्रकाशित होता है।

फिल्मों का प्रदर्शन

निगम के बम्बई कार्यालय के अंतर्गत विश्वस्तरीय चुनी हुई अच्छी फिल्मों का प्रदर्शन होता है। इसके अंतर्गत फिल्म प्रेमियों को ऐसी क्लॉसिक फिल्मों को दिखाने के लिए दो सिनेमाघरों की व्यवस्था हैं। इसके लिए वार्षिक सदस्यता जरूरी है।

फिल्म निर्यात

विदेशों में भारतीय फिल्मों की लोकप्रियता को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम भारतीय फिल्मों का निर्यात भी करता है। वैसे तो फिल्मों का निर्यात सीधे भी किया जाता है, लेकिन निगम द्वारा निर्यात किये जाने से किसी भी कागजी परेशानियों, धन की वसूली जैसी समस्याओं से बचा जा सकता है। अभी यह कार्यक्रम केवल बम्बई, कलकत्ता तथा मद्रास स्थित कार्यालयों द्वारा होता है। भारतीय फिल्मों के निर्माण के यही प्रमुख केन्द्र हैं। निगम द्वारा फिल्मों के निर्यात से कई देशों के साथ एक साथ सम्पर्क किया जा सकता है तथा विदेशों के संभावित खरीदारों को स्वदेश आमंत्रित भी किया जाता है।

फिल्म आयात

विदेशों से फिल्मों या वीडियो अधिकारों की खरीदारी केवल राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम द्वारा हो सकती हैं, क्योंकि इस योजना के अंतर्गत वितरण के अधिकार , उनकी कीमत आदि सूचना प्रसारण मंत्रालय द्वारा ही निर्धारित किए जाते हैं।

प्रादेशिक फिल्म समारोह

निगम प्रादेशिक फिल्म समारोहों के आयोजन में पूरा सहयोग देता है। ये समारोह राज्य फिल्म विकास निगम अथवा अन्य सरकारी एजेंसियों के सहयोग से आयोजित होते हैं। राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम सभी भाषाओं की अच्छी फिल्मों का चुनाव कर इस प्रकार के समारोहों को आकर्षक बनाता हैं।

अक तक निगम ने 45 फिल्मों के निर्माण में सहयोग दिया हैं। इस संख्या में हिन्दी, अंग्रेजी, मराठी, बंगाली, कन्नड़, मलयालम, असमी, उड़िया आदि भाषाओं की फिल्म शामिल हैं।

निगम ने अब तक संस्कृत, मराठी, हिन्दी, बंगाली गुजराती कन्नड़ आदि भाषाओं में लगभग 25 फिल्मों का स्वयं निर्माण किया है। आदि शंकराचार्य संस्कृत में पहली फिल्म थी।

इनके अलावा राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम ने दूरदर्शन के साथ संयुक्त रुप में भी फिल्मों का निर्माण किया हैं। विदेशी भागीदारों के साथ भी कई फिल्मों का निर्माण किया हैं। जैसे गाँधी तथा सलाम बाम्बे इसी के अंतर्गत बनी सफल फिल्में हैं।

सबके लिए खुले हैं दरवाजे

प्रबंध निदेशक रवि गुप्ता से के.एम. श्रीवास्तव की बातचीत

राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम के प्रबन्ध निदेशक के रूप में **रवि गुप्ता** कार्य कर रहे है। इसके पूर्व वह निगम में ही महाप्रबंधक के रूप में कार्य कर चुके हैं। प्रबन्ध निदेशक के रूप में कार्य करते हुए निगम के कार्यों को लेकर उनसे हुई बातचीत के प्रमुख अंश-

आपने महाप्रबंधक के पद पर कितने वर्षों तक कार्य किया?

लगभग पाँच वर्षो तक मैंने इस पद पर काम किया और अगस्त 1990 से मैंने प्रबन्ध निदेशक का कार्यभार सम्भाला है।

दोनों पदों पर कार्य करते हुए आपने क्या अन्तर महसूस किया?

महाप्रबंधक का पद पूरी तरह कार्यान्वित होता है। उस पद का कार्य क्षेत्र काफी अधिक है, जबकि

प्रबंध निदेशकः रवि गुप्ता

प्रबन्ध निदेशक का कार्यक्षेत्र काफी सिमटा हुआ है। लेकिन जिम्मेदारी अधिक है। इस पद पर नीतियाँ बनाना तथा कार्यक्रम की जिम्मेदारी होती है। किसी भी नई योजना को अंतिम रूप मैं देता हूँ। लेकिन मेरे साथ हर विभाग के अधिकारी सहयोग करते हैं।

इस समय निगम के कार्यालय कहाँ-कहाँ काम कर रहे हैं?

इस समय निगम के दस कार्यालय पूरे भारत में हैं/दिल्ली/कलकत्ता/मद्रास/बंगलौर/हैदराबाद/त्रिवेन्द्रम/भुवनेश्वर/राँची तथा गोहाटी में। इन कार्यालयों को शुरु करने का उद्देश्य ही यही है कि नए तकनीशियन्स, नए कलाकारों और नए निर्माताओं को काम करने का अच्छा अवसर मिले। पहले हमारे कार्यालयों की संख्या कम थी, जिसकी वजह से कुछ लोग ही दूर दराज के क्षेत्रों से निगम तक पहुँचते थे। अब ऐसा नहीं है।

निगम पर ऐसा आरोप लगाया जाता है कि केवल चर्चित निर्माता-निर्देशकों तथा कलाकारों को ही सहायता दी जाती है?

आरोप तो किसी पर कुछ भी लगाया जा सकता है, जबकि सच्चाई यही है कि "राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम" ने नए लोगों को ही सहायता दी हैं। आज जिन्हें चर्चित कहा जा रहा है वह सभी उस समय नए ही थे जिस समय निगम के पास सहायता लेने आये थे।

निगम की इस समय क्या-क्या गतिविधियाँ हैं?

मैं समझता हूँ फिल्म से संबंधित जितने भी काम होते हैं हम उन सभी कामों को करने का प्रयास करते हैं। फिल्म योजना के लिए भी ऐसा करना पड़ता है।

संस्कृत में निर्मित भारत की पहली फिल्म : आदि शंकराचार्य
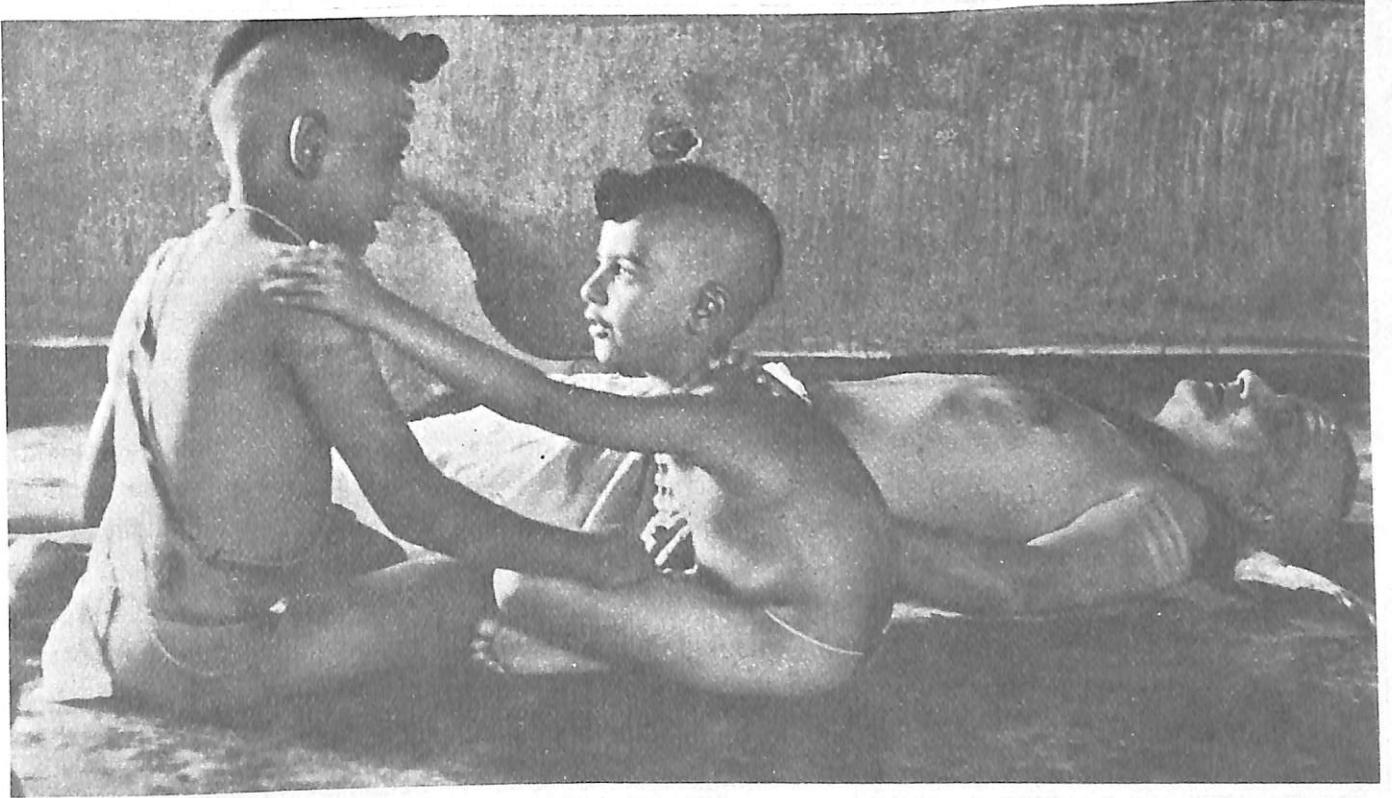
उत्तरप्रदेश चलचित्र निगमः

तुम्ही सो गए दास्तां कहते कहते ....
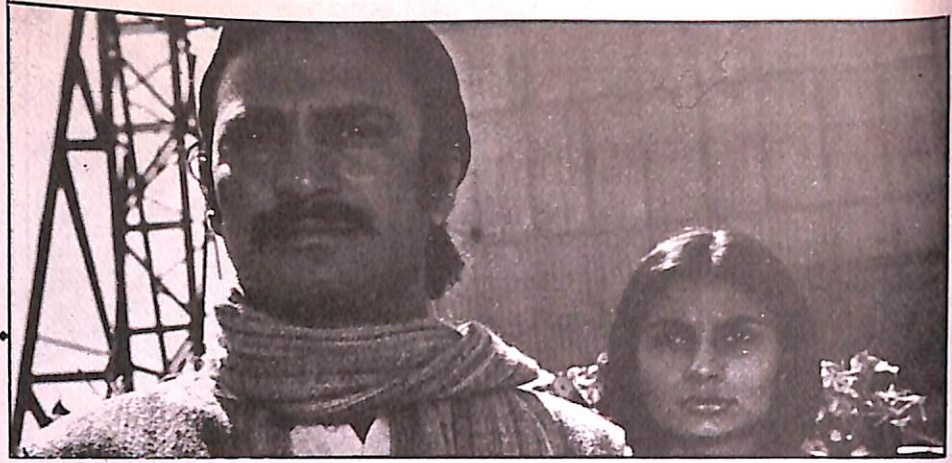
उ.प्र. के निगम द्वारा निर्मित मुजफ्फर अली की फिल्म आगमन

□ गिरधारी लाल पाहवा

कम्पनी एक्ट के आधीन 1975 में उत्तर प्रदेश चलचित्र निगम की स्थापना इस उद्देश्य से की गई थी कि यहाँ फिल्म निर्माण को प्रोत्साहन दिया जाएगा। जब हिन्दी फिल्में अपने क्षेत्र में बनेगी तो उनमें अपनी माटी की गंध होगी और वे बम्बइया फूहड़पन से मुक्त होंगी। इसके साथ ही विशाल जनसंख्या के अनुपात में महज चन्द सौ छविगृहों की अपर्याप्त संख्या को देखते इसे कस्बे व ग्रामीण अँचलों में छविगृह बनाने का भी काम सौंपा गया। सार्वजनिक उपक्रम के रुप में इसके संचालक मण्डल में अधिकांश अधिकारी रखे गए। सचिव मुख्यमंत्री इसके अध्यक्ष, सूचना निदेशक-प्रबन्ध निदेशक के अलावा जो निदेशक मण्डल रहा उसमें अधिकांश आई. ए.एस. अधिकारी रहे। फिल्मोद्योग के प्रतिनिधि के रुप में पहले श्रीमती नर्गिसदत्त रही। छविगृह मालिकों के प्रतिनिधि एल.पी. अग्रवाल को सिनेमा प्रदेशिक संघ ने मनोनीत किया। बाद में नर्गिस जी की जगह प्रकाश मेहरा को नियुक्त किया गया और फिल्म पत्रकार के रूप में गिरधारीलाल पाहवा को विशेष आमंत्रित बनाया गया।

दस दिसम्बर 1977 को फतेहपुर (बाराबंकी) में जब पहले छविगृह का उद्घाटन हुआ, तो स्व. नर्गिसदत्त के सुझाव पर इसके संचालन का भार स्वयं चलचित्र निगम ने संभाल। यद्यपि इसे लेने के लिये ताराचन्द बड़जात्या सहित कई वितरक प्रयासरत थे। सूचना विभाग के अधिकारी सुरेश निगम ने रुचि लेकर इसे महाप्रबंधक के रुप में विकसित किया। वह स्वयं फिल्म निदेशक थे पर उनकी प्रतिभा का उस दिशा में उपयोग न कर शासन ने उन्हें व्यावसायिक दायित्व सौंपा। उनके कार्यकाल में सिनेमाघरों की तादाद तेजी से बढ़ी। कुछ सिनेमाघर घाटे का सौदा रहे परन्तु आरम्भिक दौर में हानि कम थी।

1980 के दशक में वी.पी. सिंह मुख्यमंत्री बने, तो उनके इलाहाबाद के मित्र उमाशंकर चलचित्र निगम के सलाहकार नियुक्त किए गए। इस सलाहकार ने मुख्यमंत्री के सम्पर्कों का दुरुपयोग कर चलचित्र निगम का दोहन शुरु किया। घाटा बढ़ने लगा। केन्द्र सरकार के सहयोग से हरिजन समस्या पर बनने वाली फिल्म के लिए आए धन का कथित अपव्यय हुआ। फिल्म के लिए आंवटित धन राशि खत्म हो गई। 8 लाख रुपये केन्द्र से मिले थे और इतने लगाकर राज्य सरकार ने फिल्म बनानी थी। 1982 में मुख्यमंत्री बदलने के बाद श्रीपति मिश्र आए तो उन्होंने आर. के मिश्र को सलाहकार बनाया। उच्च अधिकारियों की उपेक्षा की वजह से प्रतिवर्ष घाटा बढ़ने लगा। जब वीरबहादुर सिंह मुख्यमंत्री बने तो 'अमिताभ बच्चन' की सिफारिश पर 'अमिताभ बच्चन फैन्स एसोसिएशन, के संयोजक रवि वधावन सलाहकार बने, तब चलचित्र निगम बंद होने के कगार पर पहुँच गया। उन्होंने 'कसौटी' फिल्म बनाई इसमें निगम का लाखों रुपया व्यय हुआ। यह फिल्म आज तक पर्दे का मुँह नहीं देख सकी।

एक दशक में सिनेमाघर बढ़ते गए और उसके साथ निगम का घाटा भी क्योंकि इन कस्बों में जहाँ सिनेमा घर बनाए गए वे मुख्य बस्तियों से हटकर थे। इसीलिये व्यावसायिक दृष्टि से छविगृह अपना व्यय भी नहीं निकाल सके। बस इतना ही संतोष था कि घाटे से ज्यादा से छविगृह शासन को मनोरंजन कर अदा करते थे। 42 में मात्र 8-10 छविगृह ही मुनाफे पर चले जहाँ अच्छी आबादी थी और निजी कोई सिनेमा घर नहीं था।

इस तरह छविगृहों के विस्तार के साथ चलचित्र निगम का घाटा बढ़ता गया। श्रीपति मिश्र के कार्यकाल में योगेन्द्र नारायण ने रुचि लेकर फिल्म गतिविधियों का विस्तार और लखनऊ के राष्ट्रीय फिल्म समारोह मार्च 1985 में आयोजित किया। इसमें ऋषिकेशमुकर्जी, गुलजार सरीखे फिल्मकार आए। कालान्तर के योगेन्द्र नारायण के दिल्ली चले जाने के बाद किसी अधिकारी ने सही माने में रुचि नहीं ली।

1989 में जनता दल सरकार आते ही मुख्यमंत्री मुलायम सिंह ने घोषणा की कि घाटे वाले सरकारी निगम बन्द कर दिये जायेंगे। एक उच्चस्तरीय बैठक में इसे तत्काल बन्द करने का आदेश जारी कर जिलाधिकारियों को निर्देशित किया गया कि वे छविगृह को अपने कब्जे में ले लें। प्रदेश के संख्यतागत वित्त सचिव ताहिर रिजवी जो चलचित्र निगम के अंतिम अध्यक्ष रहे ने कहा था चलचित्र निगम को लम्बे घाटे की वजह से बंद किया गया है क्योंकि वीडियो के आगमन के बाद अब इसे मुनाफे के लाना संभव नहीं लगता।

फिल्म निर्माण को प्रोत्साहन देने के लिए उ.प्र. चलचित्र निगम ने एक कैमरा, लैंस, जूमलैंस, फिल्टर, नागरा और सारे लाइट्स की व्यवस्था के साथ एक वैन क्रय की थी जिसे प्रदेश में शूटिंग करने आने वाले निर्माता-निर्देशकों को उपलब्ध कराया जाता था। मुजफ्फर अली मिर्जा ब्रदर्स जैसे कुछ निर्माताओं ने इसका उपयोग कर उत्तरप्रदेश में शूटिंग की। अब ये उपकरण बेचे जा चुके हैं। हिंदी के सबसे बड़े प्रदेश के चलचित्र निगम ने कुछ कदम चलने के पहले ही अपना दम तोड़ दिया। ●
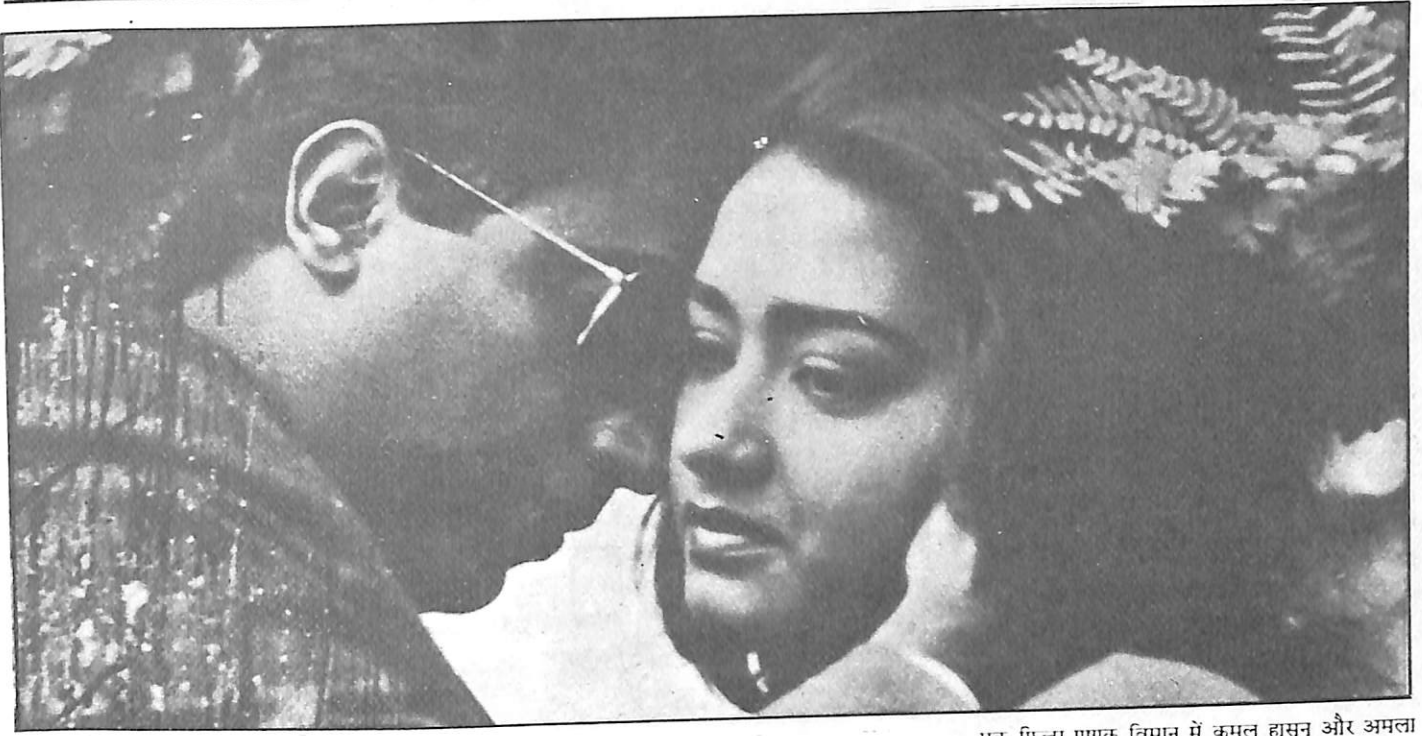
मूक फिल्म पुष्पक विमान में कमल हासन और अमला

केरल फिल्म डेवलपमेन्ट कार्पोरेशन

पंजीकृत कार्यालयःचलचित्र कलाभवन, बहुधाकुड, त्रिवेन्द्रम 695 014। चेयरमेन पी. गोविन्द पिल्लई। प्रबन्ध संचालक जी. राजशेखरन। फिल्म निर्माण, प्रदर्शन एवं उत्तम फिल्मों के निर्माण को प्रोत्साहित करते हुए स्थापित। त्रिवेन्द्रम में चित्रांजलि नामक स्टुडियो संकुल की स्थापना। चित्रांजलि की इनडोर स्टुडियो फ्लोरिंग एशिया में सबसे बड़ी हैं। 12 हजार वर्ग फुट क्षेत्रफल तथा 50 फुट ऊँचाई वाली साउण्ड प्रूफ यूनिट में सभी आधुनिक उपकरण मौजूद है।

फीचर फिल्म निर्माण के लिए सभी भाषाओं के फिल्म निर्माताओं को स्टुडियो में शूटिंग, रेकार्डिंग, एडिटिंग प्रोसेसिंग आदि की सुविधाएँ काफी कम खर्च में मिलती है। कार्पोरेशन द्वारा सिने टेक 'नामक मासिक बुलेटिन भी प्रकाशित किया जाता है। इसके अतिरिक्त प्रादेशिक सरकार द्वारा उत्तम मलयाली फिल्मों को पुरस्कृत करने की प्रक्रिया में सहयोग हेतु सभी कार्यवाइयाँ कार्पोरेशन के माध्यम से ही की जाती हैं।

गुजरात फिल्म डेवलपमेंट कार्पोरेशन

गुजरात सरकार द्वारा अच्छी फिल्मों को प्रोत्साहन देने का लिए सन् 1984 में स्थापित। अध्यक्ष नानाभाई रॉयल। मुख्यालय गाँधीनगर, गुजरात। राष्ट्रीय स्तर के फिल्मोत्सव, वृत्तचित्रों के प्रदर्शन एवं निर्माण में सक्रिय फिल्म एप्रिसिएशन पाठ्यक्रम का आयोजन। गुजरात में बनने वाली फिल्मों को विभिन्न स्तरों पर कर मुक्ति देने के सफल प्रयास। गुजरात भर में ग्रामीण क्षेत्र में वीडियो थियेटर्स निर्माण करने की भावी योजना तथा वीडियो न्यूज मेगजीन का प्रकाशन विचाराधीन।

उड़ीसा फिल्म डेवलपमेंट कार्पोरेशन लिमिटेड

उड़ीसा सरकार द्वारा अपनी विभिन्न योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए सन् 1976 में इस प्रतिष्ठान की स्थापना की थी। संस्था का कार्यालय चलचित्र भवन, बक्सी बाजार, कटक - 753 001। संस्था के उद्देश्यों में ग्रामीण एवं कस्बाई क्षेत्रों में सिनेमाघरों की स्थापना के लिए मिनी क्षेत्र के लोगों को प्रोत्साहित करना। उड़िया तथा अन्य भाषा की अच्छी फिल्मों के निर्माण हेतु आर्थिक व अन्य तरह का सहयोग प्रदान करना। अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय, प्रादेशिक भाषाई, एवं लघु एवं बाल फिल्मों के महोत्सव आयोजित करना है।

कार्पोरेशन स्वयं भी कटक, भुवनेश्वर राउरकेला आदि नगरों में अच्छे सिनेमाघरों का निर्माण कर रहा है ताकि उसको नियमित आय के साधन बढ़ सके। प्रदेश में स्टुडियो, प्रयोगशाला, डबिंग, एडिटिंग, तथा संगीत रेकार्डिंग हेतु काम्पलेक्स स्थापित करने की योजना कलिंग स्टुडियों के प्रारंभ के साथ पूरी हो गई है।

कलिंग स्टुडियो

उड़ीसा फिल्म डेवलपमेन्ट कार्पोरेशन ने प्रसाद स्टुडियो मद्रास के साथ मिलकर कलिंग स्टुडियों की 1982 में स्थापना की। भुवनेश्वर के पास 25 एकड़ भूमि के विस्तार में फैले इस स्टुडियो में फिल्म निर्माण एवं शूटिंग की सभी सुविधाएं उपलब्ध हैं। उत्कृष्ट उपकरणों से युक्त एयरकण्डीशन्ड थिएटर एवं शूटिंग हेतु आने वाले कलाकारों के आवास हेतु एयरकण्डीशन्ड बंगले स्टुडियो परिसर में हैं। स्टुडियों की विशेषता है 'गाँव', झोपड़ी, कवेलू की छतों वाले मकान, चौपाल, मंदिर, थाना, अस्पताल आदि पक्के बने हुए हैं।

स्टुडियों में उड़ीसा तथा अन्य भाषा में बनने वाली फीचर फिल्मों एवं वृत्त चित्रों के निर्माताओं को बहुत कम दरों पर सुविधाएं मिलती हैं।

सीसीसीए:

सेंट्रल सरकिट सिने एसोसिएशन

□ जयप्रकाश चौकसे

सीसीसीए का फिल्म भवन (इन्दौर)

मध्यप्रदेश, राजस्थान और सी.पी. बरार के सभी वितरक एवं प्रदर्शक बम्बई की एक संस्था के सदस्य थे और उद्योग से सम्बन्धित हर छोटे बड़े कार्य केलिए सदस्यों को बम्बई जाना पड़ता था। सुब्बाराव ने इन ढाई प्रांतों के फिल्मवालों की संस्था **"सेन्ट्रल सरकिट सिने एसोसिएशन"**का सपना देखा और 1951 में इंदौर के यशवंत टॉकीज में आयोजित पहले खुले अधिवेशन में संस्था का जन्म हुआ। चालीस वर्ष बाद संस्था की सदस्य संख्या लगभग दो हजार के आसपास है और पूरे भारत में इस संस्था के अनुशासन और एकता की प्रशंसा है। पूरे भारत में फिल्म उद्योग की अनेक संस्थाएं हैं परन्तु सेन्ट्रल सरकिट सिने एसोसिएशन अर्थात **"सी.सी.सी.ए."** ही एकमात्र ऐसी संस्था है जिसका इंदौर में अपना "फिल्म-भवन" है तथा अमरावती और जयपुर में स्वयं के ऑफिस हैं। बम्बई का कोई भी निर्माता सी.सी.सी.ए. के सदस्य के पैसे खाने की हिम्मत नहीं करता क्योंकि संगठन की शक्ति से सभी परिचित हैं।

विगत 20 वर्षों में दो बार संस्था ने उन सितारों की फिल्म के खरीदने और प्रदर्शन करने पर रोक लगा दी, जिन्होंने 12 से अधिक फिल्मों में काम करना स्वीकार किया था। **सितारों के लालच और मनमानी पर अंकुश लगाने का साहस केवल इसी संस्था के पास है।** दोनों बार लगाई गई "स्टार सीलिंग" का लाभ यह हुआ कि फिल्म निर्माण की गति बढ़ गई और अनेक रुकी हुई फिल्में पूरी हुई जिनमें उद्योग के करोड़ों रुपए लगे थे।

संस्था की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि सदस्यों के आपसी विवाद के लिए कोई भी सदस्य अदालत की शरण नहीं लेता। सारे मामले संगठन की कमेटी में आपसी बातचीत से हल हो जाते हैं। लाखों रुपये के विवाद चंद ही बैठकों में सुलझ जाते हैं और कोर्ट-कचहरी के गलियारों की धूल फाँकने से सदस्य बच जाते हैं।
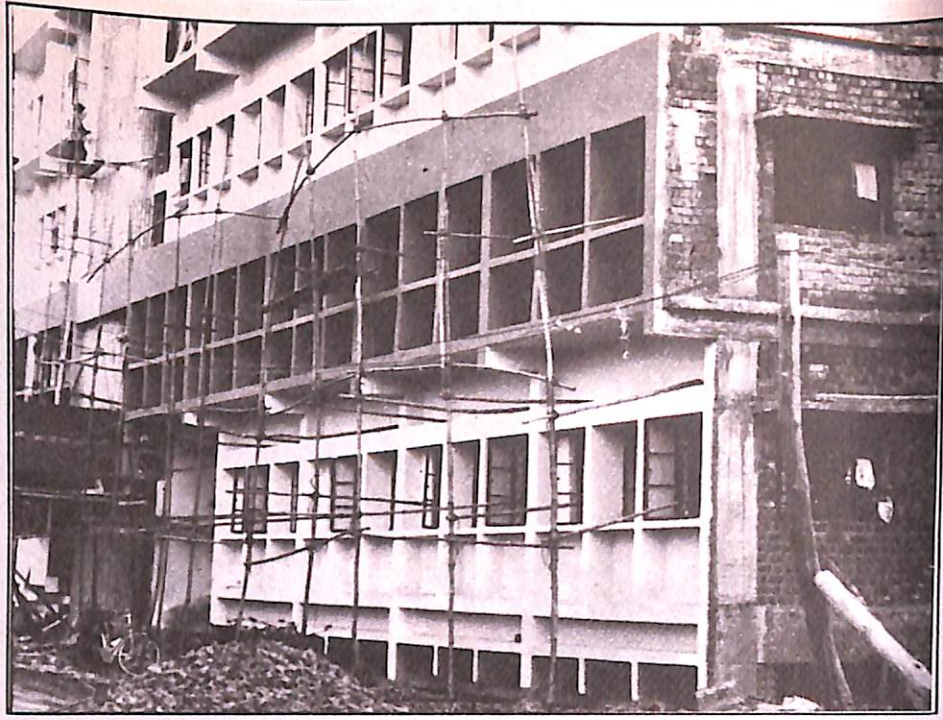
चालीस वर्षों की संस्था के इतिहास में 26 वर्षों से **संतोषसिंह जैन** अध्यक्ष पद पर चुने गए हैं क्योंकि संगठन को बनाए रखने और सुचारू रूप से चलाने से लिए अथक प्रयास किया है उनकी दूरदृष्टि, पक्का इरादा और कठोर अनुशासन ने इसे भारतीय फिल्म उद्योग की शीर्ष संस्था बना दिया है।

संगठन की साधारण सभा हर वर्ष सितम्बर के अंतिम सप्ताह में होती है जहाँ जनतांत्रिक चुनाव पद्धति से 16 सदस्यों की कार्यकारिणी चुनी जाती है जिसमें से 8 सदस्य वितरण क्षेत्र के होते हैं और इतने ही वितरण क्षेत्र के होते हैं और इतने ही प्रदर्शन क्षेत्र से । इन सोलह में से 4 सदस्य राजस्थान के, 4 सदस्य सेंट्रल इंडिया और 8 सदस्य सी. पी. बरार क्षेत्र के होते हैं। पदाधिकारियों का चुनाव यह सोलह लोग करते हैं। इंदौर, जयपुर, अमरावती और भुसावल में कार्यकारिणी द्वारा नामजद सदस्यों की निम्न संस्थाएँ पूरा कार्य देखती हैं (1) **वसूली समिति** जो अनुबंध के अनुसार वितरकों और प्रदर्शकों को अपने अधिकार का धन दिलाती हैं।

(2)**विवाद समितिः** उन झगड़ों को निपटाती है, जो अनुबंध के अर्थ को लेकर होते है।

(3)**कन्ट्रावेन्शन समितिः** उन सदस्यों को दंडित करती है जो नियमों को तोड़ते है।

(4)**विजिलेंस समितिः** इसके सदस्य पूरे क्षेत्र का दौरा कर देखते हैं कि कौन से सदस्य नियम भंग कर रहे हैं।

(5)**फिल्म पंजीकरण समितिः** निर्माता और वितरक के अनुबंध के अनुसार पूरी तसल्ली के बाद ही पंजीकरण का नम्बर देती हैं। पंजीकरण समिति केवल भुसावल में कार्यरत हैं। इस समिति के पास चालीस सालों का पूरा ब्यौरा है और गलती की कोई संभावना नहीं हैं।

(6)**अपीलेट समितिः** वे सब मामले जाते हैं, जो अन्य समितियों के निर्णय से असंतुष्ट हैं।

(7)**चयन समितिः** नए सदस्य के आवेदन की पूरी छानबीन करती है।

(8)**कार्यकारिणी** की सभा में सभी समितियों के कार्यों और निर्णयों का परीक्षण होता है।

संगठन हर माह उन सदस्यों के नाम प्रकाशित करती हैं, जिन्होंने नियम तोड़े हैं और ऐसे सदस्यों के साथ किसी प्रकार का व्यवसाय अन्य सदस्य नहीं करते। सदस्यों की एकता और अनुशासन का कठोर पालन ही संगठन की शक्ति हैं। सी.सी.सी.ए. में सम्पूर्ण मध्यप्रदेश, राजस्थान के अलावा महाराष्ट्र के विदर्भ-बरार-खानदेश के जिले सम्मिलित हैं। ●

इण्डियन मोशन पिक्चर्स प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन (इंपा)

सात प्रमुख निर्माताओं द्वारा 5 मई 1937 को इंपा का गठन किया गया तथा कम्पनीज एक्ट के अन्तर्गत 8 अक्टूबर 1938 को संस्था पंजीकृत हुई। खान वहादुर अर्देशर ईरानी, संस्थापक अध्यक्ष निर्वाचित हुए। सन् 1987 से संस्था अपने स्वयं के भवन बांद्रा (बम्बई) स्थित इंपा हाउस में कार्यरत है। वर्तमान में 1500 निर्माता इसके सदस्य हैं। इंपा द्वारा सन् 1940 में एक हाउस मेगजीन 'जर्नल ऑफ द फिल्म इण्डस्ट्री' भी प्रकाशित की थी। भारत में पहली बार इंपा और सेंसर बोर्ड ने मिलकर सेंसरशिप कोड तैयार किया।

इंपा ने आजादी के समय सत्ता हस्तांतरण पर एक वृत्तचित्र '**आजादी का उत्सव**' भी तैयार किया तथा लघुफिल्म 'बापू की अंतिम यात्रा' का वितरण भी इंपा के माध्यम से ही हुआ। कल्याणकारी और पारमार्थिक कार्यों के लिए इंपा सदैव मुक्त हस्त से दान देती रही है। वर्तमान अध्यक्ष निर्माता निर्देशक शक्ति सामन्त हैं।

वेस्टर्न इण्डिया सिनेमाटोग्राफर्स एसोसिएशन

दो अगस्त 1953 को स्थापित। अवधूत एवं फरदून ईरानी प्रेरणा स्रोत रहे। वर्तमान सदस्य संख्या 750। वर्तमान अध्यक्ष राधू करमरकर। संस्था सिने छायाकारों की समस्याओं का सामूहिक हल खोजने का प्रयास करती है एवं उनके हित एवं कल्याणकारी कार्यों में संलग्न। पंजीकृत कार्यालय श्री साउण्ड स्टुडियो दादर, बम्बई 400 014 । संस्था फिल्म फेयर अवार्ड के लिए सिने छायाकारों को नामांकित करती है एवं स्वयं भी श्रेष्ट छायाकार टीम को प्रतिवर्ष पुरस्कार प्रदान करती है। सदस्यों तथा उनके परिवारों को समय पड़ने पर आर्थिक सहायता भी एक ट्रस्ट के माध्यम से प्रदान की जाती है।

फिल्म प्रोड्यूसर्स गिल्ड ऑफ इण्डिया

सन् 1951 में स्थापित। कार्यालय-राजकमल स्टुडियो डॉ. एस.एस. राव रोड, परेल बम्बई 400 012। टेलीफोन 413 3042। बम्बई के प्रमुख निर्माताओं द्वारा स्थापित। भारतीय फिल्मोद्योग को विकसित एवं प्रोत्साहित करने का लक्ष्य। फिल्मों की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए निरन्तर प्रयासशील। सन् 1954 से इण्डियन कम्पनीज एक्ट के अन्तर्गत 'इनकारपोरेटेड'। संस्थापक अध्यक्ष - वी. शांताराम। सदस्य संख्या - 200। वर्तमान अध्यक्ष - श्री जे. ओमप्रकाश।

सिने कास्ट्युम एवं मेकअप आर्टिस्ट एसोसिएशन

स्थापना सन् 1955 । ट्रेड यूनियन एक्ट बम्बई के अन्तर्गत पंजीकृत। फेडरेशन ऑफ वेस्टर्न इण्डिया सिने एम्प्लाइज से सम्बद्ध। **कार्यालय** 8 नीलकंठ अपार्टमेंट, गोकुलदास पास्ता रोड, दादर, बम्बई 400014। टेलीफोन 411-4506 संस्थापक। अध्यक्ष श्री जगत कुमार। सदस्य संख्या 980। मेकअप मेन, हेयर ड्रेसर एवं कास्ट्युम डिजाइनर की समस्याओं के हल तथा नियमित कार्य एवं बेहतर पारिश्रमिक के लिए प्रयासशील।

साऊथ इण्डियन फिल्म चेम्बर ऑफ कामर्स

दक्षिण भारतीय फिल्मोद्योग के निर्माताओं, वितरकों, प्रदर्शकों आदि व्यवसाइयों के हितों की रक्षा हेतु इस संस्था का गठन 52 वर्ष पूर्व हुआ था। सदस्यों की वर्तमान संख्या लगभग तीन हजार पाँच सौ है। पंजीकृत कार्यालय 605 अन्नासलाई, टी.आर. सुन्दरम् एवेन्यू मद्रास 600 006 है। वर्तमान अध्यक्ष एम.सी.युनुसे। उपाध्यक्ष सर्वश्री ए. रमेश। के बालचन्दर। जी. वेंकटेश्वरन। एम. वी. रामू है। मानद सचिव ए. पुण्डारी काकशय्या एवं कोवाई चेरिचयन तथा मानद कोषाध्यक्ष एल. सुरेश हैं।

संस्था फिल्म उद्योग के बहुमुखी विकास के लिए दक्षिण भारत में सक्रिय है। उद्योग की राह में आने वाली बाधाओं के विरूद्ध निरंतर संघर्ष करते हुए "वीडियो पाइरेसी" एवं केबल टी.वी. के खिलाफ प्रदेश एवं राज्य सरकार से ठोस कानून बनाने के लिए प्रयासरत । निर्माताओं को कच्ची फिल्म सस्ती दरों पर दिलवाने हेतु व्यापक अभियान। संस्था फिल्मोत्सवों के आयोजन तथा सेंसर बोर्ड की नीतियों के परिपालन में सदैव सक्रिय सहयोग करती है।

इण्डियन मोशन पिक्चर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स एसोसिएशन

बम्बई के फिल्म वितरकों की पहल से मई 1938 में स्थापित। प्रतिष्ठित वितरक एम.बी. बिलिमोरिया संस्थापक अध्यक्ष रहे। संघ का कार्यक्षेत्र मुख्यतः बम्बई सर्किट है जिसमें बम्बई नगर, उपनगरों सहित महाराष्ट्र के ग्यारह जिले, सम्पूर्ण गुजरात प्रदेश, कर्नाटक के चार जिले तथा गोआ, दीव व दमन सम्मिलित हैं।

संघ का उद्देश्य वितरकों के सम्मुख आने वाली विभिन्न समस्याओं का समाधान करना, सरकारी तंत्र में पहल कर वितरकों के हित सुरक्षित रखने के प्रयास करना एवं वितरण व्यवसाय को निर्बाध गति से चलने देने के लिए अच्छा वातावरण तैयार करना है। वितरकों एवं निर्माताओं के बीच होने वाले विवाद, वितरकों एवं प्रदर्शकों के मध्य मतभेदों के समाधान के लिए संघ द्वारा ट्रिब्यूनल का गठन भी किया गया है। संघ के 600 सदस्य हैं तथा सम्पूर्ण नियंत्रण चुनी हुई कार्यकारिणी समिति द्वारा किया जाता है। कार्यकारिणी समिति के सदस्यों का चुनाव प्रतिवर्ष किया जाता है। संघ कम्पनी एक्ट 1938 के सेक्शन 25 के अन्तर्गत पंजीकृत है। वर्तमान अध्यक्ष एन.एन. सिप्पी हैं।

इण्डियन डाक्यूमेंटरी प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन

बम्बई पब्लिक ट्रस्ट एक्ट 1950 के अंतर्गत सन् 1956 में स्थापित। कार्यालय - 223 फेमस सिने बिल्डिंग डॉ. ई. मोजेस रोड, महालक्ष्मी, बम्बई, 400 011. टेलीफोन 492 0757. संस्थापक अध्यक्ष इजरा मीर। सत्यजीत रॉय के अब्बास आदि पूर्व अध्यक्ष। वर्तमान अध्यक्ष कीथ स्टीवेन्सन। महासचिव - जगदीश बैनर्जी। वृत्तचित्र एवं लघु फिल्म निर्माताओं की समस्याओं के जूझने वाली संस्था। भारत में वृत्तचित्र आन्दोलन को प्रोत्साहित करने के लिए निरन्तर प्रयासशील। वर्तमान सदस्य संख्या छः सौ ।

मूवी स्टण्ट आर्टिस्ट्स एसोशिएशन

कार्यालय- महालक्ष्मी ब्रिज, बम्बई। चेयरमेन ए. मंसूर। वाइस चेयरमेन - मासूम हुसैन। अध्यक्ष सुरेन्द्र वर्मा। महासचिव - बाबा मिस्त्री। मारधाड़ करने वाले जूनियर कलाकारों के हित रक्षा की दिशा में सक्रिय। बेहतर सेवाशर्तों एवं अच्छे पारिश्रमिक के लिए प्रयासशील।

सिनेमाटोग्राफर एक्जीबिटर्स एसोसिएशन ऑफ इण्डिया

अध्यक्ष - प्राण लाल दोशी थिएटर स्वामियों की संस्था। सदस्य संख्या 858 । देश में सिनेमाघरों के कारण आम जनता को मनोरंजन माध्यम को प्रदान करने वाले थिएटर स्वामियों की समस्याओं को हल करने हेतु इस संस्था का निर्माण हुआ।

जूनियर आर्टिस्ट्स एसोसिएशन

स्थापना 1943। संस्थापक पृथ्वीराज कपूर एवं सोहराब मोदी। ट्रेड यूनियन एक्ट 1926 के अन्तर्गत पंजीकृत एवं फेडरेशन ऑफ वेस्टर्न इण्डिया सिने एम्प्लाइज से सम्बद्ध। **कार्यालय** 549 B, हरिकृष्ण कुंज, डॉ. ई. मोजेस रोड़, जेकब सर्कल बम्बई 400011। अध्यक्ष विलास सावन्त (पूर्व गृहमंत्री), महाराष्ट्र। कार्यकारी अध्यक्ष जफर अहमद। सदस्य संख्या 4000। जूनियर कलाकारों को नियमित काम दिलाने का प्रयास तथा उनकी सेवा शर्तों में सुधार के लिए हर स्तर पर संघर्षरत। घर से भागकर बम्बई आने वाले लड़के-लड़कियों को अपने अभिकर्त्ताओं के जरिए रोजगार प्राप्ति में सहायता।

आन्ध्र प्रदेश फिल्म चेम्बर ऑफ कॉमर्स

पब्लिक सोसायटीज रजिस्ट्रेशन एक्ट 1860 के अंतर्गत 1979 में पंजीकृत। कार्यालय-बी-1, बंजारा गार्डन रोड नं. 12 बंजारा हिल्स, हैदराबाद - 500 034 । अध्यक्ष श्री जी. हनुमन्त राव। आन्ध्र प्रदेश शासन द्वारा एपेक्स बॉडी के रूप में मान्यता प्राप्त। फिल्म उद्योग को प्रदेश में विकसित एवं सुनियोजित करने के लिए निरन्तर प्रयासशील। रीजनल फिल्म सेंसर बोर्ड की स्थापना 1986 में हैदराबाद में कराने में सफल। अच्छी फिल्म एवं कलाकारों को वार्षिक पुरस्कारों की आयोजना। फिल्क उद्योग से सम्बन्धित व्यक्तियों के लिए आवासीय कालोनी एवं स्टुडियो निर्माण की योजना का कार्यान्वयन। वर्तमान पदाधिकारी : जी. हनुमंत राव (अध्यक्ष) बी. मधुसूदन राव, ए. बचीराज लिंगम और एस.वी. रामनैय्या सेट्टी (उपाध्यक्ष)।

साउथ इण्डियन फिल्म डाइरेक्टर्स एसोसिएशन

ट्रेड यूनियन एक्ट 1926 के अंतर्गत पंजीकृत। सन् 1971 में स्थापित। फिल्म एम्प्लाइज फेडरेशन ऑफ साउथ इण्डिया से सम्बद्ध। फिल्म निदेशकों के कल्याण के लिए विभिन्न कार्यों में संलग्न। पटकथा एवं निर्देशन पर रिफ्रेशर कोर्स आयोजित करना एवं विदेशी फिल्म निर्देशकों से संस्कृति आदान-प्रदान। फिल्म निर्देशकों के लिए आवासीय कॉलोनी का निर्माण संस्था के माध्यम से किया जा चुका है। निरन्तर प्रयास कर केन्द्र एवं राज्य सरकारों से सिने कामगारों के हित में कानून बनवाने के लिए संघर्षरत। सदस्य संख्या 200 **कार्यालय** - 2 गोपाल कृष्ण अय्यर रोड, टी. नगर मद्रास - 600 017, अध्यक्ष जी.एम. कुमार। महासचिव - कृष्णन मुन्नड।

कर्नाटक फिल्म चेम्बर ऑफ कामर्स

फिल्म व्यवसाय से जुड़े कर्नाटक के निर्माताओं-वितरकों-प्रदर्शकों तथा अन्य व्यवसाइयों की इस संस्था की वर्तमान सदस्य संख्या लगभग 350 है। सन् 1944 में स्थापित इस संस्था का मुख्यालय 28, क्रेमेन्ट रोड़ बंगलोर है। वर्तमान अध्यक्ष सी.वी.एल.शास्त्री। उपाध्यक्ष एच.एन.मुदुकृष्णा, आर.एस.देवकुमार, तथा आर. लक्ष्मण। मानद सचिव के.एस.एल. स्वामे, जी.एम.कुट्टी, तथा एन व्यंकटेशमूर्ति हैं। कोषाध्यक्ष सी. नारायण हैं।

संस्था कर्नाटक में सिने गतिविधियों के विकास एवं विस्तार के लिए कार्यरत है। प्रादेशिक फिल्मों के विकास के लिए चेम्बर के प्रयासों में एन.एफ.डी.सी. का शाखा कार्यालय बंगलौर में प्रारंभ हुआ है। केबल टी.वी. के संचालन के विरोध में चेम्बर ने कर्नाटक हाईकोर्ट में रिट पिटीशन दायर की है। मैने व्यवसाइयों को राहत दिलवाने के लिए सरकारी नियमों में फेरबदल के लिए चेम्बर ने कई सफल प्रयास किए है। प्रादेशिक फिल्मों की गुणवत्ता को प्रोत्साहित करने के लिए चेम्बर द्वारा प्रमुख फिल्म निर्माताओं को प्रति वर्ष सम्मानित किया गया है। राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय फिल्मोत्सवों का कर्नाटक के विभिन्न नगरों में आयोजन करवाने के लिए चेम्बर नियमित सहयोग प्रदान करना हैं।

फिल्म प्रोड्यूसर गिल्ड ऑफ साउथ इण्डिया

स्थापना अप्रैल 1965, कार्यालय 16, त्यागरा ग्रामानी स्ट्रीट मद्रास 600 017। तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, केरल एवं कर्नाटक के फिल्म निर्माताओं के हितार्थ सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट 1860 के अन्तर्गत इस संस्था की स्थापना डी.वी.एस.राजू के प्रयासों से हुई। वर्तमान में लगभग एक हजार सदस्यों वाला यह प्रतिष्पात केन्द्रीय एवं प्रादेशिक सरकारों से मान्यता प्राप्त है। निर्माताओं की समस्याओं को हल करने के ठोस प्रयासों के साथ यह संस्था उनके आपसी मतभेद सुलझाने, केन्द्र एवं प्रदेश सरकार से सुविधाएं दिलाती है। कच्ची फिल्मों एवं अन्य सामग्री का वितरण करने का काम भी देखती है। निर्माताओं एवं सिने कलाकारों व कामगारों के मध्य हुए विवादों का हल भी करती है। इसके साथ ही यहाँ फिल्मों के नामों का पंजीकरण भी होता है। नामों की पुनरावृत्ति न हो। संस्था द्वारा रूस में होने वाले अन्तर्राष्ट्रीय फिल्मोत्सवों में शिष्ट मण्डल नियमित रूप से भेजती रही हैं। एक मासिक बुलेटिन भी नियमित रूप से प्रकाशित किया जाता है।

संस्था के वर्तमान अध्यक्ष बालमपुरी सोमनाथन। उपाध्यक्ष एस.एस. तिरुपति एवं बालिहा। मानद सचिव आर. राममूर्ति एन.वी. सुबाराजू। मानद कोषाध्यक्ष जी. दण्डपाणि है।

एसोसिएशन ऑफ सिने आर्ट डाइरेक्टर्स

फिल्मोद्योग से संबंधित कला निर्देशकों की संस्था। ट्रेड यूनियन एक्ट के अन्तर्गत पंजीकृत होकर सन् 1975 में स्थापित। संस्थापक श्री शांतिदेव एवं अनूपचन्द कक्कर। वर्तमान सदस्य संख्या 270। अध्यक्ष श्री आर.के. हांडा। महासचिव श्री मंजूर।
कार्यालय - रंजीत स्टुडियों दादर, बम्बई 400 014।

फिल्म ट्रेड संस्थान (अशासकीय)

■ **एडवर्टाइज़िंग एजेंसीज एसोसिएशन**
35, मेकर टॉवर, एफ, तीसरी मंज़िल
बम्बई - 5

■ **ऑल इंडिया फिल्म काउंसिल**
राजकमल स्टुडियोज, परेल •
बम्बई - 12

■ **एसोसिएशन ऑफ सिने आर्ट डायरेक्टर्स**
रणजीत स्टुडियो
दादा साहेब फालके रोड, दादर,
बम्बई - 14

■ **एसोसिएशन ऑफ सिने प्रोडक्शन एक्जीक्युटिव्ज**
रणजीत स्टुडियो, दादर
बम्बई - 14

■ **एसोसिएशन ऑफ फिल्म एडीटर्स**
231, फेमस महालक्ष्मी बम्बई - II

■ **एसोसिएशन ऑफ मोशन पिक्चर्स एंड टी.वी. प्रोग्राम प्रोड्यूसर्स**
बॉम्बे एसी मार्केट, दसवीं मंजिल
ब्लाक - ए, तारदेव
बम्बई - 34

■ **एसोसिएशन ऑफ मोशन पिक्चर्स स्टुडियोज एंड एक्विपमेंट्स**
रूपतारा स्टुडियोज
दादा साहेब फालके रोड,
दादर, बम्बई - 14

■ **चेम्बर ऑफ मोशन पिक्चर्स प्रोड्यूसर्स**
इम्पा हाउस, डॉ. अंबेडकर रोड,
बांद्रा (वेस्ट), बम्बई - 50

■ **सिने एडवर्टाइजर्स एसोसिएशन**
34, ताड़देव एसी मार्केट बम्बई - 34

■ **सिने कास्ट्यूम एंड मेकअप आर्टिस्ट्स एसोसिएशन**
8, नीलकंठ अपार्टमेंट्स
श्री साउंड स्टुडियोज
दादर बम्बई - 14

■ **सिने डांसर्स एसोसिएशन**
बसंती म्यूजिक हॉल,
दादा साहेब फालके रोड,
दादर, बम्बई - 14

■ **सिने लेबोरेटरी एसोसिएशन**
C/o मॉडर्न सिक्सटीन,
साहस, प्रभादेवी
बम्बई - 25

■ **सिने म्युजिक डायरेक्टर्स एसोसिएशन**
310, फेमस महालक्ष्मी
बम्बई - 11

■ **सिने म्युजिशियंस एसोसिएशन**
पूनम, तल मंजिल
माहीम, बम्बई - 16

■ **सिने सिंगर्स एसोसिएशन**
बसंती म्यूजिक हॉल, दादर
बम्बई - 14

■ **फेडरेशन ऑफ वेस्टर्न इंडिया सिने एम्प्लॉईज**
231, फेमस सिने बिल्डिंग,
महालक्ष्मी, बम्बई - 11

■ **फिल्म स्टुडियो सेटिंग एंड अलाइड मजदूर यूनियन**
रणजीत स्टुडियो, दादा साहेब
फालके रोड, दादर
बम्बई - 14

■ **फिल्म जर्नलिस्ट्स सोसायटी**
c/o अखिल भारतीय मराठी
पत्रकार परिषद्
ए - एंसा हटमेंट,
आजाद मैदान, बम्बई - 1

■ **फिल्म मेकर्स कम्बाइन्स**
इम्पा हाउस, डॉ अंबेडकर रोड
बांद्रा (वेस्ट), बम्बई - 50

■ **फिल्म प्रोड्युसर्स गिल्ड ऑफ इंडिया लिमिटेड**
राजकमल स्टुडियोज
परेल बम्बई - 12

■ **इंडियन डॉक्यूमेंट्री प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन**
223, फेमस सिने बिल्डिंग
महालक्ष्मी, बम्बई -II

- **इंडियन फिल्म डांस डायरेक्टर्स एसोसिएशन**
  श्री सत्यम, जुहू तारा रोड बम्बई - 49
- **इंडियन फिल्म एक्सपोर्टस एसोसिएशन**
  5-सी, एवरेस्ट बिल्डिंग
  तारदेव, बम्बई - 34
- **इंडियन मोशन पिक्चर्स डिस्ट्रिब्यूटर्स एसोसिएशन**
  33, विजय चेंबर,
  त्रिभुवन रोड बम्बई - 4
- **इंडियन फिल्म डायरेक्टर्स एसोसिएशन**
  501, नवीन आशा, दादा साहेब
  फालके रोड, दादर, बम्बई - 14
- **इंडियन मोशन पिक्चर्स प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन**
  इम्पा हाउस, यूनिट नं. 11,
  डा. अंबेडकर रोड, बांद्रा
  बम्बई -50
- **जूनियर आर्टिस्ट्स एसोसिएशन**
  हरिकृष्ण कुंज
  549 बी, जेकब सर्कल
  बम्बई - 11
- **मराठी चित्रपट महामंडल**
  रवींद्र नाट्य मंदिर
  प्रभादेवी, बम्बई - 25
- **मूवी स्टंट आर्टिस्ट्स एसोसिएशन**
  8, आर एम. बिल्डिंग
  महालक्ष्मी ब्रिज
  बम्बई - 11
- **रेडियो एंड टीवी एडवर्टाइजिंग प्रेक्टिकल एसोसिएशन**
  305, नीलम, वर्ली
  बम्बई - 18
- **रॉ फिल्म स्टीरिंग कमेटी**
  राजकमल स्टुडियोज परेल, बम्बई - 12
- **सोसायटी ऑफ़ फ्री लांस प्रेस फोटोग्राफर्स**
  ए - 3, विवेक अपार्टमेंट्स
  सी. एस. टी. रोड, कालिना
  बम्बई - 98
- **साउंड इंजीनियर्स एसोसिएशन**
  10 गोकुलदास पेस्टारोड दादर,
  बम्बई - 14
- **द सिने आर्टिस्ट एसोसिएशनि**
  210, फेमस महालक्ष्मी
  बम्बई - 11
  द फिल्म फेडरेशन ऑफ इंडिया
  91, वाल्केश्वर रोड
  बम्बई - 6
- **द फिल्म राइटर्स एसोसिएशन**
  रणजीत स्टुडियोज
  दादा साहेब फालके रोड
  दादर, बम्बई - 14
- **थिएटर ऑनर्स एसोसिएशन**
  10 वीं मंजिल, एवरेस्ट
  तारदेव, बम्बई - 34
- **वीडियो फिल्म्स प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन**
  6/7 ब्ल्यू बर्ड, जुहू तारा रोड
  बम्बई - 49
- **वीडियो मूवी प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन**
  29, सी क्वीन, हॉटेल
  सी. प्रिंसेस के सामने
  जुहू तारा रोड
  बम्बई - 49
- **वेस्टर्न इंडिया सिनेमेटोग्राफर्स एसोसिएशन**
  10 गोकुलदाम पेस्टा रोड
  दादर, बम्बई - 14
- **वेस्टर्न इंडिया फिल्म प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन**
  कोर्ट चेम्बर्स, तीसरी मंजिल
  हमाम स्ट्रीट, बम्बई - 23

☐ प्रस्तुति : बद्री प्रसाद जोशी एवं शशि शर्मा

खण्ड तीन

क्या भारतीय फिल्म महोत्सव को प्रतियोगी होना चाहिए ?

□ विनोद भारद्वाज

थाउजण्ड् पीसेस ऑव गोल्ड का एक दृश्य

भारत में अंतर्राष्ट्रीय फिल्म महोत्सवों के चालीस साल पूरे हो चुके हैं हालांकि चार दशक कहने का अर्थ यही है कि पहला भारतीय अंतर्राष्ट्रीय फिल्म महोत्सव 1952 में हुआ था। चालीस सालों में कुल तेईस अंतर्राष्ट्रीय महोत्सव हुए हैं। पर इन महोत्सवों का अपना कोई विशिष्ट रूप नहीं हैं। निश्चय ही इनकी उपयोगिता है पर किसी एक शहर से जुड़े ने होने के अलावा दूसरी अनेक समस्याओं का शिकार ये महोत्सव चालीस साल की परिपक्वता न दिखाकर बिगड़े हुए बच्चे की तरह व्यवहार करते हैं।

सत्तर के दशक में - खास तौर पर 1975 में नई दिल्ली के महोत्सव के बाद से भारतीय महोत्सव की एक पहचान बन गई थी। कई हस्तियों से यह महोत्सव ऐतिहासिक था। कुरोसावा, अंतोनिओनी, सत्यजित राय सरीखी हस्तियाँ इस महोत्सव में शामिल हुई थी और परिचय के फिल्म जगत के सेंसर युक्त रूप से कुंठित भारतीय दर्शक का पहला परिचय हुआ था। गौर करने की बात है कि परिचय में भी सिनेमा साठ और सत्तर के दशक में ही सेक्स और हिंसा (जो फिल्म विधा के आदिम आकर्षण है) के चित्रण में स्वतंत्रता प्राप्त कर सका था। 1973 में स्टेनले क्युबरिक ने **ए क्लॉकवर्क ऑरेंज** बनाई थी। एंथनी बर्गेस के उपन्यास पर आधारित इस फिल्म का किशोर नायक अलेक्स हिंसा और सेक्स दोनों की ही अभिव्यक्ति से पर्दे पर अपना अस्तित्व महसूस कराता है। ब्रिटेन में भी इस फिल्म को लेकर असाधारण हंगामा हुआ था। जनवरी, 1975 में नई दिल्ली में इस फिल्म को देखना भारतीय दर्शक के लिए एक अनोखा अनुभव था।

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि 1975 में वीडियो संस्कृति नहीं थी। तब इस तरह के फिल्म प्रयोगों और उपलब्धियों को देखने के चैनल भारत में नहीं थे। भारतीय 'सेंसर युक्त उत्सव' के दो हफ्तों में बदल गये थे। साल में चौदह दिन ऐसे होते थे जब आम दर्शक भी दुनिया भर की सिनेमाई उपलब्धियों से सीधा परिचय हासिल कर सकता था। बाद में तो खैर महोत्सव दस दिन का हो गया।

यह अलग बात है कि अनेक फिल्मकारों के इस तर्क में दम है कि दो हफ्तों में अगर सेंसर मुक्त फिल्में देश के दर्शकों की 'नैतिकता' पर कोई भयानक असर नहीं डालतीं, तो फिर शेष समय में सेंसर के कड़े अनुशासन का पाखंड क्यों ?

लेकिन 1975 और 92 में बहुत बड़ा फर्क है। वीडियो और केबल ने सेंसर और सिनेमा के उपलब्ध होने की धारण को बदल दिया है। पर फिर भी सेंसर पीड़ित भारतीय दर्शक महोत्सवों से सेक्स और हिंसा के चित्रण की स्वतंत्रता को एक बड़े आकर्षण के रूप में देखता है।

1975 के बाद से लंबे समय तक नई दिल्ली महोत्सव को प्रतियोगी महोत्सवों में एक नियमित स्थान मिलता रहा। आज भी हम अक्सर यह कह कर गौरवान्वित महसूस करते हैं कि भारतीय महोत्सव दुनिया के दस चुने हुए महोत्सवों में से है हालांकि यह एक अर्द्धसत्य है। बर्लिन, कान, वेनिस और
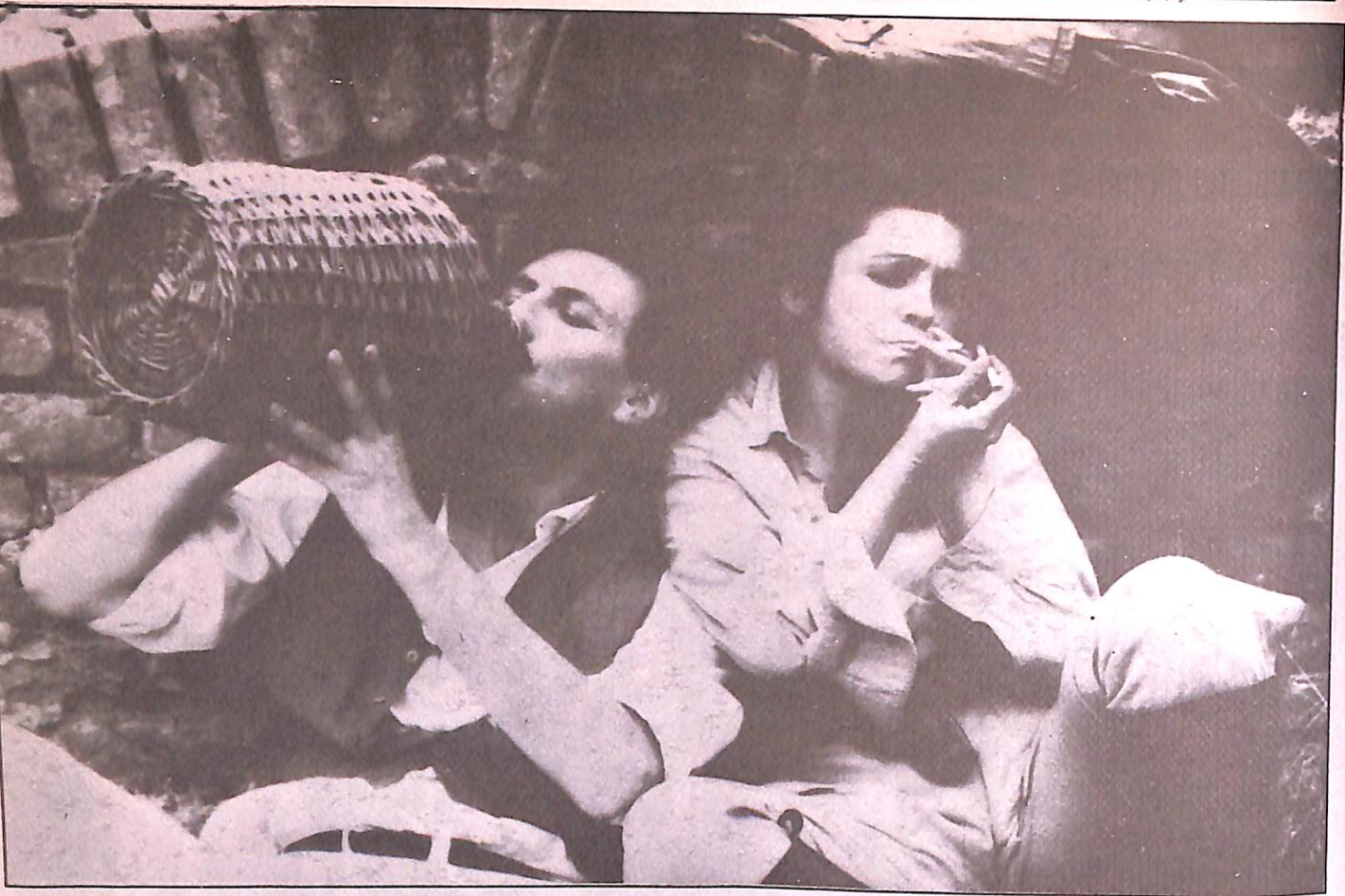
चेक फिल्म सिटींग प्रेट्टी ऑन ब्रांच

मास्को/कार्लोवी वारी के बाद दुनिया भर के प्रतिष्ठित महोत्सवों को यह पता चल गया था कि इन महोत्सवों में जब फिल्में प्रतियोगिता खंड में चली जाती है, तो सिर्फ दूसरे-तीसरे' दर्जे की फिल्में ही बच पाती है। तो क्यों न महोत्सवों का महोत्सव आयोजित किया जाए? लंदन फिल्म महोत्सव यही करता है। साल के लगभग आखिर में वहाँ दुनिया भर के महोत्सवों का एक अच्छा चयन फिल्मक प्रेमियों को मिल जाता है।

भारत में नई दिल्ली का प्रतियोगी महोत्सव हर दूसरे साल अंतर्राष्ट्रीय ज्यूरी में तो महान नाम शामिल कर लेता था पर अच्छी फिल्में नहीं के बराबर होती थीं। मशहूर ब्रितानी फिल्मकार लिंडसे एंडरसन ने अपनी अध्यक्षता में सर्वोच्च पुरस्कार देने से इन्कार कर दिया और प्रतियोगी फिल्मों की गुणवत्ता के बारे में गंभीर सवाल उठाये।

दरअसल एशिया के अनेक शहर महोत्सवों के 'ग्लैमर' को अपने यहाँ लाने के लिए व्यग्र थे। दिलचस्प बात यह है कि इस तरह की कोशिशें जापान से नहीं सामने आई जहाँ धनी प्रायोजकों और समृद्ध फिल्मकारों की कमी नहीं थी। कोशिशें सामने आई तेहरान और मनीला से। पर इन देशों की राजनीतिक स्थिति ने फिल्म महोत्सवों के ग्लैमर को ज्यादा दूर नहीं जाने दिया।

भारत एक बड़ा देश है और यहाँ फिल्म के कई बड़े केन्द्र हैं। इसलिए नई दिल्ली महोत्सव के बीच कलकत्ता, मद्रास, बंबई, हैदराबाद, त्रिवेन्द्रम और बेंगलूर इन 66 शहरों में नियमित रूप से हर दूसरे साल फिल्मोत्सव (गैर प्रतियोगी) आयोजित होने लगे। धीरे-धीरे फिल्म प्रेमियों को यह महसूस हुआ कि फिल्मोंत्सवों में दुनिया भर के सिनेमा को अपेक्षारत अधिक धैर्य और शांति से देखा जा सकता है। अंत में नई दिल्ली को भी गैर प्रतियोगी बना दिया गया। पर आज भी अनेक ऐसे फिल्म प्रेमी हैं, जो प्रतियोगी महोत्सव की वापसी चाहते हैं। वे यह भी चाहते हैं कि दो सप्ताह के महोत्सव को भी वापस लाया जाए।

जरूरी नहीं है कि इन सभी इच्छाओं के लिए अनुकूल वातावरण भी हो। मिसाल के लिए भारत का फिल्म महोत्सव निदेशालय सारा साल बुरी तरह से व्यस्त रहता है। उसे राष्ट्रीय फिल्म महोत्सव भी आयोजित करना पड़ता है। दुनिया भर के छोटे बड़े महोत्सवों में भारतीय फिल्में भी उसी के माध्यम से बाहर जाती हैं। इसके अलावा बाहर से अच्छी फिल्मों को लाने के लिए निजी प्रयत्नों और यात्राओं का बहुत महत्व है। पर निदेशालय के वरिष्ठ अधिकारी भी इस अभियान में आसानी से बाहर नहीं जा पाते हैं। इस पृष्ठभूमि में देखें, तो भारतीय महोत्सवों में जो अच्छी फिल्में आ जाती हैं वे भाग्य से अधिक संचालित हैं कार्यक्रमों से कम।

ऐसे में भारतीय महोत्सव को फिर से प्रतियोगी बना देने के बाद की अराजकता का आसानी से अंदाज लगाया जा सकता है। महत्वपूर्ण बात यह है कि नई दिल्ली सहित भारत में सभी महत्वपूर्ण फिल्म केंद्रों में नियमित महोत्सव होते रहें और वे बहुत महत्वाकांक्षी न हों। अपनी सीमाओं के बावजूद ये महोत्सव, बेहतर और दुर्लभ सिनेमा को दिखाने का बहुत बड़ा प्लेटफार्म हैं। जहाँ फिल्म विधा है वहाँ ग्लैमर तो होगा ही। पर ग्लैमर में हमें डूबना नहीं चाहिए-सिर्फ उसे महसूस करना चाहिए। ●

मद्रास में बाइसवाँ अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह : कुछ महत्वपूर्ण फिल्में

☐ ब्रजेश्वर मदान

मद्रास में भारत का बाइसवाँ अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह दस जनवरी '91 को शुरू हुआ। यह वह समय था जब दुनिया में खाड़ी युद्ध की आहटें सुनी जा रही थी। शायद यही वजह थी कि द्वितीय विश्व युद्ध की पृष्ठभूमि पर स्टीवन नार्थ की फिल्म 'द लास्ट बटरफ्लाई' को उद्घाटक फिल्म के रुप में चुन लिया गया । स्टीवन नार्थ की इस फिल्म का निर्देशन कार्ल कासीना ने किया है और यह चेकास्लोवाकिया, फ्रांस और ब्रिटेन के सहयोग से बनी है। जर्मन आक्रांता का दिल मसखरे से नहीं बहलता - यहाँ इस पंक्ति को इसलिए दोहराया गया है कि इस फिल्म का नायक एक मसखरा है। 1944 में पेरिस पर जर्मन कब्जे के दौरान आन्तवान मोरे नामक यह कलाकार अपने कार्यक्रम प्रस्तुत करता रहता है। इन कार्यक्रमों में वह हिटलर और नात्सियों की नकल भी करता है। लेकिन यह दिल बहलाने वाले कार्यक्रम एक दहलाने वाले अनुभव में तब बदलते हैं जब गेस्टापो द्वारा मोरे की प्रेमिका की हत्या कर दी जाती है। इसे फ्रांसिसी रजिस्टैंस को मदद पहुँचाने के जुर्म में गिरफ्तार कर लिया जाता है। दिल दहला देने वाली यातनाओं का सिलसिला शुरू होता है। आखिर एक प्रश्नकर्त्ता मोरे को पहचान लेता है। वह उसके सामने प्रस्ताव रखता है कि तेरेजिन गाँव जाकर अपने कार्यक्रम प्रस्तुत करें, तो उसे मुक्ति मिल सकती है। तेरेजिन में हमें पता चलता है कि कैसे तानाशाह कला और संस्कृति में अपना चेहरा छिपाता है।

स्टीवन नार्थ ने वियतनाम युद्ध के दौरान 'अनिवार्य सैनिक सेवा' में जाने से इन्कार कर दिया था। उन्हें अमेरिका छोड़कर फ्रांस आना पड़ा था। आज भी खाड़ी संकट और इजराइल में फिलिस्तीनियों की स्थिति देखते हुए ऐसी फिल्मों की जरुरत हैं।

इस समारोह में पौलेण्ड की फिल्म 'इन्टेरोगेशन' उन गिनी-चुनी फिल्मों में से हैं, जिनके कारण इस समारोह की प्रतिष्ठा बची रह सकी। रिजार्ड बुगाजस्की द्वारा निर्देशित यह फिल्म 1982 की है। सात साल तक यह फिल्म पौलेण्ड में 'बैन' रही। कान फिल्म फेस्टिवल में इस फिल्म की हीरोइन क्रिस्तीना जांडा को सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री का पुरस्कार मिला था।

'इन्टेरोगेशन' स्टॉलिन युग के बारे में है। हम देखते हैं कि राजनीतिक विचारों की एक कैबरे नर्तकी को बिना किसी विशेष कारण के गिरफ्तार कर लिया जाता है। उसके बाद फिल्म में इस युवती को खुफिया पुलिस द्वारा दी जाने वाली यातनाओं का सिलसिला आरम्भ होता है। फिल्म का उल्लेखनीय पक्ष यह है कि मुख्य पात्र को दी जाने वाली यातनाओं के जरिए हमें पता चलता है कि कैसे स्टालिन के समय मानवीय अधिकारों और स्वतंत्रता का हनन हुआ। फिल्म यह भी बतलाती है कि तानाशाही में नौकरशाही की ताकत बढ़ जाती है और वह किस प्रकार अमानवीय और क्रूर हो सकती हैं।

'द शैल्टरिंग स्काई' - बर्नाडो ब्रितलूची की फिल्म है। फिल्मकार के बारे में यह बताना अप्रासंगिक नहीं होगा कि वे एक प्रसिद्ध कवि और फिल्म समीक्षक के बेटे हैं। उनकी रुचि साहित्य में है। जब वह रोम विश्वविद्यालय में आधुनिक साहित्य का अध्ययन कर रहे थे, तब पैसोलिनी के सम्पर्क में आए और पढ़ाई छोड़कर उनके सहायक बन गए। उनकी कविताओं का संकलन भी प्रकाशित हुआ लेकिन सिनेमा की भाषा उन्हें साहित्य से दूर ले गई।

'द शेल्टरिंग स्काई' मद्रास फिल्म समारोह की सबसे उल्लेखनीय फिल्म मानी गई। यह फिल्म 1949 में प्रकाशित पाल बाउल्ज के एक उपन्यास पर आधारित है। इस फिल्म में लेखक स्वयं भी उपस्थित हुए हैं। यह फिल्म इस दृष्टि से एक अनुभव थी कि कैसे उपन्यास को सिनेमाई अनुभव में बदला जा सकता है। इस फिल्म में आदमी के चेहरे का ऊपर से लिया गया 'क्लोजअप' जिस पर कई आँखें खुल रही हैं, कभी बंद हो रही हैं, पूरे समारोह में याद आता रहा। फिल्म देखते समय दर्शक यह समझ नहीं पाता कि वह स्वप्न देख रहा है या यथार्थ। बर्नाडो ब्रितलूची के बारे में यह कहना गलत नहीं होगा कि उनकी फिल्मों का विषय कुछ भी हो, लेकिन उनमें जीवन की एक खास तरह की गंध होती हैं।

नीदरलैंड की फिल्म 'अवा एण्ड गैबरियल' इस महोत्सव में एक सुखद आश्चर्य के रूप में थी। फेलिक्स द रूई द्वारा निर्देशित यह फिल्म रंगभेद की समस्या को बिल्कुल नए दृष्टिकोण से प्रस्तुत करती है। ईरान की फिल्म 'साबकिलिस्ट' फिल्मकार मोहसिन मखमल बाफ के अनुसार यह फिल्म एक सत्य घटना से प्रेरित है। एक पाकिस्तानी बाढ़ पीड़ित बाढ़ पीड़ितों की सहायता के लिए

दस दिन तक बिना रूके सायकिल चलाने की घोषणा करता है। सातवें दिन वह गिर पड़ता है और वहाँ एकत्रित लोगों ने उसकी तरफ से धन इकट्ठा करना शुरू कर दिया।

यहाँ फिल्म का नायक अफगान शरणार्थी है। उसकी पत्नी बीमार है और उसके इलाज के लिए उसे पैसा चाहिए। वह एक पागलपन भरा दांव लगाता है कि सात दिन तक बिना रुके सायकिल चलाएगा। नायक का छोटा-सा बेटा उसके साथ चलता है ताकि पिता की शर्त जीतने में मदद कर सके। बेशक फिल्म को नवयथार्थवाद से नहीं जोड़ सकते, लेकिन सायकिलिस्ट अपनी सादगी में दुनिया की न भूलाने वाली फिल्मों से जुड़ जाती है। हमें विटोरियो द सीका की फिल्म 'द बायसिकल थीफ' के बाप-बेटे भी याद आते हैं।

मद्रास में सम्पन्न भारत का यह अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह अनेक अव्यवस्थाओं का शिकार रहा। हमने केवल उन महत्वपूर्ण फिल्मों का यहाँ जिक्र किया है, जिनके कारण किसी समारोह की प्रासंगिकता हो सकती है। अन्य समारोहों की तरह यहा भी पुनरावलोकी खण्ड, इंडियन पैनोरमा, फोकस आदि के आयोजन थे।

ईरान की चर्चित फिल्म 'द सायक्लिस्ट'
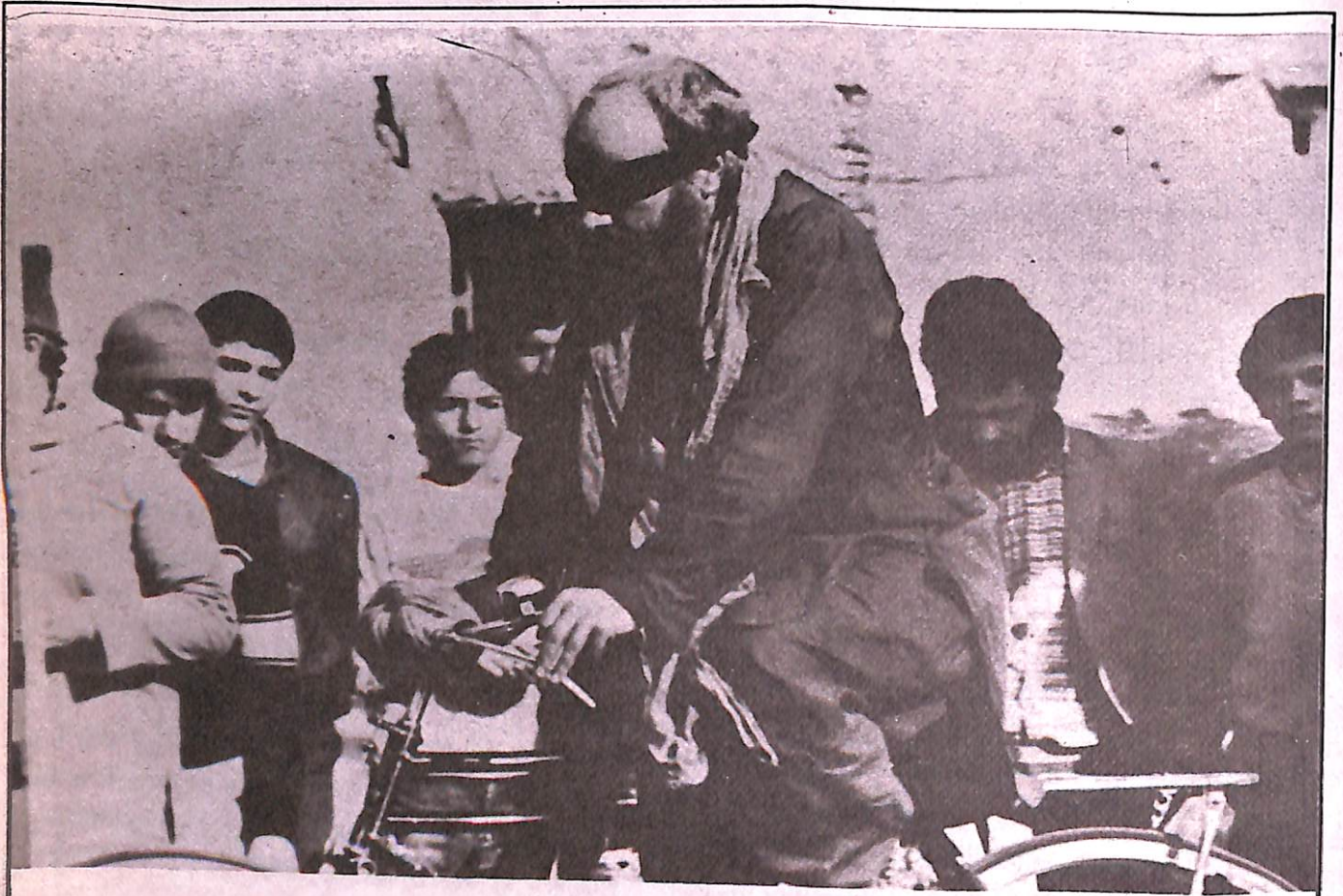
सस्पेंस भरा समारोहः बंगलौर 1992

☐ अजय वर्मा

किसी सस्पेंस फिल्म की तरह भारत का तेइसवाँ अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह बंगलौर में 10 से 20 जनवरी 1992 के दौरान सम्पन्न हो गया । बंगलौर के इस फिल्म समारोह पर राजनीति की काली छाया एक ग्रहण की तरह छाई रही। कावेरी नदी के जल के बटवारे को लेकर दिसम्बर 1991 में कन्नड़ तथा तमिल भाषियों के बीच दंगे हुए थे। उन्हें देखते हुए यह सम्भव नहीं लग रहा था कि बंगलौर में समारोह आयोजित हो पाएगा या नहीं।

विरोध की आग में घी का काम किया कन्नड़ अभिनेता **राजकुमार** द्वारा समारोह के बॉयकाट की घोषणा ने। वे समारोह का दीप प्रज्जवलित करने के लिए आमंत्रित थे। न तो राजकुमार आए और न उन्हें सहयोग करने वाली अभिनेत्री रेखा। इसलिए यह गौरव नई तारिका रविना टण्डन को मिल गया।

बंगलौर समारोह पर संकट के बादल छा जाने से सौ देशों के स्थान पर लगभग चालीस देशों की प्रविष्टियाँ प्राप्त हुई। पड़ौसी तथा सार्क देशों में से सिर्फ श्रीलंका से 'द गॉडेस' फिल्म प्राप्त हुई। विदेशी मेहमान और भारतीय प्रतिनिधियों के आने का सिलसिला भी तब आरम्भ हुआ, जब समारोह का उद्घाटन शांतिपूर्वक सम्पन्न हो गया। खोया विश्वास लौटने के बाद समारोह अपनी तेज रफ्तार से चला और निर्विघ्न सम्पन्न हुआ। लेकिन फिल्म समारोह पर दहशत का साया बराबर बना रहा। क्योंकि दस हजार पुलिस कर्मी शांति व्यवस्था बनाए रखने के लिए तैनात किए गए थे। विरोध करने वाले करीब पच्चीस हजार लोग गिरफ्तार किए गए। 1952 से आज तक हुए समारोहों में से किसी समारोह के साथ ऐसा नहीं हुआ था। इसका तात्कालिक असर यह हुआ है कि कोई राज्य सरकार अपने यहाँ फिल्म समारोह आयोजित करने से कतराने लगी हैं। विवश होकर सूचना-प्रसारण सचिव श्री महेश प्रसाद को यह घोषित करना पड़ा कि अगला समारोह 1993 में नई दिल्ली में होगा।

बंगलौर का यह समारोह अनेक खण्डों में विभाजित किया गया था। सबसे महत्वपूर्ण था सिनेमा ऑव द वर्ल्ड। इस खण्ड में विश्व सिनेमा के महत्वपूर्ण फिल्मकारों की वे फिल्में शामिल थीं, जिन्हें दूसरे समारोंहों में पुरस्कार मिले हैं या चर्चित या प्रशंसित हुई है। इस खण्ड में 35 देशों की 60 फिल्में प्रतिदिन पाँच शो के क्रम से संतोष तथा नर्तकी सिनेमाघरों में दिखाई गई। इस खण्ड की कुछ महत्वपूर्ण फिल्मों के नाम हैं किंग्स व्होर (फ्रांस-बिट्रेन), गुड इवनिंग मिस्टर एलिनबर्ग (स्वीडन), ऑफ्टर द स्टार्म (अर्जेन्टाइना), अगेंस्ट् द विण्ड (स्पेन), ब्रोकन हार्ट (पुर्तगाल), डोंट लेट देम शूट द काइट (तुर्की), ल बेले नोइजे तथा वान गॉग (फ्रांस),मार्गरिट एंड मार्गरिटा (बल्गेरिया), रेक्वियम फार डोमिनिक (आस्ट्रिया), लवर्स (स्पेन), द जनरस लवर्स (नीदर लैण्ड), वेअर यू आर, इफ यू आर (पौलेंड), क्लोज माय आइज (ब्रिटेन), ए बुमंस टेल और ए गुड वुमन ऑव बैंकाक (आस्ट्रेलिया)।

फिल्म लायलटीज़ का एक दृश्य

फ्रांस की मशहूर पत्रिका 'केहिअर्स द सिनेमा' के चालीस वर्ष पूरे होने पर इस समारोह के लिए विशेष रूप से तैयार किया गया बारह फिल्मों का एक पैकेज लाया गया था। भारत सरकार और भारतीय दर्शकों को फ्रांस की उम्दा फिल्में नियमित रुप से सिनेमाघरों में देखने को मिलेगी। आज भी विश्व सिनेमा स्तर पर फ्रेंच सिनेमा सिरमौर हैं।

किसी देश विदेश पर विशेष फोकस के तहत इस बार ईरान की फिल्मों की फिल्में दिखाई गई। गत आठ सालों से ईरान युद्ध में संलग्न रहा और वहाँ का समाज युद्ध के उत्तर-प्रभाव और समस्याओं से आज भी जूझ रहा है। युवा फिल्मकारों की फिल्मों में ये तमाम बातें मानवीय मार्मिकताओं के साथ देखने को मिली।

दूसरा फोकस **स्वीडन** की पाँच महिला फिल्मकारों की विशेष रूप से चयन की गई फिल्मों का था। **इटली** की फिल्मकार फ्रांसेसको रोजी की ग्यारह फिल्में समारोह का प्रमुख आकर्षण रही। इस विशेष खण्ड में इटली की सामाजिक-राजनीतिक समस्याओं का रोचक वर्णन देखने को मिलता हैं। **कनाड़ा** की फिल्मकार एन.वीलर की तीन फिल्मों का पुनरावलोकन एक सुखद अनुभव था।

भारतीय सिनेमा की झाँकी में 21 फिल्में भाषाई कथा फिल्में और 17 ग़ैर कथा चित्र प्रदर्शित किए गए। मलयालम तथा बंगला भाषा की कुल जमा दस फिल्में थी। तेलुगु (तीन) कन्नड-असमी-उड़िया-मराठी की एक-एक और हिन्दी की सिर्फ दो फिल्में थीं दीक्षा और लिबास। इण्डियन पैनोरमा को प्रभावी बनाने वाले ग्रेट मास्टर्स-सत्यजीत राय, मृणाल सेन, जी. अरविंन्द और के.एस. सेतुमाधवन - के नाम उल्लेखनीय हैं।

बंगलौर फिल्म समारोह सम्पन्न हो गया और अपने पीछे कई सवाल छोड़ गया है। मसलन भविष्य के फिल्म समारोह की बनावट और बुनावट क्या हों? क्या उसका स्वरूप प्रतियोगी बनाया जाए? क्या फिल्म समारोह की पन्द्रह दिवसीय अवधि फिर से आरम्भ की जाए? दिल्ली के अलावा किन महानगरों में इसका क्या क्रम रहें? फिल्म समारोह के मंच को राजनीतिक इस्तेमाल से कैसे बचाया जाए? भारत में फिल्म संस्कृति के समुचित प्रसार के लिए हर समझदार दर्शक को इस पर गम्भीरतापूर्वक सोचना चाहिए। अन्यथा फिल्म समारोहों का भविष्य दिनोंदिन अंधकारमय होता जाएगा।

सातवाँ अन्तर्राष्ट्रीय बाल फिल्म समारोह त्रिवेन्द्रम

□ शाहिद लतीफ

हर दूसरे वर्ष आयोजित किया जाने वाला अन्तर्राष्ट्रीय बाल फिल्म समारोह 1991 में 14 से 23 नवम्बर तक केरल की राजधानी तिरुअनंतपुरम में संपन्न हुआ। आयोजक बाल चित्र समिति थी। भारत का यह सातवाँ आयोजन था, जिसमें 25 देशों की कुल 75 फिल्में दिखाई गईं। इसके पहले ये समारोह 1989 में दिल्ली, 1987 में भुवनेश्वर, 1985 में बेंगलौर, 1983 में कलकत्ता 1981 में मद्रास और 1979 में बम्बई में आयोजित हो चुके हैं। बच्चों और नौजवानों के लिए अंतर्राष्ट्रीय फिल्म केन्द्र (सीफेज) ने चार अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोहों-मास्को, पेरिस, गिजोन (स्पेन) और लासऐंजिल्स के साथ-साथ इस समारोह को भी "ए" श्रेणी के दर्जे से सम्मानित किया है। इस आयोजन में लगभग 75 लाख रूपये खर्च किए गए, राज्य शासन का बजट इसके अतिरिक्त था।

समारोह को तीन खण्डों में बाँटा गया था।

(1) प्रतिस्पर्धा खण्ड, (2) जानकारी खंड, (3) बाजार खंड।

प्रतिस्पर्धा खण्ड में कुल 17 फिल्में थी जिनमें 8 फीचर और 9 लघु फिल्में थी। हालीडेज विथ सिल्वेस्टर (आस्ट्रिया) मी एण्ड ममामिया (डेनमार्क), बियांड द सेवनसीज (नार्वे), अभयम् (भारत), ए लिटिल पिनव्हील (कोरिया), समर आफ द कोल्ट, (कनाडा), रीच फार द स्काय (कनाडा/रूमानिया), ओजोन लेयर वेनिशेज (चाईना), जैसी फीचर फिल्में प्रतिस्पर्धा में थी। इनमें से **हालीडेज विथ सिल्वेस्टर** को सर्वश्रेष्ठ फिल्म का पुरस्कार दिया गया। एक मात्र भारतीय प्रविष्टि 'अभयम्' (मलयालम) को विशेष जूरी पुरस्कार और फिल्म **मी एण्ड ममामिया** की बाल कलाकार क्रिस्टीना हेगन्सन को सर्वश्रेष्ठ कलाकार का पुरस्कार दिया गया। 9 लघु फिल्मों में से सर्वश्रेष्ठ फिल्म का पुरस्कार **"द रूस्टर एण्ड हैन हैव ए सौना"** (फिनलैंड) को मिला जबकि सर्वश्रेष्ठ एनिमेशन फिल्म के लिये "पिंगू-पिगांइज बोर्न" (स्विटजरलैंड) को चुना गया। जानकारी खण्ड में लगभग 40 फिल्में प्रदर्शित की गई और बाजार खंड में 60 के अलावा 3 विशेष खंड भी थे।

विश्व प्रसिद्ध दस परीकथा फिल्में जो कि राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम ने अमेरिका से आयात की है। हाल ही में पुरस्कृत 12 फिल्मों का विशेष अवलोकन खंड, ईरानी फिल्मों पर विशेष फोकस खंड। इनके अलावा प्रसिद्ध फिल्म निर्देशक स्वर्गीय जी.अरविन्दन की तीन फिल्में दिखाई गई। ईरानी फिल्मों में बाशुद लिटिल स्ट्रेन्जर, हैन एण्ड हर नाईबावर, सिटी ऑफ माईस, द की आदि प्रमुख थीं। पटकथा फिल्मों में प्रमुख रूप से ये फिल्में थी- स्लीपिंग ब्यूटी, ब्यूटी एण्ड द बीस्ट, द फ्राग पिन्स, पुस इन द बूट्स, स्नों व्हाईट एण्ड सेवन ड्वारफ्स, और रेड राईडिंग हुड। गोल्डन एलिफेन्ट और सिल्वर एलिफेन्ट समेत 10 पुरस्कार तीन चयन समितियों द्वारा तय किए जाने थे। अंतर्राष्ट्रीय चयन समिति में गुलजार (भारत) रेनाते स्वारदल (नार्वे), रावर्ट राय (कनाडा) और ब्लादिमर तालायेव (सोवियत संघ) थे। बच्चों और नौजवानों के लिये अंतर्राष्ट्रीय फिल्म केन्द्र पेरिस की चयन समिति की प्रमुख अरूणा राजे पाटिल थी और अन्य सदस्य कोनी टेडरस (कनाडा) सीफेज के जनरल सेक्रेटरी, और विजय मधा (मारिशस) थे। इसके अलावा बाल प्रतिनिधियों की 11 सदस्यीय चयन समिति थी। जिसके प्रमुख सरफराज खान (गोवा) थे।

समारोह का केन्द्र बिन्दु त्रिवेंद्रम का कनककुन्नू पैलेस था, जो कि त्रावणकोर के भूतपूर्व महाराजा का ग्रीष्मकालीन आवास हुआ करता था। कनक कुन्नू पैलेस में समारोह के प्रमुख कार्यालयों के अलावा, बाजार विभाग की फिल्मों में प्रदर्शन केन्द्र, बच्चों के लिये बालग्राम, एसेल वर्ल्ड मुंबई के विभिन्न खेल और निशागंधी मुक्ताकाशी आडिटोरियम था जहाँ उद्घाटन और समापन समारोहों के अलावा प्रतिदिन शाम को मुफ्त फिल्म प्रदर्शन होता था। निशागंधी आडिटोरियम के अतिरिक्त शहर के 9 सिनेमाघरों में समारोही फिल्मों के प्रदर्शन की व्यवस्था थी, जहाँ प्रत्येक सुबह 9-30 से शाम 5-00 बजे तक तीन या अधिक फिल्मों का प्रदर्शन होता था। अनुमानतः इन सिनेमा घरों में कुल एक लाख से भी अधिक दर्शकों ने फिल्मों को देखा। 7 सिनेमा-घरों में टिकिट खरीदकर फिल्में देखी जा सकती थीं।

त्रिवेंद्रम के दर्शकों के अलावा विदेशी प्रतिनिधियों समेत एक सौ पचास आमंत्रित प्रतिनिधि और पचास बाल कलाकारों समेत दो सौ बाल प्रतिनिधि समारोह में मौजूद थे। चयन समितियों, आमंत्रित प्रतिनिधियों और प्रेस प्रतिनिधियों के लिये दो सिनेमाघरों में फिल्म प्रदर्शन किए गए। प्रतिदिन शाम को कनककुन्नू पैलेस में फिल्म प्रदर्शन के अलावा अन्य मनोरंजन कार्यक्रम भी लगातार होते रहे। समापन समारोह राष्ट्रपति के हाथों संपन्न हुआ। आयोजक, बालचित्र समिति को सूचना प्रसारण मंत्रालय के तहत 1955 में स्थापित किया गया था। जिसकी वर्तमान चैयर परसन **श्रीमती जया बच्चन** हैं। कार्यपालन समिति के अन्य सदस्य गुलजार, भूपेन हजारिका और टी.एस. नरसिंहन हैं। ●
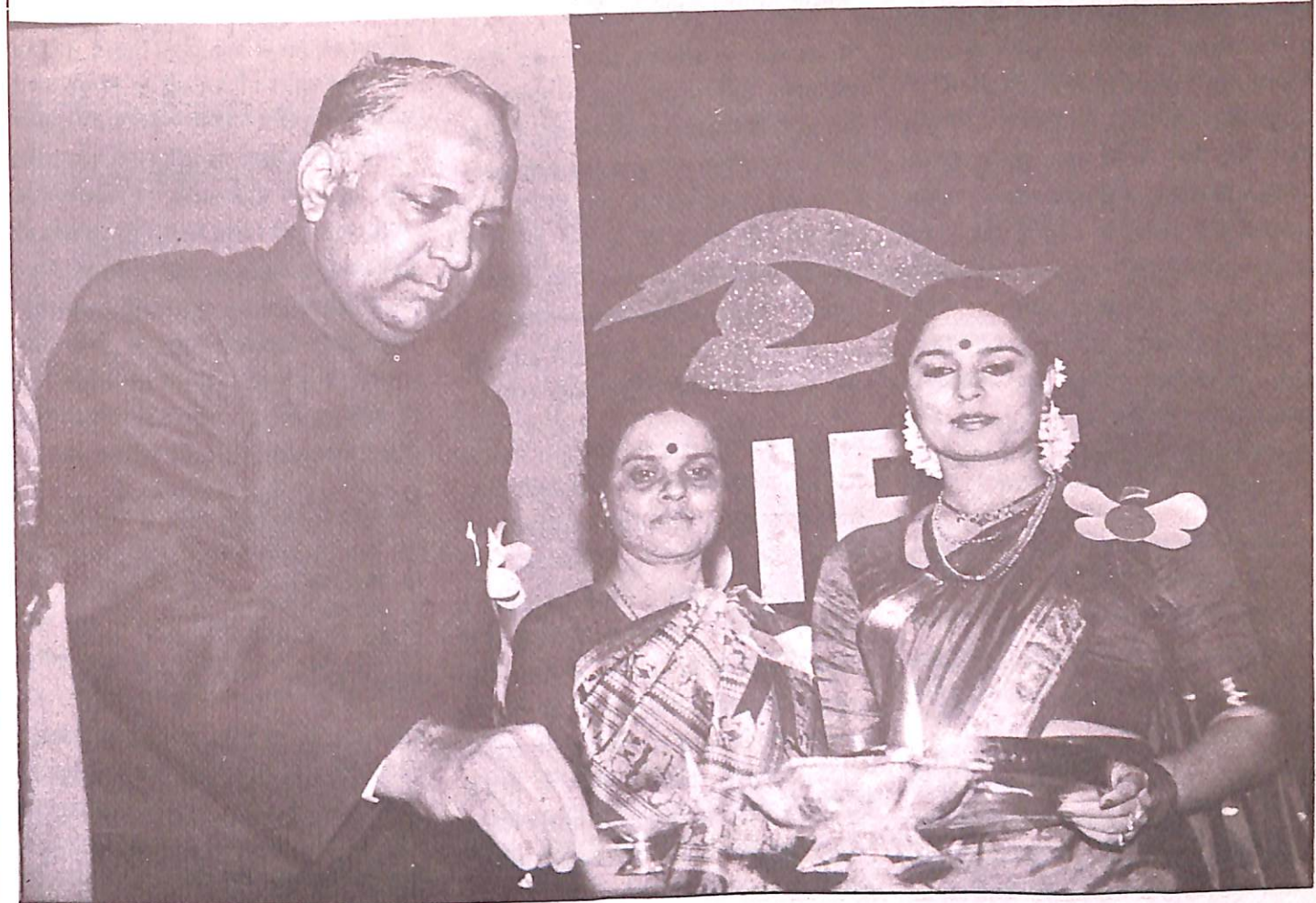
समारोह का शुभारम्भ करते हुए रक्षामंत्री शरद पवार, सूचना-प्रसारण राज्यमंत्री सुश्री गिरीजा व्यास और किरण जुनेजा

बम्बई में आयोजित दूसरा अंतर्राष्ट्रीय लघु तथा एनिमेशन फिल्म समारोह

□ राजीव सक्सेना

लघु फिल्म कृतियों, वृत्त चित्रों और एनीमेशन फिल्मों पर केन्द्रित "दूसरा बम्बई अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह" पिछली एक फरवरी से सात फरवरी के बीच, तमाम अव्यवस्थाओं और विसंगतियों के चलते सम्पन्न हुआ। समारोह में इस बार 46 देशों की 500 से अधिक फिल्में और तकरीबन एक हजार प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया। 75 लाख रुपये बजट वाले इस महँगे, महत्वकांक्षी आयोजन में महाराष्ट्र सरकार ने भी 20 लाख रुपए का योगदान किया है। इस वर्ष का सबसे बड़ा पुरस्कार पाँच लाख रुपए का था, जो भारत सरकार के स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय के सौजन्य से प्रदान किया गया।

समुंदर किनारे, भागमभाग, भीड़भाड़ से दूर बम्बई के एक खासी अहमियत वाले इलाके नरीमन पॉइन्ट स्थित भव्य **"टाटा थिएटर"** में केन्द्रीय रक्षा मंत्री **शरद पवार** ने एक फरवरी की शाम दीप प्रज्जवलित कर फिल्म समारोह का शुभारम्भ किया। अभिनेत्री **किरण जुनेजा** (सिप्पी) ने उन्हें सहयोग दिया। फिल्म समारोह की जूरी के प्रमुख फिल्मकार जॉन हेलेस (इंग्लैंड) के अलावा केन्द्रीय सूचना प्रसारण उपमंत्री **डॉ. गिरिजा व्यास**, सूचना विभाग के सचिव **महेश प्रसाद**, महाराष्ट्र के वित्त मंत्री **रामराव आदिक**, बम्बई की **श्रीमती बकुल पटेल**, फिल्म निर्माता जी.पी. सिप्पी, तथा फिल्मकार कीथ स्टीवेंसन इस मौके पर मंच पर मौजूद रहे। समारोह की उद्घाटक फिल्मों के बतौर इशु पटेल (कनाडा) निर्मित एनीमेशन फिल्म निर्माता नार्मन मेक्लारेन पर आधारित फिल्म 'क्रियेटिव प्रोसेस' और प्रताप शर्मा निर्देशित 'द राज थ्रो इंडियन आइज' का प्रदर्शन टाटा थियेटर में

किया गया। करीब ढाई हजार दर्शक क्षमता वाला थियेटर उक्त अवसर पर खचाखच भरा हुआ था।

विश्व भर में निर्मित एनीमेशन (चल रेखा चित्र) फिल्मों का सिंहावलोकन बम्बई फिल्म समारोह की प्रमुख विशेषता रही। समारोह को एनीमेशन फिल्मों के अलावा सूचना, प्रतियोगी, पुनरावलोकन, स्पेक्ट्रम इंडिया और फिल्म बाजार यानि कुल छः खण्डों में विभक्त किया गया। प्रतियोगी खंड में प्रदर्शित फिल्मों में श्रेष्ठ फिल्मों के चयन के लिए गठित सात सदस्यीय अंतर्राष्ट्रीय निर्णायक मंडल के में ब्रिटिश फिल्मकार जॉन हेलास अध्यक्ष बनाए गए और जया बच्चन (भारत) ,जीनेट पॉसन (होनुलू तू), फली बिलिमोरिया (भारत), बकु सदिकोव (तजाकिस्तान) , फिलिप ग्लास (यू.एस.ए) तथा केन-केन इची ओकुबो (जापान) सदस्य मनोनीत किए गए।

सूचना खण्ड में विगत तीन वर्षों के दौरान निर्मित लघु फिल्में, वृत्तचित्र प्रदर्शित किए गए। इन फिल्मों के जरिए दर्शकों के अन्य देशों की कला, संस्कृति और वैज्ञानिक प्रगति का जायजा लिया। इस खंड में दिखाई गई फिल्में इस विद्या के तहत नए प्रयोगों का प्रतिबिम्ब साबित हुई।

सिंहावलोकन खण्डः ऐतिहासिक घटना क्रमों के फिल्मांकन को जीवन समर्पित करने वाले हालैण्ड के वृत्त चित्र निर्माता जोरिस ईवेन्स की फिल्म कृतियाँ सिंहावलोकन खण्ड के तहत प्रदर्शित की गईं। उनकी फिल्मों में 'ए टेल आफ द विंड' को दर्शकों द्वारा विशेष रूप से पसन्द किया गया। जोरिस ईवेन्स हमेशा कमजोर, दलित लोगों के लिए लड़ते-जूझते रहे हैं। वे महज कैमरे के पीछे छिपे एक फिल्मकार ही नहीं थे, बल्कि हालात से दर्द को गहराई से महसूस करते थे। 1989 में 91 वर्ष की उम्र में निधन होने तक इवेंस विश्व इतिहास की करवटों को कैमरे के जरिए अभिव्यक्ति देते रहे।

तीन दिवंगत भारतीय फिल्मकारों **जी.अरविन्दन, परवेज मेरवानजी** और सुश्री **उमा सहगल** के प्रति श्रद्धांजलि व्यक्त करने की गरज से किए गए विशेष आयोजनों में तीनों की विशिष्ट फिल्में दिखाई गईं। जी. अरविन्दन ने फिल्म्स डिवीजन के लिए भी अनेक फिल्में बनाईं जिनमें 'द सियर इट वाक्स एलोन' बहुत प्रशंसित हुई। उनका गत वर्ष निधन हो गया। 43 वर्षीय स्व. परवेज मेरवानजी फीचर फिल्म "परसी" से चर्चित हुए। फिल्मकार स्व. मोहन सहगल की सुपुत्री स्व. उमा सहगल (33 वर्ष) की फिल्म "शेल्टर" भी बहुत सराही गई थी।

"बाजार खंड" का शुभारम्भ नरीमन पाइन्ट स्थित नवनिर्मित विशाल "चव्हाण सेन्टर" में हुआ। यहाँ विश्व भर के फिल्मकारों, वितरकों, प्रदर्शकों ने खरीद फरोख्त की। एशिया और अन्य विकासशील देशों में बनी लघु फिल्मों और वृत्त चित्रों को एक जगह देख पाने का अवसर इस समारोह में विदेशी फिल्मकर्मियों को मिला। चव्हाण सेन्टर में बाजार खण्ड के तहत राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम, बाल चित्र समिति और दूरदर्शन के अतिरिक्त दीगर कई सारे व्यावसायिक प्रतिष्ठानों ने अपने स्टाल लगाए।

"स्पेक्ट्रम इंडिया" खण्ड में विगत तीन साल में निर्मित चुनिन्दा भारतीय वृत्त चित्रों का प्रदर्शन किया गया। इसका शुभारम्भ टाटा थियेटर परिसर में स्थित राष्ट्रीय संगीत नाट्य केन्द्र के प्रायोगिक थियेटर में फिल्मकार, सांसद सुनील दत्त द्वारा उनकी पुत्री प्रिया दत्त निर्देशित फिल्म "नर्गिस" के प्रदर्शन से किया गया। अभिनेत्री नर्गिस के जीवन से जुड़े विविध पहलुओं को उनकी अपनी बेटी ने अपने नजरिए से देखा और एक अच्छे फिल्मकार की तरह दर्शकों को पेश किया है। फिल्म में नर्गिस के परिजनों के अलावा उनके सह-अभिनेताओं मसलन दिलीप कुमार, राजेन्द्र कुमार आदि के साक्षात्कार भी उम्दा तरीके से जोड़े गए हैं।

इस फिल्मोत्सव में एनीमेशन फिल्मों को विशेष महत्व दिया गया। उत्सव में एनीमेशन फिल्मों के विकास की पृष्ठभूमि की झलक पेश की गई। गत 44 वर्षों से दुनिया भर में एनीमेशन फिल्मों की विषयवस्तु, कथानक, शैली आदि पर हो रहे विभिन्न प्रयोगों से दर्शकों का साक्षात्कार हुआ। इस खण्ड के तहत कनाडा के बेरी पारकर द्वारा "एनीमेशन वर्कशॉप" किया गया। कनाडा के ही अप्रवासी भारतीय इशु पटेल द्वारा एनीमेशन तकनीक पर लेक्चर और डिमास्ट्रेशन दिया गया। पाँच फरवरी को टाटा थियेटर के परिसर में स्थित गोदरेज नृत्य अकादमी में "मिकी वर्सेस माडस" शीर्षक से पाँच घंटे का रोचक परिसंवाद भी आयोजित हुआ, जिसमें विश्व के अनेक एनीमेशन फिल्मकारों और प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया। दिलचस्प परिसंवाद चार फरवरी को दोपहर गोदरेज नृत्य अकादमी के सभागार में "डॉक्यूमेन्ट्री फार चेन्ज" विषय पर परिसंवाद में बोलते हुए फिल्मकार श्याम बेनेगल ने कहा कि "अगर हम चाहते हैं कि हमारी फिल्में समाज को बदलाव की ओर ले जाएं तो हमें विवादों से परहेज नहीं करना चाहिए। फिल्मकर्मी जो भी मुद्दे उठाएं हमें उनके उत्तर खोजने चाहिए। परिसंवाद में वृत्तचित्र निर्माता जहाँगीर भावनगरी, राजीव मेहरोत्रा, डॉ. रश्मि मयूर, पूना फिल्म संग्रहालय के पूर्व निर्देशक पी.के. नायर आदि ने भी हिस्सा लिया। पाँच फरवरी को इसी स्थान पर "पश्चिम का फिल्मी परिवेश" विषय पर परिसंवाद आयोजन हुआ। "ओपन फोरम" (खुली चर्चा) के तहत दो फरवरी को गोदरेज नृत्य अकादमी के सभागृह में फिल्म प्रभाग के निर्माताओं के अतिरिक्त चर्चित फिल्मकार के . विक्रम सिंह, नलिनी सिंह, सौदामिनी आदि ने हिस्सा लिया।

बम्बई का यह फिल्म मेला कतिपय विवादास्पद मुद्दों पर आधारित फिल्मों की वजह से देश में चर्चा का विषय भी साबित हो रहा है। समारोह में देश के सर्वाधिक ज्वलंत मसले रामजन्म भूमि मुक्ति आंदोलन को लेकर विशेष रूप से बनाई गई दो फिल्में आनंद पटवर्धन निर्देशित "राम के नाम" और कृष्णमोहन निर्देशित "रामजन्म भूमि बाबरी मस्जिद" दिखाई गई, जिन्हें देश विदेश के हजारों प्रतिनिधियों ने दिलचस्पी से देखा। दोनों फिल्में क्रमशः 90 और 93 मिनट अवधि की हैं। इनके अलावा एक अन्य युवा प्रतिबद्ध फिल्मकार अनवर जमाल के निर्देशन में टिहरी बाँध के निर्माण से जुड़े सवालों को लेकर बनी फिल्में 'भागीरथी की पुकार' (44 मिनट) दिखाई गई।

समारोह की अन्य महत्वपूर्ण और चर्चित प्रस्तुतियों में "रमाकान्त पाण्डेय" (निर्देशक-हेमेन्द्र भाटिया),"द पोर्टेट" (चेकोस्लोवाकिया) ,नॉट माइ टाइप (न्यूजीलैण्ड) , द मिथ ऑफ सिसीफस (कनाडा), शून्यताता (अमेरिका) बटरफ्लाइ बॉल (इंग्लैंड) ,एनीमेटेड सेल्फ पोट्रेट्स (अमेरीका) ,एबी.ओवो. (हंगरी), रेक्वीम (आस्ट्रेलिया) के अलावा भारतीय फिल्मकारों की कृतियां समथिंग" लाइक ए वार" (दीपा धनराज), "पितृछाया"(निलीमा वाच्छानी) , आकृति (बी, नरसिंहराव) किमुदीन सातोर देशे (निलुत्पल मुजूमदार) , इगारो माइल (रूचिर जोशी) चार दिवारी (गुलन कृपलानी - रिंकी भट्टाचार्या) और "अएरम" (जी.आर. मेनन) आदि हैं। ●

खण्ड चार ● आवरण कथा

सत्यजित राय

हमारे बीच इस कद का एक आदमी तो है!

□ श्याम बेनेगल

एक आदमी ..उम्र के आठवें दशक को छूता... दिल के दौरों से जर्जर...और उसे मिला है विश्व सिनेमा का सर्वोच्च सम्मान - ऑस्कर ! ...अपनों के माणिक दा और दुनिया के सत्यजित राय का यह सम्मान कला के गहरे आयामों का सम्मान है - उस भारतीयता का सम्मान है, जिसे हम शनै: - शनै: खोते जा रहे हैं. ऑस्कर सम्मान के संदर्भ में, भारतीय सिनेमा के इस शलाकापुरूष को एक दूसरे विशिष्ट फिल्मकार श्याम बेनेगल का सलाम...

सत्यजित राय को तो यह पुरस्कार मिलना ही था_ और उन्हें सही वक्त पर यह मिला है ! 'ऑस्कर पुरस्कार' के 66 वर्ष के इतिहास में सत्यजित राय छठे व्यक्ति हैं जिन्हें विशेष ऑस्कर से सम्मानित किया जा रहा है। फिल्म माध्यम से जुड़े किसी भी कलाकार के लिए यह सर्वोच्च सम्मान है - जिसे 'लाइफ टाइम अचीवमेंट' कहते हैं। फिल्म माध्यम में उनके संपूर्ण योगदान को देखते हुए उन्हें इस सम्मान के लिए चुना गया।

यों तो हम सत्यजित राय को महान निर्माता-निर्देशक वगैरह कहते नहीं अघाते, लेकिन सच तो यह है कि हम उनकी कीमत नहीं जानते। हमारी फिल्म इंडस्ट्री ने भी राय मोशाय जैसे अनुभवी और पूर्ण निर्देशक के अनुभवों और प्रतिभा का कोई फायदा नहीं उठाया। जब तक कोई पश्चिम का, गोरी चमड़ीवाला उनके कार्यों की सराहना नहीं करता, हम चुप्पी साधे रहते हैं। अब यही देखिए न, हमने उन्हें कितने सम्मानों से सम्मानित किया है?

बहुत पहले पांथेर पंचाली के साथ क्या हुआ था_। भारतीय दर्शकों ने पहले ही सप्ताह में इस फिल्म को परदे से उतार दिया था_। जब विदेशों में इस फिल्म ने धूम मचायी, पुरस्कार जीते, तो हमने भी कहा - वाह, क्या फिल्म है !

सत्यजित राय से मेरा परिचय भी इसी फिल्म के माध्यम से हुआ था। बात है 1956 की। उन दिनों मेरी उम्र रही होगी बीसेक साल। कॉलेज में था। मैंने एकदम शुरू से ही यह पक्का कर रखा था कि मुझे फिल्मों से ही जुड़ना है, लेकिन जिस तरह की हिंदी फिल्में बन रही थीं तब, वैसी बनाने की मेरी कतई इच्छा नहीं थी। इसी दौर में जब मैंने पाथेर पंचाली देखी, तो जैसे मुझे एक दिशा मिल गयी, कई बंद दरवाजे खुल गये।

मैंने यह फिल्म पहली बार कलकत्ता में देखी थी। मैं अपने कॉलेज की तरफ से राष्ट्रीय तैराकी प्रतियोगिता में भाग लेने वहाँ गया था। जाते समय मेरे रिश्ते के भाई और फिल्म निर्माता निर्देशक गुरुदत्त ने मुझे ताकीद कर दी थी कि तुम यह फिल्म जरूर देखना। जितने दिनों मैं कलकत्ता में रहा, हर शाम यह फिल्म देखने गया और हर बार मुझे नये आयाम दिखते, नयी दृष्टि मिलती। और मैंने सत्यजित राय को अपना आदर्श मान लिया_।

बाद में मुझे उन्हें बहुत निकट से जानने का अवसर भी मिला- अवसर क्या, सुअवसर ही कहूंगा इसे मैं ! राय मोशाय बेहद अंतर्मुखी हैं। अपने काम में इतने डूबे रहते हैं कि लोग उन्हें घमंडी और अक्खड़ भी समझ लेते हैं। लेकिन वे ऐसे हैं नहीं। वे किसी से जल्दी घुलते-मिलते नहीं, पर जब मिलते हैं तो पूरी तरह मिलते हैं।

सत्यजित राय पर मुझे एक डॉक्युमेंटरी बनाने का मौका भी मिला - दो घंटे के इस वृत्तचित्र में मैंने संपूर्ण सत्यजित राय को पेश करने की कोशिश की है। मैं ऐसा कुछ करने की सोच ही तब सका, जब मैंने फिल्मकार सत्यजित राय को अच्छी तरह से जान लिया। वे एकमात्र ऐसे भारतीय फिल्मकार हैं, जो अपनी फिल्मों के साथ कोई समझौता नहीं करते। वे गहरी संजीदगी से फिल्में बनाते हैं और उस हद तक जाते हैं जो उनकी दृष्टि में पूर्णता है। यहाँ तक कि गुरुदत्त की फिल्मों को भी देख कर कई बार लगता है कि वे पूरी 'सेंसिबिलिटी' के साथ फिल्म नहीं बना रहे। सत्यजित राय की हर

...मोग्राफी

सन्	फिल्म
1969	अरण्येर दिन रात्रि
1970	प्रतिद्वंदी
1971	सिक्किम (वृत्तचित्र)
1972	द इनर आई (वृत्तचित्र)
1973	अशनि संकेत
1974	सोनार केला
1975	जन अरण्य
1976	बाला (वृत्तचित्र)
1977	शतरंज के खिलाड़ी (हिंदी)
1978	जय बाबा फेलुनाथ
1980	हीरक राजार देसे
1980	पीकू
1981	सद्गति (दूरदर्शन के लिए)
1984	घरे बाइरे

किया गया। करीब ढाई हजार दर्शक क्षमता वाला थियेटर उक्त अवसर पर खचाखच भरा हुआ था।

विश्व भर में निर्मित एनीमेशन (चल रेखा चित्र) फिल्मों का सिंहावलोकन बम्बई फिल्म समारोह की प्रमुख विशेषता रही। समारोह को एनीमेशन फिल्मों के अलावा सूचना, प्रतियोगी, पुनरावलोकन, स्पेक्ट्रम इंडिया और फिल्म बाजार यानि कुल छः खण्डों में विभक्त किया गया । प्रतियोगी खंड में प्रदर्शित फिल्मों में श्रेष्ठ फिल्मों के चयन के लिए गठित सात सदस्यीय अंतर्राष्ट्रीय निर्णायक मंडल के में ब्रिटिश फिल्मकार जॉन हेलास अध्यक्ष बनाए गए और जया बच्चन (भारत) ,जीनेट पॉसन (होनुलू लू), फली बिलिमोरिया (भारत), बकु सदिकोव (तजाकिस्तान) , फिलिप ग्लास (यू.एस.ए) तथा केन-केन इची ओकुंबो (जापान) सदस्य मनोनीत किए गए।

सूचना खण्ड में विगत तीन वर्षों के दौरान निर्मित लघु फिल्में, वृत्तचित्र प्रदर्शित किए गए। इन फिल्मों के जरिए दर्शकों के अन्य देशों की कला, संस्कृति और वैज्ञानिक प्रगति का जायजा लिया। इस खंड में दिखाई गई फिल्में इस विद्या के तहत नए प्रयोगों का प्रतिबिम्ब साबित हुई।
बोलना सीख जाते हैं। दूसरों को 'कोट' करने में तो हम माहिर हैं! हम अपनी बौद्धिकता का भी 'सेकेंडहैंड' विकास करते हैं। यही सब हमारी फिल्म इंडस्ट्री में भी हो रहा था। सत्यजित राय इन सबसे अलग थे और आज भी वे वैसे ही हैं।

मेरी उनसे पहली प्रत्यक्ष मुलाकात हुई थी 1965 में। वे बंबई आये हुए थे. मैंने उनसे मुलाकात के लिए वक्त मांगा तब वे 'नायक' फिल्म की शूटिंग कर रहे थे। उन्होंने स्टुडियो ही बुला लिया।

उस पूरे दिन मैंने सत्यजित राय को कैमरे के पीछे काम करते देखा। शाम को वे मुझे अपने साथ ले गये। दो - ढाई घंटे हमारी बातें हुई - फिल्म से ले कर विश्व राजनीति तक! उस अविस्मरणीय शाम की मधुर याद मुझे आज भी रोमांचित कर जाती है।

नये सिनेमा से जुड़ा प्रायः हर फिल्मकार कहीं न कहीं राय से प्रभावित तो है ही। दिशा तो उन्होंने ही सुझायी थी, बस, दूसरे लोग इस पर अपनी तरह से चलते गये। जिस तरह गाँधी जी के विरोधियों पर भी उनका असर रहा है, उसी तरह हिंदी

"परसी" से चर्चित हुए। फिल्मकार स्व. मोहन सहगल की सुपुत्री स्व. उमा सहगल (33 वर्ष) की फिल्म "शेल्टर" भी बहुत सराही गई थी।

"बाजार खंड" का शुभारम्भ नरीमन पाइन्ट स्थित नवनिर्मित विशाल "चव्हाण सेन्टर" में हुआ। यहाँ विश्व भर के फिल्मकारों, वितरकों, प्रदर्शकों ने खरीद फरोख्त की। एशिया और अन्य विकासशील देशों में बनी लघु फिल्मों और वृत्त चित्रों को एक जगह देख पाने का अवसर इस समारोह में विदेशी फिल्मकर्मियों को मिला। चव्हाण सेन्टर में बाजार खण्ड के तहत राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम, बाल चित्र समिति और दूरदर्शन के अतिरिक्त दीगर कई सारे व्यावसायिक प्रतिष्ठानों ने अपने स्टाल लगाए।

"स्पेक्ट्रम इंडिया" खण्ड में विगत तीन साल में निर्मित चुनिन्दा भारतीय वृत्त चित्रों का प्रदर्शन किया गया। इसका शुभारम्भ टाटा थियेटर परिसर में स्थित राष्ट्रीय संगीत नाट्य केन्द्र के प्रायोगिक थियेटर में फिल्मकार, सांसद सुनील दत्त द्वारा उनकी पुत्री प्रिया दत्त निर्देशित फिल्म "नर्गिस" के प्रदर्शन से किया गया। अभिनेत्री नर्गिस के जीवन से जुड़े विविध पहलुओं को उनकी अपनी बेटी ने अपने नजरिए
हैं। मैंने अपनी हर फिल्म उन्हें दिखायी है और उन्होंने मेरी हर फिल्म पर साफ-साफ राय दी है। मेरा वृत्तचित्र सड़क के बच्चे (चिल्ड्रेन ऑफ द स्ट्रीट) उन्हें काफी पसंद आयी थी - अंत को छोड़ कर...। उन्होंने पूरी फिल्म देखने के बाद मुझसे कहा था कि तुमने इसका अंत जबरन ठूंसा है, ऐसा लगता है। अंकुर, मंथन, भूमिका, त्रिकाल- मेरी ये सारी फिल्में उन्हें अच्छी लगी थीं।

कुछ लोग अक्सर उनसे यह सवाल करते हैं कि वे बंगला में ही फिल्म क्यों बनाते हैं? इसका क्षेत्र हिंदी की अपेक्षा सीमित है। लेकिन मैं कहना चाहूँगा कि वे बंगला भाषा में जैसा भावात्मक संसार रच पाते हैं और परदे पर उतार पाते हैं, वह किसी दूसरी भाषा में संभव नहीं होगा। जैसे कि हम चाहे जितना भी पश्चिम का अनुकरण करें, हमारी भारतीयता नहीं छूटती! सत्यजित राय के चरित्र इतने सजीव और मिट्टी से गहरे जुड़े होते हैं कि जिस क्षेत्र का वे प्रतिनिधित्व करते हैं, वह पूरा-का-पूरा आँखों के सामने उपस्थित हो जाता है। मैं फणीश्वरनाथ 'रेणु' और मुंशी प्रेमचंद का उदाहरण देना चाहूंगा। उनके

उपन्यासों में यही बात है। जिस क्षेत्र या प्रांत के बारे में उन्होंने लिखा है, वह पूरी तरह सामने आ खड़ा होता है। राय किसी दूसरी भाषा में फिल्म बनाते, तो शायद यह बात नहीं बनती वे भी यह जानते हैं।

उनकी फिल्मों के विषय हमेशा विविध रहे हैं और जो भी विषय उन्होंने उठाया उसके साथ पूरा न्याय किया चाहे वह बंगाल का गरीब किसान हो या कोई धनाढ्य उद्योगपति! मैं तो इस बात को टिप्पणी करने लायक भी नहीं मानता कि राय मोशाय अपनी फिल्मों में भारत की दुर्दशा और गरीबी को महिमामंडित करते हैं।

हाँ यह जरूर है कि *घरे बाइरे* के बाद से उनकी तबीयत नासाज रहने लगी है। शारीरिक रूप से वे उतने स्वस्थ नहीं रहे, जितने मानसिक रूप से हैं। इसलिए उन्हें अपने आपको समेटना पड़ा है। इसकी झलक उनकी हाल की फिल्मों में भी दिख जाती है। सत्यजित राय इस दृष्टि से भी एक पूर्ण फिल्मकार हैं कि फिल्म से संबद्ध हर विधा पर उनकी गहरी पकड़ है। वे एक उच्चकोटि के संगीत मर्मज्ञ हैं, साहित्यकार है। इस समय बंगला में उनसे बढ़िया बच्चों की कहानी लिखनेवाला दूसरा नहीं है। अगर वे फिल्में नहीं बनाते, तो उसी कोटि के लेखक, कंपोजर, टाइपोग्राफर या इलेस्ट्रेटर होते! बहुमुखी प्रतिभा है उनकी ! उन्होंने अपनी फिल्मों से कई नयी तकनीकों की शुरुआत की वे जिस तरह का वातावरण अपनी फिल्मों में खड़ा करते हैं, वैसा उनसे पहले किसी फिल्मकार ने नहीं किया। 'लाइट एंड शेड' की उनकी जानकारी भी गजब की है, क्योंकि फोटोग्राफी पर भी उनकी पकड़ है। वे हर एंगल को स्वाभाविक आँख से देख लेते हैं।

इस 71 वर्षीय प्रतिभा को विशेष ऑस्कर दे कर अंतर्राष्ट्रीय फिल्म जगत ने उन्हें सलाम किया है। शायद अब हमें अहसास हो कि यह कैसी हस्ती है जो हमारे दौर में, हमारे बीच है। हम लोगों ने अपने दिमागों पर ताले डाल रखे हैं, अपनी सोच जकड़ रखी है, वरना सोचिए कि ऐसे एक रचनाकार का हमारे बीच होना ही कितनी बड़ी बात है! इसे हम पहचानें तो हम ही कुछ ज्यादा दीप्त होंगे, कुछ ज्यादा संपन्न होंगे। वे तो हम सबसे बहुत ऊँचे और बहुत खास हैं ही। **(धर्मयुग से साभार)**

सत्यजीत राय : फिल्मोग्राफी

सन्	फिल्म
1955	पाथेर पांचाली
1956	अपराजितो
1958	पारस पत्थर
1958	जलसाघर
1959	अपूर संसार
1960	देवी
1961	तीन कन्या
1961	रवीन्द्रनाथ टैगोर (वृत्तचित्र)
1962	कंचन जंगा
1962	अभिजान
1963	महानगर
1964	चारूलता
1964	टू (दो)
1965	कापुरुष-ओ-महापुरुष
1966	नायक
1967	चिड़िया खाना
1968	गूपी गायने बाघा बायने
1969	अरण्येर दिन रात्रि
1970	प्रतिद्वंदी
1971	सिक्किम (वृत्तचित्र)
1972	द इनर आई (वृत्तचित्र)
1973	अशनि संकेत
1974	सोनार केला
1975	जन अरण्य
1976	बाला (वृत्तचित्र)
1977	शतरंज के खिलाड़ी (हिंदी)
1978	जय बाबा फेलुनाथ
1980	हीरक राजार देसे
1980	पीकू
1981	सद्गति (दूरदर्शन के लिए)
1984	घरे बाइरे
1987	सुकुमार रे (अपने पिता पर वृत्तचित्र)
1989	गणशत्रु
1990	शाखा प्रशाखा
1991	आगंतुक

सत्यजीत राय : पुरस्कार-सम्मान

1967	मेगा साय साय अवार्ड
1971	स्टार ऑफ यूगोस्लाविया
1973	डी.लिट्, दिल्ली युनिवर्सिटी
1974	डी.लिट्, रॉयल कालेज ऑफ आर्टस्, लंदन
1976	पद्म-विभूषण
1978	डी.लिट्, ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी स्पेशल अवार्ड, बर्लिन फिल्म फेस्टिवल
1982	होमेज टू सत्यजीत राय कान फिल्म फेस्टिवल स्पेशल गोल्डन लॉयन ऑफ सेंटमार्क, वेनिस फिल्म फेस्टिवल
1983	फेलोशिप ऑफ द ब्रिटिश फिल्म इंस्टीट्यूट
1985	डी.लिट्, कलकत्ता युनिवर्सिटी
1987	लीजिन द 'ऑनर, फ्रांस
1991	फोटो ग्राफिक एक्ज़ीबिशन ऑन सत्यजीत रॉय, कान फिल्म फेस्टिवल रिलीज ऑफ होमेज अल्बम ऑस्कर अवार्ड

सत्यजीत राय की हिंदी फिल्म 'शतरंज के खिलाड़ी'

एक ऑस्कर सत्यजीत राय के नाम

चौदह दिसंबर को जिस वक्त अमेरिकी मोशन पिक्चर्ज अकादेमी का तार उनके बिशप रोड फ्लैट पर पहुँचा प्रख्यात फिल्म निर्माता **सत्यजीत राय** अपनी नई फिल्म को अंतिम रूप दे रहे थे। राय ने जब तार खोला तो उसमें लिखा था कि हॉलीवुड, जिसने जीवन में उन्हें इतना प्रभावित किया था, उन्हें उनकी **'फिल्मी उपलब्धियों'** के लिए प्रतिष्ठित 'ऑस्कर' पुरस्कार से सम्मानित कर रहा है तथा उन्हें वह आगामी 30 मार्च को लॉस एंजेलिस में प्रदान किया जाएगा।

बगैर किसी तरह का संकोच किए 76 वर्षीय राय ने अपने ऑक्सफोर्ड-लहजे वाली, अंगरेजी में कहा **'डिलाइटेड'** (अत्यंत प्रसन्न)। यद्यपि राय ने स्पष्ट किया कि वे ज्यादा नहीं बोलेंगे क्योंकि उनके डॉक्टर ने उन्हें उनकी हृदय की बीमारी के कारण ज्यादा बोलने से मना किया है। वे अपने आपको इतना और जोड़ने से नहीं रोक पाए कि **'यह सम्मान बिल्कुल अप्रत्याशित था, मैं तो चकित रह गया। लेकिन मैं खुश हूँ बहुत ही खुश।**

मोशन पिक्चर्स अकादेमी के अध्यक्ष कार्ल माल्डेन (जो पहले अभिनेता रहे हैं) ने राय को बधाई का यह निजी तार भेजा था। भारतीय सिनेमा के वर्तमान शहंशाह राय ने माना कि "एक तरह से तो यह वह सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार है जो कि किसी फिल्म सर्जक को मिल सकता हैं। मेरे जीवन भर के काम तथा उपलब्धियों को इससे मान्यता मिली है। मुझे अतीत में कई पुरस्कार, सम्मान, मानद डॉक्टरेट आदि मिली हैं, लेकिन यह बिल्कुल अलग है। मेरी निगाह में यह सबसे मूल्यवान चीज हैं।"

राय को अपनी पहली फिल्म **पाथेर पांचाली** (1955) से ही अंतर्राष्ट्रीय ख्यति प्राप्त हो गई थी और उसके बाद यह सिलसिला अब तक जारी है। आज बंगाल का नाम सारी दुनिया में सत्यजित राय की वजह से ही जाना जाता है। रॉय अपनी परिपूर्णता तथा हर चीज नफासत से पेश करने के लिए जाने जाते है तथा उनकी फिल्म के एक एक दृश्य की पूर्व-योजना वे पहले रेखा चित्रों के कागज पर उतारते हैं। राय का नजरिया मानवतावादी है तथा वे अपनी फिल्मों के द्वारा एक "इंसान के रूप में ही अपना मूल्यांकन किया जाना चाहेंगे।" उन्होंने एक बार कहा था "मैं फिर कहूँगा 'भारतीय' निर्माता के रूप में याद किया जाना चाहूँगा। एक ऐसा भारतीय फिल्म निर्माता जो भारत की वास्तविकताओं को उसके खास बदलावों के साथ समझने का प्रयास करता है। मैं एक ऐसे फिल्मकार के रूप में याद किया जाना चाहता हूँ जिसने अपनी फिल्मों में ईमानदारी के साथ भारत के यथार्थ को प्रस्तुत किया।"

रॉय उन पर हॉलीवुड के असर को स्वीकार करते हैं। अपने युवा काल में वे हॉलीवुड की फिल्मों का बड़ी बारीकी से अध्ययन करते थे। बिली वाइल्डर की 'डबल इन डेम्निटी' जैसी फिल्में तो उन्होंने कई-कई बार देखी। मैं उसे देखते हुए थकता ही नहीं था। लेकिन यह कहना मुश्किल है कि मुझे किस खास फिल्म या निर्देशक ने सब से ज्यादा प्रभावित किया।" उन दिनों राय एक विज्ञापन एजेंसी में काम कर रहे थे और तभी उन्होंने 'पथेर पंचाली'

शाखा-प्रशाखा फिल्म में ममता शंकर

बचपन का संपर्क उनके बहुत काम आया।

राय चालीस और पचास के दशक के इस जमाने को बड़ी हसरत के साथ याद करते हैं, जब कलकत्ता के सिनेमा-हॉलों में हॉलीवुड की नवीनतम फिल्में चलती रहती थी तथा चौरंगी के फुटपाथों पर लगी किताबों की दुकानों में 'टाईम'और 'लाईफ' के चमकीले संस्करण बिका करते थे। "धीरे - धीरे अपने काम में मेरी दिलचस्पी कम होती गई" और एक फिल्म निर्माता के रूप में उनके जीवन के शुरूआत हो गई।

राय की यादगार फिल्मों में 'अपूर संसार' (1959), चारुलता (1964), बच्चों की फिल्म 'गुपी गायने बाधा बायने'(1968) और 'सोनार किला (1974) की गणना की जाती है। आज चालीस साल के बाद भी राय की किसी फिल्म का रिलीज होना कलकत्ता शहर की एक प्रमुख घटना मानी जाती है। कुछ समीक्षकों के अनुसार अब उनकी फिल्मों में पहले जैसी गीतात्मकता नहीं रही और'गणशत्रु'(1989) जैसी फिल्में मात्र 'कमरों में बंद नाटक' हो कर रह गई है। लेकिन राय अपनी फिल्मों के बारे में कुछ पढ़ना नहीं चाहते क्योंकि "वे खुद जानते हैं कि उनकी फिल्म में क्या कमी है" बल्कि "शाखा - प्रशाखा" (1990) के रिलीज के समय प्रसिद्ध समीक्षक **चिदानंद दास गुप्ता** के साथ अखबारों में उनकी जो नोक-झोंक चली उसे कई ने बड़े कौतुक के साथ पड़ा तथा कुछ क्षुब्ध भी हुए। यहाँ तक कि दास गुप्ता ने राय द्वारा उन्हें लिखा वह निजी पत्र भी प्रकाशित कर दिया जिसमें अपने मृणाल सेन, गौतम घोष (पार) तथा बुद्ध देव दासगुप्त जैसे अपने समकालीनों के बारे में लिखा था कि उनकी (राय की) राय में इन लोगों को मनोरंजक फिल्म बनाने के बारे में कुछ भी नहीं पता। बेशक दासगुप्त का यह कृत्य उनकी गरिमा के अनुरूप नहीं था।

बनाने का निर्णय किया। मजे की बात यह है कि 'पथेर पांचाली' का पहला प्रदर्शन भारत में न हो कर न्यूयार्क में हुआ था। वैसे राय इस बात से जरा नाखुश नजर आए कि उनकी कुल 36 में से 12 फिल्में ही अमेरिका में व्यावसायिक तौर प्रदर्शित हुई हैं। बहुत सी फिल्में वहाँ के विश्वविद्यालयों में 16 एम.एम. पर दिखलाई जाती रही हैं। बल्कि आनंद बाजार पत्रिका के अनुसार तो सत्यजित राय का वहाँ के विश्वविद्यालयों से इतना ज्यादा संपर्क है कि सांताक्रुज विश्वविद्यालय में इतिहासवेत्ता दिलीप बसु ने ही ऑस्कर मिलने की खबर सबसे पहले कलकत्ता भेजी।

राय मोशाय ने बतलाया कि कोई दो माह पूर्व अमेरिका के ही 70 प्रतिशत नागरिकों ने ऑस्कर के लिए राय का नाम प्रस्तावित किया था। इनमें 1989 के ऑस्कर विजेता जापान के अकिरा कुरोसावा, अभिनेता पॉल न्यूमन तथा निर्देशक स्टेवान ए पीलबर्ग भी थे। इस ऑस्कर के साथ पुरस्कार राशि सिर्फ 2000 डॉलर ही है तथापि सारे हॉलीवुड की उपस्थिति में यह पुरस्कार प्राप्त करना ही राय के लिए एक आहलादकारी अनुभव होगा। राय के पूर्व यह सम्मान केरी ग्रांट, ग्रेटा गार्बो तथा चार्ली चैप्लिन जैसी हस्तियों को प्राप्त हुआ है।

फिल्मों के अलावा राय का दूसरा शौक संगीत (जिसमें पश्चिमी शास्त्रीय संगीत शामिल है) भी उनके जीवन में शुरू से ही विकसित होने लगा था। कुछ लोगों की इस बात से एतराज़ है कि उनके जैसा संवेदनशील व्यक्ति अपनी युवावस्था में देश मे हो रहे राजनीतिक तथा सामाजिक परिवर्तनों के प्रति कैसे निर्विकार बना रहा। उनके जीवनीकार एन्ड्रू रॉबिन्सन उन्हें उद्धृत करते हैं। "अब मेरे सामने नए क्षेत्र खुलते जा रहे थे। पश्चिमी शास्त्रीय संगीत में मैं खोता चला जा रहा था। अतः यदि कोई कहता है कि मैं बंगाल के दुर्भिक्ष (1943-44) के प्रति संवेदनहीन नहीं रहा, तो वह ग़लत नहीं होगा।"

बालक 'मानिक' की परवरिश सृजनशील पूर्वजों के परिवार में हुई। उनके पितामह उपेंद्रकिशोर को बच्चों की कहानियों के लेखक तथा देश में 'हाफ-टोन' मुद्रण-कला के अग्रदूत के रूप में अब भी याद किया जाता है। राय के पिता बंगाल में 'निरर्थक पद्य' के लेखक के रूप में बहुत लोकप्रिय थे। उनकी किताब से राज्य का हर बच्चा परिचित था। बाद में जब बड़े होकर राय विज्ञापन एजेंसी में काम करने लगे, तो चित्रों, पेंटिंगों तथा ग्राफिकों के साथ

बहरहाल, राय के दर्जे के निर्देशक से यह अपेक्षा करना उचित नहीं कि वह अपनी हर नई फिल्म के द्वारा खुद की श्रेष्ठता को 'साबित' करें। उनसे उम्मीदें बहुत ऊँची रखी जाती हैं। लेकिन अब ऑस्कर के रूप में उनकी 'ज़ीवन भर की उपलब्धि' एक बारगी प्रमाणित हो जाने के बाद उनकी फिल्मों की कुछ 'खामियाँ' गौण हो जाएंगी। ●

☐ **राजश्री दासगुप्ता।**

38 वाँ राष्ट्रीय फिल्म समारोह: विवादों के घेरे में

□ ब्रजेश्वर मदान
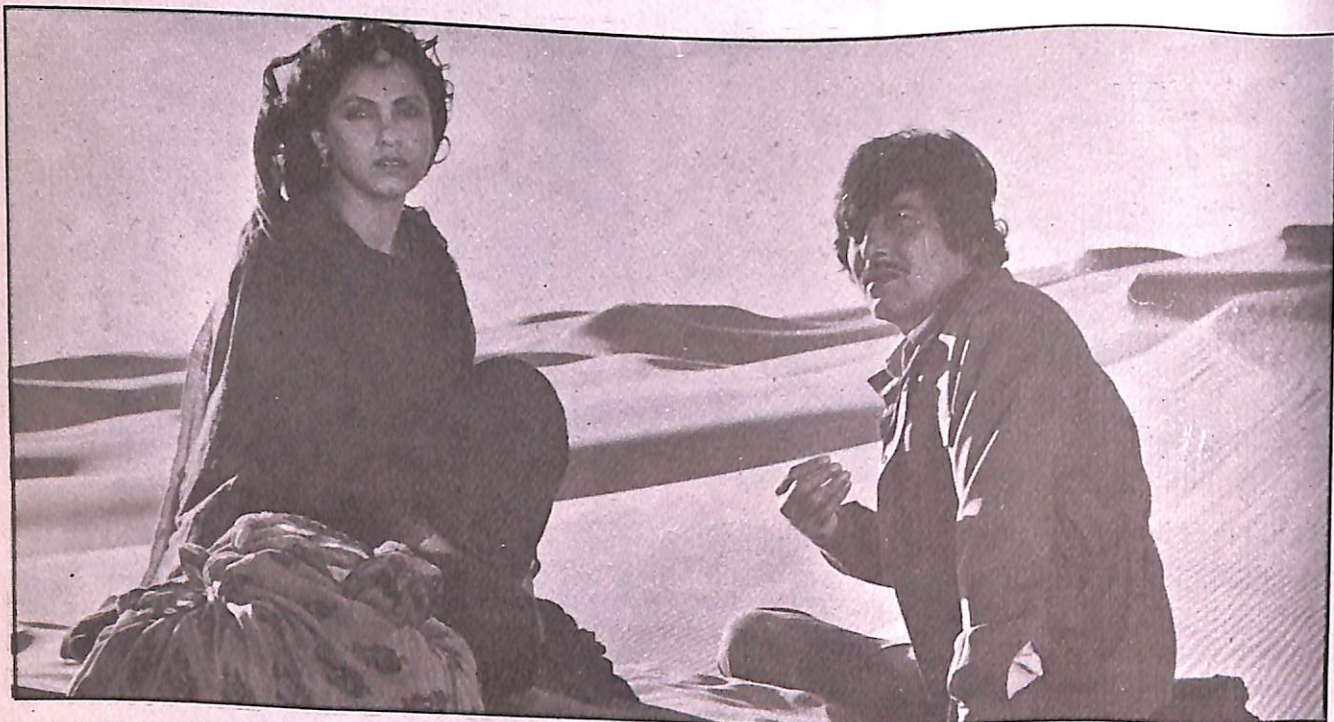
लता मंगेशकर की फिल्म 'लेकिन' में डिम्पल-विनोद खन्ना

राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोहों की सार्थक भूमिका एक फिल्म संस्कृति तैयार करने की होती है। लेकिन इन समारोहों की फिल्में आम जनता तक नहीं पहुँच पाती। आज कौन नहीं जानता कि दादा फालके कैसे बैल गाड़ियों में सवार होकर अपनी फिल्में को गाँव-गाँव तक ले जाते थे। यदि सिनेमा को जनता तक पहुँचाया जाएगा, तो जनता भी उस तक पहुँचेगी। हमारे यहाँ तो दूरदर्शन तक 'कमर्शियल' हो चुका है। उस पर राष्ट्रीय फिल्म समारोहों की फिल्में दिखाई भी जाती है तो उसका काम सिर्फ उन्हें दिखा देना भर होता हैं, दर्शकों तक पहुँचाना नहीं ।

सन् 1952 से लेकर 1991 तक हमारे यहाँ 38 राष्ट्रीय फिल्म समारोह हो चुकी हैं। अड़तीसवें समारोह पर गौर करें, तो शायद ही 38 वर्षों में कोई समारोह इतना विवादास्पद रहा हो। अगर ब्योरों में न जाएं, तो पहले भी कई समारोहों में श्रेष्ठ फिल्मों की बजाए ऐसी फिल्मों को पुरस्कृत किया गया, जिनके आज नाम भी किसी को याद नहीं होंगे। और जिन फिल्मों को पुरस्कार नहीं मिले उन्हें भारतीय सिनेमा के इतिहास में कालजयी फिल्मों का स्थान मिल गया।

वास्तविकता यह है कि पुरस्कार जूरी के निर्णय पर निर्भर करते हैं। अच्छी फिल्मों को पुरस्कार न मिलने के कारण जरूरी नहीं कि जूरी के विवेक और ईमानदारी पर सन्देह किया जाए। दरअसल बात विवेक और ईमानदारी की न होकर जूरी की समझ की होती है। बेशक इस किस्म की बातें सुनी जाती हैं कि इस बार मुख्यधारा की फिल्मों की लॉबी हावी रही, जैसा कि 38 वें राष्ट्रीय फिल्म समारोह के बारे में कहा जाता है। यों यह बात ज्यादा सही लगती है कि 38 वें राष्ट्रीय फिल्म समारोह की जूरी का चुनाव अन्तिम समय पर बहुत ही हड़बड़ी में हुआ। पुरस्कारों में लोगों को मुख्यधारा के सिनेमा को मान्यता नज़र आई। **अमिताभ बच्चन** तक ने अपने सर्वश्रेष्ठ अभिनेता के पुरस्कार पर यह कह कर खुशी जाहिर की थी कि आखिर कमर्शियल सिनेमा को गम्भीरता से लिया गया। उन्हें फिल्म 'अग्निपथ' के लिए यह पुरस्कार मिला हैं, जो शुद्ध व्यावसायिक फिल्म है। अमिताभ बच्चन के अच्छे अभिनेता होने के बारे में दो मत नहीं है। पुरस्कारों में व्यावसायिक सिनेमा को मान्यता सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री के लिए **विजयाशांति** के पुरस्कार में भी नजर आती है। उन्हें भी यह पुरस्कार एक हिट तेलुगु फिल्म 'कर्त्तव्यम्' के

लिए दिया गया। इस बात से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि गोविन्द निहलानी की 'दृष्टि' और गुलजार की 'लेकिन' में डिम्पल का अभिनय कहीं अधिक श्रेष्ठ था। ऐसा ही विवाद सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री के लिए तब भी हुआ था, जब रेखा को 'उमराव जान' के लिए पुरस्कार दिया गया था। संयोग से उस जूरी के अध्यक्ष **अशोक कुमार** थे और जूरी में ही कई सदस्य मानते थे कि यह पुरस्कार जेनिफर को '36 चौरंगी लेन' के लिए मिलना चाहिए था।

अब यह पुरस्कार इतिहास की बात हो गए हैं। यहाँ हम पुरस्कार फिल्मों को लेकर यही विश्लेषण कर सकते हैं कि कहीं इन पुरस्कारों से राष्ट्रीय फिल्म समारोहों की गरिमा कम नहीं होती । हम यह मानकर चलते हैं कि मुख्यधारा का सिनेमा एक वास्तविकता है। राष्ट्रीय पुरस्कार तब शुरू हुए थे जब कमर्शियल और कला के नाम पर फिल्मों का विभाजन नहीं हुआ था। अगर व्यावसायिक सिनेमा में अच्छी कोशिशें होती हैं, तो निश्चित ही उन्हें स्वीकृत मिलनी चाहिए। जहाँ तक 'अग्निपथ' और 'कर्त्तव्यम' का प्रश्न है उनके बारे में तो सवाल उठेगा ही कि आखिर ऐसी फिल्मों से सिनेमा की किन प्रवृत्तियों को बढ़ावा मिलता है। यह सवाल 'लोकप्रिय और स्वस्थ मनोरंजन की सर्वश्रेष्ठ फिल्म 'घायल' के बारे में भी प्रासंगिक है। फिल्म में हिंसा की विकृत्तियों को सामने लाने की बजाए हिंसा के कारणों को गहराई से रेखांकित किया गया है। यह फिल्म 'रैम्बो' तथा 'फर्स्ट ब्लड' जैसी फिल्मों की परम्परा से जुड़ती नजर आती है। प्रश्न यह है कि क्या 'घायल' में व्यावसायिक सिनेमा की दिमाग रहित हिंसा के विपरीत एक 'स्कूल ऑफ थाट' देखा जा सकता है। फिल्म के 'क्लाईमेक्स' में हीरोइन, हीरो को रिवाल्वर पकड़ाती है। जूरी ने घायल की प्रशस्ति में कहा है - यह विषय की दृष्टि से अत्यंत विश्वसनीय, भाव की दृष्टि से अति सुसंगठित, प्रस्तुति की दृष्टि से तर्क पूर्ण और तकनीकी दृष्टि से श्रेष्ठ फिल्म हैं।

सर्वश्रेष्ठ राष्ट्रीय फिल्म का पुरस्कार इस बार के. एस. सेतुमाधवन की फिल्म मरूपक्कम (तमिल) को आधुनिक मूल्यों और मौजूदा परम्परागत मूल्यों में सामंजस्य और विषय को सौन्दर्यशास्त्रीय श्रेष्ठता के उच्चतम स्तर के साथ प्रस्तुत करने के लिए दिया गया। इस फिल्म का निर्माण राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम और दूरदर्शन द्वारा किया गया है। मेरी राय से सर्वश्रेष्ठ फिल्म का पुरस्कार स्वर्गीय जी. अरविंदन की फिल्म 'वास्तुहारा' को मिलना चाहिए था। 'वास्तुहारा' को पुरस्कृत जरुर किया गया है, लेकिन सर्वश्रेष्ठ मलयालम फिल्म के रूप में। जबकि यह फिल्म सौन्दर्यशास्त्रीय दृष्टि से ही नहीं अपनी विषय वस्तु में भी यूनिवर्सल है। यह 1947 और 1971 की पृष्ठभूमि में विस्थापितों की कहानी कहती है। पूर्व बंगाल से पश्चिमी बंगाल में शरणार्थियों के आने की कथा को अरविन्दन सरीखा फिल्मकार ही इस तरह प्रस्तुत कर सकता है कि फिल्म राजनीतिक यथार्थ का शिकार न हो। यह सोचा भी नहीं जा सकता कि इस विषय में भी कितनी मैटाफिजिकल सम्भावनाएं हो सकती हैं कि फिल्म अपने अंत तक पहुँचते-पहुँचते समूची मानवीयता के लिए एक 'चीत्कार' में बदल जाती है।

फिल्म 'मरुपक्कम' पिता और पुत्र के सम्बन्धों पर है। फिल्म में बीमार पिता

एक डॉक्टर की मौत : पकज कपूर-शबाना

है। नायक अपने पिता को देखने दिल्ली से कुम्बकोनम पहुँचता है। इस फिल्म में मृत्यु शैया पर पड़े पिता के बिम्ब बर्गमेन की फिल्मों के नजदीक दिखाई देते हैं। लेकिन फिल्म में हम उन बिम्बों का सरलीकरण पति-पत्नी के अलग होने के अभिशाप में देखते हैं । बेटा भी उन्हीं स्थितियों से गुजर रहा हैं, जिनसे पिता को गुजरना पड़ा था। निश्चय ही यहाँ पारम्परिक और आधुनिक मूल्यों की टकराहट है। लेकिन फिल्म एक कालजयी रचना में नहीं बदल पाती।

इस समारोह में द्वितीय सर्वश्रेष्ठ फिल्म का पुरस्कार तपन सिन्हा की फिल्म 'एक डॉक्टर की मौत' को 'एक सामाजिक विषय के अत्यंत सहज किन्तु भावपूर्ण शैली में प्रस्तुत करने के लिए दिया गया। तपन सिन्हा की फिल्म को पुरस्कार एक तरह से भावुकता को ही पुरस्कार है। ऐसी फिल्म में हम किसी भी समस्या के यथार्थ तक नहीं पहुँच पाते क्योंकि फिल्म की 'थीम' पर वे स्थितियाँ हावी हो जाती हैं, जहाँ दर्शक भावनाओं में बह जाता है। फिल्म 'दृष्टि' को सर्वोत्तम हिन्दी कथा चित्र का पुरस्कार मिला है। प्रशस्ति में यह पढ़कर आश्चर्य होता है कि 'दृष्टि' में मातृत्व की पीड़ा को कुशलता से चित्रित करने के लिए पुरस्कार दिया गया है।

गुलजार की फिल्म 'लेकिन' को सर्वोत्तम संगीत निर्देशक का पुरस्कार मिला है। फिल्म का संगीत हृदयनाथ मंगेशकर का है। सर्वोत्तम गायिका के लिए लता मंगेशकर और गीतकार के लिए गुलजार को भी पुरस्कृत किया गया है। लेकिन अगर उल्लेखनीय हैं, तो डिम्पल के अभिनय के कारण।

अड़तीसवें समारोह में मणिकौल की 'नजर' कुमार शाहनी की 'कस्बा' को भी कोई पुरस्कार नहीं मिला। इन दोनों फिल्मकारों ने सिने-प्रयोगों के लिए विदेशी कहानियाँ चुनी हैं। मणि ने दास्तोवस्की और कुमार शाहनी ने चेखव की कहानी ली है। इन फिल्मकारों से एक सवाल है कि क्या भारतीय साहित्य में इन्हें रचनाएं नहीं मिली? आखिर क्यों रवीन्द्रनाथ टैगोर की रचनाओं पर सत्यजीत राय ही फिल्में बनाते है, ब्रेसाँ नहीं बनाते। क्या उन कहानियों पर फिल्में बनाना, जिन पर पहले से ही विदेशों में श्रेष्ठ फिल्में बन चुकी है, सिर्फ प्रयोग के लिए प्रयोग करने में क्या तुक हैं? ●

राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार 1991

सर्वोत्तम कथा चित्र पुरस्कारः- "मरुपक्कम" (तमिल)

निर्माताः राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम और दूरदर्शन। स्वर्ण कमल तथा 50,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशकः के.एस. सेतुमाधवन को स्वर्णकमल और 25,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

द्वितीय सर्वोत्तम कथा चित्र पुरस्कारः "एक डॉक्टर की मौत" (हिन्दी)

निर्माताः राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम को रजत कमल और 30,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशक : तपन सिन्हा को रजत कमल और 15,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशक के सर्वोत्तम प्रथम कथा चित्र के लिए इंदिरा गाँधी पुरस्कारः- "पेरुम्थच्चन" (मलयालम)

निर्माताः जी. जयकुमार को स्वर्ण कमल और 25,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशकः अजयन को स्वर्ण कमल और 25,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

लोकप्रिय एवं स्वस्थ मनोरंजन प्रदान करने वाले सर्वोत्तम कथाचित्र पुरस्कारः- "घायल"(हिन्दी)

निर्माताः धर्मेन्द्र को स्वर्ण कमल और 40,000/-रुपये का नकद पुरस्कार

निर्देशकः राजकुमार सन्तोषी को स्वर्णकमल और 20,000/- रुपये का नकद पुरस्कार

अन्य सामाजिक विषयों पर सर्वोत्तम कथाचित्र का पुरस्कारः - "ओरू वीडु इरू वासल" (तमिल)

निर्माताः मेसर्स कवितालया प्रोडक्शन्स को रजत कमल और 30,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशकः के. बालचन्दर को रजत कमल और 15,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम निर्देशन पुरस्कार :- तपन सिन्हा

निर्देशन : तपन सिन्हा को स्वर्ण कमल और 50,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम अभिनेता पुरस्कार :- अमिताभ बच्चन

अभिनेता : अमिताभ बच्चन को रजत कमल और 10,000/- रूपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम अभिनेत्री पुरस्कार : विजयाशान्ति

अभिनेत्री : विजयाशान्ति को रजत कमल और 10,000/- रु. का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम सह-अभिनेता पुरस्कार : नेडुमुडि वेणु

सह अभिनेता नेडुमुडि वेणु को रजत कमल और 10,000/- रु. का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम सह अभिनेत्री पुरस्कार : के.पी.ए.सी. ललिता

सह-अभिनेत्री के.पी.ए.सी. ललिता को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम पाश्र्व गायक पुरस्कारः- एम.जी. श्रीकुमार

पाश्र्व गायक एम.जी. श्री कुमार को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम पाश्र्व गायिका पुरस्कार :- लता मंगेशकर

पाश्र्व गायिका लता मंगेशकर को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम छायांकन पुरस्कारः- संतोष सिवन

छायाकार संतोष सिवन को रजत कमल और 10,000 रु. का नकद पुरस्कार

फिल्म की प्रोसेसिंग करने वाली प्रयोगशाला मेसर्स विजय कलर लैब को रजत कमल 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम पटकथा पुरस्कार : के.एस. सेतुमाधवन

पटकथा लेखक के.एस. सेतुमाधवन को रजत कमल और 10,000/-रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम ध्वनि आलेखन पुरस्कार :- एन. पांडुरंगन

ध्वनि आलेखक एन. पांडुरंगन को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम सम्पादन पुरस्कार : एम.एस. मणि

सम्पादक एम.एस. मणि को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम कला निर्देशन पुरस्कार : नितीश रॉय

कला निर्देशक नितीश रॉय को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम वेशभूषा पुरस्कारः- भानु अथैया

वेशभूषाकार भांनु अथैया को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम संगीत निर्देशन पुरस्कार :- हृदयनाथ मंगेशकर

संगीत निर्देशक हृदयनाथ मंगेशकर को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम गीतकार पुरस्कार :- गुलजार

सनीदेओल और राज बब्बर : फिल्म घायल की सफलता की खुशियां

गीतकार गुलजार को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्णायक मंडल का विशेष पुरस्कार : पंकज कपूर, सन्नी देओल और जया भारती।

अभिनेता पंकज कपूर, सन्नी देओल और अभिनेत्री जया भारती को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम् असमिया कथाचित्र पुरस्कार :- 'जूज'

निर्माता बिपुल बरुआ को रजत कमल और 20,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशक हेमेनदास को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम बंगला कथा चित्र पुरस्कार :- आत्मजा

निर्माता राजकुमार जैन को रजत कमल और 20,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशक नब्येन्दु चटर्जी को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम हिन्दी कथा चित्र पुरस्कार :- 'दृष्टि'

निर्माता गोविन्द निहलानी को रजत कमल और 20,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशक गोविन्द निहलानी को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम कन्नड़ कथाचित्र पुरस्कारः- मुथिना हारा

निर्माताः एस.वी. राजेन्द्र सिंह बाबू को रजत कमल और 20,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशक : एस.वी. राजेन्द्र सिंह बाबू को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम मलयालम कथाचित्र पुरस्कार : - वस्तुहारा

निर्माता रविन्द्रनाथ को रजत कमल और 20,000/रू. का नकद पुरस्कार।

निर्देशक जी. अरविन्दन को रजत कमल और 10,000/ रु. का नकद पुरस्कार। (मरणोपरान्त)

सर्वोत्तम तमिल कथाचित्र पुरस्कार :- अंजलि

निर्माता मेसर्स सुजाता प्रोडक्शन को रजत कमल और 20,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशक मणिरलम् को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम तेलुगु कथाचित्र पुरस्कार : माटी मनुशुलु

निर्माताः के मुखर्जी और वेद कुमार को रजत कमल और 20,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशकः बी. नरसिंह राव को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल भाषाओं से इतर भाषाओं में सर्वोत्तम कथा चित्र पुरस्कारः-

इशानऊ (मणिपुरी)

निर्माताः अरिबम श्याम शर्मा को रजत कमल और 20,000/- रुपये के नकद पुरस्कार।

निर्देशकः अरिबम श्याम शर्मा को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

विशेष उल्लेखः- अनौबम किरणमाला।

कथाचित्र निर्णायक मंडल ने मणिपुरी फिल्म इशानऊ में अनौबम किरणमाला के अभिनय का विशेष उल्लेख किया है जिसमें उन्होंने फिल्मों में पहली बार अभिनय करते हुए मानवीय द्वन्द के विभिन्न स्तरों को अभिव्यक्त किया है।

गैरकथाचित्र पुरस्कार

सर्वोत्तम गैर कथाचित्र पुरस्कार :-ग्रेवन इमेज

निर्माता सुमितेन्द्र नाथ टैगोर और श्यामा श्री टैगोर को स्वर्ण कमल और 15,000/रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशक अभिजीत चट्टोपाध्याय को स्वर्णकमल और 15,000/रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम मानवशास्त्रीय/मानवजातीय फिल्म पुरस्कार:- लोलाब

निर्माता हिलमैन फिल्म प्रा. लि. को रजत कमल और 10,000/रुपये का नकद पुरस्कार

निर्देशक मोहिउद्दीन मिर्जा को रजत-कमल और 10,000/रुपये का नगद पुरस्कार

सर्वोत्तम जीवनी फिल्म पुरस्कार : बाबा

निर्माता मैसर्स मीडियार्ट फिल्म्स प्रा. लि. को रजत कमल और 10000/रु. का नगद पुरस्कार।

निर्देशक राजीव मेहरोत्रा को रजत कमल और 10,000/रु. का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम कला/सांस्कृति फिल्म पुरस्कार : "फिगर्स ऑफ थाट" और "वास्तु माराबु"

निर्माता अरुण खोपकर (फिगर्स ऑफ थाट) और मिन बिम्बंगल (वास्तु माराबु) को रजत कमल और 10,000/रू. का नकद पुरस्कार।

निर्देशक अरुण खोपकर (फिंगर्स ऑफ थाट) और बाला कैलाशम (वास्तु माराबु) को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम वैज्ञानिक फिल्म पुरस्कार (पर्यावरण तथा परिस्थिति विज्ञान सहित) बायोटैक्नोलोजी: सम पोसीबिल्टीज

निर्माता : गुलबहार सिंह (फिल्म प्रभाग के लिए) को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशक : निशीथ बनर्जी को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम कृषि फिल्म पुरस्कार (पशुपालन, दुग्ध उत्पादन आदि जैसी कृषि से संबंधित विषयों सहित) : "गोल्डन अर्थ"

निर्माता : बी. ए. आई. एफ. डेवलपमेंट रिसर्च फाउंडेशन को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशक : विश्राम रेवंकर को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम पर्यावरण/संरक्षण/परिरक्षण फिल्म पुरस्कार: प्रतिक्रिया

निर्माता: राहत युसूफी को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशक: राहत युसूफी को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सामाजिक विषयों पर सर्वोत्तम फिल्म पुरस्कार "सेफ ड्रिंकिंग वाटर फॉर आल"

निर्माता: आर. कृष्ण मोहन (फिल्म प्रभाग के लिए) को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशक : महेश पी.सिन्हा को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम शैक्षिक/प्रेरक/शिक्षाप्रद फिल्म पुरस्कार:"डम्स आऊट ऑफ वाटर" "नतुन आशा"

निर्माता : डी. गौतमन (फिल्म प्रभाग के लिए) (डम्स आऊट ऑफ वाटर) और ब्यूटी सभा पंडित (नतुन आशा) को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशक : राज गोपाल राव (डक्स आऊट ऑफ वाटर) और अरूण बोर ठाकुर (नतुन आशा) को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम खोजी/साहसिक फिल्म पुरस्कार (खेल सहित) : "दि इंडीजीनियस गेम्स ऑफ मणिपुर"

निर्माता : अरिबम श्याम शर्मा को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशक : अरिबम श्याम शर्मा को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम खोजी फिल्म - "उनां मित्रां दी याद प्यारी" (मित्रों की याद में)

निर्माता : आनन्द पटवर्धन को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्देशक: आनन्द पटवर्धन को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

निर्णायक मंडल का विशेष पुरस्कार : " उस्ताद अमजद अली खान"

निर्देशक गुलजार को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम लघु कल्पित फिल्म (70 मिनट की अवधि तक की फिल्में) "आमुख"

निर्माता : भारतीय फिल्म तथा टेलीविजन संस्थान के निर्देशक को रजत कमल और 10,000/- रुपये तक का नकद पुरस्कार।

निर्देशक : राजकुमार को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम छायांकन पुरस्कार:-

छायाकार: संतोष सिवन (मोहिनीअट्टम) और विक्टर बनर्जी (व्हेअर नो जर्नीज एण्ड) को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

फिल्म की प्रोसेसिंग करने वाली प्रयोगशालाएँ : प्रसाद फिल्म प्रयोगशाला को (व्हेअर नो जर्नीज एण्ड) और चित्रांजली फिल्म

प्रयोगशाला को (मोहिनीअट्टम) के लिए रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम ध्वनि आलेखन पुरस्कार : "सुजीत सरकार"

ध्वनि आलेखन सुजीत सरकार को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

सर्वोत्तम संपादनः वी. राजशेखरन्

फिल्म सम्पादक राजशेखरन को रजत कमल और 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार।

विशेष उल्लेख

राज गोपाल राव को 'टेक्नीक ऑव सीड प्रॉडक्शन इन व्हीट एण्ड पैडी'

नरेश सक्सेना को फिल्म **सम्बन्ध** के निर्देशक के रुप में एक परिवार और वृक्ष के बीच भावात्मक तैयारी के लिए।

पुरस्कार जो नहीं दिए गए

(1) निर्देशक की सर्वप्रथम सर्वोत्तम गैर-कथाचित्र

(2) सर्वोत्तम प्रोत्साहन देने वाली फिल्म

(3) सर्वोत्तम ऐतिहासिक पुनर्निर्माण/संकलन फिल्म

(4) सर्वोत्तम कार्टून फिल्म

(5) परिवार कल्याण पर सर्वोत्तम फिल्म

सर्वोत्तम सिनेमा पुस्तक पुरस्कार : भारतीय सिनेमा का इतिहास

लेखक : मनमोहन चड्ढा को स्वर्णकमल और 10,000/- रुपये नकद

...को स्वर्ण कमल और 10,000 रुपये नकद

...रस्कारः

...ए चटर्जी को रजत कमल और 5000/-

☐ **प्रस्तुति : आदर्श गर्ग**
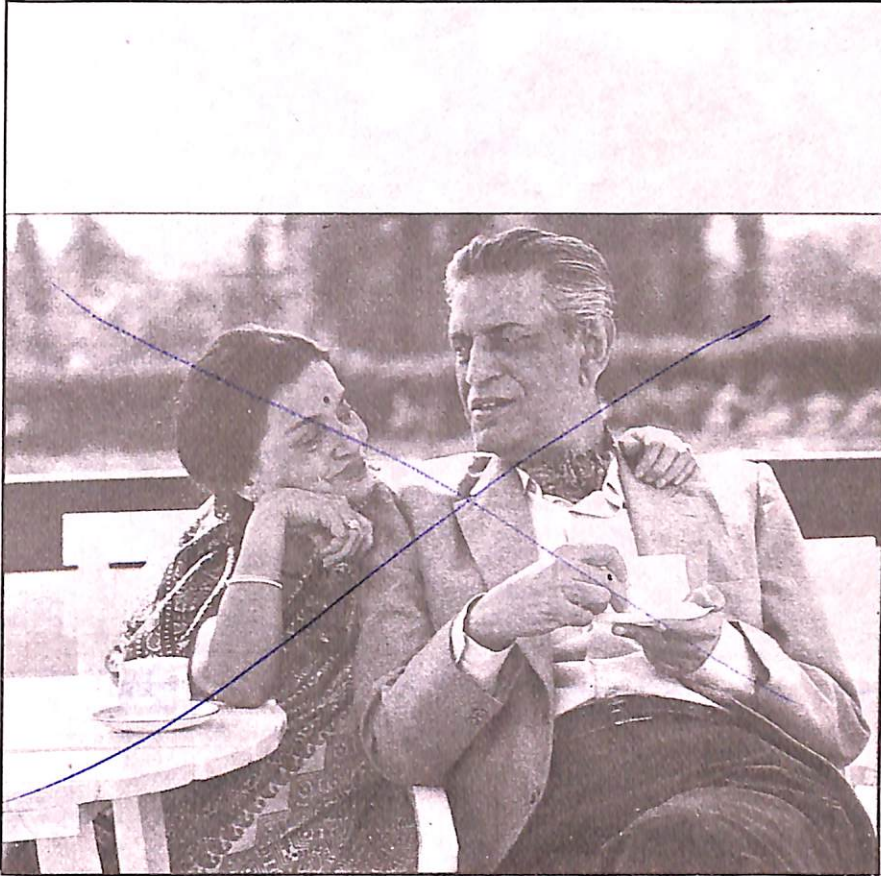
अपनी अर्धांगिनी के साथ सत्यजीत राय का ताजा चित्र

अक्कीनेनी नागेश्वर राव

अक्कीनेनी नागेश्वर राव अपने अभिनय जीवन के स्वर्ण जयंती वर्ष में प्रवेश कर चुके हैं। उन्होंने ... ने उनका कद बढ़ाया है।

'एएनआर' के नाम से विख्यात नागेश्वर राव का जन्म 1924 में आंध्र प्रदेश के कृष्णा जिले में वेंकटराघवपुरम में हुआ। बाल्यावस्था से ही नाटकों में उनकी रुचि थी और स्कूल में **सत्य हरिशचन्द्र** नाटक में उन्होंने चन्द्रमती की स्त्री की भूमिका की। उसके बाद वे दुक्कीपति मधुसूदन राव के एक्सेलसियर थियेटर से जुड़ गए। मधुसूदन राव ने आगे चलकर 'एएनआर' से मिलकर अन्नपूर्णा ...क्चर्स की स्थापना की। तब से वे निरंतर सफलता ...ी सीढ़ियाँ चढ़ते गए हैं। महापुरुषों के जीवन ...ा अभिनय करना उनकी विशेषता बन गई। उन्होंने **...हाकवि कालिदास, भक्त जयदेव, अमर शिल्पी ...क्कन्ना, विप्रनारायणा, भक्त तुकाराम, ...क्रधारी, तेनाली रामकृष्ण** आदि फिल्मों के अलावा **देवदास, बातसारी, मूका मानासुलु, प्रेम नगर, प्रेमभिषेकम, मेघ संदेशम** जैसी प्रणय कथाओं के रोमांटिक हीरो तथा पौराणिक फिल्मों **माया बाजार, चेंचुं लक्ष्मी, कृष्णार्जुन युद्धम** के नायक के रूप में भी दर्शकों पर अपनी अभिनय कला की छाप छोड़ी।

नायक के रूप में अभिनय के अपने 50 वर्षों के जीवन में उन्होंने अनेक सामाजिक फिल्मों में भी काम किया है। इनमें प्रमुख हैं: **संसारम्, आराधना, ब्रटकु तेरुवु, डोंगा रामुडु, डा. चक्रवर्ती, अर्धंगी, मंगलावाबलम, इल्लरिकम, शांति निवासम, दसारा बुल्लाडु भार्या भारतलु** तथा सुविख्यात फिल्म **नवरात्रि**। वे अब तक 300 से अधिक फिल्मों में अभिनय कर चुके हैं उन्हें 1968 में पद्मश्री तथा 1988 में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया है।

• राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार

सर्वश्रेष्ठ फिल्म (1953 से 1990)

श्याम ची आई

(मराठी/श्वेत /श्याम/1953)

वनमाला और माधव वझे : श्यामची आई

साने गुरुजी के उपन्यास पर आधारित यह फिल्म श्याम के नैतिक और बौद्धिक विकास की कहानी कहती है। बचपन में शरारती और उतावले श्याम की माँ उसकी इस अदम्य ऊर्जा को सेवा और त्याग की तरफ बड़ी कुशलता से मोड़ती है। घर से स्कूल और वहाँ से वापस घर को लौटते दृश्यों के साथ श्याम का व्यक्तित्व शनैः शनैः विकसित होता है। कहानी का मुख्य कथ्य यही है कि बच्चे के शिक्षण की सबसे अच्छी जगह घर और वह अनुशासन और मार्गदर्शन है जो उसे उसके माता-पिता से मिलता है।

निर्माता निर्देशक	: प्रह्लाद केशव अत्रे
पटकथा	: आचार्य अत्रे.
संगीत	: वसंत देसाई.
कैमरा	: आर. एम. रेले.
ध्वनि	: वसंत देसाई
संपादक	: नारायण राव.
कलाकार	: वनमाला/माधव वझे/ बाबूराव पेंढारकर/ सुमति गुप्ते/सरस्वती बेड़स.

मिर्जा गालिब

(उर्दू/ श्वेत-श्याम/1954)

महान् उर्दू शायर गालिब के जीवन के केवल तीन-चार बरसों की कथा तथा गायिका मोती बेगम के साथ उनके प्यार की कहानी इस फिल्म में कही गई है। बहादुर शाह जफर के दरबार में आयोजित एक मुशायरे में गालिब की कविता परंपरागत शायरों को प्रभावित नहीं कर पाती। वे वहाँ से जब निराश लौट रहे होते हैं, तो रास्ते में वे मोती बेगम को अपनी गजलें गुनगुनाते हुए सुनते हैं।

अपनी खस्ता माली हालत तथा अपने ससुर के विरोधी रवैये के कारण गालिब अपने एक दोस्त के यहाँ रहने लगते हैं। शहर कोतवाल मोती बेगम से शादी करना चाहता है। गालिब जुए में पैसे जीत कर मोती बेगम को उसके चंगुल से बचाते हैं। लेकिन कोतवाल उनका दुश्मन बन जाता है और उनके दिन फिर मुफ़लिसी में कटने लगते हैं। इस बीच मोती बेगम बहादुर शाह के परिवार में गालिब की एक गजल गाती है और उन्हें बतलाती है कि गालिब जिंदा मगर तकलीफ में हैं। बादशाह उन्हें बुला कर सम्मानित करते हैं। मगर कोतवाल उन्हें जुआ खेलने के जुर्म में कैद करवा देता है। कैद काटने के बाद गालिब जब मोती बेगम के पास वापस लौटते हैं तो वह अपनी आखरी साँसे गिन रही होती है।

निर्माता निर्देशक	: सोहराब मोदी
पटकथा	: जे.के. नंदा
संगीत	: गुलाम मोहम्मद
नृत्य संयोजन	: लच्छू महाराज
कैमरा	: व्ही. अवधूत.
कला	: रूसी के. बैंकर
ध्वनि	: एम. एदुलजी
कलाकार	: सुरैया/भारत भूषण / उल्हास/दुर्गा खोटे/ निगार/मुकरी।

पथेर पांचाली

(बंगाली/श्वेत श्याम/ 1955)

विभूति भूषण बंधोपाध्याय के उपन्यास पर आधारित यह फिल्म बीस के दशक में बंगाल के एक गाँव में रह रहे एक गरीब ब्राह्मण परिवार की कहानी हैं। पिता एक आदर्शवादी पुजारी और कवि हैं। जिंदगी के प्रति उसके यथार्थवादी रुख के कारण परिवार को भयानक गरीबी का सामना करना पड़ता है। माँ व्यवहार कुशल है और वही परिवार की गाड़ी किसी तरह चलाती है। एक लड़की दुर्गा तथा बेटा अपू है। फिल्म अपू के जन्म से शुरू होती है। दुर्गा में जाम चुराने की बुरी आदत है जिसके कारण एक धनी पड़ोसी के यहाँ शादी में उस पर हार चुराने का आरोप लगा दिया जाता है। गुस्से में वह घर छोड़ कर चली जाती है। अपू उसे खोज कर वापस लाता है। इस बीच पिता धन कमाने के लिए बनारस चला जाता है और वादा करता है कि पर्याप्त पैसा कमा कर ही वापस लौटेगा। पिता की अनुपस्थिति में माँ गरीबी के खिलाफ हारी हुई लड़ाई लड़ती रहती है। इस बीच दुर्गा की मौत हो जाती है। पिता कुछ दिनों बाद जब वापस लौटता है तो उसे वास्तविकता का अहसास होता है। वह परिवार को अपने साथ बनारस ले जाता है और अंत में हम परिवार को अपना पुरखों का घर छोड़ कर जाते हुए देखते हैं।

निर्देशन-पटकथा	: सत्यजित राय
कैमरा	: सुब्रत मित्र
संगीत	: रविशंकर
कलाकार	: करुणा बेनर्जी/कनु बैनर्जी/चुन्नी बाला/ पिनाकी सेनगुप्ता/ उमा दास गुप्ता।

काबुली वाला

(बंगाली/श्वेत /1956)

रवीन्द्र नाथ टैगोर की इसी नाम की कहानी पर आधारित इस फिल्म में रहमत शेख नामक एक अफगान काबुली वाला, बादाम पिस्ते बेचकर इतना धन कमा लेना चाहता है कि वह अपने देश वापस अपनी बेटी और परिवार के पास पहुँच सके। अक्सर वह अपने देश के सपने देखता रहता है। अपनी बेटी की याद में वह हमेशा बच्चों के साथ की तलाश में रहता है। वह लेखक की पाँच वर्षीय बेटी मिनी से मिलता है और दोनों की खूब पटने लगती है। इसी बीच रहमत का उसके मकान मालिक से झगड़ा हो जाता है और वह उसे मार देता है।

आठ साल जेल में रहकर रहमत मिनी से मिलने जाता है। वह यह देख कर चकित रह जाता है कि मिनी अब एक सुंदर युवती में बदल गई है और उसे पहचान भी नहीं पाता। मिनी की शादी हो रही होती है। उसके विवाह के खर्च में से कुछ राशि बचा कर लेखक रहमत को दे देता है ताकि वह अपने वतन जा कर, उसकी बेटी उसे भूल जाए उससे पहले उससे मिल सके।

निर्देशन-पटकथा : तपन सिन्हा
संगीत : रविशंकर
कैमरा : अनिल बंधोपाध्याय
ध्वनि : मणि बसु
कला : सुनीति मित्रा
संपादन : सुबोध रॉय
कलाकार : छबि बिस्वास/टिंकू ठाकुर/राधा/मोहन भट्टाचार्य/ मंजू डे/ जीवन बसु/ जहर रॉय/काली बनर्जी।

दो आँखें बारह हाथ

(हिन्दी/श्वेत -श्याम/1957)

आदिनाथ एक आदर्शवादी जेलर है। वह छ: खूंखार हत्या के अपराधी कैदियों को चुन कर कानून का पालन करने वाले नागरिकों में बदल देने का निर्णय करता है। अपना यह प्रयोग करने के लिए वह उन्हें एक बंजर इलाके में ले जाता है। कैंदी यहाँ सब्जियाँ उगा कर बाजार-भाव से कम में बेचते है। गाँव के जमींदार को यह बात पसंद नहीं आती। वह छ: कैदियों को शराब पिलाकर पिटवा देता है। लेकिन वे उत्तेजित हो बदला नहीं लेते। आदिनाथ का प्रयोग सफल होता है और जेल-अधीक्षक सुधरे हुए अपराधी कैदियों को मुक्त कर देता है मगर इसके पूर्व जमींदार अपना आखिरी दुष्कृत्य कर जाता है। वह एक उन्मत्त सांड आदिनाथ पर छोड़ देता है और वह मारा जाता है।

निर्देशन : वी. शांताराम
पटकथा : जी.डी. माडगुलकर
संगीत : बसंत देसाई
कैमरा : जी बालकृष्ण
ध्वनि : मंगेश देसाई
कलाकार : वी. शांताराम/संध्या/उल्लास/ बी.एम. व्यास/ बाबूराव पेंढारकर

सागर संगमे

(बंगाली/श्वेत -श्याम/1958)

परम्परागत ब्राह्मण-परिवार की एक संतानहीन विधवा अपनी गरिमा के साथ गाँव में रहती है। गंगासागर की यात्रा के दौरान एक ही नाव में उसे कुछ वेश्याओं के साथ यात्रा करनी पड़ती है। वहाँ एक कम उम्र मगर चपल लड़की की उच्छृंखलता उसे क्षुब्ध कर देती है। उसके ब्राह्मण-मस्तिष्क में पवित्रता और अशुद्धता का संघर्ष छिड़ जाता है। मगर इसी बीच एक बड़ी नाव से टकरा कर इनकी नाव उलट जाती है। ब्राह्मणी तथा गणिका-बाला एक ही तख्ते के सहारे अपनी जान बचाते हैं। गणिका बाला बताशी के साथियों के डूब जाने पर विधवा ब्राह्मणी का ही सहारा लेती है। पहले तो वह इस बात से घबरा उठती है और मंजिल पर पहुँच बताशी को पुलिस को सौंप देने का इरादा करती है लेकिन धीरे-धीरे दोनों के बीच भावनात्मक रिश्ता विकसित होने लगता है। ब्राह्मणी उसे अपने मृत पति का नाम उपयोग करने का अधिकार दे देती है लेकिन परिस्थितियों के रुप में और निमोनिया से पीड़ित बहाशी अपने इस सुख के चरम क्षण में ही इस बेहरम दुनिया से विदा ले लेती है।

निर्देशन-पटकथा : देवकी कुमार बोस
संगीत : आर.सी. बोराल
कैमरा : विमल मुखोपाध्याय
कला : सौरोन सेन
ध्वनि : सत्येन चट्टोपाध्याय
संपादन : गोवर्द्धन अधिकारी
कलाकार : भारती दास/मंजु अधिकारी/नीतेश मुखोपाध्याय/जहर रॉय/तुलसी लाहिड़ी/ शैलेन मुखर्जी।

निर्देशन-पटकथा : सत्यजित राय

अपूर संसार का एक दृश्य

अपूर संसार

(बंगाली/श्वेत -श्याम/1959)

कई मानों में यह सत्यजित राय निर्मित अपू-त्रयी की सबसे ज्यादा परिपक्व फिल्म है। युवा अपू विवाह करता है। एक उपन्यास लिखता है। बच्चे को जन्म देते ही उसकी पत्नी की उसके मायके में मृत्यु हो जाती है। अपू को अपना जीवन व्यर्थ लगने लगता है तथा घोर-निराशा के क्षणों में वह अपने उपन्यास के पन्ने पानी में बहा देता है। वह अक्सर अपने बचपन और किशोर अवस्था के सुखद दिनों को याद करता भटकता रहता है। अंत में उसे पता चलता है कि उसका बेटा जीवित है। वह उसे अपने साथ ले आता है। जिस तरह यह त्रयी अपू को पलने में उसकी दादी के द्वारा झुलाने के दृश्य से प्रारंभ होती है उसी तरह अपू द्वारा अपने बेटे को गोद में लेने के दृश्य के साथ वह समाप्त होती है।

संगीत : रविशंकर
कैमरा : सुब्रत मित्र
कला : बंसी चंद्र गुप्त
संपादन : दुलाल दत्त
कलाकार : सौमित्र चटर्जी/शर्मिला टैगोर।

अनुराधा

(हिन्दी/श्वेत -श्याम/1960)

अमीर जमींदार की प्रतिभाशाली बेटी अनुराधा अपने प्रशंसक दीपक के शादी के प्रस्ताव को ठुकरा कर आदर्शवादी डॉ. निर्मल से शादी कर लेती है। दीपक दूरदराज के एक गाँव में मरीजों का इलाज करने में व्यस्त हो जाता है। और अनुराधा के दस बरस अकेलेपन में बीत जाते हैं। एक सड़क दुर्घटना में घायल हो दीपक वहाँ लाया जाता है। अनुराधा में जो परिवर्तन इस बीच आ गया है वह देख दीपक को बड़ा सदमा लगता है। अपनी उपेक्षा से त्रस्त अनुराधा भी पति को छोड़ दीपक के साथ जाने का निर्णय कर लेती है। पति भी समझदारी से दोनों के रास्ते से हट जाना चाहता है। जिस रोज अनुराधा जाने वाली होती है, उसकी पूर्व संध्या प्रसिद्ध सर्जन कर्नल त्रिवेदी वहाँ आते है। और वे उस परिवार के ध्यान में यह तथ्य लाते है कि जहाँ अनुराधा की वीणा पर गर्द जम गई है वहीं निर्मल की प्रयोगशाला बहुत ही सुसज्जित है। वे परस्पर विमुख दंपति के ध्यान में यह तथ्य भी लाते हैं कि निर्मल की व्यावसायिक सफलता के पीछे अनुराधा के पति के प्रति समर्पण का भी बहुत बड़ा हाथ है। फिल्म का सुखान्त अनुराधा द्वारा अपने गृह त्याग के फैसले को त्यागने के साथ होता है।

निर्देशक : ऋषिकेश मुखर्जी
पटकथा : सचिन भौमिक/डी.एन. मुखर्जी/ समीर चौधरी
संगीत : रविशंकर
नृत्य-संयोजन : सचिन शंकर
कैमरा : जयवंत आर. पठारे
कला : अजित बैनर्जी
ध्वनि : जॉर्ज डी क्रुज
संपादन : दास धायकड़े
कलाकार : बलराज साहनी/लीला नायडू/ अभिभट्टाचार्य/ नजीर हुसैन/हरि शिवदासानी/ असित सेन/मुकरी/रशीद खान।

भगिनी निवेदिता

(बंगाली /श्वेत -श्याम/1961)

आयरिश पादरी की बेटी मार्गरेट ई नोबल के मन को कई गंभीर प्रश्न उद्वेलित करते रहते है। लंदन की एक सभा में वह स्वामी विवेकानंद का व्याख्यान सुनती है तथा उनसे हुए प्रश्नों-उत्तरों के बाद वह महसूस करती है कि लंदन और इंग्लैंड को महान बनाने में विश्व के अन्य नगर-कस्बों में रहनेवालों का कितना बड़ा योगदान हैं। विवेकानंद की शिष्या बन भगिनी निवेदिता के रूप में वह भारत आ यहाँ के लोगों की सेवा मे लग जाती है। एक दिन वे अपने गुरु के पास बेलूर मठ पहुँचता है जहाँ वे अपनी शिष्या को प्यार से भोजन करवाते हैं। विवेकानंद उन्हें यीशू की याद दिलाते हैं जिन्होंने अपने शिष्यों के हाथ-पैर धुलवाये थे। अपने गुरु से अपनी इस अंतिम भेंट के बाद वे दुगनी लगन के साथ लोगों की सेवा में जुट जाती हैं।

निर्देशक : विजय बसु
पटकथा : नृपेंद्र कृष्ण चट्टोपाध्याय
संगीत : अनिल बाकची
कैमरा : विजय घोष
कला : सत्येन रॉय चौधरी
संपादन : विश्वनाथ मित्र
कलाकार : अरूंधति मुखर्जी/चंद्रा आदित्य/ शोभा सेन/ असित बरन/ रविन मजुमदार/ अवरेश दास।

दादा ठाकुर

(बंगाली/श्वेत -श्याम/1962)

शरतचंद्र पंडित, जिन्हें सभी बंगाली सम्मान से दादा ठाकुर कह कर बुलाते हैं, सामाजिक बुराइयों से लड़नेवाले पत्रकार हैं। एक छोटे से अखबार की मदद से वे गाँव वालों को स्थानीय जमींदार तथा नगरपालिका अधिकारी के अन्याय से बचाते है। नलिनी कांत सरकार नामक एक क्रांतिकारी उनके साथ हो जाता है। युवा जमींदार दर्पनारायण के अत्याचार से वे लता नामक एक ग्रामीण बाला का उद्धार करते हैं तथा बाद में उस युवा जमींदार का हृदय परिवर्तन करने में सफल होते हैं। कलकत्ता की सड़कों पर स्वयं अपना अखबार बेचते दादा ठाकुर को पुलिस के हमले से नेताजी सुभाषचंद्र बोस बचाते हैं। अंत में दर्पनारायण को राष्ट्रीय ध्वज फहराते हुए पुलिस की गोली लग जाती है और वह लता के बाहों में दम तोड़ देता है। इस घटना के साक्षी दादा ठाकुर की आँखों में आँसू आ जाते हैं और वे ईश्वर से प्रार्थना करते है कि बंग-भूमि ऐसे अनेक देशभक्त सपूतों को जन्म दे।

निर्देशक : सुधीर मुखर्जी
निर्माता : एस.एल. जालान
पटकथा : नृपेन्द्र कृष्ण चट्टोपाध्याय
संगीत : हेमंत मुखोपाध्याय
कैमरा : विभूति चक्रवर्ती
कला : सत्येनराय चौधुरी
ध्वनि : सत्येन चटर्जी
कलाकार : छवि विश्वास/विश्वजीत चटर्जी/ भानु चटर्जी/ तरूण कुमार/ स्नेहलता चौधुरी/ छाया देवी।

शहर और सपना

(हिन्दी/श्वेत-श्याम/1963)

पंजाब का एक किसान युवक रोजगार की तलाश में बंबई आता है और उसे पता चलता है कि यहाँ सिर पर छत पाना सबसे बड़ी समस्या है। अपनी इस तलाश के चलते वह बंबई के फुटपाथ पर रहनेवालों के विभिन्न वर्गों के अलावा अपराध की दुनिया के लोगों के संपर्क में भी आता है। इन्हीं बेघर-बार लोगों में उसे अपनी मनपसंद लड़की मिल जाती है और वह उससे शादी कर लेता है। लेकिन मकान की उसकी मूल समस्या जहाँ की तहाँ रहती है।

निर्देशन-पटकथा : ख्वाजा अहमद अब्बास
संगीत : जे.बी. कौशिक
कैमरा : रामचंद्र
कला : अजित बनर्जी
ध्वनि : मीनू कात्रक
संपादन : मोहन राठौर
कलाकार : अनवर हुसैन / डेविड/ मनमोहन कृष्णा/ नाना पलसीकर/दिलीप -राज/ सुरेखा।

चारुलता

(बंगाली/श्वेत -श्याम/1964)

रवीन्द्रनाथ टैगोर की कहानी 'नष्टनीड़' पर आधारित इस फिल्म में एक अमीर-युवा भूपति दत्त अपने राजनीतिक अखबार के संपादन में इस कदर व्यस्त है कि वे अपनी पत्नी चारू पर कोई ध्यान नहीं दे पाते। इसे महसूस कर वे अपने भाई उमावद और उसकी पत्नी को अपने साथ बुला लेते हैं। लेकिन इससे चारू के अकेलेपन में कोई कमी नहीं आती। आखिर भूपति का एक चचेरा भाई अमल वहाँ लंबी छुट्टियों पर आता है। चारू और अमल को उनकी समान साहित्य और संगीत की रुचियाँ एक-दूसरे के नजदीक लाती है। भूपति के साथ धंधे में उनका भाई दगाबाजी करता है। जब वे अपनी तकलीफ अमल के सामने जाहिर करते हैं, तो अमल को भी अपने आचरण पर पश्चाताप होता है। वह चुपचाप घर छोड़ कर चला जाता है। चारू इस विद्रोह को भारी प्रयास के साथ तो बर्दाश्त कर जाती है लेकिन अमल का पत्र उसकी पुरानी यादें ताजा कर देता है। भूपति पहले तो इस सदमे को न सह, घर छोड़ कर चले जाते हैं लेकिन बाद में चारू के पर-पुरुष के प्रति आकर्षित होने में अपने योगदान को भी महसूस कर वापस लौटते हैं।

निर्देशन-पटकथा -संगीत : सत्यजित राय
कैमरा : सुब्रत मित्र
कलाकार : माधवी मुखर्जी/सौमित्र चटर्जी/शैलेन मुखर्जी।

चेम्मीन

(मलयालम/रंगीन/1965)

एक युवा मुस्लिम व्यापारी पारीकुट्टी से कुछ पैसे उधार लेकर नाव और जाल इस शर्त पर खरीदता है कि जो मछलियाँ वह पकड़ेगा उन्हें वह पारीकुट्टी को ही बेचेगा। चेम्बाकुंजू की खूबसूरत बेटी करुतम्मा और पारीकुट्टी एक दूसरे से प्यार करते है। करुतम्मा की माँ उसे परंपराओं का वास्ता देकर समझाती है कि वह समुद्र-तट की पवित्रता का ध्यान रखे। इस सलाह को मानते हुए वह अपने प्यार का बलिदान कर पलानी नामक एक अनाथ लड़के से शादी करने को राजी हो जाती है। अपने पति के घर जा कर वह गृहस्थी करने लगती है। उसकी बीमार माँ की सेवा के लिए उसका पिता उसे रोकने की चेष्टा करता है, लेकिन जब वह नहीं मानती तो वह उससे सारे संबंध तोड़ लेता है। वह पारीकुट्टी से भी सारे रिश्ते तोड़ उसे मछलियाँ बेचना बंद कर देता है। पारीकुट्टी आर्थिक रूप से बर्बाद हो जाता है।

इधर करुतम्मा अपने पति को खुश रखने का पूरा प्रयत्न करती है लेकिन उसके पारिकुट्टी से प्यार की बात गाँववालों को पता चल जाती है। उसका पति इस पर कोई ध्यान नहीं देता लेकिन एक दिन एक चाँदनी रात पारिकुट्टी और करुतम्मा की जब मुलाकात हो जाती है तो पुराना प्यार उन्हें याद आता है। दोनों जिस समय एक-दूसरे का अलिंगन कर रहे होते हैं। पलानी दूर समुद्र में मछली पकड़ रहा होता है। करुतम्मा द्वारा दांपत्य की पवित्रता भंग होने पर समुद्र की देवी कुपित हो उन्हें दंडित करती है। पलानी तो समुद्र में डूबता ही है, अगली सुबह करुतम्मा और पारिकुट्टी के शव भी समुद्र किनारे पाए जाते है।

निर्देशक : रामू करियात
निर्माता : बाबू
कैमरा : मार्कस बार्टली/यू.राज गोपाल
संगीत : सलिल चौधुरी
संपादन : ऋषिकेश मुखर्जी/के.डी. जॉर्ज
कलाकार : सत्यन/शीला/मधु/कोट्टारकरा/श्रीधरन् नायर/ एस.पी. पिल्लई/अदूर भवानी।

तीसरी कसम

(हिंदी/श्वेत - श्याम/1966)

भोलेभाले गाड़ीवान हीरामन को नेपाल की सीमा पार माल ले जाने के जुर्म में पुलिस पकड़ती हैं। वह पहली कसम खाता है कि अब कभी माल की तस्करी नहीं करेगा। दूसरी कसम वह अपनी गाड़ी पर कभी बाँस न लादने की खाता है क्योंकि इससे एक दुर्घटना हो जाती है। लेकिन असली और तीसरी कसम उसे बहुत ही करुण परिस्थितियों में खानी पड़ती है। हीरामन नौटंकी की नर्तकी हीराबाई को अपनी गाड़ी में उसके मुकाम तक पहुँचाने का जिम्मा लेता है। रास्ते में वह हीराबाई पर मुग्ध हो उठता है तथा हीराबाई भी उसके भोलेपन' पर रीझती है। गाँव के मेले में हीरामन नौटंकी देखता रहता है और दोनों के बीच एक आत्मीयता विकसित होती है। हीराबाई जहाँ इस संबंध की असंभवता को महसूस करती है, वहीं हीरामन दुनियादारी से अपरिचित रहता है। उसकी खुशफहमी तब खत्म होती है जब हीराबाई अपना पेशा छोड़ने से इंकार कर, चली जाती है। हीरामन कभी किसी नौटंकी कंपनी की किसी बाई की सवारी न लेने की तीसरी कसम खाता है।

निर्देशक : बासु भट्टाचार्य
सहायक-निर्देशक : बासु चटर्जी/बी.आर.इशारा
संगीत : शंकर जयकिशन
नृत्य संयोजन : लच्छू महाराज
कैमरा : सुब्रत मित्र
कला : देश मुखर्जी
ध्वनि : अलाउद्दीन
संपादन : जी.जी. मयेकर
कलाकार : राजकपूर/वहीदा रहमान/दुलारी/इफ्तेखार/असित सेन।

हाटे-बाजारे

(बंगाली/श्वेत -श्याम/1967)

मानवता के प्रति प्रेम और समाज के उपेक्षित और दलित वर्ग से मिलने-जुलने तथा उन्हें ऊँचा उठाने की नीयत से सिविल सर्जन सदाशिव मुखर्जी गाँव में बस जाते हैं और काफी लोकप्रियता और सम्मान अर्जित करते हैं। यही भावना अन्य पेशों के कुछ लोगों को भी प्रेरित करती है। इनमें छिपली नामक एक फल बेचने वाली भी है। डॉक्टर और छिपली एक दूसरे के प्रति आकर्षित होते है। अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद डॉक्टर अपनी मोटर-गाड़ी, जो चलता-फिरता अस्पताल है, में गाँव-गाँव जा कर पीड़ितों का इलाज करते हैं। छिपली उनकी नर्स बन जाती है तथा एक रिटायर्ट जज तथा डॉक्टर का ड्रायवर भी उनके इस सेवा-कार्य में उनकी मदद करता है। इस बीच एक धनी व्यापारी का बिगड़ैल लड़का कुछ दिन डोरे डालने के बाद छिपली से बलात्कार करने की कोशिश करता है। डॉक्टर के उसे बचाने आने पर वह उन्हें मार डालता है।

निर्देशन-पटकथा-संगीत : तपन सिन्हा
कैमरा : दिनेश गुप्ता
कला : कार्तिक बोस
संपादन : सुबोध रॉय

कलाकार : अशोक कुमार/ वैजयंतीमाला/अजितेश बेनर्जी/स्मृति बिस्वास/ छायादेवी/ भानु चटर्जी/ रुद्रप्रसाद सेनगुप्ता/ गीता डे/अजय गांगुली।

गूपी गायने, बाघा बायने

(बंगाली/श्वेत - श्याम/1968)

इस फिल्म में गूपी नामक गायक तथा बाघा नामक डफली बजाने वाले की लोककथा है। दोनों को न गाना आता है न बजाना। दोनों के गाँव वाले उन्हें मजाक में राजा के लिए गाने को कह अपने-अपने गाँव से निकाल देते हैं। रास्ते में दोनों की मुलाकात होती है और जंगल में दोनों रात को डर को भगाने के लिए गाने-बजाने लगते है। भूतों का देवता खुश हो उन्हें तीन वरदान देता है। वे चाहें जितना अच्छा खाना-पीना, पा सकेंगे। जादुई जूते पहन चाहे जहाँ जा सकेंगे तथा अपने संगीत से सबको मोह लेंगे। गूपी और बाघा शुंडी देश में जा कर राजा के दरबार में शाही संगीतकार बन जाते है। शुंडी देश के राजा का एक जुड़वाँ भाई, जो हाल्ला देश का राजा है, दुष्ट मंत्री की सलाह पर अपने भाई के ही राज पर चढ़ाई कर देता है। गूपी और बाघा गुप्तचरों के वेश में हाल्ला देश में जाकर लड़ाई तो रुकवा देते हैं लेकिन बंदी बना लिए जाते हैं। वे किसी तरह बच निकलते हैं। रास्ते में हाल्ला की सेना उनका संगीत सुन बेहोश हो जाती है। हाल्ला नरेश को पकड़ कर वे दोनों शुंडी ले जाते है, दोनों भाइयों का मिलन होता है। इनाम में गूपी और बाघा की शादी दोनों राजाओं की राजकुमारियों से कर दी जाती है।

निर्देशन-पटकथा-संगीत : सत्यजित राय
कैमरा : शोमेन्दु रॉय
कलाकार : तपन चटर्जी/रवि घोष।

भुवन शोम

(हिंदी/श्वेत -श्याम/1969)

सख्त अनुशासन प्रेमी और ईमानदार रेल्वे अधिकारी भुवनशोम, जिन्होंने अपने बेटे तक को घर से निकाल दिया था वे कुछ रोज़ की छुट्टी मनाने गुजरात के एक सुदूर गाँव में जाते हैं। छुट्टियों पर जाने के पूर्व उनके सामने एक ऐसे रेल्वे कर्मचारी का प्रकरण भी रखा जाता है जिसे वे भ्रष्ट तथा बेईमान मानते है।

गाँव में सही और गलत के बारे में जिद्दी रुख अपनाने वाले भुवन शोम को नए और अप्रत्याशित अनुभव से दो-चार होना पड़ता है। गाँव के अन्य आम लोगों के साथ ही उनकी भेंट अनायास उसी टिकट कलेक्टर की पत्नी गौरी के साथ हो जाती है। भोली-भाली पत्नी इस अफसर से पूछती है "मेरा पति लोगों की मदद करता है। बदले में कृतज्ञता प्रदर्शन के लिए यदि वे उसे कुछ देते है तो क्या आप उसे रिश्वत कहेंगे? भुवन शोम को यह सवाल चुभ जाता है और वे उस टिकट कलेक्टर की बदली बड़े स्टेशन पर कर देते हैं जहाँ 'ज्यादा यात्री और ज्यादा आमदनी होगी।'

निर्देशन-पटकथा : मृणाल सेन
संगीत : विजय राघव राव
कैमरा : के.के. महाजन
कलाकार : सुहासिनी मुले/उत्पल दत्त/साधू मेहर/शेखर चटर्जी

संस्कार

(कन्नड़/श्वेत-श्याम/1970)

दक्षिण मैसूर के एक गाँव में प्राणेशाचार्य नामक एक नैष्ठिक ब्राह्मण तथा नारायणप्पा नामक एक विद्रोही ब्राह्मण, जो समाज के सारे नियमों को तोड़ता है, रहते हैं। शराबी, नारायणप्पा की अचानक मौत हो जाती है। उसकी रखैल चंद्री प्राणेशाचार्य से आकर उसका अंतिम संस्कार करने का अनुरोध करती है। गाँव के दूसरे ब्राह्मण उसका संस्कार करने को तैयार नहीं हैं लेकिन जब तक उसका अग्निसंस्कार नहीं हो जाता कोई भोजन नहीं कर सकता। प्राणेशाचार्य उनके कहने से शास्त्रों की छानबीन करते हैं मगर कुछ तय नहीं कर पाते। इस बीच नदी किनारे के मंदिर में ध्यान के लिए गए प्राणेशाचार्य चंद्री को देखते है और उसके उद्दाम यौवन के समक्ष असहाय हो आत्मसमर्पण कर बैठते हैं। इस बीच नारायणप्पा की लाश पड़ी रहती हैं। नारायणप्पा की मौत प्लेग से हुई थी। महामारी फैलती है और कुछ अन्य ग्रामीणों के अलावा बरसों से रुग्ण प्राणेशाचार्य की पत्नी भी उसकी शिकार हो मर जाती है। पश्चाताप ग्रस्त ब्राह्मण एक नीची जाति के व्यक्ति पुट्टप्पा के साथ पास के एक गाँव में मेले में जाती है। वहाँ वे मजबूरी में उसी मंदिर में प्रसाद ग्रहण करने पहुँच जाते है जहाँ कायदे से उन्हें जाने का कोई अधिकार नहीं था। प्राणेशाचार्य को महसूस होता है कि वे अपनी खुद की कमजोरी पर काबू नहीं पा सके, उन्हें नारायणप्पा पर उंगली उठाने का कोई अधिकार नहीं है। वे गाँव लौटकर नारायणप्पा का अंतिम संस्कार कर देते हैं।

निर्देशक : टी. पट्टाभि राम रेड्डी
पटकथा : गिरीश कर्नाड़
संगीत : राजीव तारनाथ
कैमरा : टॉम कोवेन
कलाकार : गिरीश कर्नाड/स्नेहलता रेड्डी/ पी. लंकेश/वी.आर. जयराम।

सीमा बद्ध

(बंगाली/श्वेत-श्याम/1971)

श्यामलेंदु चटर्जी एक ब्रिटिश कंपनी के विक्रय प्रबंधक के पद पर अपनी काफी कम उम्र में पहुँच जाता है। कलकत्ता के एक ठाठदार फ्लैट में अपनी पत्नी दोलन के साथ रहते हुए उसकी महत्वाकांक्षा कंपनी का निर्देशक बनने की है। दोलन की बहन सुदर्शना छुट्टियाँ बिताने उसकी बहन के यहाँ आती है। काफी कम उम्र से ही सुदर्शना श्यामलेंदु के प्रति गुप्त प्रशंसा भाव रखती रही हैं। यहाँ आकर वह आकर्षण गंभीर रूप धारण कर जाता है। चटर्जी भी उसकी भावनाओं को पहचान उनका प्रतिदान देता है। सुदर्शना उसके जीवन में एक ताजा हवा के झोंके की तरह आई है लेकिन दफ्तर में चटर्जी के सामने कई अप्रत्याशित संकट आ जाते हैं लेकिन वह छल और चालाकी से उनसे निपट लेता है। उसे निदेशक बना दिया जाता है लेकिन जिन गलत तरीकों से उसने यह सफलता हासिल की उससे सुदर्शना उससे विमुख हो जाती है।

निर्देशन/पटकथा/संगीत : सत्यजित रॉय
कैमरा : शोमेन्दु रॉय
कलाकार : बरूण चंदा/शर्मिला टैगोर/प्रमिता चौधुरी।

स्वयम्बरम्

(मलयालम्/श्वेत -श्याम/1972)

साँझढले बस एक शहर में प्रवेश करती है। यात्रियों

में विश्वम् और सीता भी है। वे जरा अलग नजर आ रहे है क्योंकि वे दोनों भागे हुए प्रेमी हैं। नई चीजें देख सीता जहाँ चमत्कृत और रोमांचित होती है, वहीं विश्वम् आने वाली जिंदगी की अनिश्चता से किंचित चिंतित है। समय बीतता है। दोनों प्रेमियों को अब कुछ सस्ते होटलों में ठहरना पड़ता हैं। यहाँ उन्हें घटिया लोगों की कामुक दृष्टि का शिकार होना पड़ता है। यहाँ अड़ोस-पड़ोस में तस्कर, वेश्या तथा चावल बेचने वाली सुंदरी जानकी अम्मा जैसे लोग रहते हैं। विश्वम् एक उपन्यास लेखक है। वह अपना उपन्यास लेकर एक पत्रिका के संपादक के पास जाता है। वहाँ वह बड़े-बड़े लेखकों को बड़ी-बड़ी बातें कहते सुनता है और खुद को महत्वहीन समझने लगता है। संपादक भी उसके उपन्यास को 'बेहद भावुक' कह ठुकरा देता है। विश्वम् एक प्राईवेट कॉलेज में व्याख्याता बन जाता है। कॉलेज का प्राचार्य जरा मनमौजी किस्म का व्यक्ति है। उसके साथ विश्वम् शराब पी कर जब एक दिन घर वापस लौटता है तो सीता उसे बतलाती है कि घर में खाने को कुछ नहीं हैं। सीता रोती है। विश्वम् पश्चाताप करता है। कॉलेज आर्थिक दिक्कतों के कारण बंद हो जाता है और विश्वम् बेकार हो जाता है। सीता माँ बनने वाली है। जानकी अम्मा की मदद से बच्चा जन्म लेता है। लेकिन सीता देखती है कि उसके पड़ोस का बिस्तर खाली हैं।

निर्देशन-पटकथा : अदूर गोपाल कृष्ण
संगीत : एम.बी. श्री निवासन
कैमरा : एम.सी. रवि वर्मा
संपादन : ए. रमेशन्
कलाकार : शारदा/मैधु/तिकुत्रृषि/सुकुमारन् नायर/अदूर भवानी/गोपी/ललिता।

निर्माल्यम्

(मलयालम/विश्वम् -श्याम/1973)

गाँव के मंदिर का पुजारी पर्याप्त मात्रा में भेंट-पूजा न आने से क्षुब्ध हो चला जाता है। मंदिर के ज्योतिषी को लेकिन विश्वास है कि एक दिन मंदिर का पुराना वैभव वापस लौटेगा। मंदिर का ट्रस्टी अपने रसोइयों के युवा लड़के को मंदिर का नया पुजारी बना कर भेज देता है। लड़का अपनी परीक्षा की तैयारी कर रहा है और उसे अपना यह नया काम खास पसंद नहीं है। मंदिर की दैनिक पूजा-अर्चना में ज्योतिषी की किशोर लड़की पुजारी की मदद करती है और दोनों के बीच आत्मीयता पैदा हो जाती है। ज्योतिषी के बेटे अप्पू की सोहबत अच्छी नहीं है। एक दिन वह मंदिर की तलवार और घंटियाँ बेच देने की कोशिश करता है लेकिन उसे कोई खरीदार नहीं मिलते। वह गाँव छोड़कर चला जाता है। गाँव में चेचक फैल जाती है। गाँव वालों को लगता है कि यह देवी का प्रकोप है। वे देवी को प्रसन्न करने के लिए वार्षिक-अनुष्ठान इस बार बड़े पैमाने पर आयोजित करते है। ज्योतिषी को लगता है कि मंदिर के पुराने वैभव के वापस लौटने का दिन आ गया है। वह इस अवसर पर नृत्य करने के लिए घुंघरु आदि तलाश करने जब घर पहुँचता है तो वहाँ अपनी पत्नी को गाँव के साहूकार के साथ बिस्तर में पाता है। जब वह पत्नी को उसके इस कृत्य के लिए प्रताड़िता करता है तो वह उससे पलट कर पूछती है "जब मेरे बच्चे भूखे थे तो क्या तुम्हारी देवी ने उनके लिए चावल या पैसे का इंतजाम किया ?" ज्योतिषी का नृत्य मंदिर प्रांगण में प्रारंभ होता है और हमेशा की तरह आत्म विस्मृति की स्थिति में वह रक्त उगलता है। गाँव वाले उस रोज के उसके नृत्य की प्रचंडता पर अचंभित हैं।

निर्देशक : एम.टी. वासुदेवन नायर
संगीत : के राघवन्
कैमरा : रामचंद्र बाबू
कलाकार : पी.जे. एंटनी/कविसूद पौन्नम्मा/रवि मेनन/सुकुमारन्/सुमित्रा/शंकरादि/ देवीवासन।

कोरस

(बंगाली/विश्वेत -श्याम/1974)

फिल्म की कहानी परी-कथा शैली में शुरू होती है। समूह गान के साथ सूत्रधार परदे पर आकर उस राजा का गुणगान करती है जो धरती से अभाव और इच्छाएँ समाप्त करना चाहता है। राजा के सभासद उसे समझाते है कि जब तक इच्छाएँ नहीं होगी तब तक ईश्वर भी नहीं हो सकता। ईश्वर धरती पर नेता का अवतार ग्रहण कर उतरता है। एक किलेनुमा इमारत में इस ईश्वर का दफ्तर हैं। इसके बाद कहानी मौजूदा दफ्तरशाही की विडंबनाओं तथा विद्रूप को उजागर करती हुई आगे बढ़ती है। बेरोजगारी, नौकरी, आवेदन-पत्र, बेरोजगारों द्वारा मालिकों की धोखाधड़ी के खिलाफ आंदोलन सब कुछ होता है तथा नाटक का मसखरा कहता है कि यह सब क्षणिक है। राजा को चिंतित होने की जरुरत नहीं है, ये लाखों उग्र हो उठे लोग एक दिन शांत हो जाएंगे। लेकिन ऐसा होता नहीं।

निर्देशक : मृणाल सेन
पटकथा : मृणाल सेन/मोहित चट्टोपाध्याय
संगीत : आनंद शंकर
कैमरा : के.के. महाजन
कलाकार : उत्पल दत्त/गीता सेन/शेखर चटर्जी/शुभेंदु चटर्जी/रवि घोष/दिलीप रॉय

चोमना डुडी

(कन्नड़/विश्वेत -श्याम/1975)

चोमा नामक एक निरीह अछूत तथा उसकी ढोलकी (डुड़ी) की इस कहानी में जमीन का एक छोटा सा टुकड़ा प्राप्त करने के लिए चोमा के संघर्ष का चित्रण है। चोमा के चार बेटों, एक बेटी के अलावा एक पालतू कुत्ता 'बाडू' भी है। चोमा का मालिक शंकप्पईया उसे जमीन देने को तैयार नहीं है। चोमा के दो बड़े बेटे अपने पिता का कर्ज उतारने के लिए दूरस्थ कॉफी बागानों में मजदूरी करते है। वहाँ के अजनबी माहौल में वे बीमारी और गरीबी से परेशान रहते है। एक बेटा गुरुवा अपने साथी मजदूर की बेटी मेरी के साथ भाग जाता है और ईसाई धर्म अंगीकार कर लेता है। दूसरा बेटा बीमार हो लौटकर जल्दी ही मर जाता है। अब कॉफी बागानों में काम करने की बारी बेटी बेली की आती हैं। वह अपने सबसे छोटे भाई के साथ वहाँ जाती है। वहाँ बागान मालिक का मुंशी उस पर डोरे डालता है और मालिक का बेटा उससे बलात्कार करता है। लेकिन चोमा का कर्ज उतर जाता है बेटी के लौटने से वह खुश है। वह शंकाप्पैया से फिर जमीन की मांग करता है ताकि वह बेटी का ब्याह कर सके। लेकिन सब-कुछ इतना आसान नहीं होता। विपत्तियाँ एक के बाद एक आती रहती है और अंत में चोमा अपनी ढोलकी के साथ अकेला रह जाता है। उसे ही बजाते-बजाते वह एक दिन मर जाता है लेकिन 'डूड़ी' की आवाज लोग अब भी सुनते हैं।

निर्देशन - संगीत : ब.व. कारंत
पटकथा : डॉ. श्रीनिवास कारंत

कैमरा	**: एस रामचंद्र**
कलाकार	**: वासुदेव राव/पद्मा कुम्टे/जयराजन्/सुंदर राजन्/नागराज/नगेंद्र/शंकर भट्ट/रोहिदास कादरी।**

मृगया

(हिंदी/रंगीन/1976)

आदिवासियों की कुछ फसल जंगली सुअर नष्ट कर देते हैं और बाकी शोषक इंसानों की भेंट चढ़ जाती है। साहूकार के हाथ सनातन काल से इसी तरह उनका शोषण होता रहा है। एक गोरा अफसर एक युवा आदिवासी शिकारी की तीरंदाजी से प्रभावित हो उसकी तरफ आकर्षित होता है। भोलेभाले आदिवासी इस बुरे आदमी से भयभीत हैं। इस बागी भगोड़े के पीछे पूरे गाँव के लोगों को वह अफसर लगा देता है। लेकिन गाँव वाले इस विद्रोही का साथ देते है। कुछ दिनों बाद सरकारी खजाना लुट जाता है। प्रशासन आदिवासी बागी के सर पर ईनाम घोषित करता है। अंततः उसे खोज कर मार डाला जाता है। खून-खराबे का एक निर्बाध सिलसिला प्रारंभ हो जाता है। एक दिन युवा शिकारी की पत्नी को साहूकार के आदमी उठा ले जाते है। क्रुद्ध युवा अत्याचारी को मार डालता है। शिकारी पर हत्या का मुकदमा चलाया जाता है और उसे फाँसी की सजा सुना दी जाती है। फिल्म के अंतिम दृश्य में, में, विद्रोही आदिवासी युवक की मौत होती है तथा आदिवासी-जन अपने अस्त्र-शस्त्रों से सज्जित हो उगते सूर्य की तरफ हाथ पसारे खड़े दिखलाई देते है।

निर्देशक	: मृणाल सेन
पटकथा	: मृणाल सेन/मोहित चट्टोपाध्याय
संगीत	: सलिल चौधुरी
कैमरा	: के.के. महाजन
कलाकार	: मिथुन चक्रवर्ती/ममता शंकर।

घट श्राद्ध

(कन्नड़/विश्वेत -श्याम /1977)

कोई पाप करने पर किसी जिंदा व्यक्ति को ब्राह्मण समाज के जाति बहिष्कृत करने के लिए उसका घट श्राद्ध किया जाता है। इंसान के बनाये कई कानूनों की तरह यह नियम भी संबंधित व्यक्ति के द्वारा किए गए पाप से भी ज्यादा दुष्टतापूर्ण हैं।

बाल विधवा यमुनक्का एक ऐसे समाज में जीती हैं जहाँ उसे सामान्य जीवन जीने का अधिकार नहीं हैं। अग्रहारम् (ब्राह्मण टोले) में रहते हुए भी उसकी उम्र के अनुरूप भावनाएँ और इच्छाएँ उसमें पनपती हैं। गाँव की स्कूल के अध्यापक से उसका प्रणाय-प्रसंग चलता है और वह गर्भवती हो जाती है। उसका प्रेमी गर्भपात की व्यवस्था करता है लेकिन दाई अपना काम फुहड़ ढंग से करती है और वह गाँव से गायब हो जाता है। गाँव के बड़े-बूढ़ों को इस "पाप" का पता चल जाता है। उसका पिता उसका घट श्राद्ध कर देता है। लेकिन यही समाज उस अभागी जाति बहिष्कृत विधवा के पिता द्वारा उसकी बेटी की उम्र की एक युवती से विवाह करने पर कोई आपत्ति नहीं उठाता।

निर्देशन - पटकथा	**: गिरीश कासरवल्ली**
संगीत	**: ब.व. कारंत**
कैमरा	**: एस. रामचंद्र**
कलाकार	**: मीना कुटप्पा/अजित कुमार/नारायण भट्ट रामकृष्ण/ शांता।**
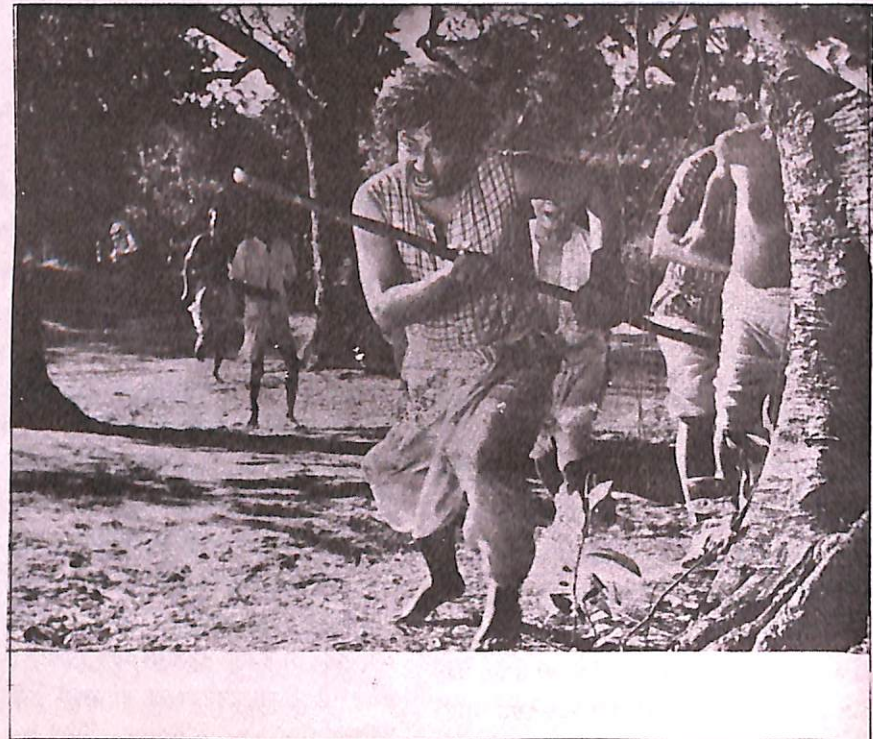
गणदेवता

(बंगला/श्वेत/श्याम/1978)

गणदेवता फिल्म ताराशंकर बनर्जी के इसी नाम के सुप्रसिद्ध उपन्यास पर आधारित है, जिसमें आदत के गुलाम ग्रामीण समाज के जागरण की कथा का वर्णन है।

दो आदमी, लोहार अनिरूद्ध और बढ़ई गिरीश यह घोषणा करते हैं कि वे अदला-बदली की दरों पर काम नहीं करेंगे। अदल-बदली की दरें पहुत समय पहले निश्चित की गई थी और उनमें कच्चे माल के दामों में लगातार बढ़ोत्तरी शामिल नहीं हैं गाँव के अध्यापक इस अन्याय को समझते हैं। लेकिन सीधी कार्रवाई करने की सलाह देने से हिचकिचाते हैं।

एक धनी किसान, जिसके पास काफी पैसा है - जो केवल खेती से नहीं कमाया गया है। - लोहार और बढ़ई के इस कार्य से अपनी सत्ता को होने वाले खतरे को समझता है। यह किसान पिट्ठुओं की सहायता और पुलिस के साथ अपनी जान-पहचान की मदद से गाँव में 'व्यवस्था' स्थापित करता है वह गाँव के उस भाग में आग लगवा

बंगला फिल्म गणदेवता का एक दृश्य

देता हैं, जहाँ 'बागी' रहते हैं। पुलिस आती है और जाँच का नाटक करती हैं।

एक क्रान्तिकारी को ब्रिटिश सरकार द्वारा इस सुदूर गाँव में नजरबन्द किया जाता है। वह गाँव निवासियों को सामूहिक कार्रवाई की उपयोगिता समझाता है। इस बीच गाँव के अध्यपाक को धनी किसान और सरकारी अधिकारियों के जुल्म का प्रत्यक्ष अनुभव होता है। अत्याचार के शिकार कुछ गाँव वालों के प्रति सहानुभूति और समर्थन प्रकट करने पर उसका स्कूल बंद कर दिया जाता है और उसे जेल भेज दिया जाता है। वह जेल से तत्कालीन सामन्तवादी व्यवस्था को समाप्त करने के संकल्प के साथ लौटता है।

मजुमदार ने गाँव के सामान्य जीवन का बहुत ही यथार्थ चित्रण किया है।

फिल्म का अन्त इस दृश्य के साथ होता है, गाँव के लोग एक दूसरे के साथ खड़े हैं। उन्हें पता लग गया है कि वे अपनी शक्ति से समाज का नक्शा बदल सकते हैं।

निर्माता : सूचना और सांस्कृतिक कार्य विभाग, पश्चिम बंगाल सरकार।
निर्देशक : तरुण मजुमदार
पटकथा : राजेन तरफदार तरुण मजुमदार
कैमरा : शक्ति बनर्जी
सम्पादक : रमेश जोशी
संगीत : हेमन्त मुखर्जी
पात्र : सौमित्र चटर्जी संध्या राय मास्टर कंचन डे विश्वास

दाखल

(बंगाल / 1981 / रंगीन / 72 मिनट)

निर्देशन, फोटोग्राफी तथा संगीत : गौतम घोष
पटकथा : गौतम घोष, पार्थ बैनर्जी
संपादन : प्रसन्न डे
ध्वनि : ज्योति चटर्जी, डेविड रायचौधरी
कला निर्देशन : अशोक बोस
कलाकार : ममता शंकर/रॉबिन सेन गुप्ता/सुनील मुखर्जी/काजल रायचौधरी/विमल देव

अंदी कौआ मार कहलाने वाली एक घुमंतू जनजाति की लड़की थी। अपनी जवानी में वह जोगा नामक एक किसान के साथ भाग गई थी जो कि दूसरी जाति का था। वे नदीय बंगाल के दक्षिणी भाग में बस गए थे जब किसानों को फसल पैदा करने के लिए कड़ा संघर्ष करना पड़ता है। जब अंदी दूसरी बार गर्भवती हुई तो उसका पति साँप के काटने से मर गया। स्थानीय जमींदार अंदी की भूमि पर आँखे गड़ाए हुए था और उसे अपनी कानूनी तौर पर अनुमत 25 एकड़ की खास भूमि के एक हिस्से के रुप में हड़प जाना चाहता था। जब अंदी की जनजाति के लोग वहाँ आते हैं, तो जमींदार का पिट्ठू गोविंदा उनकी अच्छी खातिर करता है और उनका दिल जीत लेता है। गोविंदा उस जनजाति के मुखिया बागंभर को इस भाँति के लिए तैयार कर लेता है कि न्यायालय में वह अंदी को अपनी ही जनजाति का और यह साबित करने में सहायता देगा कि जोगा के साथ अंदी का विवाह गैरकानूनी था और अंदी के वारिसों का जोगा की भूमि पर कोई अधिकार नहीं है। अंदी गोविंदा को भला-बुरा कहती है। उसी रात गोविंदा के आदमी अंदी की झोपड़ी को आग लगा देते हैं। अब बांगभर को पछतावा होता है। और वह अंदी को अपने साथ ले जाना चाहता है। किन्तु अंदी आखरी लड़ाई के लए वहीं रहती है।

उत्पलेन्दू चक्रवर्ती की फिल्म चोखे

चोख

(बंगला/रंगीन/98 मिनट/1982)

निर्देशन, संगीत और पटकथा : उत्पलेन्दु चक्रवर्ती
निर्माण : सूचना तथा सांस्कृतिक कार्य विभाग पश्चिम बंगाल सरकार
फोटोग्राफी : शक्ति बैनर्जी
ध्वनि : ज्योति चटर्जी
संपादन : बुलू घोष
कला निर्देशन : सुरेशचन्द्र
कलाकार : ओमपुरी/श्रीला मजुमदार/श्यामानन्द जालान

एक श्रमिक नेता जदुनाथ सरकार को फाँसी दे दी जाती है। फाँसी लगने के पहले वह कह जाता है कि उसकी आँखें किसे ऐसे श्रमिक को दे दी जाएँ जिसने संसार को कभी नहीं देखा हो। उसे फाँसी लगने के बाद नेत्र बैंक में रखी हुई उसकी आँखों को लेकर एक वर्ग संघर्ष भड़क उठता है। एक

शक्तिशाली और प्रभावशाली बिजनेस मैग्नेट जेठिया अपने बेटे के लिए जदुनाथ की आँखे पाने के लिए अपने प्रभाव का उपयोग करता है। दूसरी ओर श्रमिक लोग यह चाहते हैं कि जदुनाथ की आँखें छेदीलाल नामक एक अंधे श्रमिक को दे दी जाएं जिसका नाम आँखें की प्रतीक्षा करने वाले लोगों की सूची में पहले स्थान पर है। यह बात स्पष्ट हो जाती है कि जिन घटनाओं के फलस्वरूप आखिरकार जदुनाथ को फाँसी हुई उन घटनाओं के लिए जेठिया ही जिम्मेदार था।

डॉ. मुखर्जी को जेठिया के बेटे की आँखों के ऑपरेशन का कार्य सौंपा जाता है। उन्हें जेठिया की जोड़-तोड़ का पता चलता है। वे चिकित्सा अधीक्षक से कहते हैं कि ऑपरेशन करने से पहले वे कागजात देखना चाहते है। बाद में जेठिया को पता चलता है कि अपने बेटे के लिए नेत्र बैंक से वह जो आँखे गैर कानूनी ढंग से प्राप्त करने की कोशिश करता रहा है वे आँखे उसके कारखाने के श्रमिक जदुनाथ की हैं जिसे उसने फाँसी के फंदे तक पहुँचाया था। वह नहीं चाहता कि एक श्रमिक की संघर्षशील भावना वाली वे आँखे सही सलामत रहें। वह फिर से उन आँखों को नष्ट करने के लिए अपने प्रभाव का उपयोग करता है।

इस बीच जदुनाथ की विधवा के नेतृत्व में श्रमिक लोग चिकित्सा अधीक्षक के सामने प्रदर्शन करते हैं और यह मांग करते है कि जदुनाथ की आँखें छेदीलाल को दी जाएं। ढालों और डंडों से लैस पुलिस वाले उन्हें रोकते है। जदुनाथ की विधवा पीछे मुड़ती है और प्रदर्शनकर्ताओं की ओर देखती है। कुछ तनावपूर्ण क्षणों तक कोई भी नहीं हिलता। वह अंधे छेदीलाल का हाथ थामती है और पहला कदम उठाती हैं।

दामुल

(हिन्दी/125 मिनिट/रंगीन/1984)

"दामुल" में एक विचित्र देहाती रिवाज-पनाह-दिखाया गया है जो एक सामंती प्रणाली है और बिहार में प्रचलित है। एक मालदार जमींदार, गरीब किसानों और भूमिहीन मजदूरों को छोटे-मोटे अपराधों में जानबूझकर फँसा देता है। जब अपराधियों की खोज में पुलिस आती है तो वह उनको अपने संरक्षण में छिपा लेता है और उनको पनाह की प्रथा के अन्तर्गत संरक्षण प्रदान करता है।

जो गरीब मजदूर पीढ़ी-दर-पीढ़ी गले तक कर्ज में डूबे हुए हैं, उनके पास इसके सिवा कोई चारा नहीं कि वह जमींदार के इशारों पर अपराधों के साथ-साथ कोई भी काम करने को मजबूर हों।

इस फिल्म में पनाह की समस्या स्थानीय रूप से दिखाई गई है लेकिन अनेक गाँव और समाजों में इसके भिन्न-भिन्न रूप पाए जाते हैं। इस फिल्म में अन्य देहाती समस्याओं को भी छुआ गया है। जैसे जातियों के झगड़े, मजदूरों के विवाद, हरिजनों पर अत्याचार और आतंकवादी सामंती ढांचा-जिसमें फंसा हुआ गरीब किसान निकलने का कोई रास्ता नहीं पाता।

निर्माता-निर्देशक, पटकथा लेखक : प्रकाश झा,
छायाकार : राजन कोठारी
ध्वनि आलेखक : ए.एम. पद्मानाभन, सुदीप्तो मोहन बासु
सम्पादक : अपूर्व याग्निक
कला निर्देशक : गौतम सेन, प्रभात झा
वेशभूषाकार : प्रभात झा
संगीत : रघुनाथ सेठ
कलाकार : अन्नू कपूर/श्रीला मजूमदार/मनोहर सिंह/

चिदंबरम्

(मलयालम /103 मिनिट/रंगीन/1985)

शंकरण केरल में एक सरकारी पशु फार्म में अधिकारी के रूप में काम करता है। उसे फार्म के एक मजदूर मुन्यांदी की नवविवाहिता पत्नी शिवकामी से लगाव हो जाता हैं। शंकरण की आसक्ति को देखकर शिवकामी भी धीरे-धीरे उसकी ओर आकर्षित हो जाती है। रात की ड्यूटी के दौरान मुन्यांदी, जिसे फील्ड सुपरवाइजर पर शक होता है, अपने घर आता है और दरवाजे पर दस्तक देता है। एक व्यक्ति तेजी से घर के पिछवाड़े से बाहर निकलता है। यह फिल्ड सुपरवाइजर नहीं बल्कि शंकरण था, जिस पर मुन्यांदी ने भरोसा किया था। अगले दिन सबेरे शंकरण को पता चलता है कि मुन्यादी ने अपनी पत्नी की हत्या का प्रयास करने के बाद खुदकुशी कर ली। शंकरण अपने अपराध बोध से छुटकारा पाने के लिए फार्म छोड़कर चला जाता है। घूमते-घामते वह चिदंबरम् पहुँचता है। वहाँ मंदिर के निकट श्रद्धालुओं के जूतों की देख रेख करने वाली महिला जब उसकी ओर देखती है तो उसे पता चलता है कि वह शिवकामी है जो उम्र की मार से अब अपनी सुन्दरता खो चुकी है।
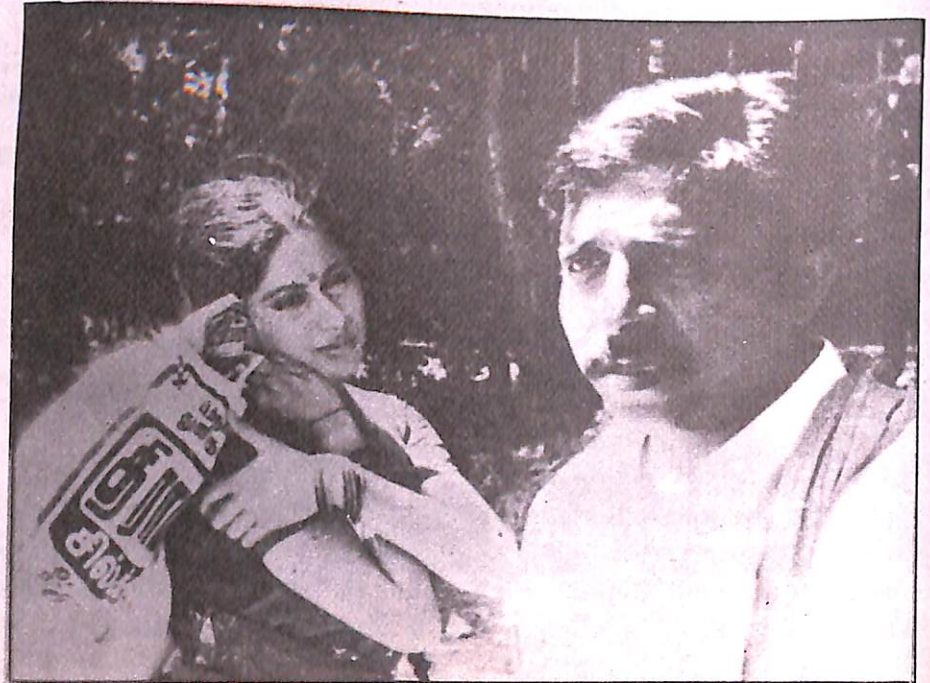
जी. अरविंदन की फिल्म चिदम्बरम् में स्मिता पाटिल

देख रेख करने वाली महिला जब उसकी ओर देखती है तो उसे पता चलता है कि वह शिवक्कामी है जो उम्र की मार से अब अपनी सुन्दरता खो चुकी है। शंकरण के लिए यह यात्रा का अन्त हैं।

निर्माता : सूर्यकान्ती फिल्म मेकर्स
निर्देशक/पटकथा/लेखक : जी. अरविन्दन
छायाकार : शफी
ध्वनि आलेखक : पी. देवदास
संपादक : बोस
कला निर्देशक : नम्बूदरि,
संगीत : जी देवराजन
मुख्य अभिनेता : गोपी/स्मिता पाटिल/श्रीनिवासन ।

पिरवी

(मलयालम /रंगीन/1988/110 मिनिट)

एक बूढ़ा व्यक्ति चकयार गाँव के बस स्टाप पर अपने बेटे रघु के आने का इन्तजार कर रहा है। रघु शहर में इंजीनियरी पढ़ता है। आखरी बस आकर भी चली जाती है लेकिन रघु नहीं आता। चकयार घर लौट जाता है। अखबारों में खबर छपती है कि रघु तथा दो आदमी सरकार विरोधी गाना गाने के लिए गिरफ्तार कर लिये गये हैं। चकयार रघु को छुड़ाने के लिए त्रिवेन्द्रम जाता है। गृह मंत्री जो कभी पढ़ाई-लिखाई के लिए चकयार के परिवार पर निर्भर हुआ करता था, उसे पुलिस के महानिदेशक के नाम एक पत्र देता है। चकयार को पता चलता है कि रघु को गिरफ्तारी के थोड़ी देर बाद ही रिहा कर दिया गया था। चकयार की बेटी को इसमें कुछ गड़बड़ दिखाई देती है और वह सच्चाई का पता लगाने के लिए त्रिवेन्द्रम जाती है। उसे मालूम होता है कि रघु को जेल में पीटा गया जिससे हो सकता है उसकी मृत्यु हो गई हो। जब वह वापस जाती है तो उसका बाप पागल हो चुका होता है और वह इस तरह आचरण करता है जैसे रघु उसे निकटता से दिखाई दे रहा हो।

निर्माण : एस. जयचन्द्रन नायर
निर्देशन/वेशभूषा : शाजी एन. करुण
पटकथा : एस. जयचन्द्रन नायर/रघुनाथ पलेरी/शाजी
छायांकन : सन्नी जोसेफ
ध्वनि आलेखन : कृष्णन ऊन्नी
संपादन : वेणु गोपाल
कला निर्देशन : देवन करुवत्तुमाना
संगीत निर्देशन : जी अरविन्दन
कलाकार : प्रेम जी/अर्चना/सी.वी. श्रीरामन/मुल्लेने/कृष्ण मूर्ति।

बाघ बहादुर

(हिन्दी/रंगीन/91 मिनट/1989)

घनुराम हर साल नोनपुरा के वार्षिक मेले में बाघ नृत्य पेश करता है। इसके लिए वह अपनी नौकरी तक की परवाह नहीं करता । ये कला उसने अपने बाप दादा से विरासत में पाई है और इस पर उसे गर्व है। नोनपुरा में वह ढोलवादक सिबल के साथ रहता है जो उसके नृत्य करने पर ढोल बजाता है। एक दिन घनुराम उसकी बेटी राधा से शादी करने की इच्छा प्रकट करता है। इस वर्ष नोनपुरा में तमाशे दिखाने वाला एक नया आदमी सांबा आया है जो अपने साथ नाचने वाली एक लड़की और कुछ हास्यकार भी लाया है। उसके पास पिंजरे में एक चीता भी है। गाँव वाले सांबा के तमाशे को ज्यादा पसंद करते हैं और राधा भी उस की तरफ आकर्षित होने लगती है। जोश में आकर घनु सांबा को ललकारता है और अपनी बहादुरी दिखाने के लिए चीते से पिंजरे में घुस जाता है। घनुराम को सामने पा कर चीता उत्तेजित हो उठता है और उसे अपना शिकार बना लेता है।

निर्माण/निर्देशक/पटकथा : बुद्धदेव दासगुप्ता
छायांकन : वेणु
ध्वनि आलेखन : ज्योति चट्टोपाध्याय
सम्पादन : उज्जल नन्दी
कला निर्देशन : निखिल बरण सेनगुप्ता
वेशभूषा : कुन्तला दासगुप्ता
संगीत निर्देशन : शान्तनू महापात्र
कलाकार : पवन मलहोत्रा /अर्चना/वासुदेव राव/राजेश्वरी राय चौधरी/स्वरेश।

मरुपक्कम

(तमिल/रंगीन/85 मिनट/1990)

यह फिल्म एक बाप और बेटे के बारे में हैं, जिनके जीवन में इतिहास दोहराया जाता है। अम्बी दिल्ली से अपने बीमार पिता वेम्बू अय्यर को देखने कुम्बकोनम पहुँचता है। वेम्बू अय्यर अपनी विद्वता और कठोरता के लिए प्रसिद्ध है। अम्बी अपने पिता को चुपचाप शान्त लेटे हुए देखता है तो उसे बहुत दुख होता है। अम्बी ने जब एक ईसाई लड़की से शादी की तो अय्यर ने उसे बहुत बुरा-भला कहा लेकिन जब उसे पता चला कि वे अलग हो गये हैं तो वह चुप हो गया। अम्बी अपने पिता के मुख से अपनी उस सौतेली माँ का नाम सुनता है जिसे इसलिए अय्यर को छोड़कर जाना पड़ा क्योंकि उसके संगीत प्रेम के कारण अय्यर की माँ परेशान होती थीं। जब उसने अदालत में अपने गुजारा खर्च के लिए मुकदमा दायर किया तो अपनी माँ की सलाह पर उसने उसके खिलाफ बदचलनी का आरोप लगाया। अय्यर का अतीत उसके मन में घूमने लगता है। क्या पति-पत्नी के अलग होने का अभिशाप उनके परिवार में अभी जारी है? अम्बी की मुलाकात एक बंगाली ईसाई लड़की स्वीटी से हुई और दोनों की शादी हो गई। हालांकि अय्यर ने ईसाई लड़की को स्वीकार करने से इंकार कर दिया लेकिन स्वीटी अम्बी के माता पिता से मिलने की इच्छुक थी। अम्बी अपने माँ-बाप से सम्बन्ध तोड़ने को तैयार नहीं हुआ, जिससे उनमें अनबन रहने लगी और स्वीटी ने उसे तलाक दे देने की धमकी दी। अम्बी का अतीत वापस लौटता है। जब अम्बी अपनी सौतेली माँ को बुलाने की बात करता है तो उसकी मौजूदा माँ गुस्सा होने लगती है। अम्बी को स्वीटी और अपनी इस माँ के दृष्टिकोण में कोई अन्तर नजर नहीं आता। अन्त में अम्बी का मित्र मूर्ति उसकी समस्यायें हल कर देता है।

निर्माण : राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम लि. और दूरदर्शन
निर्देशन/पटकथा : के.एस. सेतुमाधवन
छायांकन : डी. वसन्त कुमार
ध्वनि आलेखन : ए. स्वामीनाथन
सम्पादन : जी. वेंकटरामन
कला निर्देशन : बी. चलम
वेशभूषा : कुप्पूराज
संगीत : एल. वैद्यनाथन
कलाकार : शिव कुमार / जया भारती /शेखर/राधा

फिल्म फेअर - पुरस्कार : 1953 से 1991 तक

(सर्वोत्तम)	1953	1954	1955	1956
फिल्म	दो बीघा जमीन (बिमल रॉय)	बूट-पॉलिश (राज कपूर)	जागृति (एस. मुखर्जी)	झनक-झनक पायल बाजे (वी. शान्ताराम)
निर्देशन	दो बीघा जमीन (बिमल रॉय)	परिणीता (बिमल रॉय)	बिराज बहू (बिमल रॉय)	झनक-झनक पायल बाजे (वी. शांताराम)
अभिनेता	दिलीप कुमार (दाग)	भारत भूषण (श्री चैतन्य महाप्रभु)	दिलीप कुमार (आजाद)	दिलीप कुमार (देवदास)
अभिनेत्री	मीना कुमारी (बैजू बावरा)	मीना कुमारी (परिणीता)	कामिनी कौशल (बिराज बहू) (सीमा)	नूतन
संगीत	नौशाद (बैजू बावरा)	एस.डी. बर्मन (टैक्सी ड्राईवर)	नागिन (हेमन्त कुमार)	चोरी-चोरी (शंकर जयकिशन)
कहानी	-	औलाद (पंडित मुखराम शर्मा)	वचन सीमा (पं. मुखराम शर्मा)	(अमिय चक्रवर्ती)

सर्वोत्तम	1957	1958	1959	1960
फिल्म	मदर इंडिया (मेहबूब)	मधुमति (बिमल रॉय)	सुजाता (बिमल रॉय)	मुगल-ए-आजम (के. आसिफ)
निर्देशन	मदर इंडिया (मेहबूब)	मधुमति (बिमल रॉय)	सुजाता परख (बिमल रॉय)	(बिमल रॉय)
अभिनेता	दिलीप कुमार (नया दौर)	देव आनन्द (काला पानी)	राजकपूर (अनाड़ी)	दिलीप कुमार (कोहिनूर)
अभिनेत्री	नरगिस (मदर इंडिया)	वैजयन्तीमाला (साधना)	नूतन (सुजाता)	बीना राय (घूँघट)
संगीत	नया दौर (ओ.पी. नैय्यर)	मधुमति (सलिल चौधरी)	अनाड़ी (शंकर-जयकिशन)	दिल अपना और प्रीत परा[illegible] (शंकर-जयकिशन)
कहानी	नया दौर (अख्तर मिर्जा)	साधना (पं. मुखराज शर्मा)	सुजाता (सुबोध घोष)	मासूम (रुबी सेन)
संवाद	-	मधुमति (राजिन्दर सिंह बेदी)	पैगाम (रामानन्द सागर)	मुगल-ए-आजम (अमन/कमाल अमरोही/ वजहत मिर्जा/एहसान रिजवी)

सर्वोत्तम	1961	1962	1963	1964
फिल्म	जिस देश में गंगा बहती है (राज कपूर)	साहिब बीबी और गुलाम (गुरुदत्त)	बन्दिनी (बिमल रॉय)	दोस्ती (ताराचंद बड़जात्या)
निर्देशन	कानून (बी.आर.चोपड़ा)	साहिब बीबी और गुलाम (अबरार अल्वी)	बन्दिनी (बिमलरॉय)	संगम (राजकपूर)
अभिनेता	राजकपूर (जिस देश में गंगा बहती है)	अशोक कुमार (राखी)	सुनील दत्त (मुझे जीने दो)	दिलीप कुमार (लीडर)
अभिनेत्री	वैजयंतीमाला (गंगा-जमुना)	मीनाकुमारी (साहिब बीबी और गुलाम)	नूतन (बन्दिनी)	वैजयंतीमाला (संगम)
संगीत	घराना (रवि)	प्रोफेसर (शंकर जय किशन)	ताजमहल (रोशन)	दोस्ती (लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल)
कहानी	नजराना (श्रीधर)	राखी (के.पी. कोत्तरमक्कड़)	बन्दिनी (जरासंघ)	दोस्ती (बाणभट्ट)
संवाद	गंगा-जमुना (वजहत मिर्जा)	धर्मपुत्र (अख्तार-उल-इमान)	दिल एक मंदिर (अर्जुन देव रश्क)	दोस्ती (गोविन्द मुनीस)

सर्वोत्तम	1965	1966	1967	1968
फिल्म	हिमालय की गोद में (शंकर भाई हरी)	गाइड (देवआनन्द)	उपकार (विशाल पिक्चर्स)	ब्रह्मचारी (जी.पी. सिप्पी)
निर्देशन	वक्त (यश चोपड़ा)	गाइड (विजय आनन्द)	उपकार (मनोज कुमार)	आँखे (रामानन्द सागर)
अभिनेता	सुनील दत्त (खानदान)	देवआनन्द (गाइड)	दिलीप कुमार (राम और श्याम)	शम्मी कपूर (ब्रह्मचारी)
अभिनेत्री	मीना कुमारी (काजल)	वहीदा रहमान (गाइड)	नूतन (मिलन)	वहीदा रहमान (नील कमल)
संगीत	खानदान (रवि)	सुराज (शंकर जय किशन)	मिलन (लक्ष्मीकान्त-प्यारेलाल)	ब्रह्मचारी (शंकर-जयकिशन)
कहानी	वक्त (अख्तार मिर्जा)	गाइड (आर.के. नारायण)	उपकार (मनोज कुमार)	ब्रह्मचारी (सचिन भौमिक)
संवाद	वक्त (अख्तार उल-इमान)	गाइड (विजय आनन्द)	उपकार (मनोज कुमार)	सरस्वतीचन्द्र (अली रजा)
कॉमेडी	- -	मेहमूद (प्यार किए जा)	ओमप्रकाश (दस लाख)	जॉनीवाकर (शिकार)

सर्वोत्तम	1969	1970	1971	1972
फिल्म	आराधना (शक्ति सामन्त)	खिलौना (एल.वी. प्रसाद)	आनन्द (ऋषिकेश मुखर्जी एवं एन.सी. सिप्पी)	बेईमान (सोहन लाल कँवर)
निर्देशन	इत्तफाक (यश चोपड़ा)	सफर (असित सेन)	मेरा नाम जोकर (राज कपूर)	बेईमान (सोहनलाल कँवर)
अभिनेता	अशोक कुमार (आशीर्वाद)	राजेश खन्ना (सच्चा-झूठा)	राजेश खन्ना (आनन्द)	मनोज कुमार (बेईमान)
अभिनेत्री	शर्मिला टैगोर (आराधना)	मुमताज (खिलौना)	आशा पारेख (कटी पतंग)	हेमामालिनी (सीता और गीता)
संगीत	जीने की राह (लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल)	पहचान (शंकर-जयकिशन)	मेरा नाम जोकर (शंकर-जयकिशन)	बेईमान (शंकर-जयकिशन)
कहानी	आँसू बन गए फूल (लक्ष्मीकांत प्यारेलाल)	दो रास्ते (शंकर जयकिशन)	आनन्द (ऋषिकेश मुखर्जी)	अनुभव (वासु भट्टाचार्य)
संवाद	अनोखी रात (पं. आनन्द कुमार)	सत्यकाम (राजिन्दर सिंह बेदी)	आनन्द (गुलजार)	अमर प्रेम (रमेश पंत)
कॉमेडी	मेहमूद (वारिस)	आई.एस. जौहर (जॉनी मेरा नाम)	-	-

सर्वोत्तम	1973	1974	1975	1976
फिल्म	अनुराग (शक्ति सामन्त)	रजनीगंधा (सुरेश जिन्दल)	दीवार (गुलशन रॉय)	मौसम (मल्लिकार्जुन रॉव)
निर्देशन	दाग (यश चोपड़ा)	रोटी कपड़ा और मकान (मनोज कुमार)	दीवार (यश चोपड़ा)	मौसम (गुलजार)
अभिनेता	ऋषिकपूर (बॉबी)	राजेश खन्ना (आविष्कार)	संजीव कुमार (आँधी)	संजीव कुमार (अर्जुन-पंडित)
अभिनेत्री	डिम्पल कापड़िया(बॉबी) जया भादुड़ी (अभिमान)	जया भादुड़ी (कोरा कागज)	लक्ष्मी (जूली)	राखी (तपस्या)
संगीत	अभिमान (एस.डी. बर्मन)	कोरा कागज (कल्याणजी-आनन्दजी)	जूली (राजेश रोशन)	कभी-कभी (खय्याम)
कहानी	जंजीर (सलीम-जावेद)	गर्म हवा (इस्मत-चुगताई कैफी आजमी)	दीवार (सलीम-जावेद)	अर्जुन पंडित (डॉ. बलचन्द मुखर्जी)
संवाद नमक	हराम (गुलजार)	गर्म हवा (कैफी आजमी)	दीवार कभी-कभी (सलीम जावेद)	(सागर सरहदी)
कॉमेडी	असरानी (आज की ताजा खबर)	मेहमूद (वरदान)	देवेन वर्मा (चोरी मेरा काम)	असरानी (बालिका-वधू)
समीक्षक पुरस्कार	-	-	-	मृगया (मृणाल सेन)

सर्वोत्तम	1977	1978	1979	1980
फिल्म	भूमिका (ललित एम. बिजलानी)	मैं तुलसी तेरे आँगन की (राज खोसला)	जुनून (शशि कपूर)	खूबसूरत (एन. सी. सिप्पी और ऋषिकेश मुखर्जी)
निर्देशन	स्वामी (बासु चटर्जी)	शतरंज के खिलाड़ी (सत्यजीत रॉय)	जुनून (श्याम बेनेगल)	आक्रोश (गोविन्द निहलानी)
अभिनेता	अमिताभ बच्चन (अमर अकबर एन्थोनी)	अमिताभ बच्चन (डॉन)	अमोल पालेकर (गोलमाल)	नसीरूद्दीन शाह (आक्रोश)
अभिनेत्री	शबाना आजमी (स्वामी)	नूतन (मैं तुलसी तेरे आँगन की)	जया भादुड़ी (नौकर)	रेखा (खूबसूरत)
संगीत	अमर-अकबर-एंथोनी (लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल)	सत्यम् शिवम् सुन्दरम् (लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल)	सरगम (लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल)	कर्ज (लक्ष्मीकांत प्यारेलाल)
कहानी	स्वामी (शरत् चन्द्र)	घर (दिनेश ठाकुर)	दूरियाँ (डॉ. शंकर शेष)	आक्रोश (विजय तेंदुलकर)
संवाद	दुल्हन वही जो पिया मन भाए (राजेन्द्र गौड़)	मैं तुलसी तेरे आँगन की (राही मासूम रजा)	जुनून (सत्यदेव दुबे)	इंसाफ का तराजू (शब्द कुमार)
कॉमेडी	-	देवेन वर्मा (चोर के घर चोर)	उत्पल दत्त (गोलमाल)	
समीक्षक पुरस्कार	शतरंज के खिलाड़ी (सत्यजित राय)	अरविन्द देसाई की अजीब दास्तान (सईद मिर्जा)	जीना यहाँ (बासु चटर्जी)	अल्बर्ट पिन्टो को गुस्सा क्यों आता है। (सईद मिर्जा)

गोविन्द निहलानी की फिल्म आक्रोश में ओमपुरी

सर्वोत्तम	1981	1982	1983	1984
फिल्म	कलयुग (शशिकपूर)	शक्ति (मुशीर रियाज)	अर्धसत्य (मनमोहन प्रदीप कपूर)	स्पर्श (बासु भट्टाचार्य)
निर्देशन	उमराव जान (मुजफ्फर अली)	प्रेम रोग (राज कपूर)	अर्धसत्य (गोविन्द निहलानी)	स्पर्श (सई परांजपे)
अभिनेता	नसीरूद्दीन शाह (चक्र)	दिलीप कुमार (शक्ति)	नसीरूद्दीन शाह (मासूम)	अनुपम खेर (सारांश)
अभिनेत्री	स्मिता पाटिल (चक्र)	पद्मिनी कोल्हापुरे (प्रेम रोग)	शबाना आजमी (अर्थ)	शबाना आजमी (भावना)
संगीत	उमराव जान (खय्याम)	सनम तेरी कसम (आर.डी. बर्मन)	मासूम (आर.डी.बर्मन)	शराबी (भप्पी लाहिड़ी)
कहानी	कुदरत (चेतन आनन्द)	नमकीन (समरेश बासु)	अर्ध-सत्य (एस.डी. पलवनकर)	सारांश (महेश भट्ट)
संवाद	मेरी आवाज सुनो (कादर खान)	निकाह (अचला नागर)	अर्थ (महेश भट्ट)	स्पर्श (सई परांजपे)
कॉमेडी	उत्पल दत्त (नरम गरम)	देवेन वर्मा (अंगूर)	-	रवि वासवानी (जाने भी दो यारों)
समीक्षक पुरस्कार	आधार शिला (अशोक आहूजा)	मासूम (शेखर कपूर)	सूखा (एम.एस. सथ्यू)	खण्डहर (मृणाल सेन)

महेश भट्ट की फिल्म सारांश में रोहिणी - अनुपम खेर

सर्वोत्तम	1987	1988
फिल्म	राम तेरी गंगा मैली (रणधीर कपूर)	कयामत से कयामत तक
निर्देशन	राज कपूर (राम तेरी गंगा मैली)	मंसूर खान (कयामत से कयामत तक)
अभिनेता	कमल हासन (सागर)	अनिल कपूर (तेजाब)
अभिनेत्री	डिम्पल कापड़िया (सागर)	रेखा (खून भरी मांग)
संगीत	रवीन्द्र जैन (राम तेरी गंगा मैली)	आनंद मिलिंद (कयामत से कयामत तक)
कहानी	डॉ. अलीम मसरूर (तवायफ)	सुबोध घोष (इजाजत)
संवाद	डॉ. राही मासूम रजा (तवायफ)	-
कॉमेडी	अमजद खान माँ कसम	-
समीक्षक पुरस्कार	आघात (गोविन्द निहलानी)	ओम दरबदर (कमल स्वरूप)
पार्श्व गायिका	अनुराधा पौडवाल(उत्सव)	-
पार्श्व गायक	किशोर कुमार(सागर)	-

सर्वोत्तम	1991
फिल्म	घायल (निर्माता- धर्मेन्द्र)
निर्देशन	राजकुमार संतोषी (घायल)
अभिनेता	सनी देओल (घयाल)
अभिनेत्री	माधुरी दीक्षित (दिल)
संगीत	नदीम-श्रवण (आशिकी)
कहानी	राजकुमार संतोषी (घायल)
संवाद	सूरज सनीम (डैडी)
कॉमेडियन	कादरखान (बाप नम्बरी बेटा दस नम्बरी)
नई तारिका	पूजा भट्ट (1990 का खास चेहरा)
पार्श्व गायक	कुमार शानू (आशिकी)
पार्श्व गायिका	अनुराधा पौडवाल (आशिकी)
राजकपूर अवार्ड	अमिताभ बच्चन (फिल्म उद्योग को विशेष योगदान)
क्रिटीक अवार्ड	कुमार शाहनी (कस्बा)
गैर व्यावसायिक फिल्म से अभिनय	अनुपम खेर (डैडी)

☐ प्रस्तुति : आदर्श गर्ग

महाराष्ट्र राज्य अट्ठाइसवें मराठी फिल्म पुरस्कार 1991

सर्वोत्तम फिल्म : "आघात" वरद् चित्र, पुणे

निर्माता : श्री पद्माकर जातेगाँवकर

सौ. सुचित्रा कवठेकर

रुपए 50,000/- व प्रतीक चिन्ह। (दादा साहेब फालके पुरस्कार)

निर्देशक : रमाकांत कवठेकर, रुपए 15,000/- तथा प्रतीक चिन्ह

श्रेष्ठ फिल्म द्वितीयः " एकापेक्षा एक" तुलसी प्रॉडक्शन, मुंबई

निर्माता : सतीश कुलकर्णी, रु 30,000 व प्रतीक चिन्ह (बाबूराव पेंटर पुरस्कार)।

निर्देशक : सचिन पिलगाँवकर । रुपए 11,000/- व प्रतीक चिन्ह

श्रेष्ठ चित्रपट (तृतीय) : "कुलदीपक"। ईगल इंटरनेशनल एंटरप्राइजेस, मुंबई

निर्माताः एस. पी. अहलूवालिया । रुपए 20,000/- व प्रतीक चिन्ह (मास्टर विनायक पुरस्कार)।

निर्देशक : एन. एस. वैद्य। रुपए 7,000/- व प्रतीक चिन्ह।

सामाजिक समस्या प्रधान श्रेष्ठ फिल्म : " आघात"। वरदचित्र पुणे रुपए 30,000/- व प्रतीक चिन्ह।

श्रेष्ठ कहानी : रमाकांत कवठेकर। रुपए 5,000/- तथा प्रतीक चिन्ह। फिल्म "आघात"

श्रेष्ठ पटकथाः रमाकांत कवठेकर। रुपए 3,000/- व प्रतीक चिन्ह फिल्म "आघात"

श्रेष्ठ अभिनेताः प्रमोद पवार। रुपए 5,000/- तथा प्रतीक चिन्ह। (रुपए 1,000/- शिवाजी गणेशन पुरस्कार, फिल्म "आघात")

श्रेष्ठ अभिनेत्री : निवेदिता जोशी सराफ। रुपए 5,000/- व प्रतीक चिन्ह। फिल्म " तुझी माझी जमली जोड़ी"

विशेष अभिनेता : प्रशांत सुभेदार। रुपए 3,000/- व प्रतीक चिन्ह। फिल्म "कुलदीपक"।

विशेष अभिनेत्री : श्रीमती आशा पाटिल। रुपए 3,000 व प्रतीक चिन्ह। "थांब-थांब जाऊ नको लांब"

श्रेष्ठ गीतः रमण रणदिवे। रुपए 3,000/- चे.त्र.दि. माडगुलकर पुरस्कार व प्रतीक चिन्ह। फिल्म "आघात" (रोज नवा आघात...)

श्रेष्ठ संगीत निर्देशक : भास्कर चंदावरकर। रुपए 3,000/- व प्रतीक चिन्ह। फिल्म "आघात"।

श्रेष्ठ पार्श्व गायकः सुरेशवाडकर। रुपए 3,000/- व प्रतीक चिन्ह। फिल्म "आघात" (रोज नवा आघात ...)

श्रेष्ठ पार्श्व गायिका : अनुराधा पौडवाल। रुपए 3,000/- व प्रतीक चिन्ह। फिल्म "आमच्या सारखे आम्हीच"। (रात्र आहे रेशमाची येना ...)

श्रेष्ठ छायालेखक (रंगीन) : सूर्यकांत लवंदे। रुपए 3,000/- व प्रतीक चिन्ह। फिल्म "एक रात्र मंतरलेली"

श्रेष्ठ ध्वनि मुद्रकः प्रदीप देशपांडे । रुपए 3,000/- व प्रतीक चिन्ह। फिल्म "शेजारी-शेजारी"।

श्रेष्ठ संकलन : अशोक पटवर्धन। रुपए 3,000/- व प्रतीक चिन्ह। फिल्म 'एक रात्र मंतरलेली'।

श्रेष्ठ कला निर्देशक (रंगीन) : रमाकांत कवठेकर। रुपए 3,000/- व प्रतीक चिन्ह फिल्म आघात।

श्रेष्ठ वेशभूषा : प्रज्ञा भुरे। अनिल खन्ना व उदय टेलर्स। रु. 3,000/- व प्रतीक चिन्ह। फिल्म "आमच्या सारखे आम्हीच"।

श्रेष्ठ जाहिरात : कमल शेडगे। रुपए 3,000/- तथा प्रतीक चिन्ह। फिल्म "एक रात्र मंतरलेली"।

श्रेष्ठ नृत्य निर्देशक : माधव किशन तथा विजह बोराड़े। रु. 3,000/- व प्रतीक चिन्ह। फिल्म "आमच्या सारखे आम्हीच"।

श्रेष्ठ बाल कलाकार : आराधिता। रुपए 3,000/- तथा प्रतीक चिन्ह। फिल्म कुलदीपक।

श्रेष्ठ रंगभूषाकार : मोहन पाठारे, रुपए 3,000/- तथा प्रतीक चिन्ह। फिल्म एकापेक्षा एक।

☐ **प्रस्तुति : जगदीश कुमार निर्मल**

सुगम संगीत की सौगात : लता मंगेशकर सम्मान

☐ डॉ. सिद्धनाथ शर्मा

सुगम संगीत लोक संस्कृति का वह मुखरित स्वर है, जो भारतीय लोक जीवन और देश की माटी से अविच्छिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। खेत में हल जोतता हुआ किसान। कारखानों में कल चलाते हुए मजदूर। गाँव-गाँव, झोपड़ियों में तीज-त्यौहार मनाते भोले भाले ग्रामवासी/पर्वों पर गाते, मचलते, झूमते हुए आदिवासियों के समूह। और शहरों के संभ्रात परिवारों, विश्वविद्यालयों और शिक्षा संस्थानों में सहज ही गुनगुनाते हुए युवा मानस के संवेदनशील स्वर फूट पड़ते हैं,जो धुनें कानों के रास्ते से उतर कर दिल को छू लेती हैं, वह सब सुगम संगीत हैं।

सुगम संगीत लोक संस्कृति की अविरल धारा है, जो अनादिकाल से विविध रूपों में पारम्परिक रूप से चली आ रही है। सुगम संगीत की यह धारा सदैव अपने युग, काल और समय की विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक विचारधाराओं से प्रभावित होकर नया रूप धारण करती रही हैं। इसीलिए सुगम संगीत को परिभाषित करना दुष्कर कार्य है। यह व्यापक इतना है कि उसे सकारात्मक दृष्टिकोण याने अमुक-अमुक संगीत की परिधि में आते हैं, यह कहना यदि कठिन है तो नकारात्मक याने इस को छोड़कर सब कुछ सुगम संगीत है, यह बता पाना और भी मुश्किल है। मोटे तौर पर कहा जा सकता है कि जो शुद्ध शास्त्रीय या परम्परागत नहीं है वह सुगम संगीत है। सुगम संगीत के लिए कोई सीमाओं का बंधन नहीं हैं जैसा कि शास्त्रीय संगीत में होता है। सुगम संगीत की धुनों पर शास्त्रीय संगीत की छाप हो सकती है। लोक संगीत से यह प्रमाणित हो सकता है या यो कहें राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय संगीत लहरों को भी यह अपने में समेट लेता है। कंठ संगीत का रूप चाहे वह गीत, नज्म, गजल नात, कव्वाली, सुफियाना कलाम, पॉप, म्यूजिक, डिस्को म्यूजिक, नाट्य संगीत हो या शास्त्रीय रागों पर आधारित अथवा मुजरा गीत हो सब कुछ सुगम संगीत का ही क्षेत्र है। कोई भी गीत चाहे वह फिल्मी हो या गैर-फिल्मी सभी को सुगम संगीत की श्रेणी में माना जाना चाहिए।

स्वर कोकिला : लता मंगेशकर

सुगम संगीत की सबसे प्रमुख कसौटी लोकप्रियता हैं। यद्यपि 'लोकप्रिय' को पारिभाषित करना मुश्किल है। शास्त्रीय संगीत को भी कम लोकप्रिय नहीं कहा जा सकता। लोकप्रिय शब्द व्यापक है इसलिए यों भी कहा जा सकता है कि सुगम संगीत की हर धुन में अनूठापन, नयापन और आकर्षण होता है। संगीत निर्देशक, गायक या गायिका अथवा वाद्यवृन्द संचालक ये सभी अपने-अपने ढंग से सुगम संगीत का सृजन करते है। इस सृजन में उनकी अपनी कल्पनाशीलता, सृजनात्मकता और विविधता की मौलिक छाप अनिवार्य अंग होती है। सुगम संगीत इतना व्यापक है कि जीवन के हर क्षेत्र को स्पर्श कर लेता है इसलिए इस क्षेत्र के गायक, संगीत-निर्देशक को संगीत के प्रत्येक क्षेत्र की पूरी पकड़ होना जरूरी है। चाहे कर्नाटक संगीत हो या उच्च भारतीय संगीत, चाहे आदिवासी लोक

लता मंगेशकर अवार्ड

1984	: संगीतकार नौशाद अली
1985	: किशोर कुमार (गायक-अभिनेता)
1986	: संगीतकार जयदेव
1987	: मन्नाडे (गायक)
1988	: संगीतकार खैय्याम
1989	: आसा भोसले (गायिका)
1990	: संगीतकार लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल
1991	: येसुदास (गायक)

हो या पाश्चात्य संगीत, सभी क्षेत्रों में दखल रखने वाला ही सुगम संगीत के क्षेत्र में यशस्वी बन सकता हैं। विविध प्रकार के सफल प्रयोग सुगम संगीत में होने ही चाहिए। यही उसकी कसौटी है। सभी प्रकार के भारतीय और पाश्चात्य संगीत **लता मंगेशकर** से लेकर **साधना सरगम** तक की आवाजों की क्षमता, बेगम अख्तर से लेकर पीनाज मसानी तक की गजल शैली, जूथिकाराम से लेकर रघुनाथ पाणिग्रही या अनुप जलोटा तक की भजन शैली तथा सामवेदिक वीणा, वेणु, मृदंग से लेकर एकदम आधुनिक बोकाकारडर जैसे वाद्य यंत्रों तक की पकड़ सुगम संगीत की सफलता है। अन्तरिक्ष युग की इस धकापेल में, जबकि देश, समय और कला की सीमाएं समाप्त हो और मानव जीवन का यंत्रीकरण हो गया हो तब सुगम संगीत ही मानव चेतना को विश्रान्ति देकर तनाव मुक्त करने में समर्थ है।

सुगम संगीत शाश्वत हैं। अमर हैं। सार्वकालिक और सार्वजनीन है। आप चाहे किसी भाषा, धुन स्वर या संयोजन के जानकार हो या न हों सुगम संगीत पर वह आपको अपनी और आकर्षित कर सुनने के लिए बाध्य कर देगा। इस दृष्टि से सुगम संगीत हमारे जीवन का अनिवार्य अंग बनता जा रहा है। लोकतंत्रिक अभिव्यक्ति का सबसे सबल मानदण्ड सुगम संगीत ही है।

सुगम संगीत के इसी लोकव्यापी स्वरुप को रेखांकित करने मध्यप्रदेश शासन ने विश्वविख्यात सुगम गायिका लता मंगेशकर के नाम पर जो इन्दौर (मध्यप्रदेश) में ही जन्मी और पली हैं, देश का इस क्षेत्र में सबसे बड़ा और एक मात्र पुरस्कार स्थापित कर यह घोषणा की कि भारतीय भाषा के किसी भी गायक, वादक अथवा संगीत रचनाकार को प्रतिवर्ष इस राष्ट्रीय सम्मान से विभूषित किया जाएगा। पुरस्कार की घोषणा 4 दिसम्बर को इन्दौर में की गई थी। इन्दौर ही लताजी की जन्मस्थली है इसलिए प्रतिवर्ष 4 दिसम्बर को अलंकरण समारोह इन्दौर में आयोजित करने का निश्चय किया गया। समारोह को सुनियोजित और लोकप्रिय बनाने के लिए विशेषज्ञों की आयोजन समिति गठित की गई और तीन दिवसीय सुगम समारोह की शुरूआत हुई।

सुगम संगीत का यह राष्ट्रीय सम्मान अब प्रतिष्ठा और ख्याति प्राप्त कर चुका है। पुरस्कार के लिए देश के वरिष्ठ कलाकारों, विशेषज्ञों और समीक्षकों की एक उच्च स्तरीय जूरी समिति राज्य शासन द्वारा गठित की जाती है। इस समिति के समक्ष देश भर के कला मर्मज्ञों से पुरस्कार के लिए अनुशंसित कलाकारों के नामांकन प्रस्तुत किए जाते है। जूरी उन पर विचार कर निर्विवाद मानदण्डों के आधार पर सर्व सम्मति से कलाकार का चयन करते हैं। 1984 में संगीत निर्देशक **नौशाद,** वर्ष 1985 में गायक स्व. **किशोर कुमार,** 1986 में रचनाकार **स्व. जयदेव,** 1987 में गायक **मन्नाडे** और 1988 में संगीत रचनाकार **खैय्याम** को और 1989 में प्रख्यात गायिका **आशा भोसले** को और 1990 में संगीतकार **लक्ष्मीकान्त-प्यारेलाल** को इस राष्ट्रीय सम्मान से अलंकृत किया गया है। जूरी समिति ने वर्ष 1991-92 के पुरस्कार के लिए प्रख्यात एवं लोकप्रिय गायक **येशुदास** के नाम की अनुंशसा की जिसे राज्य शासन ने स्वीकार किया और येसुदास को इस बार देश के सर्वोच्च सुगम सम्मान से विभूषित करने का निर्णय लिया है।

संगीतकार लक्ष्मीकांत- प्यारेलाल

● **खण्ड छ : फिल्म इतिहास**

हिन्दी सिनेमा के अस्सी साल : रुके-रुके से कदम

□ प्रभुनाथसिंह आजमी

भारतीय सिनेमा की अस्सी साल की यात्रा अवरुद्ध तथा विकसित स्थितियों की विचित्र-सी विडम्बना का नाम है। सन् 1913 में धुन्डीराज गोविन्द फालके ने जब पहला भारतीय छायाचित्र (राजा हरिशचन्द्र) बनाया था उस वक्त फिल्म की कथ्यहीनता तकनीकी विवशता थी। चित्रों को चलते-फिरते रूप में परदे पर रख पाना तो सम्भव हो गया था लेकिन उसके साथ आवाज दे पाना उस वक्त सम्भव नहीं हो पाया था। आज अस्सी साल बाद ज्यादातर फिल्मों का कथ्यहीन होना तकनीकी उत्कृष्टता के मारे सम्भव नहीं हो पाता। शुरू की फिल्मों में कहने को बहुत कुछ था लेकिन नयी भाषा (सिनेमा की भाषा) के अनजाने के कारण केवल कुछ अंश ही सम्प्रेषित हो पाते थे। आज तकनीकी उत्कृष्टता ने लगभग बोलती ही बन्द कर रखी है।वैसे सिनेमा की पूरी उम्र चार साल कम एक सदी है। यानी दुनिया में इस वैज्ञानिक अजूबे की पूरी उम्र से हम केवल दस साल छोटे हैं। लेकिन इस भाषा को हम लगभग खिलौने की तरह खेलते रहे। जिसके चलते न तो इस विधा का विकास हुआ और न हम ही वयस्क हो पाये। बहुत थोड़े से लोगों ने इस तरह की कोशिश जरूर की कि सिनेमा एक कला की तरह विकसित हो सके। लेकिन जैसा कि हमारे चरित्र में ही लगता है कि सामूहिक उत्तरदायित्व के प्रति हम लगभग निश्चेत रहे है और कई बार व्यर्थ के अंहकारों के चलते एस दूसरे के साथ मिलकर चीजों को बेहतर बनाने के बजाय उन चीजों के ही खिलाफ हो जाते हैं। अन्ततः वह हमारा ही नुकसान साबित होता है। सिनेमा वैसे भी अकेले का काम नहीं हैं। इसमें ढेर सारे लोगों की अपने-अपने क्षेत्रों की दक्षता सामूहिक रूप से सामने आती है जो सिनेमा की उत्कृष्टता के रूप में स्थापित होती है। मूल रूप से सिनेमा वैज्ञानिक, कलाकार और व्यवसायी की सामूहिक इच्छाओं का वह शाहकार है जो तीनों के अन्तर्विरोधों के बावजूद तथा कारण से सम्भव हो पाता है। ऊपरी तौर पर देखा जाये तो इन तीनों में एक विचित्र किस्म का टकराव है

भारत की पहली कथा फिल्म : राजा हरिश्चन्द्र (1913)

लेकिन भीतर से इन के अन्तर्सम्बन्ध इतने मजबूत है कि इस अन्तर्द्वन्द में एक अजीब-सी सृजन की सम्भावना स्वयं पैदा हो जाती है।

वैज्ञानिक अजूबे की तरह निर्मित तथा प्रदर्शित चलचित्र हिन्दुस्तान में उसी रास्ते आया जिस रास्ते इससे पूर्व की तमाम लोकप्रिय चीजें जन मानस में पहुँची। मिथकों की कथाएँ रामायण, महाभारत तथा गीता के अनेक पात्र भारतीय लोक मानस में इतने रच बस गये थे कि उन्हें केवल दिखा भर देना पर्याप्त था। बाकी की कथा दर्शक खुद जानता था। इन पात्रों को रजतपट पर हिलते-डुलते देखना दुहरा सुख था। एक और एक अजूबा उभर रहा था, दूसरी ओर जाने-पहचाने आस्था के बिन्दु थे, जो केवल आख्यानों में शब्दों तक सीमित थे या मंचों तक बँधे थे। उनके लिए सीम-असीम-सी एक ऐसी स्थिति सम्भव नहीं थी, जो बेहद करीब और सामने हो, और दिव्य स्तर तक अनुपलब्ध भी हो। सिनेमा ने यह कर दिखाया और जीवन में शास्त्री बनने की आकांक्षा वाले सिनेकार बनने वाले दादा साहब फालके ने इसके इसी पक्ष को इस्तेमाल किया।

लेकिन लगातार दोहराव और मौलिकता के अभाव से हर चीज अरुचिकर हो जाती हैं। जैसे कि *राजा हरिशचन्द्र, लंकादहन, कृष्णजन्म,सावित्री, भस्मासुर मोहिनी, कालियामर्दन* इत्यादि। यद्यापि ये फिल्में भी कमोबेश इसी धरती का दोहन कर रहीं थीं जिस पर विदेशी फिल्में *लाइफ ऑफ क्राइस्ट, द गॉड ऑफ दि सन, या द मिस्ट्री ऑफ एडविन ड्रूड* इत्यादि थीं। पर विकास और बदलाव के क्रम में नये नाम जुड़े और अपनी अलग-अलग पहचानों के साथ जुड़े। व्यंग चित्रों के लिए धीरेन गांगुली, सामाजिक फिल्मों के लिए चन्दूलाल शाह तथा राजनीतिक फिल्मों के लिए देवकी बोस।

सन् 1912 से 1920 के बीच का समय उन खामोश फिल्मों का समय था जिसमें सिनेमा बनाने वालों के लिए एक वैज्ञानिक आविष्कार तथा देखने वालों

भारत की पहली बोलती फिल्म आलमआरा (1931)

के लिए एक अजूबे के अतिरिक्त कुछ नहीं था। लेकिन 1920 से 1931 के बीच का समय भारतीय फिल्मकारों को यह बताने में सफल तो हो गया कि सिनेमा में बहुत सम्भावनाएँ हैं, जिसके चलते *पृथ्वीवल्लभ, सिंहगढ़* आदि ऐतिहासिक चित्र इंग्लैण्ड रिटर्न द *लेडी टीचर, द मैरिज टॉनिक*जैसी व्यंग्य फिल्में,*कन्या विक्रम, नवी सेठानी, आजकल की बेटियाँ*जैसे सामाजिक समस्या प्रधान चित्र, *कालानाग*जैसे जासूसी चित्र, *शीरी-फरहाद लैला-मजनू, अनारकली, द लव ऑफ मुगल प्रिंस* जैसे प्रेम-पूर्ण चित्र, *टेलीफोन गर्ल, टायपिस्ट गर्ल, बम्बई की बिल्ली, अलादीन* इत्यादि हल्के स्तर के मनोरंजक चित्र तथा साहित्य पर आधारित के.एम. मुंशी का *पृथ्वीवल्लभ*, बंकिम बाबू का *कृष्णकान्त की वसीयत*, रवीन्द्रनाथ टैगौर का *त्याग तथा विसर्जन*जैसी फिल्में बनी और प्रदर्शित हुई। मूक फिल्मों के युग की सर्वश्रेष्ठ प्रस्तुतियाँ उसी कालखण्ड में प्रदर्शित हुई लेकिन इसी कालखण्ड में विश्व के अन्य देशों में सिनेमा को लेकर जिस प्रकार की चिन्ता "ग्रिफिथ, आयजन्सटाईन, पुडोवकिन, ड्रेयर और फलैहर्ती जैसे फिल्मकारों ने उसी तरह की कोशिश हमारे यहाँ नहीं हुई। हमारे यहाँ सिनेमा का गणित बिलकुल सीधा था। माल बनाओ और बेचो। इसी रास्ते जो उत्कृष्टता हासिल हो जाए उसे ही बहुत समझा गया।

सन् 1931 से फिल्में बोलने लगी। बम्बई के मैजेस्टिक सिनेमा में 14 मार्च, 1931 को आर्देशिर ईरानी की फिल्म *आलमआरा* से फिल्मों ने बोलना शुरू किया। गौर करने लायक बात है कि जब फिल्में बोलती नहीं थी, तो पहली फिल्म थी *राजा हरिशचन्द्र* यानी धर्म में बोलने की ज्यादा गुंजाइश नहीं होती और वहाँ केवल स्वीकार होता है: लेकिन जैसे ही आप इतिहास से जुड़ते हैं, बोलने लगते हैं। *राज हरिशचन्द्र* और *आलमआरा* के बीच इसी तरह का संबंध स्थापित होता है। आवाज ने सिनेमा में प्रवेश करते ही सम्भावनाओं का आकाश खोल दिया। जिसके सब से पहले और सब से ज्यादा संगीत ने हमला बोला। भारतीय परिवेश में मनुष्य के पृथ्वी पर आने से लेकर उस के अनन्त में विलीन होने तक जिस तरह संगीत हावी है इस तरह स्वरों में स्वीकृत कोई और तरीका रेडिमेड नहीं था। नतीजतन *लैला-मजनू, शकुन्तला* जैसी फिल्में बनी जिसमें 22 और 41 गाने थे। जिससे चलते रंगमंच के अदाकारों के भाव बढ़ गए और संगीत निर्देशकों और गायक अभिनेताओं का महत्व बढ़ गया। यह एक अलग तरह का विचलन था जिसके चलते एक नई कला फिल्मों में दाखिल तो हो गई पर सिनेमा की अपनी मौलिक कला दब गई। गीत, संगीत, नृत्य, अभिनय, लेखन इत्यादि कलाओं की जमावट तो होने लगी, लेकिन फिल्म की तकनीक, उसका अपना सौन्दर्यशास्त्र कैमरे का सृजन इत्यादि पर कोई रेखांकित करने लायक श्रृंखला नहीं बन पायी। बोलती फिल्मों के शुरूआती दिनों में जिन

लोगों ने सिनेमा को स्थापित किया उन में हिमांशु राय (बाम्बे टॉकीज), चन्दूलाल शाह (रणजीत फिल्म कम्पनी), वाडिया ब्रदर्स , वी. शान्ताराम, महबूब खान,सोहराब मोदी, किशोर साहू, विजय भट्ट, चेतन आनन्द, जागीरदार, कारदार, पी.सी. बरुआ, देवकी बोस, नितिन बोस, फणी मजूमदार, किदार शर्मा, विमल रॉय, एल. वी. प्रसाद और एस.एस. वासन जैसे लोगों का नाम आता है । इन लोगों के सामूहिक प्रयासों से यह तो लगभग तय हो गया कि सिनेमा में एक उद्योग बनने की पूरी सम्भावनाएँ है और इन लोगों ने इसे साबित भी कर दिया था । फिर भी कलाओं के सामूहिक स्वरूप को जिस मौलिक सौन्दर्यशास्त्र की आवश्यकता थी वह इक्का-दुक्का फिल्म निर्देशकों में कभी-कभार केवल संयोग की तरह नजर आया । इन में किसी खास किस्म का मौलिक आग्रह नजर नहीं आया जिसके चलते सिनेमा केवल धन्धे की तरह आगे बढ़ा और धन्धे में जिस तरह उत्पादन अपने आप परिष्कृत होता जाता है, उसी तरह फिल्मों में एक व्यावसायिक परिष्कार नज़र आता गया जिसे कलात्मक उत्कृष्टता कहना सम्भव नहीं हैं । एक तरफ बम्बई में सिनेमा को व्यापार और विज्ञान के बीच विदेशों से आयातीत नुस्खों से चूँ-चूँ का मुरब्बा बनाने की कोशिश चल रही थी तो दूसरी और कलकत्ता में साहित्य को सिनेमा में बदलने की जिद छाई हुई थी, जिस के चलते सिनेमा शब्दों का अनुवाद बनता जा रहा था । कैमरे की आँख का कोई परिष्कृत व्याकरण वहाँ भी नहीं उभर पा रहा था । मद्रास ने तो परिवार, मियाँ-बीबी और बच्चों के बीच सिनेमा का वह पारिवारिक संस्करण विकसित कर दिया जो घरेलू बाजार में हर घर की जरूरत की तरह बेचा और खरीदा जाने लगा । यह समय 1933 से 1952 तक का था, जिसने शुरू से ही लगभग यह बता दिया कि बंगाल अपनी फिल्मों में विनम्र, सुशील और संयत रास्ता अख्तियार करेगा और वही सिलसिला अभी तक बना हुआ । इस युग की देवकी बोस की *पूरन भगत, राजरानी मीरा, नर्तकी, अपना घर* या पी.सी. बरुआ की *देवदास, मंजिल, माया, रूपरेखा, अधिकार, जवाब* और *जिन्दगी* नितिन बोस की *चण्डीदास,* फणि मजूमदार की *स्ट्रीट सिंगर,* अमर मलिक की *हमराही* है । जायका बदलने के नाम पर कुछ सामाजिक फिल्में भी आई, जो पूरी तरह सामाजिक न होकर सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति के मेलजोल से पैदा हुई फिल्में

फिल्म विद्यापति : छायादेवी , पहाड़ी सान्याल और पृथ्वीराज

स्वरें का संगम : कुन्दनलाल सहगल - खुर्शीद फिल्म तानसेन

हैं जैसे देवकी बोस की *आफ्टर दि अर्थ क्वैक उर्फ इन्कलाब* , नितिन बोस की *डाकू मंसूर* और *धरती माता* आदि । इन फिल्मों ने कोई चलन नहीं बनाया । केवल एक फिल्म *देवदास* के बारे में जानकर विचित्र लगता है कि इस फिल्म के प्रदर्शन के साथ ही लगातार एक हफ्ते में पन्द्रह आत्महत्याओं के मामले दर्ज हुए जो निराश प्रेमियों ने *देवदास* देखकर की थी जिसके चलते इस फिल्म का प्रदर्शन ही रोक दिया गया । यह बात 1935 की है और इसमें कोई ताज्जुब नहीं कि यदि 1995 में भी देवदास फिर से बनाई जाये तो इस बार पन्द्रह हजार आत्महत्याएँ हो जाएँ। इसे विकास समझें या पराभव ।

सन् 1931 से 1952 तक का हिन्दी सिनेमा का समय किसी विकास अथवा उत्कृष्टता की खोज में इस्तेमाल हुआ समय नहीं हैं बल्कि अंधेरे में तीर मारते हुए हर तरह के विषयों पर फिल्में बनाते हुए दर्शकों की जमात टटोलने की कोशिश का नाम है । अगर गम्भीरता से सिनेमा को देखने वाली नज़रें तलाश की जाएँ, तो कलकत्ता में काम कर रहे सिनेकार अधिक जागरुक नजर आते हैं । लेकिन उनके साथ दिक्कत यह रही कि उनकी फिल्में विषय की संवेदनशीलता के साथ तो न्याय कर लेती थीं पर खुद सिनेमा के साथ अन्याय हो जाता था । बम्बई के सिनेकार सिनेमा में उठापटक कर रहे थे लेकिन अपने विषय के प्रति जरा लापरवाह नजर आते थे । मद्रास के सिनेकार सिनेमा को भी साधारण बिकाऊ किताब की तरह इस्तेमाल करने में लगे थे और नतीजतन सिनेमा के विकास की कोई सही प्रक्रिया नहीं बन पाई और न ही सिनेमा बनते वक्त किसी तरह की स्वतः स्फूर्त अवधारणा ही स्थापित हो पायी । न्यू थियेटर्स के निर्देशकों ने अधिकांश

तीस के दशक की लोकप्रिय जोड़ी : ई. बिलिमोरिया और माधुरी

फिल्में बंगाल के साहित्य के फिल्मी रूपान्तरण में बनायी और एक विशेष दर्शक वर्ग भी जुटाया। इन फिल्मों ने समाज का एक खास तरह का मैनरिज्म तो अपना लिया, लेकिन तकनीकी दृष्टि से धीमेपन को कला के प्रतीक की तरह स्थापित करने की कोशिश की। उधर बम्बई में विभिन्न विषयों को सिनेमा में इस तरह इस्तेमाल किया जा रहा था जैसे एक पुतले को रंगबिरंगा कपड़ा पहना कर कपड़ा बेचने की कोशिश की जा रही हो। जिसमें सामाजिक, ऐतिहासिक धार्मिक, जासूसी, स्टण्ट तमाम हथकंडे शान्ताराम से लेकर सोहराब मोदी तक ने आजमाये। इनमें अपने-अपने रास्ते से फिल्म में स्थापित होने की कोशिश तथा अपनी अलग पहचान बनाने की जिदें तो नजर आती है लेकिन विषय की वास्तविकता, व्यावहारिकता, उपयोगिता, अर्थवत्ता की विशेष चिन्ता अथवा सिनेमा को लेकर किसी विशेष दृष्टि का आग्रह नहीं ही मिलता। फिर भी अपने लिए स्थापित मानदण्डों तथा विषय के प्रति एक स्पष्ट रुचि को लेकर जिन लोगों ने इस दौर में सब से अधिक आकृष्ट किया उनमें ख्वाजा अहमद अब्बास, मेहबूब खान, शान्ताराम, किदार शर्मा, चेतन आनन्द तथा किशोर साहू जैसे नाम है जिन लोगों ने सीमित साधनों तथा विकासशील सिनेमा के युग में मौलिकता का परिचय दिया।

कलकत्ता में अपने अच्छे प्रयासों के बावजूद विफल हिमांशु राय अन्ततः बम्बई आये और बाम्बे टॉकीज की स्थापना की। जिस में उन्होंने निर्देशक, कैमरामैन, साउण्ड इंजीनियर और आर्किटेक्ट जैसे तकनीकी सहयोग के लिए दक्ष विदेशी लोगों को लिया और *जवानी की हवा* नामक फिल्म बनायी। फिल्म चली और इसके चलते ही *अछूत कन्या* जैसी ऐतिहासिक अर्थ की फिल्म सामने आयी। इस फिल्म ने आर्थिक सफलता और कलात्मक उत्कृष्टता के बीच पनप रहे विरोधाभास को ध्वस्त किया और इन दोनों के स्थितियों के बीच नये समीकरण की स्थापना की जिसके बाद *कंगन, बंधन, पुनर्मिलन, वसंत, किस्मत, हमारी बात, तेरे घर के सामने, मिलन, मजदूर, महल* इत्यादि इस दौर की बहुचर्चित और व्यावसायिक दृष्टि से अत्यधिक सफल फिल्में थी। अमिय चक्रवर्ती निर्देशित *किस्मत* प्रथम सफल अपराध फिल्म थी जिसने कलकत्ता के एक ही छबिगृह में लगातार तीन साल चलने का रिकार्ड बनाया था। एक तरफ बॉम्बे टॉकीज अपनी विभिन्न विषयों पर आधारित फिल्मों के माध्यम से सिनेमा और स्वयं को समृद्ध करने में लगा था तो दूसरी ओर इम्पीरियल और रणजीत फिल्म कम्पनियाँ थीं। इम्पीरियल ने *किसान-कन्या* और *मदर इण्डिया* जैसी महत्वपूर्ण फिल्में बनायी तो दूसरी ओर रणजीत कम्पनी ने अलग फिल्मास्वादों के लिए *तूफ़ानमेल, गुणसुन्दरी, अछूत, भक्त सूरदास, तानसेन* जैसी फिल्में प्रमुख रूप से बनायी। किदार शर्मा भी दो चर्चित फिल्में निर्देशित कर चुके थे *विकन्या* और *जोगन*। सोहराब मोदी रंगमंच छोड़कर फिल्मों में आये लेकिन उन्होंने सिनेमा के पर्दे का इस्तेमाल भी रंगमंच की ही तरह किया। जिसके लिए उनके पसंदीदा विषय इतिहास के रास्ते ही आते थे। उनकी सफल फिल्म थी *हैमलैट उर्फ खून का खून* और दूसरी महत्वपूर्ण फिल्म थी *पुकार*। *पुकार* की सफलता से उत्साहित होकर उन्होंने *सिकन्दर* भी बनाई और इसी क्रम में *पृथ्वीवल्लभ* भी। लेकिन *पृथ्वीवल्लभ* अन्ततः सोहराब मोदी की अतिनाटकीयता की शिकार हो गयी। सोहराब मोदी के समानान्तर मेहबूब उभरे। अपनी पहली ही फिल्म *एक ही रास्ता* से चर्चित हो गये। और इसके तुरन्त बाद *औरत* फिल्म सामने आयी। *मिट्टी की महक* का भारतीय परिवेश में इतना खूबसूरत इस्तेमाल था कि इस फिल्म की सफलता से अभिभूत होकर महबूब ने *मदर इंडिया* नाम से उसका पुनर्निर्माण किया जिसका किसी न किसी रूप में पुनर्निर्माण दर पुनर्निर्माण होता रहा। *रोटी* अधिकार के लिए लड़ाई की कहानी थी और इस तरह मेहबूब एक विशेष तर्ज के फिल्मकार के रूप में ज्यों ही रेखांकित होने को थे कि उन्होंने अपने लिए फिर घालमेल विषय तलाशने शुरु कर दिए जो टुकड़ो में सफल तो हुए लेकिन दिशा दृष्टि के रूप में पूरा काम ठहरा हुआ ढूह बन कर रह गया। इसमें किसी तरह की रवानी नज़र नहीं आयी। यथा *नजमा, तकदीर, हुमायूँ, अनमोल घड़ी, एलान, नतीजा, अन्दाज*। इन दोनों चलनों के विरूद्ध एक बागी नजरिया तथा सोचने वाले मनोरंजन की इच्छापूर्ति के लिए वाडिया ब्रदर्स ने *लाल ए यमन, हण्टरवाली, नौजवान, थीफ ऑफ बगदाद* और *तूफानी टार्जन* जैसी फिल्में बनायीं जो अपनी कीमत के साथ थोड़ा बहुत मुनाफा दे जातीं थीं और वाडिया ब्रदर्स एक नये खेल में मसरूफ हो जाते थे। इन्होंने एक सामाजिक फिल्म *मेला* भी बनाई थी जिसमें दिलीपकुमार और नर्गिस ने एक प्रणय-गाथा को परदे पर कारूणिक ढ़ंग से प्रस्तुत किया था। फिल्म ठीक-ठाक चली भी लेकिन वाडिया वालों को खुद ही यह खेल रास नहीं आया।

दृष्टि और बौद्धिक आवश्यकताओं के बीच कला को रंग तथा अन्तर्वस्तु की सामूहिक सम्पन्नता में विश्वास करने वाले जिस फिल्मकार को अपनी तरह का अकेला मानसिकता का धनी कहा जा सकता था वे थे वी. शान्ताराम। नितान्त व्यवहार में आने वाली स्थितियों को कैमरे और कल्पना के मेल से एक नयी अनुभूति में बदल देने वाले शान्ताराम ने *पर्वत पर अपना डेरा, डॉ. कोटनीस की अमर कहानी, दहेज, परछाई* जैसी रेखांकित करने लायक फिल्में दीं। इसके अतिरिक्त टुकड़ों में कारदार की *शारदा, कानून*, किशोर साहू की *कुँआरा बाप* किदार शर्मा की *चित्रलेखा* तथा *सुहागरात*, चेतन आनन्द की *नीचा नगर*, ख्वाजा अहमद अब्बास की *धरती के लाल*, अमिय चक्रवर्ती की *पविता*, रमेश सहगल की *फिर सुबह होगी*, कृष्ण चोपड़ा की *हीरामोती* और राजकपूर की *आग* फिल्में प्रमुख हैं। जिनमें से चेतन आनन्द, ख्वाजा अहमद अब्बास और राजकपूर ने सिनेमा के लिए आगे के रास्ते न केवल खोले बल्कि उन पर चलकर दिखाया भी। चेतन आनन्द की *नीचा नगर* ने कान फिल्म समारोह में ग्रॉं प्रि पुरस्कार प्राप्त किया। फिर भी कुल मिलाकर फिल्म पैसा कमाने के लिए एक विशेष उद्योग की तरह ही देखी और समझी जा रही थी। यद्यपि आर्थिक महत्व को रेखांकित किए बिना फिल्म निर्माण सम्भव नहीं था तो भी इसी दौर में दो तरह के फिल्म बनाने वाले साफ-साफ निर्देशक सामने आ रहे थे जिसमें एक पक्ष सिनेमा में कहानी को सब से महत्वपूर्ण तथ्य मानकर चल रहा था जिसमें ज्यादातर लोग बंगाल से ताल्लुक रखते थे तो दूसरी और एक ऐसा वर्ग था जो मनोरंजन को सबसे महत्वपूर्ण तथ्य मानता था और जिसने धीरे-धीरे फिल्म से कहानी को निकालकर मनोरंजन मात्र के भरोसे फिल्में देने का प्रयास किया। जिनमें अधिकतर लोग बम्बई के थे। वे अपने लिए फिल्म को न साहित्यिक मानते थे और न सिनेमेटिक। वे शुद्ध रूप से व्यावसायिक फिल्मों में विश्वास करते थे। इस क्रम में मद्रास के फिल्म निर्माता फिल्मों में किसी प्रकार का प्रयोग तो नहीं कर पाए फिर भी इन लोगों ने चन्द्रलेखा और निशान जैसी दो सफल फिल्में दीं।

इसी दौर ने एक विश्वयुद्ध भी देखा जिसके बीज

सदाबहार फिल्म मुगले आजम में मधुबाला

फिल्म गाइड : देवआनंद-वहीदारहमान

फिल्म अंदाज : राजकपूर-दिलीपकुमार-नरगिस

1930 के आसपास पड़ चुके थे । 3 सितम्बर, 1939 को ग्रेट ब्रिटेन और जर्मनी के बीच छिड़े युद्ध में जब भारत के वायसराय लार्ड लिनलिथगो ने घोषणा की कि भारत को इस युद्ध में ब्रिटेन के साथ मिलकर युद्ध करना है तब कांग्रेस ने इसका विरोध किया था और लगभग सभी फिल्म प्रोड्यूसरों ने उनका समर्थन किया था । 1940 में ही सरकार ने फिल्म एडवाइजरी बोर्ड की स्थापना की, जो युद्ध पर आधारित फिल्में बनाने को प्रोत्साहित करता था। जिसकी चेयरमैन शिप जे.बी.एच. वाडिया ने खुशी-खुशी स्वीकार कर ली । इस विश्व युद्ध के दौरान तकनीकी रूप से सिनेमा का पूरे विश्व में नुकसान हुआ । लेकिन युद्ध भारत की धरती पर नहीं लड़ा गया इसलिए इसका कोई विशेष प्रभाव यहाँ की फिल्मों पर नहीं पड़ा । इसका फायदा यह हुआ कि फिल्में अपनी रफ्तार से बिना अवरोध के बनती रहीं और नुकसान (बहुत बड़ा नुकसान) यह हुआ कि एक वह अहसास जिसने विदेशी फिल्मकारों को बेहद कल्पनाशील और कला पारखी बना दिया, हम से अछूता रह गया और वाडिया जैसे लोग न अपना भला कर पाये न फिल्म का और वे एक राजनीति के पुर्जे मात्र बन कर रह गये, तो दूसरी ओर दूसरे संवेदनशील फिल्मकार सही राजनीति के बावजूद व्यापक दृष्टि के अभाव में बहुत दूर तक नहीं जा पाये ।

भारतीय सिनेमा की यात्रा में 1955 में सत्यजीत राय निर्मित फिल्म *पथेर पांचाली* का प्रदर्शन एक वह मोड़ है जिससे विश्व से भारत की तरफ आने वाला फिल्म प्रवाह मुड़कर भारत से बाहर की ओर जाना शुरू हुआ । भारत की स्वतंत्रता के इस दौर में मनुष्य की इच्छा, आकांक्षा और उसके सपनों में एक अजीब तरह का ज्वार था जिसमें देखने वाले तथ्य और अतिरेक के बीच सम्भावना तथा समीकरण के तालमेल बैठाने की कोशिश कर रहे थे । भारत में पहला अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह 1952 में हुआ जिसमें इटली के प्रसिद्ध फिल्मकार विटोरियो डी सिका की फिल्म *द बाइसिकिल थीव्ज* और जापानी के अकीरा कुरुसोवा की रशोमन जैसी फिल्में भारतीय दर्शकों तथा सिनेकारों के लिए चकित कर देने वाली थीं । और फिर 1955 की *पथेर पांचाली,* यथार्थ कला दृष्टि प्रस्तुति और अन्य कलाओं के सामूहिक प्रभाव ने फिल्म में सम्भावना का आकाश पैदा कर दिया । हिन्दी फिल्मकारों के

मन में *पथेर पांचाली* का आकर्षण तो बढ़ा था, लेकिन सब लोग इस सम्पूर्ण कलात्मक उत्कृष्टता को प्रयोग में ला सकने में अपने आप को असमर्थ पा रहे थे क्योंकि इसमें पैसे की भूमिका को वे भी नकार नहीं सकते थे। वास्तविक सिनेमा से परिचित होकर भी वे अब यदा-कदा प्रयोग तो कर सकते थे, लेकिन किसी नये फिल्म सौन्दर्यशास्त्र की रचना कर इस तरह छिटपुट कि उनकी कोई लय विकसित नहीं हो पायी। जैसे *दो बीघा जमीन , बाप बेटी, परख, परिणिता, काबुलीवाला, उसने कहा था, मुसाफिर, अनाड़ी, अनुराधा, अनुपमा, आशीर्वाद, सत्यकाम, आनन्द, गुड्डी, तीसरी कसम, अनुभव,आविष्कार, तीन बत्ती चार रास्ते, सुरंग, दो आँखे बारह हाथ, स्त्री, नवरंग, गीत गाया पत्थरों ने, झनक-झनक पायल बाजे, आवारा, आह, बूट पालिश, श्री 420 , जागते रहो, जिस देश में गंगा बहती है, मेरा नाम जोकर, नया दौर, धूल का फूल, कानून, गुमराह,इत्तफाक, छोटी सी बात, नई दिल्ली, दस लाख, गोपीनाथ, सौतेला-भाई, तलाक,फूल और पत्थर, तलाश, पतंगा, कागज के फूल, प्यासा, बाजी, साहब बीबी और गुलाम, मुझे जीने दो, यादें, रेशमा और शेरा, गंगा जमुना, आखिरी खत, शहीद, गबन, ये रास्ते हैं प्यार के, पाकीजा, उपकार, रोटी कपड़ा और मकान, अनहोनी, मुन्ना, परदेशी, शहर और सपना, आसमान, महल, बम्बई रात की बाँहों में, सात-हिन्दुस्तानी, दो बूँद पानी, मिस्टर सम्पत, बहार, हम पंछी एक डाल के, शारदा, राजा और रंक, गाइड* इत्यादि उपरोक्त सूची लम्बी हैं, लेकिन यह सोलह साल की सूची है जिसमें ज्यादा से ज्यादा ठोक-पीट कर दस बारह और फिल्में शामिल हो सकती हैं। जिस दौर में राजकपूर, ख्वाजा अहमद अब्बास, बिमल रॉय, ऋषिकेष मुखर्जी, असित सेन, बासु भट्टाचार्य, वी. शान्ताराम, बी.आर. चोपड़ा ,मोहन सहगल, गुरूदत्त, चेतन आनन्द, विजयआनन्द जैसे फिल्मकार एक साथ रहे हों और पन्द्रह सोलह साल में सिनेमा के कलात्मक विकास में किसी अवधारणा को स्थापित नहीं कर पाये हों यह कैसे सम्भव हुआ ? वास्तव में कलात्मक उत्कृष्टता के पाँव में बॉक्स ऑफिस ने इस तरह बेड़ियाँ डाल रखी थीं कि कुछ दूर तक जाकर सिनेमा के विकास को रेखांकित कर देने लायक कोई दूरी चली ही नहीं गयी। जिसके चलते अच्छी फिल्मों से आलिप्त तथा लम्बा समय विचार के लिए कुछ नहीं दे पाया। वैसे अपनी-अपनी सीमाओं में राजकपूर तथा ख्वाजा अहमद अब्बास ने जिस तरह का वामपंथी दृष्टिकोण अपनाया जिसमें थोड़ा बहुत बासु भट्टाचार्य तथा गुरूदत्त भी शामिल थे तो देवेन्द्र गोयल, मोहन सहगल इत्यादि पूँजीवादी रास्ते सिनेमाई कौशल स्थापित करते रहे जिसमें थोड़ा बहुत साथ बी.आर. चोपड़ा ,रामानन्द सागर ने भी दिया। बिमल रॉय, ऋषिकेष मुखर्जी, शान्ताराम, मनोज कुमार इत्यादि मध्यमार्गी बने रहें। इस तरह की स्थापना इन फिल्मकारों के सम्पूर्ण फिल्म चरित्र को देखते हुए बनी अवधारणओं से स्पष्ट होता है, वरना अपनी फिल्मों में गरीब का साथ देते और अमीर को गालियाँ दिलवाते तो सभी फिल्मकार दिखाते हैं।

सन् 1969 में मृणाल सेन ने एक फिल्म बनायी थी *भुवनशोम* ।जिस प्रकार 1955 में सत्यजीत रॉय की पाथेर पांचाली में तात्कालीन सिनेमाकारों के लिए एक नव सिनेमा का यथार्थवाद प्रस्तुत किया था उसी प्रकार भुवनशोम ने हिन्दी सिनेमा के लिए नये क्षितिज खोले। यह और बात है कि 1955 में सत्यजीत रॉय अपनी तरह के अकेले फिल्मकार थे जब कि मृणालसेन के समानान्तर इस दौर में कई फिल्मकार सिनेमा के नये तत्वों को उद्घाटित करने में लगे हुए थे। जिन में ऋत्विक घटक का नाम महत्व के साथ लिया जाता है। भुवनशोम के बाद बासु भट्टाचार्य, बासु चटर्जी, शिवेन्द्र सिन्हा, एम.एस. सत्थ्यू, अवतार कौल, श्याम बेनेगल, मणि कौल, कुमार शाहनी, केतन मेहता, प्रेम कपूर, राजिन्दर सिंह बेदी जैसे फिल्मकार एक साथ इस तरह आये जैसे फिल्म कोठे से उतर कर कारखाने में आ गयी हो और वह मुजरे के बजाये मेहनत करने लगी हो। ये तमाम फिल्मकार आपसी अन्तर्विरोध, अपने-अपने आदर्शों में भिन्नता, सिनेमा के प्रति दृष्टिकोण में अलग-अलग मान्यता इत्यादि के साथ थे लेकिन सिनेमा की बेहतरी के लिए और सिनेमा को समाज के उपयोग के लायक कला की तरह विकसित करने में लगभग सभी एक मत थे। सिनेमा के शिल्पगत विकास की अन्तर्धारा उनके साथ लगातार काम कर रही थी।.हिन्दी सिनेमा के अस्सी साल में यह सब से सुखद समय था जब आदर्श, विचार, कथा, साहित्य, सरोकार, विविध आयामों से तथा गीत-संगीत, अभिनय, निर्देशन, फोटोग्राफी, एवं सम्पादन इत्यादि दक्षताएँ मिलकर एक साथ सिनेमा के उस स्वरूप को गढ़ने में लगे थे जहां एक अवधारणा को विकसित किया जा सकता था। यद्यपि यह विचित्र विडम्बना है कि हिन्दी भारत की सबसे अधिक समझी जाने वाली भाषा है तथा कमाई के लिहाज से हिन्दी का दर्शक संसार भारत की किसी भी भाषा से अधिक बड़ा और समर्थ हैं, और इसी वजह से हिन्दी फिल्मों की संख्या सबसे अधिक भी हैं, तो भी वास्तविक अर्थों में हिन्दी का सही सिनेमाकार एक भी नहीं हैं। हिन्दी फिल्म अंगरेजी में सोची जाती है, अंगरेजी में लिखी जाती है, अंगरेजी में बनाई जाती है, केवल संवाद हिन्दी में होते हैं। ज्यादा से ज्यादा उर्दू में सोचने समझने वाले थोड़े से निर्देशक हैं। इस बात का जिक्र यहाँ इसलिए जरूरी है कि भाषा के मौलिक ज्ञान के बिना अच्छे सिनेमा ने भी दर्शकों की तथा प्रेस और समीक्षकों की प्रशंसा तो पा ली लेकिन हिन्दी का दर्शक हिन्दी फिल्मों से वह रिश्ता कायम नहीं कर सका, जो अपनी भाषा की रचना के प्रति होता है। यही कारण है कि हिन्दी फिल्मों में एक अजीब तरह का अनजानापन बना रहता है, जो चीजों को अपना नहीं लगने देता और यह स्थिति अन्ततः थोड़े से लुभाव ललचाव के बाद ऊब ही पैदा करती हैं। शुद्ध हिन्दी फिल्में ऊँगलियों पर गिनने लायक हैं जैसे **दो बीघा जमीन, तीसरी कसम, भुवनशोम** आदि नाम हैं, जिसमें दो-चार फिल्में और जोड़ी जा सकती हैं अन्यथा **सारा आकाश, रजनी गंधा, अनुभव, आविष्कार, फिर भी, अनुपमा, गरम हवा, 27 डाऊन, अंकुर, निशान्त, आषाढ़ का एक दिन, उसकी रोटी, दुविधा, मायादर्पण, डाकबंगला, बदनाम बस्ती, त्रिसंध्या, आघात, दस्तक, अर्द्धसत्य, पार, दामुल, तमस, पार्टी, आदमी और औरत, रंग, नजर, सत्यकाम, सूखा, स्पन्दन, इजाजत, लेकिन, थोड़ा सा रूमानी हो जाएँ, रावसाहब, पंचवटी, आक्रोश, सारांश, काश, अर्थ, प्रतिघात, परिन्दा, प्रतिबन्ध, पिंजरा, चानी** जैसी अनेक फिल्मों में, जो सभी हिन्दी फिल्में हैं, वास्तविक हिन्दी फिल्में तलाश करना मुश्किल हैं, क्योंकि इन अच्छी फिल्मों के साथ दिखता यह रहा कि इनकी भाषा, परिवेश, कैमरा, कथ्य अपनी उत्कृष्टता के बावजूद उस हिन्दी भाषा संसार से अपनेपन का रिश्ता ही कायम नहीं कर पाया।

यह एक दुखद स्थिति थी कि जिसके चलते नव-सिनेमा समान्तर-सिनेमा, कला-सिनेमा, यथार्थवादी-सिनेमा, अतियथार्थवादी-सिनेमा, फार्मूलाहीन-सिनेमा, प्रयोगवादी-सिनेमा,

न्यू-वेव-सिनेमा, ऑफ-बीट-सिनेमा इत्यादि नामों से रेखांकित किए गए। यह एक सुखद आन्दोलन बमुश्किल एक दशक में ही बहुत सारी उम्मीदें जगा कर खत्म हो गया। अब वही फिर ढाक के तीन पात की तरह फिल्मकार इक्का-दुक्का अच्छी फिल्म बनाते हैं और एक बेहतर सिनेमा की संभावना को बेहद धुँधला कर देते हैं। जिसके चलते मध्यमार्गीय सिनेमा **खुशबू, कोशिश, मौसम, गुड्डी, पिया का घर, उपहार, दस्तक, चेतना, जरूरत, कोरा कागज, चुपके-चुपके, मीरा, खट्टा-मीठा, अंगूर, स्वामी, लम्हें, उत्सव, उमरावजान, सारांश, काश, आशिकी** इत्यादि प्रशंसा पाकर भी सिनेमा के विकास के ग्राफ में कहीं फिट नहीं बैठता और इस दौर में **बॉबी, संगम, शोले, जय संतोषी माँ, रोटी कपड़ा और मकान, अजूबा, आज का अर्जुन, शहंशाह, हिना, साजन, सौदागर, दिल, मैंने प्यार किया** जैसी फिल्में आती हैं, चलती हैं, और कुछ दिन बाद बिना कोई नक्श छोड़े गुम हो जाती है। सृजन के नाम पर सबसे खतरनाक प्रवृत्ति संगीत में पैदा हुई है। कहते हैं कि संगीत गीत के वाहक के रूप में फिल्मों में प्रविष्ट हुआ था लेकिन आज संगीत नेतृत्व प्रदान करता है। शब्द केवल उसके पिछलग्गू होते है और जाहिर है कि आदमी की अभिरुचियों में शब्द ही देर और दूर तक उसका साथ देते हैं। इस प्रकार सबसे अधिक नुकसान गीतों का हुआ हैं, क्योंकि साज-संगीत ने स्वर-संगीत को लगभग निर्मूल कर दिया हैं। इसलिए गायक-गायिकाओं के केवल नाम बदलते हैं अन्ततः वे अपनी आवाजों में नितान्त अमूर्त और एक तरह से पहचान विहीन होते हैं जिसका फायदा गुलशनकुमार ने सबसे ज्यादा उठाया और नये प्रयोग के तौर पर ही सही यह बताने की कोशिश की कि पैसा कमाने के लिए केवल गणित बहुत हैं। अतः फिल्म हो न हो, गणित लेकर उन्होंने हिन्दी सिनेमा की खान से ढेर सारा पैसा निकाला। लेकिन अपने पीछे ढेरों गड्ढे छोड़ते गए। कल्पना कीजिए कि जीवन की विभिन्न स्थितियों के लिए, विभिन्न मूड्स के विभिन्न गायकों के विभिन्न संगीतकारों द्वारा निर्देशित गीत किसी लायब्रेरी में रखे हों और आप अपनी जरूरत के हिसाब से गीत चुन लें और उसे खरीद लें और अपनी फिल्म में फिट कर दें। यानि सृजन के मूल स्रोतों पर ही एक तरह की ताले बन्दी कर दी जाए तो होगा क्या? ढ़ेर सारी फिल्में बनेंगी, लेकिन दर्शक? दर्शक भी उठेगा और अपने मूड के हिसाब से कोई फिल्म देख आयेगा। यानि यों ही वह आपकी फिल्म नहीं देखेगा।

फोटोग्राफी, सम्पादन और ध्वनिमुद्रण के क्रान्तिकारी प्रयोगों ने सिनेकारों पर एक अजीब तरह से आक्रामक असर दिखाया है कि पारम्परिक कहानियों और दृश्यों में इन तकनीकी उपलब्धियों का इस्तेमाल होते हुए नहीं दिखता इसलिए दिव्य लोक की स्थितियों की परिकल्पना लेकर आज सभी निर्देशक परदे पर आते हैं और तकनीकी दाँव-पेंच इस तरह आजमाते हैं कि फिल्म के दृश्य की विशिष्ट पहचान गायब हो जाती है और लगता है कि कोई भी दृश्य किसी भी फिल्म से लेकर किसी भी फिल्म में डाला जा सकता है। यानि फिल्म की अपनी ही पहचान गायब। ऐसे में कलाकार, अभिनेता सृजन की जिस मौलिकता से संबद्ध होकर पहचान अर्जित करता है वह उसके हाथ से छूट जाती हैं। नदीजतन अभिव्यक्ति के प्रखरतम माध्यम शब्द आँखे और चेहरा परदे से लगभग गायब हो गया है उनकी जगह अभिनयकर्ता के पाँव, कमर, वक्ष होते हैं, और साथ में कुते, घोड़े, बिल्ली, गाय, बकरी, शेर, साँप आ गए हैं जिनके चलते फिल्में तकनीकी करतबों का कोलाज बन कर रह गयी हैं। 1913 से 1991 का सफर एक विडम्बना का सफर है जिसमें छोटे से दौर में स्थापित फिल्मकारों के अतिरिक्त गुलजार, प्रकाश झा, महेश भट्ट, एन. चन्द्रा, राहुल रवेल, बासु चटर्जी, गोविन्द निहलानी, जैसे नाम ढ़ेर सारी सम्भावनाएँ लेकर आये थे किन्तु एक ओर व्यावसायिक सिनेमा के दबाव थे, जिसमें शुरू-शुरू में 16 एम.एम. से 70 एम. एम. का फिल्म प्रिन्ट

नई धारा के इतिहास के कुछ पुराने सवाल

☐ **विनोद भारद्वाज**

कला बनाम व्यावसायिक सिनेमा की बहस बहुत पुरानी है। ज्यादातर महत्वपूर्ण फिल्मकार इस विभाजन को स्वीकार नहीं करते हैं। वे अच्छी और खराब फिल्म के बीच में फर्क करना चाहते हैं। बल्कि बेंगलूर फिल्म महोत्सव में ईरान के एक फिल्मकार ने कहा कि मैं जब खुद फिल्म बनाता हूँ, तो इसकी चिंता नहीं करता कि यह एक कला फिल्म हैं। पर जब लोग उसे कला फिल्म कहते हैं, तो दर्शक अक्सर उस फिल्म से दूर हो जाते हैं।

भारत में अक्सर समानांतर या कला सिनेमा के इतिहास को 1969 से शुरू किया जाता है। मृणाल सेन की हिंदी फिल्म **'भुवन सोम'** से यह विभाजन रेखा शुरु होती है। इसका कारण यह है कि फिल्म वित्त निगम (जो अब राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम हो गया है) ने इसी समय में कुछ महत्वपूर्ण

सईद मिर्ज़ा की फिल्म : सलीम लंगड़े पे मत रो
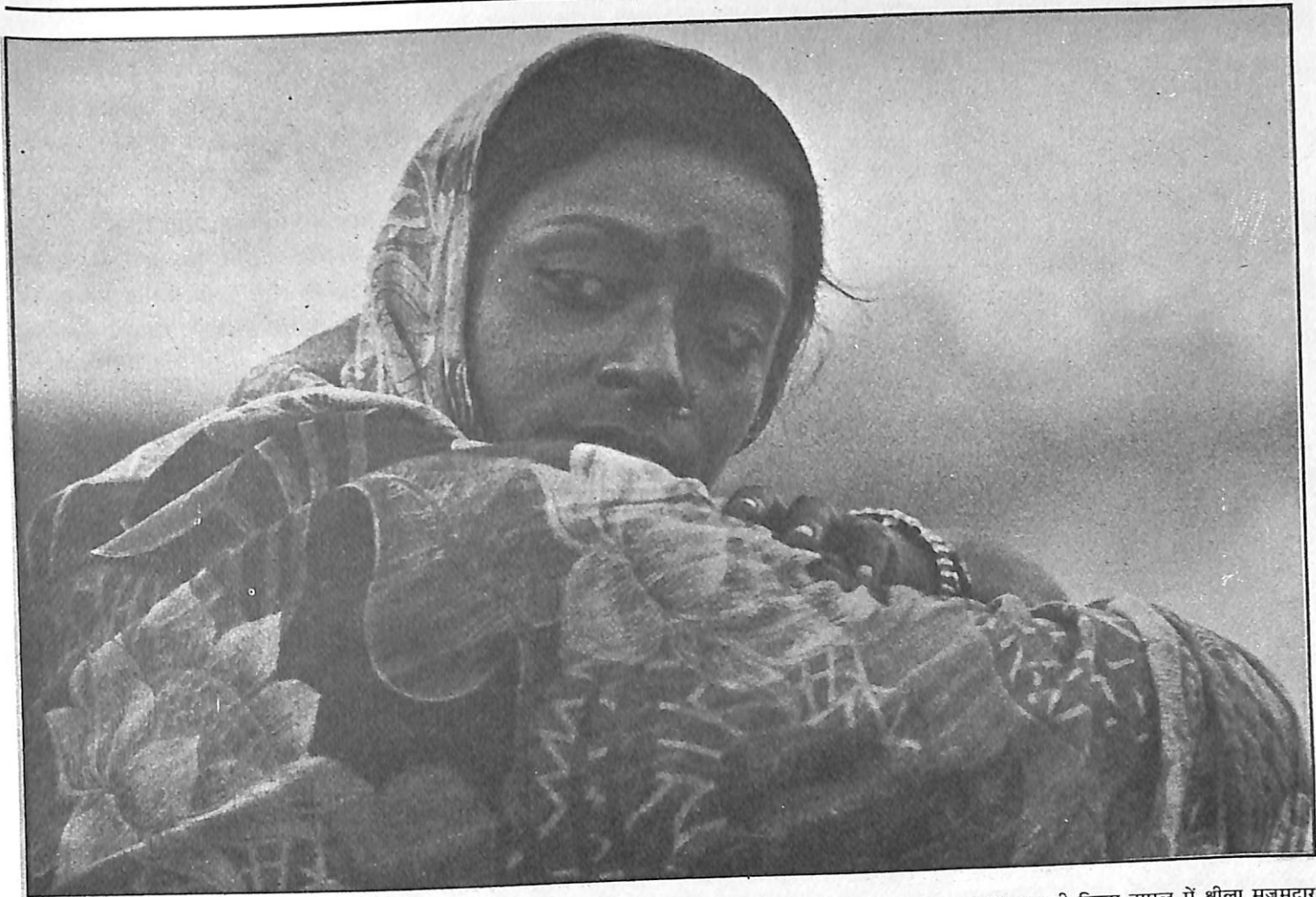
प्रकाश झा की फिल्म दामुल में श्रीला मजूमदार

फिल्मकारों को ऋण देना शुरू किया था। श्याम बेनेगल, कुमार शहानी, मणि कौल, सईद मिर्जा आदि फिल्मकार इसी क्रम में अपनी फिल्मों को बना सके। मीडिया ने इन फिल्मों की काफी चर्चा की। महोत्सवों में विभिन्न फिल्मकार पुरस्कृत और चर्चित हुए। 'भुवन सोम', 'एक अधूरी कहानी', 'माया दर्पण', 'उसकी रोटी', 'दुविधा', 'अरविंद देसाई की अजीब दस्तान', 'अंकुर', आदि फिल्मों ने एक नया माहौल बनाया।

पर यह एक दिलचस्प बात है कि हिंदी फिल्मों की तुलना में बंगला और मलयालम के सिनेमा को दर्शकों की दूरी की ज्यादा चिंता नहीं करनी पड़ी। सत्तर के दशक में दक्षिण भारत में जो तथाकथित 'नई लहर', आई उसके फिल्मकार अपनी फिल्मों को सिनेमाघरों में रिलीज करने में सफल हुए। अक्सर वे कम बजट में फिल्में बनाते थे (कोई कल्पना कर सकता है कि अरविंदन ने कुछ ही साल पहले 'चिदंबरम' को सात लाख के बजट में बनाया था।) पर उनकी फिल्मों की लागत बॉक्स ऑफिस से वापस आ जाती थी जबकि हिंदी की नई धारा कम-से-कम दर्शकों से संतुष्ट थी।

बंगाल और दक्षिण भारत के बेहतर सिनेमा की इस सफलता के कई कारण है। यह सफलता सीमित थी-बहुत महत्वकांक्षी नहीं थी। पर डब्बों में बंद फिल्मों से यह बेहतर स्थिति थी। गौर करने की बात है कि पश्चिम बंगाल और केरल इन दोनों ही प्रदेशों में फिल्म सोसायटी आंदोलन अधिक सक्रिय और व्यवस्थित था। दर्शकों का एक छोटा-सा वर्ग इन फिल्मों का संरक्षक बनने के लिए तैयार था। सत्यजित राय ने कहा भी है कि मेरी अधिकांश फिल्मों की लागत बंगाल के दर्शकों से वापस आ जाती है। विदेश से होने वाली आय तो मेरे लिए बोनस हैं। अडूर गोपालकृष्णन और अरविंदन को भी इसी प्रकार का भरोसा रहा।

लेकिन हिंदी का कला फिल्मकार हमेशा इस बोनस पर नजर रखता रहा। दर्शकों की उसने अधिक चिंता नहीं की। दरअसल मेरी निजी राय यह है कि कुछ अपवाद छोड़ दिये जाएं, तो हिंदी का कला सिनेमा हिंदी भाषा में बना हुआ अंग्रेजी सिनेमा है। बात कुछ लोगों को अटपटी लग सकती हैं पर इस पर विचार किया जाना चाहिए। हिंदी प्रदेशों, भाषा, संस्कृति से कटे ये फिल्मकार अंग्रेजी में फिल्में बनाते, तो ज्यादा ईमानदार नजर आते। प्रदीप कृष्ण अंग्रेजी में फिल्में बना ही रहे हैं।

पोलैंड के मशहूर फिल्मकार जानुसी ने बेंगलूर महोत्सव के दौरान एक बहुत महत्वपूर्ण बात कही। उनका कहना है कि फिल्म के पेशे में 'सर्वाइवल' एक

गौतम घोष की फिल्म अंतर्जली यात्रा में शत्रुघ्न सिन्हा

तनाव की तरह काम करता था साथ ही साथ ब्लैक एण्ड व्हाइट तथा रंगीन होना भी बहुत फर्क डालता था। फिल्म के बाह्य स्वरूप का आर्थिक तनाव तो यहाँ था ही फिल्म के भीतर के फार्मूला फिल्मों के घटक यथा-मँहगे खूबसूरत अभिनेता, युद्ध के दृश्य, खूबसूरत प्राकृतिक दृश्य, भाग दौड़ के दृश्य, मँहगे भड़कीले सेट्स, अतिरेकपूर्ण चित्र, हास्य, सेक्स, हिंसा, इत्यादि अनेक तत्व थे जिन से सही सिनेमा को टकराना था और इन से वे टकराये भी लेकिन विकास की एक थ्यौरी विकसित किए बिना वे अपने भीतर ही एक अजीब तरह की बड़े होने की इच्छा पाले खत्म हो गए। ऊपर से टेलीविजन के आगमन ने उन्हें किंकर्तव्यविमूढ़ बना दिया। टी.वी. पर आर्थिक प्रतिबन्ध कम होते हैं और खतरा लगभग समाप्त हो जाता है। इसके चलते सिनेमा के नये रूप को देखने वाले इस टी.वी. को सुरक्षित समझे लेकिन बुनियादी तौर पर टी.वी. का कद सिनेमा से छोटा था और इसमें से सिनेमा के सभी पक्षों को पूरी तरह उद्घाटित नहीं किया जा सकता था। टी.वी. में एक ही गुण सबसे बड़ा है, दूर तक पहुँच। लेकिन भाषा और अनुभूति के स्तर इतने भिन्न हैं कि सिनेमा एक साथ ढ़ेर सारी जगहों पर पहुँच कर टी.वी. के माध्यम से बौना और बिखरा सा हो जाता हैं।

कुल मिलाकर अपने उत्पादन और निर्माण को लेकर टी.वी. ने सिनेमा के अस्तित्व के सामने जो प्रश्न-चिन्ह लगा दिया था उससे सिनेमा उबरता नजर आ रहा हैं लेकिन सिनेमा ने अपने आप को जिस तरह अवरूद्ध कर लिया है और उसे वैज्ञानिक उपलब्धियों के स्टेज परफार्मेन्स की तरह समर्पित कर देता है वह बेहद खतरनाक हैं। 1912 में सिनेमा वैज्ञानिक चमत्कार की तरह आया और इस वक्त चमत्कारिक विज्ञान की तरह स्थापित हो गया जिसमें कथ्य की सम्भावनाएँ विकसित ही नहीं हो पा रही हैं। आदमी की जरूरतों के हिसाब से तथा कलात्मक अवधारणाओं की स्थापना के बिना हिन्दी सिनेमा भैंस के चारे की तरह बनता रहेगा और दूध वाला उसे दुहता रहेगा और विश्व सिनेमा में हम केवल टाट पट्टी बिछाते हुआ नजर आयेंगे। अन्तत: सही सिनेमा के लिए हिन्दी जानने वाले और सिनेमा बनाने वाले की बीच एक तो सही अन्तर्सम्बन्ध की जरूरत है और व्यापार-व्यवसाय के नाम पर किसी कला के स्वाभाविक विकास को रोकने वाली शक्तियों का विरोध भी जरूरी है। ●

कठिन काम है। अपनी नई फिल्म की पटकथा उन्होंने दस साल पहले लिखी थी। अब जा कर उसे आवश्यक आर्थिक स्रोत मिल पाए। जानुसी के अनुसार फिल्मकार दर्शकों को बोझिल और उबाऊ फिल्मों से लाद देंगे, तो दर्शक खराब सिनेमा की तरफ जाएंगे। इसलिए एक फिल्म बनाते समय उसके दर्शकों की उपेक्षा नहीं की जा सकती। शास्त्रीय संगीत की तरह शास्त्रीय सिनेमा की बात आकर्षक तो लगती है पर हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि शास्त्रीय संगीत के संरक्षकों की संख्या अच्छी खासी है। खाली आडिटोरियम में संगीतकार राग यमन नहीं बजा रहे हैं। पर भीमसेन जोशी के शुद्ध कल्याण को किशोर कुमार की लोकप्रियता की भी जरूरत नहीं हैं।

लेकिन भारत में तथाकथित समानांतर सिनेमा के इन पच्चीस सालों में स्थितियों में काफी बदलाव आया है। पिछले पाँच-सात सालों में टेलीविजन की मदद से सार्थक सिनेमा (यह नाम अधिक सार्थक है) को बल मिला है। परिचय में खास तौर पर यूरोप में गंभीर फिल्मकारों को टेलीविजन के लिए फिल्में बनानी पड़ी हैं। और इसमें कोई बुराई नहीं है। दर्शकों तक ये फिल्में पहुँचेगी तो। अधिक सजग दर्शक वर्ग जाहिर है कि इन फिल्मों को सिनेमाघरों में ही देखना चाहेगा।

यही वजह है कि अडूर गोपाल कृष्णन, स्व. अरविन्दन, गिरीश कासरवल्ली, प्रेमा कारंत, गौतम घोष, बुद्धदेव दासगुप्त, प्रकाश झा, सईद मिर्जा, मणिकौल, कुमार शहानी, केतन मेहता, श्याम बेनेगल, गोविंद निहालाणी, सई परांजपे आदि फिल्मकार इधर भारतीय सिनेमा के परिदृश्य को एक नया आधार दे पा रहे हैं। 'पार', 'दिशा','फणियम्मा', 'दामुल', 'सलीम लँगड़े पे मर रो', 'मिर्च मसाला' 'वस्तुहारा', 'मतिलुकल' आदि फिल्में सार्थक सिनेमा को एक नई सक्रियता और आश्वासन देने में सफल हुई हैं।

इस बदली हुई स्थिति में भी दो तरह के काम होना चाहिए। एक तो शहरों में 300-350 सीटों वाले सिनेमाघर सक्रिय हों। दूसरे, फिल्मकार की रचना प्रक्रिय में दर्शक बहुत उपेक्षित चीज न हो। सत्यजित राय जब कहते हैं कि हमारे फिल्मकार कहानी कहने की कला में कमजोर हैं, तो इसके पीछे एक कड़वा सच हैं। गोदार ने कभी कहा था कि सिनेमा में प्रारंभ, मध्य और अंत होता है पर जरूरी नहीं है कि इसका क्रम यही हो। पर गोदार फ्रांस के सांस्कृतिक परिवेश में इस तर्क से काम कर सकते थे। हमारे फिल्मकार जब इस शैली का अनुकरण करते हैं, तो वे नकली और अप्रासंगिक नजर आते हैं। ●

समय के साथ बदलता कन्नड़ सिनेमा

कन्नड़ सिनेमा के इतिहास को देखने पर हम अतीत की फिल्मों और आज की फिल्मों में बहुत अंतर पाते हैं। कन्नड़ सिनेमा को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है राजकुमार के प्रवेश के पहले और प्रवेश के बाद का सिनेमा।

कन्नड़ भाषा में बनी पहली मूक फिल्म 'वसंत सेना' थी। इसका निर्माण और निर्देशन मोहन भावनानी ने 1929 में किया था। इसकी पूरी शूटिंग मैसूर रियासत में हुई थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद मोहन भावनानी फिल्म प्रभाग में निर्माता बन गए। इसके पहले भी उन्होंने मैसूर में दो वृत्त चित्र बनाए थे - एक था मैसूर के दशहरा उत्सव पर और दूसरा था खेद्दा पर।

"वसंत सेना" के पाँच वर्ष बाद चमनलाल डूंगाजी ने **सती सुलोचना**' नामक बोलती फिल्म का निर्माण किया जिसके निर्देश थे वाय वी. राव । इस फिल्म की शूटिंग महाराष्ट्र सिनेटोन कोल्हापुर में 90 दिन में पूरी की गई। इस फिल्म पर लगभग 50 हजार रुपए की लागत आई। वह छह केन्द्रों में रिलीज की गई और चार सप्ताह के भीतर ही न केवल वितरकों को अपनी धनराशि वापस मिल गई, बल्कि लाभ हुआ। ट्रिक शॉट और आउटडोर शूटिंग इस फिल्म की विशेषताएं थी। नागेश्वर राव ने इसमें रावण की भूमिका भी की थी और संगीत भी दिया था।

'सती सुलोचना' कन्नड़ भाषा में रिलीज होने वाली पहली बोलती फिल्म थी, फिर भी 'भक्त ध्रुव' का निर्माण पहले प्रारंभ हुआ था। 'भक्त ध्रुव' का निर्माण जयवाणी फिल्म्स द्वारा किया गया था और उसमें निर्देशक थे वाय. पार्श्वनाथ आलतेकर।

इस समय तमिल और तेलुगु फिल्में अधिक संख्या में रिलीज होने लगी थीं। 1935 में गुब्बी वीरन्ना अपने लोकप्रिय नाटक 'सथरामे' पर फिल्म बनाना चाहते थे। कोयंबटोर शकुंतला पिक्चर्स के शम्मुघम चेट्टियार निर्माण में भागीदार बन गए। इस फिल्म
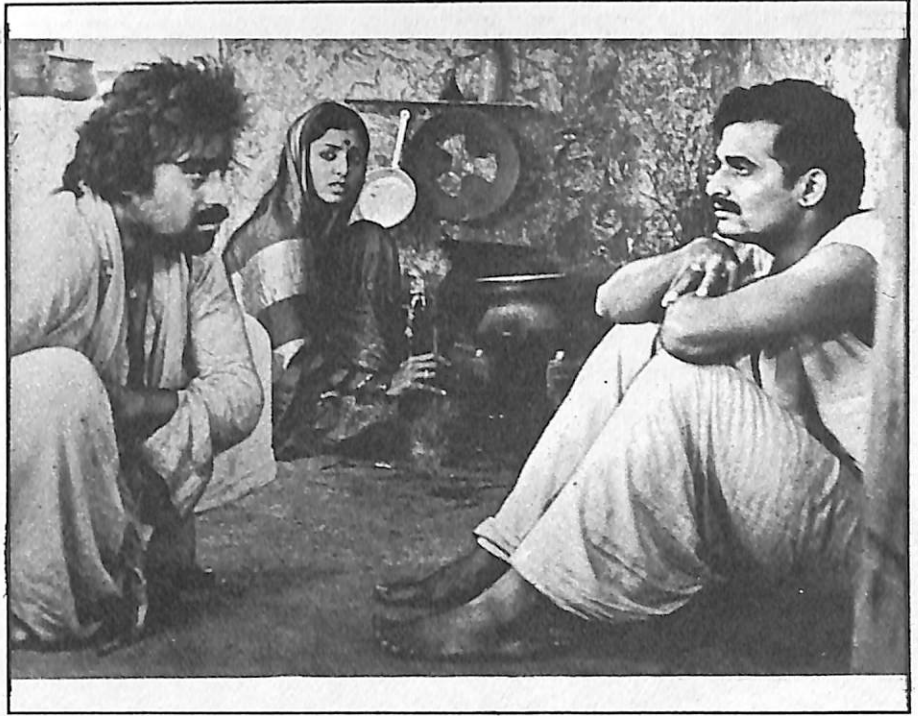
कन्नड़ भाषा की विवादास्पद फिल्म : सावित्री (1979)

का निर्माण बाम्बे सेन्ट्रल स्टुडियोज में हुआ। गुब्बी की नाटक कंपनी के प्रसिद्ध कलाकार मुरारचार ने नायिका के अश्वत्थामा के साथ प्रमुख भूमिका की। सथरामे गुब्बी वीरन्ना ने एक दोहरी भूमिका की। वी. जयम्मा ने द्वितीय नायिका की भूमिका की। इस फिल्म के निर्देशक राजा चन्द्रशेखर थे।

1936 में 'संसार नौका' नामक फिल्म का निर्माण हुआ। कन्नड़ में यह पहली सामाजिक फिल्म थी। इसके निर्देशक एच. एन.एह.सिंह थे और इसका निर्माण देवी फिल्म्ज, मद्रास ने किया था। इसमें कलाकार वे ही थे - बी.आर पंतुलु, एस. व्ही. राजम्मा - डिक्की माधव राव। यह फिल्म सालेम राजगोपाल चेट्टियार की मानस संतान थी और दक्षिण भारत की पहली सामाजिक फिल्म थी, क्योंकि उससे पहले केवल मौखिक फिल्में बना करती थीं।

सन् 1937 में भक्ति फिल्में बनने लगी। फिल्म पुरन्दरदासरु का निर्माण देवी फिल्म्ज ने किया था, उसके निर्देशक वी. चवन को और उसमें त्रिपुराम्बा, बालकृष्णराव, एस.आर वासुदेव राव, बी. कृष्णस्वामी अय्यंगर देवी आदि ने अभिनय किया था। कर्नाटक टॉकी लिमिटेड, धारगड़ ने मार्कण्डेय पर 'चिरंजीवी' नामक फिल्म का निर्माण किया। इसकी स्क्रिप्ट देवुडु नरसिंह शास्त्री ने लिखी थी और उन्होंने मृकुन्द की भूमिका की थी। उस समय की विख्यात गायिका और अभिनेत्री **अमीरबाई कर्नाटकी** की इस फिल्म में एक महत्वपूर्ण भूमिका थी। मुदवीडु कृष्णराव इसमें यम बने थे। के.पी. भावे द्वारा निर्देशित यह फिल्म चार महीनों में पूरी हो गई और जून, 1937 में रिलीज हुई।

इसके बाद द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण तीन वर्ष तक कोई भी कन्नड़ फिल्म नहीं बनी। 1941 में गुब्बी वीरन्ना ने 'सुभद्रा' नामक फिल्म बनाई जिसकी शूटिंग भालजी पेंढारकर के अरुण स्टुडियोज पूना में की गई थी। इसका निर्देशन पी. पुल्लिया ने किया था और आलेख पी.पुट्टा स्वामिया ने लिखा था। इससे होनप्पा भागवतर, गुब्बी वीरन्ना, वासुदेव गिरमाजी आदि ने अभिनय किया था। वी. शांताराम ने कैमरा चलाकर निर्माण का उद्घाटन किया था।

पहली मूक फिल्म 'वसंत सेना' को आर. नागेन्द्र राव और सुब्बैया नायडू ने एवी. मय्यप्पा चेट्टियार की भागीदारी में प्रगति स्टुडियोज, मद्रास में बोलती फिल्म का नया रूप दिया था, जिसमें आर. नागेन्द्र राव ने, शकटार की, सुब्बैया नायुडू ने चारूदत्त की और लक्ष्मीबाई ने वसंत सेना की भूमिका की थी। यह फिल्म सौ दिन चली। 1942 में दो फिल्में बनी - गुब्बी वीरन्ना की फिल्म 'जीवन नाटक' और के. सुब्रमण्यम् की फिल्म 'भक्त प्रहलाद'।

गिरीश कासरवल्ली की फिल्म मने (हिन्दी में एकघर)

आर.नागेन्द्र राव के निर्देशन में 'हरिश्चन्द्र' नामक पहली फिल्म 1943 में बनी। भारत में दो अन्य भाषाओं (तमिल और तेलुगु) में डब की गई यह पहली फिल्म थी। इसी बीच एम. राजम्मा ने विजया फिल्म्ज के बैनर तले 'रथ राम' नामक फिल्म बनाई और कन्नड़ की पहली महिला निर्माता हुई। 'वाणी' नामक फिल्म में टी.फ़ॅचौडैय्या, चेंवल वैद्यनाथ भागवतर के हिरण्य बल्लारी ललिता आदि ने अभिनय किया। इस फिल्म का निर्देशन के. हिरण्यैय्या ने किया था।

1945 में अधिकांश कन्नड़ फिल्में 'बॉक्स ऑफिस पर असफल रहीं। 'भक्त कुँवार' 'नामक फिल्म एकमात्र अपवाद थी। इस समय डी. शंकर सिंह और श्री विट्ठलाचार्य, महात्मा पिक्चर्स ने अन्तर्गत मैसूर में 'कृष्णलीला' नामक फिल्म बनाई। अगली फिल्म 'नागकण्णिका' मूव्हीलैण्ड थिएटर में एक हजार दिन चली। इस फिल्म का निर्देशन जी विश्वनाथन् ने किया था। इस बीच "भारती" नामक फिल्म रिलीज हुई, जिसकी विशेषता यह थी कि इसकी रीरिकॉर्डिंग वाहिनी स्टुडियोज, मद्रास में की गई थी। इसमें ललित पद्मिनी का एक नृत्य था।

वर्ष 1954 इस दृष्टि से अविस्मरणीय था क्योंकि एक सुपर स्टार राजकुमार ने फिल्मों में 'बदरा कन्नप्पा' फिल्म के जरिए प्रवेश किया था। यह अवधि कन्नड़ फिल्म के इतिहास में स्वर्ण युग रहा। उनकी फिल्म 'बंगारद मनुष्य' सौ सप्ताहों तक हाउस फुल चली। 1958 में राजकुमार की फिल्में की कतरनों का एक संकलन नटसार्वभौम के नाम से रिलीज हुआ था। उस समय वे सौ फिल्मों में अभिनय कर चुके थे।

कल्याण कुमार फिल्म जगत् में 'नट शेखर' नामक फिल्म के जरिए आए जिसमें विद्या नायिका थी। यह फिल्म आंशिक रूप से रंगीन थी। तमिल फिल्म की हँसोड़ जोड़ी एन.एस. कृष्णन् और टी.ए. मदुरम् ने इस फिल्म में अभिनय किया।

मार्डन थिएटर्स ने अपनी पहली फिल्म 'देवकन्निका' 1954 में रिलीज की। यह एक मात्र ऐसा प्रतिष्ठान था जिसने एक ही बैनर के अन्तर्गत लगभग सभी दक्षिण भारतीय फिल्मों में लगभग सौ फिल्में बनाई। सरोज देवी 'महाकवि कालिदास' में नायिका के रूप में आईं'। होनप्पा भागवतर इसके निर्माता, नायक और संगीत निर्देशक थे। इसके कलाकारों में राज सुलोचना, जी.व्ही. अय्यर आदि शामिल थे। इस फिल्म का निर्देशन कु.रा.सी. ने किया था। बाद में पी.आर पंतुलु ने 'मुदल थेडि' नामक फिल्म का निर्माण किया जिसके निर्देशक पी. नीलकांतन् थे। बी.आर. पंतुलु तथा एम. व्ही. राजम्मा ने मुख्य भूमिकाओं का निर्वाह किया। इस फिल्म से नाटककार सी.एच.आई. सदाशिव और संगीतकार निर्देशक टी.जी. लिंगप्पा प्रकाश में आए।

तमिल और तेलुगु फिल्मों के प्रसिद्ध व्यक्ति वी. एस. रंगा ने 'भक्त मार्कण्डेय' का निर्माण और निर्देशन किया। यह फिल्म तमिल, तेलुगु, कन्नड़ में एक साथ बनाई गई। उन्होंने एक पूरी लंबाई की रंगीन फिल्म 'अमरशिल्पी जक्कन्नचारी' भी बनाई। 1955 में अनेक संगीत निर्देशक कन्नड़ फिल्म उद्योग में आए - जी.के. व्यंकटेश, विजय भास्कर तथा अन्य। 1958 में बी.आर. पंतुलु द्वारा निर्मित और निर्देशित फिल्म 'स्कूल मास्टर' ने 25 सप्ताह चलकर रिकार्ड

बनाया । इस फिल्म में पुटन्ना कांगल सफल निर्देशक थे ।

कन्नड़ भाषा में पहली ऐतिहासिक फिल्म 'रत्नदीरा कांतिवीरा ' थी जिसका निर्देशन फिल्म उद्योग के चार महारथियों राजकुमार, जी.वी. अय्यर, बालकृष्ण और नरसिंह राजु - ने किया था और इन सभी ने उसमें अभिनय किया था । गीतकार और आलेखकर उदयशंकर का नाम उल्लेखनीय है क्योंकि उन्होंने 325 फिल्मों के लिए 3000 से भी अधिक गीत लिखे हैं ।

1968 से जेम्स बांड युग का आरम्भ हुआ । दुरई भगवान ने 'जेदरा वाले' नामक फिल्म बनायी जिसमें 'राजकुमार और जयंती ने अभिनय किया था ।

आज के अग्रणी नायक विष्णुवर्धन 1972 में 'नमरहवु' फिल्म में पहली बार आए थे । अब वे सौ फिल्में में अभिनय कर चुके हैं । अंबरीश भी इस फिल्म में खलनायक बनकर आए थे । अगले वर्ष अनंत नाग 'संकल्प' में आए । आज की तारीख तक लगभग 1386 फिल्में रिलीज हो चुकी हैं ।

1969 में आई फिल्म 'संस्कार' के साथ नई लहर की फिल्मों का आगमन हुआ । 'संस्कार' में गिरीश कर्नाड, स्नेहलता रेड्डी, लंकेश ने अभिनय किया था । वी.वी. कारंत द्वारा निर्देशित 'वंशवृक्ष' वी.वी. कारंत द्वारा निर्देशित 'चोमन्नाडुडि', जी.व्ही. अय्यर द्वारा निर्देशित हंसगीते और गिरीश कासरकल्ली द्वारा निर्देशित 'घटश्राद्ध' और 'मने' के साथ यह नई लहर जारी है ।

हुसनूर कृष्णमूर्ति, एम.आर. विठ्ठल, गीतप्रिया, ए.वी. शोगिरियल सोमशेखर, विजय, सिद्धलिंगप्पा, पट्टाभिराम रेड्डी, नागभरण, टी.एस.रंगा हेबलीकर, शंकरनाग (स्वर्गीय) बी.जयम्मा, एम. वी. राजम्मा, पंडरी बाई, सोवकार जानकी, मैनावती, लीलावती, लक्ष्मी, जयंती, भारती, आरती, मंजुला, जयमाला, कृष्णकुमारी, सरिता, माधवी अंबिका, राधा, श्री प्रिया, श्रीविद्या, गीता और सुहासिनी ने कन्नड़ फिल्म उद्योग के उत्कर्ष में अपना-अपना योगदान किया है ।

तमिलनाडू में रिकार्ड बनाने वाला, फिल्म 'चित्र थंबी' में आधार पर कन्नड़ में "रंगचारी" नामक फिल्म बनाई गई है । यह कर्नाटक में सफलतापूर्वक चल रही है ।

मराठी सिनेमा: उम्र साठ साल

□ सुधीर नादगाँवकर

आधुनिक कला के सर्वाधिक सक्षम स्वरूप सिनेमा ने सर्वप्रथम 7 जुलाई 1896 को बम्बई में अवतरण किया था । इस नये माध्यम को अपनाने वाले लोगों में सावेदादा प्रमुख थे, जिन्होंने एक वर्ष बाद ही *कोकोनट फ़ेयर* नामक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म का निर्माण किया । फिल्म मराठी धार्मिक उत्सव एवं पर्व की प्रस्तुति थी । इसके बाद कई वर्षों तक चुप्पी रही और फिर 1912 में दादा साहब तोरणे ने संत पुण्डलीक के जीवन पर आधारित पहली फ़ीचर फिल्म *भक्त पुण्डलीक* का निर्माण किया । तोरणे का दुर्भाग्य रहा कि इस फिल्म को प्रथम भारतीय फीचर फिल्म के रूप में मान्यता नहीं मिली क्योंकि शूटिंग का काम ब्रिटिश तकनीकीशियनों ने किया था तथा फिल्म की प्रोसेसिंग भी लन्दन में हुई थी । ऐसा करना अनिवार्य भी था क्योंकि उस समय भारत में प्रोसेसिंग के लिए प्रयोगशालाओं का निर्माण नहीं हुआ था ।

फिल्म सावकारी पाश (1925)

जिसने सीखा लिखना पढ़ना उसने सीखा आगे बढ़ना

अपने बच्चों की पढ़ाई लिखाई के लिए जितनी जिम्मेदारी आप खुद महसूस करते हैं उतनी ही जिम्मेदारी सरकार भी अपनी मानती है।

इसीलिए सरकार ने और ज्यादा बच्चों तक स्कूल पहुंचाने के लिए एक नया फैसला किया है। यह फैसला है 200 से कम आबादी वाले दूर-दराज के गांवों में स्कूल के इंतजाम का। जो भी स्वैच्छिक संस्थाएं इन छोटे-छोटे गांवों में प्राइमरी स्कूल खोलना चाहेंगी उन्हें सरकार अनुदान के रूप में मदद देगी।

सरकार का संकल्प है कि 6 से 14 साल तक के बच्चों की पढ़ाई मुफ्त हो। इसके लिए सरकार ने कई कारगर कदम उठाये है।

इस साल शिक्षा सुविधा के विस्तार के लिए 1500 जूनियर प्राइमरी स्कूल खोले जा रहे हैं। इन स्कूलों से वे बच्चे भी अब शिक्षा पाने लगेंगे जो सिर्फ आबादी कम होने के कारण शिक्षा से वंचित थे।

कमजोर वर्ग के बच्चों को स्कूली किताबें मुफ्त मुहैया कराने के लिए भी सरकार ने बजट में पहले से ज्यादा रकम का इंतजाम किया है। आदिवासी इलाकों के बच्चे अपनी पढ़ाई की शुरूआत ठीक ढंग से कर सकें, इसलिए सरकार ने इस वर्ष से पाँच प्रमुख आदिवासी बोलियों के जरिये पढ़ाई का इंतजाम किया है।

यह सब इसलिए कि हर बच्चा पढ़ सके और जिंदगी में आगे बढ़ सके।

मध्यप्रदेश सरकार

जनसम्पर्क/मध्यप्रदेश माध्यम
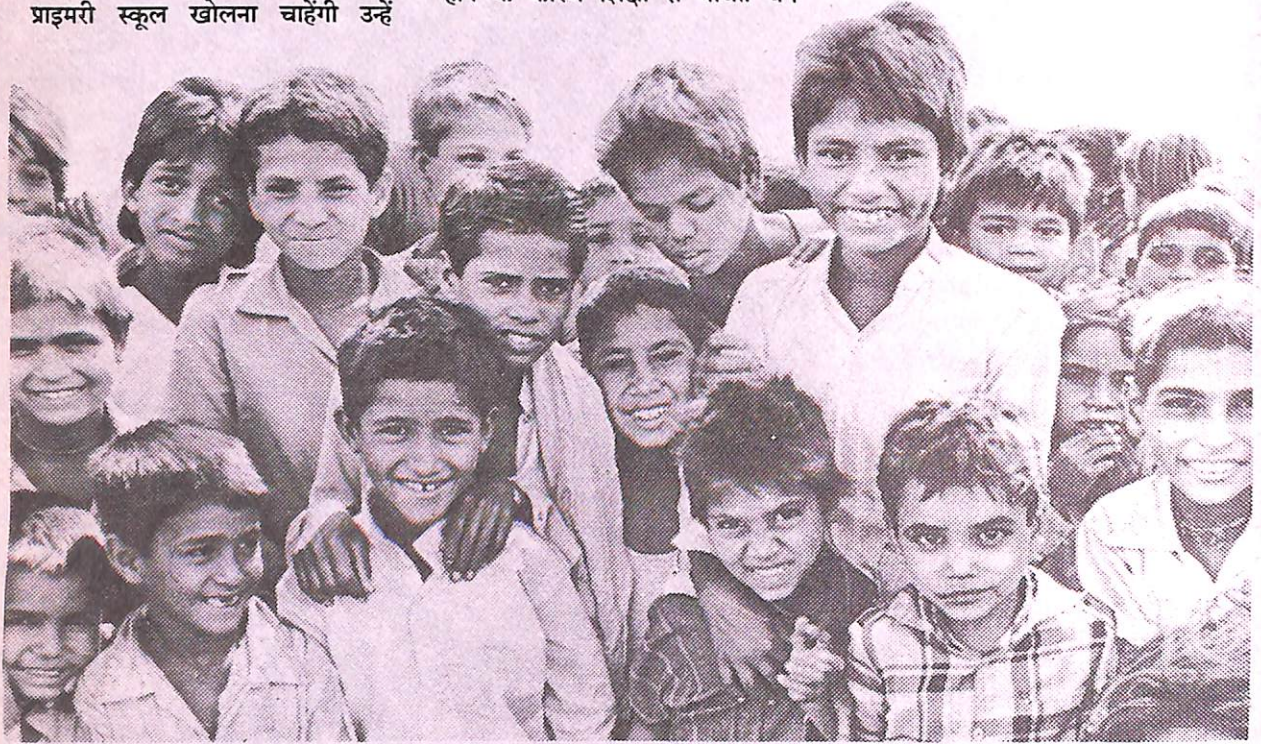
प्रथम भारतीय फीचर फिल्म बनाने का श्रेय *दादा साहब फालके* को मिला और उन्हें भारतीय सिनेमा के पितामह के रूप में मान्यता मिली। दादा साहब फालके पूरी तरह से सिनेमा में डूब गये थे। जिन फिल्मों का उन्होंने निर्माण किया उनके कई निर्माण पक्ष भी स्वयं ही संभाले। *राजा हरिशचन्द्र* के निर्देशक, कास्ट्यूम डिजाइनर, कैमरामैन तथा सम्पादक वे स्वयं थे। उन्होंने सिनेमा को भारत में लोकप्रिय बनाने के लिए हर संभव प्रयास किया। अपनी फिल्म की प्रिन्ट लेकर उसे नगर-नगर दिखाने के लिए वे स्वयं घूमे। फिल्मों का प्रदर्शन करने के पूर्व वे वातावरण का निर्माण करते थे। उदाहरण के लिए सूरत जैसे छोटे शहर में *राजा हरिशचन्द्र* का प्रदर्शन करने के पूर्व वे दर्शकों को जादू का खेल दिखला कर वातावरण बनाते थे। इसीलिए उन्हें भारतीय सिनेमा का पितामह कहना अतिशयोक्ति नहीं है।

बाद में दादा साहब फालके ने हिन्दुस्तान फिल्म कम्पनी की नासिक में स्थापना की। उन दिनों फिल्में मूक थी अतः भाषा का कोई प्रश्न ही नहीं था। वे सारे देश के लिये मनोरंजन का माध्यम मुहैया करने के लिये प्रयत्नशील थे। फिल्म में अभिनेता तथा वेशभूषा मुख्यतः महाराष्ट्रीय होती ती। रानी तारामती भी नौ गजी महाराष्ट्रीयन साड़ी पहने हुए दिखाई पड़ती थी। इसी दौरान अन्य महाराष्ट्रीय बाबूराव पेन्टर ने कोल्हापुर में 'महाराष्ट्रीय फिल्म कम्पनी लिमिटेड' स्थापित की। बाबूराव स्वयं उत्कृष्ट अभिनेता थे तथा रंगमंच से जुड़े थे। उन्हें 'भारतीय सिनेमा का कला महर्षि' कहा जाता है। बाबूराव पेन्टर ने सिने निर्माण की धारा को धर्म के साथ ही इतिहास से भी जोड़ा। पहली फिल्म *सैरन्धी* की सफलता के बाद उन्होंने सिंहगढ़ का निर्माण किया। फिल्म की पृष्ठभूमि शिवाजी के काल का स्वर्णिम प्रसंग था। इसके बाद 1925 में उन्होंने *सावकारी पाश* का निर्देशन किया। निर्देशन में उनके सहायक के रूप में वी. शान्ताराम ने काम किया था तथा साथ ही फिल्म में किसान की भूमिका भी की थी। *सावकारी पाश* क्रूर वास्तविकता को परदे पर प्रदर्शित करने वाली पहली फिल्म थी। इस प्रकार फालके एवं बाबूराव पेन्टर ने मराठी सिनेमा को विकसित करने के लिए ठोस आधार तैयार किया। उन दिनों सिनेमा को दृश्य भाषा एवं अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में विकसित करने का यह ठोस प्रयास था। बाबूराव पेन्टर तो अपने आप में गुरू नहीं साक्षात गुरूकुल थे। महाराष्ट्रियन फिल्म कम्पनी के माध्यम से उन्होंने तीन सौ तकनीशियन तैयार किये। इन सभी ने मराठी सिनेमा को यश शिखर तक पहुँचाने में योगदान दिया। कोल्हापुर में सन् 1929 में गठित प्रभात फिल्म कम्पनी के पाँचों सूत्रधार बाबूराव से घनिष्ठ जुड़े लोग ही थे।

वी. शान्ताराम ने कई सफल मूक फिल्मों का निर्माण करने के बाद प्रभात के लिए सन् 1932 में प्रथम मराठी बोलती फिल्म *अयोध्याचा राजा* का निर्माण किया। देशव्यापी बाज़ार का फायदा लेने के लिए इसे हिन्दी में भी बनाया गया था। फिल्म में दुर्गाखोटे एवं गोविन्दराव टेम्बे की मुख्य भूमिकाएँ थीं। इस फिल्म का मराठी भाषी दर्शकों ने हार्दिक स्वागत किया। इसी वर्ष भाल जी पेंढारकर द्वारा निर्देशित मराठी फिल्म *श्याम सुन्दर* प्रदर्शित हुई। बम्बई में 25 सप्ताह चलकर इस फिल्म ने रजत जयन्ती मनाने वाली पहली भारतीय फिल्म होने का गौरव प्राप्त किया।

प्रारंभिक मराठी सवाक् फिल्मों में रंगमंच का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। फिल्म निर्माता रंगमंच की प्रभावशाली संवाद अदायगी की शैली का फायदा फिल्मों में लेने का लोभ संवरण न कर पाये जब शान्ताराम ने एक्शन फिल्म *अग्निकंकण* का निर्माण किया तथा जिप्सियों द्वारा पाले गये राजकुमार की इस कहानी में संवाद अदायगी की भिन्न शैली का प्रयोग किया तब अन्य निर्माताओं को भी समझ आया कि रंगमंच के लटके झटकों की फिल्म में ज़रूरत नहीं है।

उस समय तक मराठी सिनेमा हिन्दी सिनेमा से कई मामलों में आगे था। हिन्दी थिएटरों में 'न्यू थिएटर कलकत्ता' तथा 'बाम्बे टॉकीज' ही प्रमुख थे। पहली सवाक् फिल्म *अयोध्याचा राजा* में नारद की भूमिका करने वाले विनायक ने पहली मराठी सामाजिक फिल्म का निर्माण 1934 में किया। *विलासी ईश्वर* नामक यह फिल्म मामा वरेरकर द्वारा लिखी गयी थी, जो मराठी के प्रमुख नाटककार थे। शान्ताराम ने बेमेल विवाह पर *कुंकू* (हिन्दी संस्करण *दुनिया ना माने* ' का निर्माण किया। फिल्म में युवा पत्नी पिता की आयु वाले बूढ़े पति के विरूद्ध विद्रोह की मुद्रा अपनाती है। फिल्म में कई नये तकनीकी प्रयोग भी किये गये। नेपथ्य संगीत के स्थान पर स्वाभाविक ध्वनियों का प्रयोग किया गया। पुरानी दीवाल घड़ी का प्रतीकात्मक उपयोग इतना सटीक और सहज हुआ कि घड़ी फिल्म के पात्रों में से एक लगने लगी। सिनेमा का माध्यम के रूप में उपयोग तथा सिनेमा की भाषा पर उनकी पकड़ काफी गहरी थी। उनकी फिल्म *मानुष* (हिन्दी संस्करण "आदमी") एक वेश्या के ऊहापोह तथा पुलिस कांस्टेबल की उस विजय को दर्शाती थी जो उसने निजी दुखों को भुलाकर कर्तव्य अदा करते हुए प्राप्त की थी। यह फिल्म 'देवदास' की लिजलिजी भावुकता का करारा जवाब थी जिसमें प्रेम को हर कर्तव्य में ऊँचा सिद्ध करने की कोशिश की गयी थी। शान्ताराम की फिल्म में यह बताया गया था प्रेम में असफलता एक दुर्घटना है तथा व्यक्ति को ऐसी दुर्घटनाओं से उबरने का प्रयास करना चाहिए। शान्ताराम् की तीसरी सामाजिक फिल्म *शेजारी* (हिन्दी संस्करण *पडोसी*) प्रभात के बैनर तले उनकी आखिरी फिल्म थी। तीस के दशक में उन्होंने भक्ति प्रधान फिल्मों *धर्मात्मा तुकाराम एवं ज्ञानेश्वर* का निर्माण किया।

विनायक ने कॉमेडी फिल्मों के निर्माता के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त की, उनकी पहली कॉमेडी फिल्म आचार्य अत्रे द्वारा लिखित *धर्मवीर* थी बाद में *प्रेमवीर, ब्रह्मचारी तथा ब्रांडीची बाटली* आयी। हंस पिक्चर्स के बैनर तले विनायक ने परिस्थिति जन्य कॉमेडी फिल्मों का निर्माण किया। धीरे-धीरे कॉमेडी मराठी सिनेमा की ऐसी स्थायी शैली बन गयी जो अन्य भाषाई सिनेमा में बिलकुल अलग थी।

महायुद्ध के वर्षों में आचार्य अत्रे विनायक से अलग हो गये तथा अपने स्टुडियो चित्र मन्दिर में फिल्मों का निर्माण करने लगे। उनकी पहली फिल्म *पायाची दासी* जोरदार हिट रही। इसी दौरान सरकार ने फिल्म निर्माण के लिए लाइसेन्स प्रथा शुरू की। फिल्म के खर्च में किफायत के लिए अधिकतम लम्बाई ग्यारह हजार फुट निश्चित की गयी। मराठी फिल्मों के निर्माताओं ने बेहतर नतीजे के लिए हिन्दी फिल्मों के निर्माण की ओर मुड़ना शुरू किया। शान्ताराम ने प्रभात छोड़ने के बाद *राजकमल* कला मन्दिर संस्था प्रारंभ की। पहली फिल्म *शकुन्तला* का निर्माण हिन्दी में किया। इसी दौरान प्रभात की *रामशास्त्री* प्रदर्शित हुई। स्थिति इतनी दयनीय हो गयी कि सन् 1946 में एक भी मराठी फिल्म प्रदर्शित नहीं हुई।

मराठी पहली बोलती फिल्म अयोध्या चा राजा (1932)

स्वाधीनता के सूर्योदय के बाद मराठी फिल्म निर्माताओं को अपना भविष्य स्वर्णिम प्रतजीत हुआ। शान्ताराम ने *रामजोशी* (हिन्दी संस्करण मतवाला शायर रामजोशी) के साथ नवयुग की शुरूआत की। मंगल पिक्चर्स ने *जय मल्हार* का निर्माण किया दोनों ही चित्रों में मराठी लोकसंगीत लावणी का उपयोग किया गया था। रामजोशी की कहानी पेशवाई काल के पूना से जुड़ी थी तथा जय मल्हार के कथानक की पृष्ठभूमि थी महाराष्ट्र का देहात। दोनों ही फिल्में हिट हुई। दर्शकों के वर्ग तथा मनोवृत्ति में भी तेजी से बदलाव हुआ। युद्ध के पूर्व दर्शकों का बड़ा वर्ग पढ़े-लिखे मध्यमवर्गीय लोगों का था मगर युद्ध के कारण मज़दूरों तथा किसानों का एक हिस्सा काफी समृद्ध हो गया तथा मनोरंजन के लिए सिनेमा के टिकटों पर पैसे खर्च करने लगा। इसीलिए शान्ताराम की *अमर भूपाली* तथा अनन्त माने की *सांगत्या एका* सफल रही। दर्शकों के नये वर्ग के समर्थन के कारण दोनों फिल्में हिट रही। *सांगत्या एका* ने तो सारे पुराने कीर्तिमान तोड़कर पुणे में 132 सप्ताह चलकर नया कीर्तिमान स्थापित किया।

राजा परांजये, दत्ता धर्माधिकारी राजा ठाकुर, राम गबाले, विश्राम बेड़ेकर आदि स्वाधीनता बाद के मराठी फिल्मों के जाने-माने निर्देशक रहे। *लाखाची गोष्ट पेडगाँवांचे शहाणे जव्सस तासे बाला जो जो रे वहिणीची बांगड्या, गुलाचा गणपति* आदि फिल्में निर्मित हुई।

आचार्य अत्रे ने सन् 1952 में इतिहास को नया मोड़ दिया। उनकी फिल्म *श्यामची आई* को इस वर्ष का राष्ट्रपति द्वारा वर्ष की सर्वश्रेष्ठ फीचर फिल्म का स्वर्ण पदक प्राप्त हुआ। हिन्दी फिल्मों का भारी बजट तथा हिन्दी फिल्म निर्माताओं के विपुल साधनों के कारण मराठी फिल्म निर्माताओं को काफी परेशानी का सामना करना पड़ा। उनके उत्कर्ष की आशाएँ धूमिल पड़ने लगी। सन् 1960 में नवीन महाराष्ट्र प्रदेश का गठन हुआ। राज्य सरकार ने मनोरंजन कर से मुक्ति प्रदान कर उद्योग को भारी राहत प्रदान की। इस राहत से पनपने की कोशिशों में व्यस्त उद्योग के लिए उसी दौरान रंगमंच नयी चुनौती के रूप में आ खड़ा हुआ। उस काल की अधिकांश मराठी फिल्में लोकनाट्य *तमाशा* पर ही आधारित थी। केवल राजा परांजपे ही लीक से हटकर बढ़िया फिल्में बना रहे थे। उनकी *जगाचे पाठीवर, सुवासिनी* तथा *हा माझा मार्ग एकला* हर दृष्टि से उत्तम फिल्में थी। केन्द्रीय सरकार की तर्ज़ पर ही राज्य सरकार ने मराठी फिल्मों को प्रतिवर्ष पुरस्कृत करने की परम्परा सन् 1962 से शुरू की। इसी वर्ष पहले फिल्म महोत्सव में मधुकर पाठक द्वारा निर्देशित *प्रपंच* को सर्वश्रेष्ठ फिल्म का अवार्ड मिला। निर्देशकों की नयी पीढ़ी में मधुकर पाठक, राज दत्त (दोनों राजा परांजपे के सहायक रह चुके थे) तथा कमलाकर तोरणे प्रमुख थे। इतना होने पर भी साठ का दशक मराठी फिल्मों के लिए अच्छा नहीं रहा। ग्रामीण दर्शकों पर अवलम्बित फिल्में दर्शकों को थिएटर तक खींच पाने में असमर्थ रहीं।

सन् 1970 में दो फिल्मों ने थिएटर की खिड़कियों पर दर्शकों की कतार लगवाने में क़ामयाबी हासिल की। इनमें से एक थी दादा कोंडके की *सोंगाण्या* तथा दूसरी बी. शान्ताराम की *पिंजरा, मराठी की पहली रंगीन फिल्म थी।* सन् 1975 में महाराष्ट्र सरकार ने लड़खड़ाते मराठी फिल्मोद्योग को सहारा देने का ठोस तथा गंभीर प्रयास किया। निर्माताओं को मनोरंजन कर की रकम

मास्टर विनायक-मीनाक्षी : फिल्म ब्रम्हचारी (1938)

वापस करने की जो योजना लागू की गयी उसके तहत प्राप्त मनोरंजन कर में से अधिकतम आठ लाख रूपए तक की रकम वापस हो सकती थी बशर्ते कि निर्माता इस रकम का उपयोग नई फिल्म के निर्माण के लिए करे। इस योजना ने मराठी फिल्मोद्योग को नवजीवन प्रदान किया। मराठी फिल्मों की निर्माण संख्या का वार्षिक औसत पन्द्रह से बढ़कर तीस हो गया। सन् 1980 में दो नये युवा निर्देशकों का प्रवेश मराठी फिल्मों में हुआ। महेश कोठारे एवं सचिन दोनों ही हिन्दी फिल्मों के बाल कलाकार रह चुके थे तथा अपनी मातृभाषा में फिल्म निर्माण करने की तमन्ना लेकर उन्होंने काम शुरू किया। इन दोनों के प्रयासों से युवा वर्ग मराठी फिल्मों की ओर तेज़ी से आकर्षित हुआ। महेश कोठारे की 'धूम धड़ाका' तथा सचिन की *नवरी मिली नवराल्या* भारी हिट रही। इन फिल्मों ने यह भ्रम भी दूर कर दिया कि मराठी फिल्में सिर्फ ग्रामीण दर्शकों की कृपा के सहारे जीवित है। इसी दौरान जब्बार पटेल ने *सामना उम्बरठा* तथा *सिंहासन* का निर्माण किया। अमोल पालेकर ने *आक्रीत* बनायी एन.डी. व राजदत्त ने *देवकी नन्दन गोपाला* का निर्माण किया। सभा फिल्में उच्च स्तर की थी तथा दर्शकों को आकर्षित करने में सफल रही। मराठी फिल्मोद्योग में ताज़ी हवा का झोंका-सा आ गया।

अस्सी के दशक के आखिरी वर्षों में मराठी सिनेमा में कॉमेड़ी की तूती बोलने लगी। लक्ष्मीकांत बेर्डे तथा अशोक सराफ जैसे कॉमेडियन हर फिल्म के किए अनिवार्य से बन गये। कॉमेडी की शैली और रूप में भी बदलाव आया, विनायक के सामाजिक व्यंग्यों से यह कॉमेडी बिलकुल अलग थी। सन् 90 तक यह लगने लगा कि मराठी सिनेमा में *कॉमेडी* की मात्रा जरूरत से कहीं ज्यादा हो गयी है। नयी थीम तथा विषयों की ज़रूरत महसूस की जाने लगी। इसी दौरान स्मिता तलवलकर *कलत नकलत* लेकर आयी जिसे राष्ट्रीय अवार्ड मिला। राज्य सरकार की टैक्स वापसी योजना ने उद्योग को स्थापित तो किया मगर फिल्मों की गुणवत्ता भी कम हो गयी। इक्की-दुक्की अच्छी फिल्में ही बनीं।

अब रंगमंच से नयी प्रतिमाएँ मराठी सिनेमा में आ रही हैं तथा आशा है कि शताब्दी के आखिरी दशक में मराठी सिनेमा नया मोड़ लेगा तथा उद्योग को पुराने स्वर्णयुग में पहुँचा देगा। ●

भारतीय फिल्म घटनाक्रम 1896 से

1896

- 7 जुलाई को देश में पहली बार ल्युमिए ब्रदर्स की फिल्मों का बंबई की वाटसन होटल में प्रदर्शन। प्रदर्शित फिल्में एराइवल ऑफ ए ट्रेन, सी वेदर्स, लंदन गर्ल डांसर्स आदि। हरीशचंद्र सखाराम भाटवड़ेकर ने मूवी केमरा खरीदा।

1897

- जनवरी में कलकत्ता में पहली बार फिल्मों का प्रदर्शन।
- भाटवड़ेकर ने बम्बई के हेंगिंग गार्डन में एक कुश्ती मुकाबले की फिल्म उतारी।

1898

- कलकत्ता में हीरालाल सेन द्वारा मूवी कैमरा और दूसरे उपकरणों की खरीद।

1901

- पी. परांजपे केम्ब्रिज से गणित में विशेष योग्यता अर्जित कर लौटे। भाटड़ेकर, ने इस समारोह का कवरेज कर भारत की पहली न्यूज रील तैयार की।
- 25 दिसम्बर को बंबई के गेटी सिनेमाघर में 'लाइफ आफ क्राइस्ट', 'द क्वीन्स फ्यूनरल प्रोसेसन', 'असेसिनेशन ऑफ मेकिनले' का प्रदर्शन।

1902

- जमसेद जी फ्रेमजी मदन (1856-1923) द्वारा कलकत्ता में फिल्म व्यवसाय प्रारंभ।

1903

- भाटड़ेकर ने एडवर्ड सप्तम के पदारोहण समारोह को फिल्माया। हीरालाल सेन ने कुछ नाटकों की फिल्में उतारीं।

1907

- जे.एफ. मदन ने कलकत्ता में एलफिस्टोन पिक्चर पेलेस नामक सिनेमा का निर्माण किया।

1908

- अब्दुल अली इसुफ अली ने एक हजार लोगों की क्षमता वाले टेंट में फिल्मों का प्रदर्शन शुरू किया।

Ɖ10

- डी.जी. फालके ने 'लाइफ ऑफ क्राइस्ट' फिल्म सपत्नीक देखी।

1912

- घुंडिराज गोविंद फालके (1870-1944) फिल्म उपकरण लेकर इंग्लैंड से लौटे। उनकी पहली फिल्म 'मटर के पौधे' के विकास पर थी।

1913

- फालके ने पहली फीचर फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' तैयार की। तीन हजार सात सौ फुट लंबी (चार रील) यह फिल्म बम्बई के कोरोनेशन थिएटर में 3 मई से आम लोगों के लिए प्रदर्शित की गई।

1914

- फालके ने अपनी पहली तीन फिल्मों का लंदन में प्रदर्शन किया।

1915

- धीरेन्द्र नाथ गंगोपाध्याय ने ट्रिक-स्टिल फोटोग्राफी पर पुस्तक प्रकाशित की।

1917

- जे.एफ. मदन ने 'सत्यवादी राजा हरिशचन्द्र' नाम से पहली बंगला फीचर फिल्म बनाई।
- फालके ने एक छोटी फिल्म तैयार की 'हाउ फिल्म्स आर प्रिपेयर्ड' (फिल्में कैसे बनती हैं?)। फिल्म का उद्देश्य जनता को शिक्षित करना था।

1918

- इसुफअली और उनके भागीदारों ने बंबई में मेजेस्टिक सिनेमाघर का निर्माण।

- फिल्मों की सेंसरशिप और लाइसेंस के संबंध में इंडियन सिनेमेटेग्राफ कानून बना।
- एस.एन. पाटनकर ने 'एक्जाइल ऑफ श्री राम' नाम से पहला धारावाहिक तैयार किया।

1919

- बंगाल में 'विल्वमंगल' नाम से ज्योतिष बनर्जी ने और मद्रास में आर नटराज मुदालियार ने 'कीचक वधम्' नाम की पूरी लंबाई की गूंगी फिल्में बनाईं।

1920

- जे.एफ. मदन द्वारा 'नल दमयंती' का निर्माण।
- बाबूराव पेंटर ने महाराष्ट्र फिल्म कंपनी शुरू की और पहली फिल्म प्रदर्शित की 'सैरंध्रि'
- अमेरिका में प्रशिक्षित सुचेत सिंह ने सात रील की 'शकुंतला' फिल्म प्रदर्शित की, जिसे उन्होंने विदेशी कलाकारों की मदद से बनाया था।
- डॉ. एन. सम्पत ने बंबई में कोहिनूर फिल्म कंपनी की शुरूआत की।

1921

- धीरेन गांगुली (कलकत्ता) द्वारा "इंग्लैंड रिटर्नड़" का निर्माण। पहली सामाजिक व्यंग्यात्मक फिल्म।
- मद्रास में वीटेकर ने "वल्ली थिरूमनम" बनाई जो बॉक्स आफिस पर सफल रही।

1922

- बंगाल और बंबई में मनोरंजन-कर लागू।
- धीरेन गांगुली ने हैदराबाद में "लोटस" फिल्म कंपनी प्रारंभ की।

1924

- लोटस फिल्म कंपनी ने बंबई की फिल्म "रजिया बेगम" का हैदराबाद में प्रदर्शन किया। इससे निजाम नाराज। चौबीस घंटे के भीतर गांगुली और उनके साथियों को निजाम ने रियासत छोड़कर जाने के आदेश दिए।

1925

- बाबूराव पेंटर ने 'सावकारी पाश' बनाई। एक भारतीय किसान को साहूकारों द्वारा शोषित किये जाने की व्यथा को लेकर यह पहली यथार्थवादी फिल्म थी। वी. शांताराम द्वारा युवा किसान की भूमिका।
- चंदूलाल शाह ने 'गुण सुंदरी' का निर्माण किया।

1926

- फ्रांज आस्टिन और हिमांशु राय ने ई. अर्नोल्ड की कविता के आधार पर 'द लाइट ऑफ एशिया' बुद्ध के जीवन पर फिल्म बनाई।

1927

- इंडियन सिनेमेटोग्राफ कमेटी की नियुक्ति। दीवान बहादुर टी. रंगाचारीएर पहले अध्यक्ष।
- बाबूराव पेंटर द्वारा ऐतिहासिक फिल्म बनाई-नेताजी पालकर।
- आर्देशिर ईरानी ने बंबई में इम्पीरियल फिल्म कंपनी शुरू की।

1928

- जे.सी. डेनियल ने पहली मलयालम फिल्म "विगडा कुमारन" बनाई।

1929

- कोल्हापुर में प्रभात फिल्म कंपनी और बंबई में रणजीत फिल्म कंपनी प्रारंभ।
- 'मेलोडी ऑफ लव' (यूनिवर्सल फिल्म) भारत में पहली बोलती फिल्म का प्रदर्शन। फिल्म कलकत्ता में प्रदर्शित हुई।

1930

- विदेश में प्रकाशित बी.एन. सरकार ने कलकत्ता में न्यू थिएटर की नींव रखी।

1931

- देश की पहली बोलती फिल्म 'आलम आरा' प्रदर्शित। निर्माण अर्देशिर एम.ईरानी। बारह गानों वाली यह फिल्म 14 मार्च को मेजेस्टिक थिएटर, बंबई में प्रदर्शित।
- तमिल में पहली बोलती फिल्म 'कालिदास' का टी.पी. राजलक्ष्मी द्वारा निर्माण।
- मदन ने बंगाली में 'जमाई सष्ठी' बोलती फिल्म तैयार की।
- एच.एम. रेड्डी द्वारा तेलगू में पहली बोलती फिल्म 'भक्त प्रहलाद' का निर्देशन।
- श्यामसुन्दर अग्रवाल द्वारा गूंगी फिल्म 'फॉल ऑफ स्लेवरी' का निर्माण।

1932

- 'द मोशन पिक्चर सोसाइटी ऑफ इंडिया' का गठन।
- 'कृष्णकांतेर विल' बंगाली फिल्म प्रदर्शित। निर्देशक, जे. बनर्जी।
- वी. शांताराम के निर्देशन में हिंदी और मराठी में 'अयोध्याचा राजा' का निर्माण।
- देवकी बोस ने बंगाली में 'चंडीदास' फिल्म बनाई। बेक ग्राउंड संगीत का कामयाब प्रयोग। संवादों की जगह संगीत का प्रयोग।

1933

- हिमांशु राय ने 'कर्मा' फिल्म की इंग्लैंड में शूटिंग की। देश की पहली अंग्रेजी फिल्म। देविका रानी नायिका।
- वी. शांताराम ने प्रभात फिल्म कंपनी से 'सैरांध्रि' लेकर कलर प्रिंटिंग के लिए जर्मनी भेजी।

1934

- पृथ्वीराज कपूर और दुर्गा खोटे को लेकर देवकी बोस द्वारा बनाई गई फिल्म 'सीता' का वेनिस फिल्म समारोह में प्रदर्शन।
- पी.वी.दास द्वारा पहली तेलगु बोलती फिल्म 'सीता कल्याणम्' का निर्माण।
- ए नारायणन् ने पहली बार तमिल में बोलती फिल्म 'श्रीनिवास कल्याणम्' बनाई। आर. बी. लक्ष्मीदेवी हीरोइन।
- कन्नड़ में भी जयवाणी टॉकी द्वारा निर्मित बोलती फिल्म 'ध्रुवकुमार' का प्रदर्शन। मास्टर मेथ्यू मुख्य भूमिका में।

1935

- बंबई में पहली बार ऑल इंडिया मोशन पिक्चर कन्वेनशन का आयोजन।
- हिमांशु राय और देविका रानी ने 'बॉम्बे टॉकीज ' की नींव रखीं।
- प्रभात फिल्म कंपनी की 'अमर ज्योति' को चौथे अंतरराष्ट्रीय सिनेमेटोग्राफ कला प्रदर्शनी के लिए वेनिस भेजा गया।
- सोहराब मोदी द्वारा शेक्सपीयर के नाटक 'हेमलेट' पर 'खून का खून' का निर्माण किया।

1936

- प्रभात की फिल्म 'अमर ज्योति' वेनिस के चौथे अंतरराष्ट्रीय फिल्म समारोह में शामिल।
- फ्रांज आस्टिन ने हिंदी में 'अछूत कन्या' बनाई।
- बंगाल मोशन पिक्चर एसोसिएशन का गठन।
- "वसंतसेना" के जरिए तमिल सिनेमा के पर्दे पर एन.एस. कृष्णनन और टी.ए मदुरम् की जोड़ी का हास्य अभिनेता के रूप में आगमन। इस जोड़ी ने 130 से ज्यादा फिल्मों में काम कर कीर्तिमान बनाया।

1937

- इंडियन मोशन पिक्चर प्रोड्यूसर्स एसोशिएशन (इम्पा) का बंबई में गठन।
- अर्देशिर एम. ईरानी ने देश की पहली रंगीन फिल्म 'किसान कन्या' तैयार की।
- वेनिस के पाँचवे फिल्म समारोह में संत तुकाराम (मराठी) को तीन श्रेष्ठ फिल्मों में स्थान प्राप्त।
- वी. शांताराम ने 'दुनिया ना माने' बनाई। क्रांतिकारी विषयवस्तु को लेकर बनाई गई इस फिल्म में शांताराम ने बेकग्राउंड संगीत का प्रयोग न करते हुए वातावरण की ध्वनि के प्रभाव दिए।
- तमिल में बनी 'चिंतामणि' (निर्देशन वाय.वी. राव) ने एक सिनेमा घर में एक साल से ज्यादा चलकर नया रिकार्ड कायम किया।

1938

- साउथ इंडियन फिल्म चेम्बर ऑफ कामर्स का मद्रास में और इंडियन मोशन पिक्चर डिस्ट्रीब्यूटर्स एसोसिएशन का बंबई में गठन।
- मॉडर्न थिएटर के बैनर तले मलयालम की पहली बोलती फिल्म 'बालन' का नोटानी द्वारा निर्देशन।

1939

- बंबई में भारतीय सिनेमा का रजत जयंती समारोह आयोजित।
- वी.एन. रेड्डी के निर्देशन में तेलगु में 'वंदे मातरम्' बनी। अँग्रेजी सरकार द्वारा फिल्म का नाम वंदेमातरम् आश्रम किया गया।

1940

- फिल्म सलाहकार मंडल का गठन।
- बॉम्बे टॉकीज के संस्थापक हिमांशु राय का निधन

1941

- के.ए अब्बास की कहानी पर हिंदी में 'नया संसार' बनी।
- 'द कोर्ट डांसर' (निर्देशन वाडिया), भारत की पहली बोलती अंग्रेजी फिल्म।

- केदार शर्मा ने भगवती चरण वर्मा के उपन्यास पर 'चित्रलेखा' बनाई। यह फिल्म काफी चर्चित हुई।
- प्रभात के लिए वी. शांताराम की अंतिम फिल्म 'पड़ौसी' (हिंदी) और 'शेजारी' (मराठी) निर्मित।
- डी. एम. पंचोली (लाहौर) ने 'खज़ांची' बनाई। पंजाबी लोक संगीत के फिल्मों में प्रयोग की परम्परा आरंभ।

1942

- बंगाल के भीषण अकाल पर 'बंगाल की पुकार' शीर्षक से 10 मिनट की फिल्म तैयार।

1943

- इंडियन न्यूज परेड शुरू। सूचना प्रधान फिल्मों का निर्माण प्रारंभ। वृत्तचित्रों और न्यूजरीलों का प्रदर्शन शुरू। डी.आई. आर 44 ए के तहत फिल्मों के लिए सरकारी मंजूरी जरूरी।

1944

- भारतीय सिनेमा के पितामह दादा साहब फालके का निधन।
- तमिल में बनी 'हरिदास' ने मद्रास के एक सिनेमा घर में लगातार 133 हफ्ते चलकर नया बॉक्स आफिस रिकार्ड बनाया।
- प्रभात के बैनर तले 'रामशास्त्री' (मराठी) का निर्माण। इस बैनर की यह अंतिम फिल्म।

1945

- कच्ची फिल्मों के विरतण पर लगा प्रतिबंध हटा।

1946

- डिफेंस ऑफ इंडिया रूल्स के समाप्त होने के साथ ही फिल्मों की लंबाई और सरकारी मंजूरी संबंधी प्रतिबंध खत्म।
- ख्वाजा अहमद अब्बास ने बंगाल के अकाल पर 'धरती के लाल' (हिंदी) बनाई। मास्को में 1949 में दिखाई गई यह पहली भारतीय फिल्म थी।
- 'इन्फार्मेशन फिल्म्स ऑफ इंडिया' बंद।

1947

- भारत की आजादी पर इम्पा (IMPPA) द्वारा 'आजादी के उत्सव' का निर्माण।
- निर्देशक मास्टर विनायक और गायक के.एल. सहगल का निधन।
- चित्रलेखा मूवीटोन ने 'ब्रोकन प्रामिस' बनाई। भारतीय स्टुडियो में बनी पहली सिंहली फिल्म।

अशोक कुमार-देविका रानी : अछूत कन्या (1936)

पृथ्वीराज-राजकपूर : फिल्म वाल्मिकी (1946)
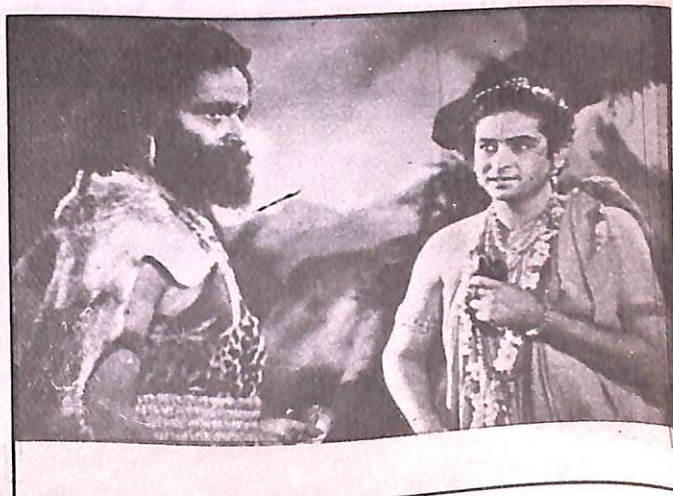
- बॉम्बे टॉकीज की 'किस्मत' (1943) ने कलकत्ता के सिनेमाघर में साढ़े तीन साल तक लगातार चलकर सभी रिकार्ड तोड़े।
- 'डॉ. कोटनिस की अमर कहानी' को वेनिस समारोह में प्रशंसा प्राप्त।
- 'शकुंतला' (1943) न्यूयार्क में प्रदर्शित।

1948

- मद्रास तथा बंबई में सेंसर कोड तैयार।
- सरकार के फिल्म डिवीजन के तहत वृत्तचित्रों और न्यूजरीलों का निर्माण पुनः प्रारंभ।
- नर्तक और कलाकार उदय शंकर ने नृत्य को आधार बनाकर 'कल्पना' बनाई। भारतीय सिनेमा में अपनी तरह की एकमात्र फिल्म।
- एम. भावनानी ने पूरी लंबाई की रंगीन फिल्म 'अजीत (16 एम.एम.) का निर्देशन किया।

1949

- सरकार की करनीति के विरोध में 30 जून को देश भर के सिनेमाघर बंद रहे।
- एस.के. पाटिल की अध्यक्षता में फिल्म जाँच समिति का गठन।
- डी.एम. के. नेता अन्नादुराई और करुणानिधि ने 'वेल्लईकरी' (तमिल) बनाकर फिल्मी दुनिया में प्रवेश किया।
- अभिनेता चंद्रमोहन, कामेडियन दीक्षित और वी.एच. देसाई का निधन।

1950

- निमाई घोष ने बंगाली में छिन्नमूल बनाई। इप्टा कलाकारों की मदद से। विभाजन के कारण पैदा हुई विस्थापन की त्रासदी पर बनी इस फिल्म को सोवियत संघ में खास शोहरत मिली।
- अभिनेता मजहर खान ,संगीतकार खेमचंद प्रकाश ,निर्माता राय बहादुर चुन्नीलाल (अध्यक्ष इम्पा) का देहान्त।

1951

- सेंट्रल बोर्ड ऑफ फिल्म सेंसर का गठन।
- फिल्म फेडरेशन ऑफ इंडिया का निर्माण। अध्यक्ष चंदूलाल जे. शाह बने।
- मद्रास में सिम्पसा और भुसावल में सी.सी.सी.ए का गठन।
- राजकपूर की 'आवारा' प्रदर्शित। सोवियत संघ और मध्य पूर्व में फिल्म को जबर्दस्त कामयाबी।
- फिल्मकार पी.सी. बरूआ का निधन।

1952

- सिनेमेटोग्राफ, एक्ट-1952 लागू (1918 के एक्ट की जगह)।
- भारत में पहली बार अंतरराष्ट्रीय फिल्म समारोह का चार महानगरों (बम्बई, मद्रास, दिल्ली, कलकत्ता) में आयोजन।
- बंबई में आल इंडिया फिल्म कान्फ्रेंस आयोजित।
- 'बावला' फिल्म ने चेकोस्लावाक फिल्म समारोह में पुरस्कार जीता।
- 'मिनर्वा' मूवीटोन्स के बैनर तले 'झांसी की रानी' का निर्माण। देश की पहली टेक्नीकलर फिल्म।

1953

- विमल रॉय की 'दो बीघा जमीन' प्रदर्शित। 1954 में कान फिल्म समारोह में पुरस्कार मिला।
- महान तमिल कवि अवव्यार के जीवन वृत्त पर आधारित फिल्म के लिए एस.एस. वासन का नागरिक सम्मान

1954

- फिल्मों के लिए राष्ट्रीय पुरस्कारों की शुरुआत ।मराठी फिल्म 'श्यामची आई' को राष्ट्रपति का स्वर्ण पदक।
- बाबूराव पेंटर का निधन

1955

- भारतीय प्रतिनिधि मंडल द्वारा चीन यात्रा। पृथ्वीराज कपूर के नेतृत्व में।
- 'झनक झनक पायल बाजे' के लिए वी. शांताराम का सार्वजनिक सम्मान।
- सत्यजित रॉय की क्लासिक फिल्म पाथेर-पंचाली (बंगाली) प्रदर्शित। इस फिल्म से भारतीय सिनेमा ने नई ऊँचाइयों को छुआ। विश्व सिनेमा में भारतीय सिनेमा को एक नया अर्थ और नया स्वरूप हासिल हुआ।
- चिल्ड्रन फिल्म सोसाइटी ने कामकाज प्रारंभ किया।

1956

- राजकपूर की 'जागते रहो' को ग्राँ-प्रि पुरस्कार, कार्लोवी वेरी इंटरनेशनल फिल्म फेस्टीवल में।
- बोलती फिल्मों के पच्चीस साल पूरे होने पर बंबई में समारोह।
- चिल्ड्रन फिल्म सोसाइटी की 'जल दीप' ने वेनिस समारोह में पहला पुरस्कार जीता।

- सत्यजित रॉय की 'पाथेर-पंचाली' ने कान अंतरराष्ट्रीय समारोह में पुरस्कार प्राप्त किया- बेस्ट ह्यूमन डाक्यूमेंट के रूप में ।
- टी.एम. रामचंद्रन को अंतरराष्ट्रीय ज्यूरी का सदस्य बनाकर कार्लोवीवेरी फिल्म समारोह में आमंत्रित । भारत के पहले पत्रकार-समालोचक, जिन्हें यह गौरव मिला ।

1957

- 'प्यासा' (हिंदी -निर्देशन गुरुदत्त) और 'मदर इंडिया' (हिन्दी-निर्देशन महबूब खान) प्रदर्शित ।
- सोवियत संघ के सहयोग से के.ए. अब्बास ने 'परदेसी' बनाई । दो देशों के सहयोग से बनी पहली फिल्म ।
- 'दो आँखें, बारह हाथ' (हिंदी) प्रदर्शित । राष्ट्रपति का स्वर्ण पदक मिला ।
- विमल रॉय , राजवंश खन्ना ने फिल्म्स डिवीजन के लिए पूरी लम्बाई का वृत्त चित्र 'गौतमा, द बुद्ध' तैयार किया । कान समारोह में इसे श्रेष्ठता का प्रमाण पत्र मिला ।
- तपन सिन्हा की 'काबुली वाला' (बंगाली) को बर्लिन फिल्म समारोह में संगीत के लिए रजत पदक ।

1958

- नरगिस दत्त ने 'मदर इंडिया' में निभाई गई ऐतिहासिक भूमिका के लिए कार्लोवीवेरी फिल्म समारोह में सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री का अवार्ड प्राप्त किया ।

1959

- सत्यजित रॉय की 'अपूर संसार' को 1958 की श्रेष्ठतम फिल्म के लिए राष्ट्रपति स्वर्ण पदक ।
- सत्यजित रॉय और अशोक कुमार को संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार ।

1960

- फिल्म वित्त निगम का गठन एक करोड़ रुपए की धनराशि के साथ ।
- प्रभात स्टूडियो, पूना में फिल्म इंस्टीट्यूट ऑफ इंडिया स्थापित ।
- के. आसिफ की मुगले-आजम मराठा मंदिर, बंबई में प्रदर्शित । कई सालों में तैयार हुई भारी लागत वाली फिल्म ।
- 'अनुराधा' को राष्ट्रपति स्वर्ण पदक । बर्लिन में प्रदर्शन ।
- दिलीप कुमार को 'गंगा-जमुना' में उनकी भूमिका के लिए चेकोस्लोवाक अकादमी ऑफ आर्ट, प्राग द्वारा विशेष सम्मान । बोस्टन समारोह में फिल्म ने 'सिल्वर बोल' भी जीता ।

मेहबूब की फिल्म ' औरत' जो 1957 में 'मदर इंडिया' बनी

माया बाजार (1949) : शाहू मोडक-शकुंतला

एन. टी. रामाराव ओर पद्मिनी

1962

- सत्यजित रे ने पहली रंगीन फ़िल्म 'कंचनजंघा' बनाई।
- दूसरा अंतरराष्ट्रीय फ़िल्म समारोह दिल्ली में।
- मर्चेन्ट-आइवरी प्रॉडक्शन्स द्वारा फिल्म निर्माण शुरू। पहली फिल्म 'हाउस होल्डर' (अंग्रेजी एवं हिंदी) में। अभिनय के लिए लीला नायडू को मेडेमोइसले अवार्ड।

1963

- इंडियन मोशन पिक्चर निर्यात निगम का गठन।
- इम्पा रजत जयंती।
- मराठी फिल्मों और कलाकारों को महाराष्ट्र राज्य अवार्ड प्रदान किए गए।
- गुजरात सरकार द्वारा गुजराती फिल्मों को बढ़ावा देने के लिए राज्य अवार्ड स्थापित किए गए।
- सुचित्रा सेन को 'सात पाके बांधा' (बंगाली) में शानदार भूमिका के लिए मास्को समारोह में सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री का खिताब।

1964

- सूचना प्रसारण मंत्रालय की एक अलग मीडिया इकाई के रूप में पुणे में 'नेशनल फिल्म आर्काइव ऑफ़ इंडिया' स्थापित।
- के.ए. अब्बास की 'शहर और सपना' ने राष्ट्रपति स्वर्ण पदक और कार्लोवी वेरी में विशेष पुरस्कार जीता।

1965

- भारत का तीसरा अंतराष्ट्रीय फिल्म समारोह दिल्ली में आयोजित। बम्बई, मद्रास कलकत्ता में फिल्म सप्ताहों का आयोजन।
- देव आनंद ने आर. के नारायण की कृति पर 'गाइड' बनाई। पर्ल एस. बक और निर्देशक टेड डेनीलोवस्की के सहयोग से। शिकागो फिल्मोत्सव में वहीदा रहमान को इस फिल्म में भूमिका के लिए सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री का अवार्ड।
- रामू करीअत की मलयालम फिल्म 'चेम्मीन' को राष्ट्रपति स्वर्ण पदक।

1966

- 'आसमान महल' में भूमिका के लिए पृथ्वीराज कपूर को चेक अकादमी ऑफ़ आर्ट द्वारा श्रेष्ठतम अभिनेता का अवार्ड।
- विमल रॉय का देहावसान।
- गीतकार शैलेन्द्र का निधन।

1967

- सुनील दत्त की 'यादें' को फ्रेंकफर्ट में एशियाई फिल्म समारोह में गाँ-प्रि।
- बाबूराव पेंढारकर (फिल्म निर्माता), रोशन (संगीतकार) और शहीद लतीफ़ (निर्देशक) का देहान्त।

1968

- पेनोरामा ऑफ़ इंडियन सिनेमा का आयोजन पेरिस में।
- राजकपूर ने 'मेरा नाम जोकर' के लिए कई रूसी कलाकार और सोवियत सर्कस बुलाया।
- राष्ट्रपति पुरस्कारों का विस्तार। श्रेष्ठ अभिनेता, श्रेष्ठ अभिनेत्री, श्रेष्ठ निर्देशक और तकनीशियनों के लिए पुरस्कार शुरू।

1969

- नई दिल्ली में ही चौथा अंतरराष्ट्रीय फिल्म समारोह।
- 'भुवन शोम' (हिन्दी) का मृणाल सेन द्वारा निर्माण। एफ.एफ.सी. द्वारा वित्तीय सहायता से बनी कम लागत और बड़े सितारों से रहित फिल्म। समांतर सिनेमा आन्दोलन का श्री गणेश किया।
- फिल्म सेंसरशिप के बारे में खोसला कमेटी की रिपोर्ट प्रस्तुत।
- जेमिनी के प्रमुख एस.एस. वासन, बोलती फिल्मों का देश में आगाज करने वाले अर्देशिर ईरानी, अभिनेत्री मधुबाला और फिल्म निर्माता तथा लेखक पी.के. अत्रे का निधन।

1970

- मृणाल सेन की 'भुवन शोम' को वेनिस कला प्रदर्शनी में स्वर्ण पदक।
- कांतिलाल राठोड़ की 'कुंकू' (गुजराती) को शिकागो फिल्मोत्सव में विशेष पुरस्कार।
- पट्टाभिरामा रेड्डी की 'संस्कार' (कन्नड़) सेंसर बोर्ड द्वारा प्रतिबंधित। बाद में प्रतिबंध हटा और राष्ट्रपति स्वर्णपदक मिला।
- दादा साहब फालके का शताब्दी समारोह। सरकार द्वारा 'दादा साहब फालके अवार्ड' शुरू करने की घोषणा। देविका रानी को पहला 'फालके अवार्ड' मिला।

1971

- इस साल 493 फिल्में बनीं। इससे पिछले साल 396 फिल्में प्रदर्शित हुई थीं।
- फिल्म निर्माता देवकी बोस, के. आसिफ, के. सुब्रहमण्यम, संगीतकार जयकिशन और मलयालम अभिनेता सत्यन का निधन।

1972

- हिंदी में 90 फीसदी फिल्में रंगीन बनने लगीं।
- पृथ्वीराज कपूर, गूबी वीरन्ना, महेश कौल, गीता दत्त और मीना कुमारी का निधन।

1973

- सत्यजीत राय की 'अशनी संकेत' (बंगाली) को बर्लिन फिल्मोत्सव में 'गोल्डन बीअर'। अडूर गोपाल कृष्णनन् की 'स्वयंवरम' को श्रेष्ठ फीचर फिल्म के लिए राष्ट्रपति स्वर्ण पदक।

1974

- एम.टी. वासुदेवन नायर की मलयालम फिल्म 'निर्माल्यम् को राष्ट्रपति स्वर्ण पदक।
- राजकपूर की 'बॉबी' ने बॉक्स ऑफिस के रिकार्ड तोड़े।
- सदाशिव राव कवि-निर्माता निर्देशक, आई.के. मेनन सचिव इंडियन मोशन पिक्चर्स प्रोड्यूसर एसोसिएशन, पहाड़ी सांन्याल - अभिनेता और घंटशाला दक्षिण भारतीय संगीतकार का निधन।

1975

- नई दिल्ली में पाँचवां अंतरराष्ट्रीय फिल्मोत्सव।
- कलकत्ता में पहला फिल्मोत्सव।

1976

- बंबई में दूसरा फिल्मोत्सव।
- बी.वी. कारंथ की फिल्म चोमना डूडी (कन्नड़) को स्वर्ण कमल।

1977

- भारत का छठा अंतरराष्ट्रीय फिल्म समारोह नई दिल्ली में आयोजित।
- मृणाल सेन की 'मृगया' को स्वर्ण कमल।
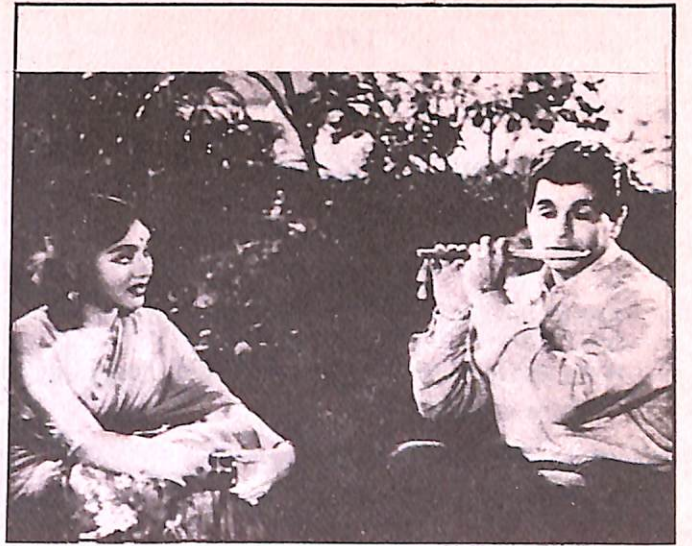
फिल्म पैगाम : वैजयंती माला - दिलीप कुमार

इत्तफाक (1969) : राजेश खन्ना-नंदा

भावना फिल्म में शबाना-मार्क जुबेर

1978

- तीसरा फिल्मोत्सव मद्रास में आयोजित।
- गिरीश कासरवल्ली की 'घटश्राद्ध' (कन्नड़) को स्वर्ण कमल।

1979

- भारत का सातवाँ अंतरराष्ट्रीय फिल्म समारोह नई दिल्ली में आयोजित।
- बिप्लब रॉय चौधरी की 'शोध' वर्ष की श्रेष्ठ फीचर फिल्म। राष्ट्रपति स्वर्ण पदक से सम्मानित।

1980

- एफ.एफ.सी. और आई.एम. पी.ई.सी. के विलय से राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम (एन.एफ.डी.सी.) का गठन।
- मृणाल सेन की 'एक दिन प्रतिदिन' श्रेष्ठ फीचर फिल्म, राष्ट्रपति स्वर्ण पदक।
- चौथा फिल्मोत्सव बंगलौर में आयोजित।

1981

- भारत का आठवाँ अंतरराष्ट्रीय फिल्म समारोह नई दिल्ली में आयोजित।
- मृणाल सेन की 'अकालेर संधाने' (बंगाली) को राष्ट्रपति स्वर्ण पदक।
- देश में अच्छे सिनेमा के विकास के लिए बम्बई में नेशनल एकेडमी ऑफ मोशन पिक्चर आर्ट्स एडं साइंस का गठन।
- बोलती फिल्मों की स्वर्ण जयंती। इम्पा द्वारा एक माह के महोत्सव का आयोजन। 1931 से 1981 के बीच बनी श्रेष्ठ फिल्मों का प्रदर्शन। दस दिवसीय प्रदर्शनी। भारतीय सिनेमा पर दो दिवसीय सेमीनार। एक समारोह में तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व. श्रीमती इंदिरा गांधी द्वारा भारतीय सिनेमा की विभूतियों को सम्मान। बोलती फिल्मों के पचास साल पर टी.एम. रामचंद्रन द्वारा सम्पादित पुस्तक "फिफ्टी ईअर्स ऑफ इंडियन टॉकीज" का श्रीमती गांधी द्वारा इस मौके पर विमोचन। कलकत्ता और मद्रास में भी स्वर्णजयंती समारोह।
- भारत के आठवें अंतरराष्ट्रीय फिल्मोत्सव में गोविंद निहलानी की 'आक्रोश' को बलारिया की 'अननोन सोल्जर' (UNKNOWN SOLDIER) को स्वर्ण मयूर।

1982

- पाँचवां फिल्मोत्सव कलकत्ता में आयोजित।
- शशिकपूर की '36 चौरंगी लेन' को श्रेष्ठ फीचर फिल्म के लिए गोल्डन ईगल अवार्ड मनीला में पहले अंतर राष्ट्रीय फिल्मोत्सव में।
- गौतम घोष की दाखल को श्रेष्ठ फीचर फिल्म का नेशनल अवार्ड।
- निर्देशक के. विश्वनाथ को 'सप्तपदी' (तेलगु) के लिए नर्गिसदत्त अवार्ड। यह अवार्ड नरगिस दत्त की याद में राष्ट्रीय एकता को प्रदर्शित करने वाली श्रेष्ठ फीचर फिल्म के लिए प्रारंभ।
- रेखा को उमराव जान में अभिनय के लिए सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री का अवार्ड।
- श्याम बेनेगल की 'आरोहण' को श्रेष्ठतम फिल्म का अवार्ड।

1983

- भारत का नवाँ अंतरराष्ट्रीय फिल्मोत्सव नई दिल्ली में।
- प्रेमा कारंथ की कन्नड फिल्म 'फनियम्मा' को मेनहीम फिल्मोत्सव में तीन अवार्ड। श्रेष्ठ कन्नड़ फिल्म का राष्ट्रीय अवार्ड।
- उत्पलेन्दु चक्रवर्ती की 'चोख' (बंगाली) को श्रेष्ठ फीचर फिल्म और नवें अंतरराष्ट्रीय फिल्मोत्सव में विशेष ज्यूरी अवार्ड। बर्लिन फिल्मोत्सव में केथोलिक पुरस्कार भी।
- फिल्म निर्माता एल.वी. प्रसाद को दादा साहब फालके सम्मान।
- जी.वी. अय्यर की 'आदि शंकराचार्य' (संस्कृत की पहली फिल्म) को श्रेष्ठ फीचर फिल्म का राष्ट्रीय सम्मान।
- अभिनेता ओमपुरी को 'अर्द्ध सत्य' में श्रेष्ठ अभिनय के लिए कार्लोवी वेरी अंतराष्ट्रीय फिल्मोत्सव में 'श्रेष्ठ अभिनेता' का सम्मान। गोविंद निहलानी को इसी फिल्म के लिए भारतीय फिल्म निर्माता संघ द्वारा 'श्रेष्ठ निर्देशन' का सम्मान।
- उमा सहगल को वृत्त चित्र 'शेल्टर' के लिंए ओवरहॉसन फिल्मोत्सव में श्रेष्ठ लघु फिल्म का अवार्ड। ●

1984

- बम्बई में 3 से 17 जनवरी तक अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह का आयोजन।

1985

- नई दिल्ली में 3 से 17 जनवरी तक ग्यारहवें अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह का आयोजन।

1986

- **निर्माता**- निर्देशक एस.डी. नारंग का 25 जनवरी को बंबई में निधन।
- **सिनेमेटेग्राफर** सुब्रतो मित्रा को पद्मश्री।

- **दादा** साहब फालके अवार्ड से सम्मानित फिल्मकार **नितिन बोस** का 85 वर्ष की आयु में कलकत्ता में निधन। श्री बोस ने 50 से अधिक फिल्मों का निर्देशन किया। उनकी प्रमुख फिल्में दीदार, गंगा-जमुना, नर्तकी, मिलन, मशाल, मुजरिम, चंडीदास।
- **किशोर कुमार** लता मंगेशकर पुरस्कार से सम्मानित। 4 मई को इंदौर में अलंकरण।
- निर्माता- निर्देशक याकूब हसन रिजवी का सड़क दुर्घटना में निधन। फिल्मोद्योग में 'बब्बन' के नाम से पहचाने जाने वाले रिजवी ने बहू-बेगम, बहारों की मंजिल, तेरी आरजू जैसी फिल्में बनाई थी।
- संगीतकार मानस मुखर्जी का निधन।
- प्रमुख तमिल अभिनेत्री रानी पद्मिनी और उनकी माँ की मद्रास में हत्या।
- तेलुगु फिल्मों के निर्देशक टी. कृष्णा का 35 वर्ष की अल्पायु में निधन। प्रमुख फिल्में वंदेमातरम, प्रतिघटना, देवालयम आदि।

1987

- **अमिताभ बच्चन** द्वारा लोकसभा की सदस्यता से इस्तीफा।
- **बी. नागिरेड्डी** को 1986 का दादा साहब फालके सम्मान। तेलुगु, तमिल, कन्नड़, मलयालम और हिंदी सिनेमा को उल्लेखनीय योगदान। प्रमुख फिल्में राम और श्याम, नन्हा फरिश्ता, स्वयंवर, स्वर्ग-नर्क आदि।
- **लारा लप्पा** गर्ल (एक थी लड़की) मीना शोरी का लाहौर में 67 साल की उम्र में निधन।
- **गीतकार** और संवाद लेखक फारुख केसर का निधन।
- **तमिल** हास्य अभिनेता श्री निवासन का निधन।
- बंगाली गायक और संगीत निर्देशक श्यामल मित्रा का निधन।

1988

- **चरित्र** अभिनेता और नरगिस दत्त के भाई **अनवर हुसैन** का 2 जनवरी को 77 वर्ष की आयु में निधन। संजोग, अब दिल्ली दूर नहीं, नया आदमी, गरमा गरम, विक्टोरिया नं. 203, गंगा जमुना प्रमुख फिल्में।
- **जाने माने** हास्य अभिनेता पोलसन (असली नाम नरेन्द्र कुमार बंसल) का देहान्त। 200 से अधिक फिल्मों में काम।
- **त्रिवेन्द्रम** में फिल्मोत्सव - 88 का आयोजन।
- **चरित्र** अभिनेत्री लीला मिश्रा का बंबई में निधन। 'शोले' में मौसी का यादगार भूमिका करने वाली लीला जी ने दर्जनों फिल्मों में माँ और दादी की भूमिकाएँ अदा कीं।
- संगीत निर्देशक गोविंद प्रसाद जयपुरवाले का निधन।
- बंगाली फिल्मों के जाने माने हास्य अभिनेता संतोष दत्ता का कलकत्ता में निधन।
- **दक्षिण** भारतीय फिल्मों के सुप्रसिद्ध संगीत निर्देशक एम.वी. श्री निवासन का देहान्त। उन्होंने 80 से ज्यादा फिल्मों में संगीत दिया।
- **महान** फिल्म अभिनेता, निदेशक और भारतीय सिनेमा के 'शोमेन' राजकपूर का 2 जून को दिल्ली में देहावसान।
- **गीतकार** और लेखक पं. मधुर का 8 जून को बंबई में निधन। जवाब, बाबला, संन्यासी, ललकार आदि फिल्मों में उनके लिखे गीत लोगों की जुबान चढ़े।

1989

- भारतीय सिनेमा के 75 साल पूर्ण होने पर मद्रास में 16 अप्रैल को राष्ट्रपति श्री वेंकटरामन् ने प्लेटिनम जुबली समारोहों का उद्घाटन किया।
- **तमिल** फिल्मों के अभिनेता सी.एल. आनन्द का मद्रास में निधन। 80 से अधिक फिल्मों में उन्होंने काम किया।
- **विश्व प्रसिद्ध** अभिनेता चार्ली चैपलिन की जन्म शताब्दी के मौके पर पूरे विश्व के साथ भारत में भी चैपलिन समारोह।
- दादा साहब फालके के सहयोगी और अभिनेता गणपति राव ताम्बेट का नासिक में निधन। संत ज्ञानेश्वर, माया बाजार, रामशास्त्री प्रमुख फिल्में।

1990

- **कलकत्ता** में जनवरी में अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह का आयोजन।

☐ प्रस्तुतिः भूपेन्द्र चतुर्वेदी

बीसवीं सदी की सर्वश्रेष्ठ कला सिनेमा को भारत में लाने और स्थापित करने में असंख्य व्यक्तियों का योगदान रहा है। ऐसे फिल्म पितामहों तथा पितृ-पुरुषों में से प्रमुख का संक्षिप्त परिचय और फिल्म उद्योग को उनके योगदान को यहाँ रेखांकित किया गया है। इनमें दादा साहेब फालके सम्मान से अलंकृत प्रतिभाएं भी शामिल हैं। इस क्रम में शेष रहे पितृ-पुरूषों का परिचय वार्षिकी के 1993 के संस्करण में दिया जाएगा।

हीरालाल सेन

हीरालाल सेन को फिल्मोद्योग के प्रर्वतकों में गिना जाता है। उन्होंने फिल्म निर्माण एवं प्रदर्शन की प्रक्रिया में अमूल्य योगदान दिया है। सन् 1898 में उन्होंने रॉयल वायस्कोप कम्पनी की स्थापना की तथा विदेशी विशेषज्ञों की मदद से निर्माण कार्य शुरु किया। सन् 1901 में उन्होंने *द फ्लॉवर ऑफ पार्शिया* नामक एक नृत्य दृश्य का फिल्मी प्रदर्शन कलकत्ते में किया था। इसके बाद तो उन्होंने विभिन्न प्रकार की फिल्मों का निर्माण शुरू किया। इनमें कलकत्ते तथा आसपास के क्षेत्रों की रोजमर्रा, जिन्दगी के दृश्य, ट्रिक फोटोग्राफी के रोचक प्रयोग तथा रंगमंच पर खेले जा रहे नाटकों के दृश्य शामिल थे। सात विभिन्न रंगमंचीय प्रस्तुतियों के चुनिन्दा सात दृश्यों पर निर्मित उनकी फिल्म जिसमें उस वक्त के लोकप्रिय कलाकारों यथा नेपा बोस, कुसुम कुमारी, गिरीश चन्द्र घोस, आदि की अभिनय प्रतिभा दर्शायी गयी थी बंगाली रंगमंच के स्वर्णयुग का प्रामाणिक दस्तावेज थी। हीरालाल सेन पहले भारतीय थे, जिन्होंने फ्रांस की पाथे कम्पनी का कैमरा खरीदा था।

इसके बाद उन्होनें अपेक्षाकृत बड़ी फिल्मों का निर्माण शुरु किया। 'डान्सेस फ्राम अलीबाबा तथा 'मनेर मतन' (Maner Matan), 1903 में बनी। ये फिल्में उस समय की सामान्यतः दिखाई जाने वाली दस मिनट की फिल्मों से बहुत बड़ी थीं। लगभग एक घण्टा अवधि वाली इन फिल्मों में कई नए प्रयोग किए गए थे। कई कोणों से छायांकन, क्लोज अप, टाइटल्स प्रदर्शन आदि के जरिये इन दोनों फिल्मों में फिल्म-कला को नया आधार मिला। सन् 1904 में *अलीबाबा एण्ड फॉर्टी थीव्ज* का निर्माण कर उन्होंने सम्पूर्ण मनोरंजन प्रदान करने वाली फिल्मों का निर्माण शुरू किया। उनका अगला कदम था समाचार एवं वृत्त चित्रों का निर्माण। सन् 1906 में निर्मित *द ग्रेट पार्टीशन मूवमेन्ट ऑफ बंगाल* नामक फिल्म सामान्य प्रदर्शन के लिए ब्रिटेन भेजी गयी थी सन् 1912 तक वे गले के कैंसर से अशक्त हो गए थे। मगर इसके बावजूद सम्राट जार्ज पंचम एवं महारानी मेरी की भारत यात्रा के समय उन्होंने *विजिट फिल्म* नामक जो रपट प्रधान फिल्म बनायी वह छायांकन एवं तकनीकी दृष्टि से ब्रिटिश छायाकारों द्वारा इसी प्रसंग पर बनायी गयी अन्य फिल्मों से कहीं ज्यादा बेहतर मानी गयी।

हीरालाल सेन को विभिन्न सिने विद्याओं का प्रवर्तक मात्र मानना उनकी बहुआयामी प्रतिभा के साथ अन्याय होगा। वे जितने उच्च स्तर के फिल्मी तकनीशियन थे उससे कहीं ज्यादा ऊँचे स्तर के रचनात्मक शक्ति वाले कलाकार थे उनके पास अपार ऊर्जा, महत्वाकांक्षा तथा अभिव्यक्ति का साधन व साहस था। वे सिर्फ भारतीय फिल्म इतिहास के आधार स्तंभ ही नहीं थे बल्कि विश्व फिल्म इतिहास में भी उनका महत्वपूर्ण स्थान हैं। इस महान फिल्मकार के जीवन के अंतिम चार वर्ष अत्यंत कष्ट में जीये। 27 अक्तूबर 1917 में कैंसर के कारण उनका निधन हो गया। ●

निरंजन पाल

भारतीय फिल्मों के अग्रदूतों में *निरंजन पाल* का जीवन सबसे ज्यादा उथल-पुथल भरा रहा है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के सेनानी *विपिन चंद्र पाल* अपने बेटे को भारत में क्रांतिकारियों के प्रभाव में आने से बचाने के लिए इंग्लैड ले गए और वहाँ उन्हें चित्तरंजन दास को सौंप दिया। लंदन यूनिवर्सिटी की प्रवेश परीक्षा उत्तीर्ण कर वे मेडिकल कॉलेज में दाखिल तो हुए लेकिन अभिभावक सी.आर.पाल से मतभेद होने के कारण उन्होंने अपनी पढ़ाई अधूरी छोड़ दी। इस बीच लंदन के सिनेमाघरों में वे फिल्में देखते रहे और उनमें भारत के जिस विकृत रूप में पेश किया जाता था उससे क्षुब्ध हो स्वयं फिल्मों के लिए कहानियाँ लिखने का फैसला किया। उनकी भगवान बुद्ध के जीवन पर लिखी कहानी नैचुरल कलर सिनेमेटोग्राफ कंपनी ने इस टिप्पणी के साथ वापस की कि उन्हें फिल्मों का व्यावहारिक ज्ञान नहीं हैं। पाल ने छः माह तक इसी स्टुडियो में फिल्म निर्माण के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन किया और तब उस पर स्टुडियो ने फिल्म बनाने निर्णय किया लेकिन 1914 में लड़ाई छिड़ जाने पर वह योजना ताक पर रख दी गई। कई तरह के पापड़ बेलने के बाद *1916 में केंट फिल्म कंपनी ने उनकी कहानी 'फेथ ऑव ए चाइल्ड' पर एक* छः रील का कथा चित्र बनाया जो *इंग्लैड की पहली फीचर फिल्म मानी जाती है।* तीन वर्ष तक केंट फिल्म कंपनी में अपनी एक कहानी पर स्वयं केंद्रित भूमिका निभाते हुए जो फिल्म उन्होंने बनाना चाही वह भी निर्देशक रेक्स विल्सन की दगाबाजी के कारण पूरी न हो सकी। इस बीच ब्रिटिश थियेटर के लिए वे कहानियाँ लिखते रहे और इस क्षेत्र में उन्हें अच्छी सफलता मिली। बुद्ध के जीवन पर लिखी उनकी कहानी *'लाइट ऑव् एशिया'* पर फिल्म उनकी हिमांशु रॉय से मित्रता होने के बाद 1924-25 में जर्मन फ्रांस ऑस्टिन के निर्देशन में बनी। यह फिल्म 1926 में लंदन में रिलीज हुई तथा काफी प्रशंसित हुई। उनकी दो कहानियाँ 'शीराज ' और 'अ थ्री ऑव डाइस' पर ब्रिटिश इन्स्ट्रक्शनल फिल्म्स तथा जर्मनी की यू.एफ.ए. ने क्रमशः 1928 और 1929 में बनाई। इसी वर्ष वे भारत लौटे तथा लाहौर में 'ट्रबल्ज नेव्हर कम अलोन', (1930), पूना में 'नीडल आई' 'पुजारी' तथा 'परदेसिया' तथा कलकत्ता में 'अ फेथफुल हार्ट' निर्देशित की। इसके बाद वे बॉम्बे टॉकीज में शामिल हो गए और उसके लिए 'अछूत कन्या' सहित आठ कहानियाँ लिखी।

अरोरा फिल्म्ज के साथ उन्होंने समाचार-चित्रों तथा विज्ञापन फिल्मों का पहली बार निर्माण किया। इनमें 'लॉर्ड ब्रेबोर्न ' तथा टैगोर की अंत्येष्ठि की फिल्में उल्लेखनीय है। बच्चों के लिए भी उन्होंने फिल्में बनाईं। उनकी अंतिम फीचर फिल्म 'बुद्धोदय' 1951 में बनी तथा उनकी कहानी 'फेथ ऑव अ चाइल्ड' पर हिन्दी फिल्म 'ज्योति' 1969 में उनके निधन के बाद प्रदर्शित हुई। ●

अब्दुल अली यूसुफ अली

सूरत में 22 फरवरी 1884 को जन्मे *अब्दुल अली यूसुफ अली* ने फिल्म प्रदर्शन क्षेत्र के अग्रदूत के रूप में महत्वपूर्ण योगदान किया है। अपने आयात-निर्यात के पुश्तैनी धंधे के सिलसिले में जब वे सिंगापुर गये, तो वहाँ उन्होंने पहली बार चलती-फिरती फिल्में देखी और तत्काल अपने पिता का धंधा छोड़ वहीं 1901 में एक 'टूरिंग सिनेमा कंपनी' खोल ली। अब्दुल अली ने 1901 से 1907 तक देश-देश घूम कर तंबू में अपने बायस्कोप से लोगों को फिल्में दिखलाई। भारत लौट कर 1908 से 1914 तक उन्होंने यहाँ भी यही काम किया। जिन दिनों उनका तंबू बंबई में तना हुआ था, वे आर्देशिर ईरानी के संपर्क में आए और दोनों ने 1914 में वहाँ अपना स्थाई सिनेमा घर 'एलेन्जेंड्रा' स्थापित किया जो कि मात्र टिन का एक टप्पर था। 'मेजेस्टिक' सिनेमा 1918 में बना तथा वहाँ प्रदर्शित होने वाली पहली भारतीय फिल्म थी दादा फालके की *'कृष्ण जन्म'*। सन् 1926 में उन्होंने फिल्म निर्माण के क्षेत्र में भी कदम रखा और आर्देशिर के साथ 'इंपीरियल' फिल्म कंपनी की स्थापना की। इसी कंपनी को भारत की पहली बोलती फिल्म *"आलम आरा'* बनाने और प्रदर्शित करने का श्रेय प्राप्त है। बगैर अब्दुर अली की दूरदृष्टि के बोलती फिल्म बनाना संभव नहीं था क्योंकि ऐसी फिल्म के लिए उन्होंने 'मेजेस्टिक' को 'टॉकी' थिएटर के रूप में सज्जित किया। पहली मराठी सवाक् फिल्म *'अयोध्या चा राजा'* भी मैजेस्टिक के परदे पर ही दिखलाई गई। अब्दुल अली यूसुफ अली ने 1933 में ईरान में भी अपना एक दफ्तर खोला और वहाँ भारत में बनी फारसी भाषा की 'फख़्र ए लूर' और 'शीरी फरहाद' प्रदर्शित की। फिल्मों के निर्माण और प्रदर्शन के अलावा उन्होंने भारत में इस उद्योग का संगठनात्मक ढाँचा विकसित करने में भी खासा योगदान किया। वे भारतीय फिल्म-प्रदर्शक (एक्जीबीटर्स) संघ के निर्देशक मंडल में बरसों रहे।

●
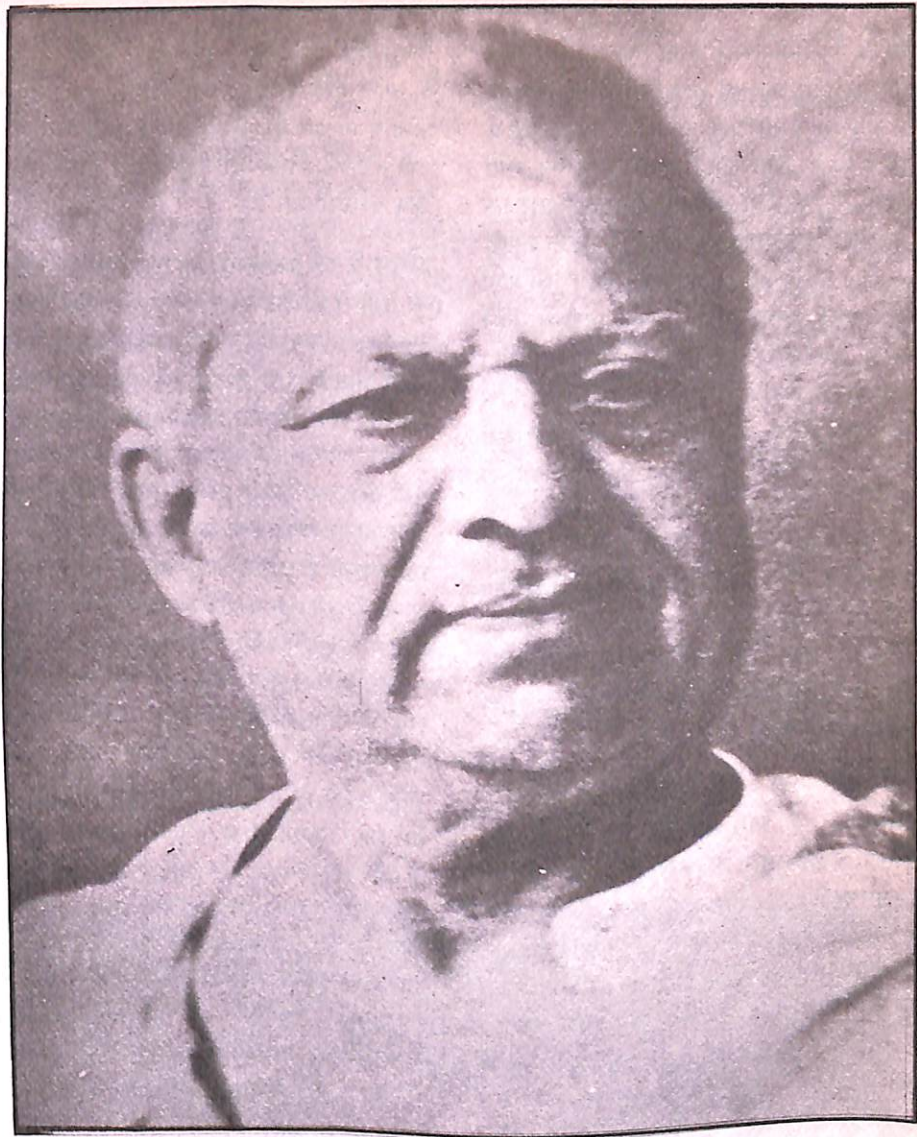
भारतीय फिल्मों के पितामह : धुण्डीराज गोविन्द फालके

भारतीय सिनेमा के वेद व्यासः दादा साहेब फालके

धुंडीराज गोविंद फालके ने शनिवार 31 दिसम्बर 1910 को शाम 6.30 बजे बम्बई में "लाइफ ऑव क्राईस्ट" नामक अमरीकी फिल्म देखी और उसी शुभ घड़ी में उनके मन में भारतीय देवी-देवताओं के जीवन पर हिन्दुस्तानी में फिल्म बनाने का विचार आया। इसी के साथ भारतीय सिनेमा की नींव पड़ी। एक चालीस वर्षीय मध्यमवर्गीय भारतीय के एक फिल्म देखने जैसी साधारण-सी घटना ने भारतीय फिल्म इतिहास का बीजारोपण किया। फालके असाधारण व्यक्ति थे क्योंकि उन्हें विज्ञान के साथ विविध कलाओं का ज्ञान था। उनकी शिक्षा जे.जे. स्कूल ऑफ आर्टस, (बम्बई) और बड़ौदा के कला भवन में हुई थी जहाँ उन्हें विशाल वाचनालय के साथ ही समृद्ध प्रयोगशाला के प्रयोग का लाभ भी मिला था। विज्ञान और कला बोध के साथ फालके का व्यक्तित्व राष्ट्रप्रेम से ओत-प्रोत था। स्वदेशी आंदोलन के प्रारंभ में उन्होंने सरकारी नौकरी का त्याग कर दिया था। एक भागीदार की मदद से 1909 में जर्मनी जाकर फोटोग्राफी के रसायन को सीखा और 31 दिसम्बर 1910 को भागीदार ने उन्हें धोखा देकर व्यवसाय से अलग कर दिया।

फालके ने महीनों तक दिन-रात एक कर सिने विज्ञान और कला पर उपलब्ध सभी किताबों का अध्ययन किया। अपनी छोटी-सी लेबोरेटरी में कई तरह के प्रयोग किये। अपने मित्र नाड़कर्णी से धन उधार लेकर 1 फरवरी 1912 को लंदन गए जहाँ *बाइस्कोप* के संपादक मि. कार्बन की सहायता से कैमरा इत्यादि उपकरण खरीदे और उन्हें चलाने की शिक्षा प्राप्त की। भारत आकर उन्होंने अपनी पत्नी के गहने बेचकर *राजा हरिशचन्द्र* का निर्माण आरंभ किया। दादा फालके इस फिल्म के निर्माता-निर्देशक, लेखक, लेबोरेटरी इंचार्ज, ड्रेस डिजाइनर और सभी कुछ थे क्योंकि भारत में फिल्म के बारे में किसी को कुछ ज्ञान नहीं था। दरअसल राजा हरिशचन्द्र एक व्यक्ति-उद्योग का परिणाम था। 3 मई 1913 को बम्बई के कोरोनेशन सिनेमा में पहली भारतीय फिल्म का प्रदर्शन हुआ। दादा फालके स्वयं ही इस फिल्म के वितरक और प्रदर्शक भी थे। इसके बाद *मोहिन भस्मासुर* (1913) और *सावित्री सत्यवान* (1914) का निर्माण किया।

दादा फालके 30 अप्रेल 1870 को नासिक से 29 किलोमीटर दूर ग्राम त्र्यंबेकेश्वर में जन्मे थे और परिवार की पृष्ठभूमि के कारण *शास्त्री* होना निश्चित था। अपनी लगन, अथक परिश्रम, और अभूतपूर्व देशप्रेम के कारण धुंडीराज गोविंद फालके भारतीय फिल्म उद्योग के पितामह सिद्ध हुए- *उन्होंने बीसवीं सदी की मशीनों से जन्म लेने वाले एकमात्र कला-माध्यम का शुभारंभ भारत में किया अतः वे फिल्म शास्त्र के प्रथम भारतीय आचार्य हुए। उन्हें हम फिल्म मनोरंजन का वेदव्यास कह सकते हैं*

दादा फालके की पहली फिल्म के पहले प्रिंट ने उनके सारे कर्जे उतार दिये और उन्होंने महसूस किया कि हर फिल्म के 20 या 30 प्रिंटों के लिए हाथ से चलाने वाली मशीन के बदले बिजली से चलने वाले प्रिंटर की आवश्यकता हैं। वे पच्चीस हजार रुपए लेकर सन् 1914 में लंदन गये जहाँ लोगों ने उनकी फिल्मों को सराहा क्योंकि दादा फालके ने ट्रिक-फोटोग्रॉफी के कुछ नये प्रयोग किये थे, वि फिल्म माध्यम की सीमाओं के विस्तार के अभिनव प्रयोग थे। लंदन के निर्माता ने दादा फालके से लंदन में रहकर फिल्में बनाने का आकर्षक प्रस्ताव रखा जिसे देशप्रेमी दादा ने अस्वीकार कर दिया।

वे फिल्म उद्योग को भारत में विकसित करना चाहते थे और भारतीय संस्कृति के आख्यानों को सेल्युलाइड पर उतरना चाहते थे। फिल्म उद्योग के आदि पुरुष होते हुए भी दादा के मन में इस पाश्चात्य माध्यम की सीमाओं के विस्तार के लिए नयी तकनीक सीखने का जोश हमेशा एक मेधावी छात्र की तरह रहा।

1914 से 18 तक प्रथम विश्व युद्ध के कारण दादा को कहीं से भी आर्थिक सहायता नहीं मिली। एक साथ कई विपत्तियाँ उन पर टूट पड़ी। कई विश्वस्त साथी बीमारियों से घिर गये। अनेक यंत्र और उपकरण खराब हो गये। इन विपरीत परिस्थितियों में भी दादा ने *लाइफ ऑफ श्रीयाल* प्रारंभ की परन्तु पूरी नहीं कर सके। अपने ससुर चिटनिस की सहायता से *लंका दहन* बनायी जो अत्यंत सफल रही। इसमें होटल के वेटर सालुंके ने सीता और राम दोनों की भूमिकाएँ निभायी थीं क्योंकि नारी पात्रों के लिए कोई आगे नहीं आता था। दादा फालके ने 1913 से 1937 तक 106 फीचर तथा 30 लघु फिल्में बनाई। इस संख्या से भी अधिक महत्वपूर्ण योगदान यह है कि उन्होंने माध्यम की शक्ति बढ़ाने के लिए कई अभिनव प्रयोग किए। इन 136 फिल्मों में से केवल *गंगावतरण* हॉकी थी और *सेतु-बंधन* में ध्वनि बाद में जोड़ी गई थी।

दादा फालके के अंतिम दिन अत्यंत गरीबी में बीते क्योंकि वे चतुर व्यवसायी नहीं थे। सिनेमा उनके लिए एक पवित्र राष्ट्रप्रेम का कर्त्तव्य था। सन् 1928 के बाद जब अमीर लोगों को इस बात का विश्वास हो गया कि फिल्म-व्यवसाय धन कमाने का जबरदस्त साधन है, तब उन लोगों ने अपने धन के जोर पर स्टूडियों की बागडोर हथिया ली और दादा फालके जैसे कलाकारों को दबाव में काम करना पड़ा। जिन लोगों को फिल्म माध्यम का बिलकुल ज्ञान नहीं था, उन लोगों के हाथ में सत्ता जाने के भयावह दौर का आरंभ दादा फालके के समय में ही शुरु हो चुका था और कालांतर में इस प्रवृत्ति ने और भी अधिक जोर पकड़ा जिसके कारण फिल्मों की सामाजिक प्रतिबद्धता कम होती गयी।

दादा फालके की महानता इस बात से उजागर होती है कि उनके बाद ऐसा कोई फिल्मकार नहीं आया, जो फिल्म निर्माण के सभी विभागों की संपूर्ण जानकारी रखता हो और अकेले ही पूरी फिल्म बना भी ले और रसायन प्रक्रिया भी पूरी दक्षता से संपन्न कर सकें।

अपना सब कुछ फिल्मों को सौंप देने वाले दादा साहेव फालके को उनके अंतिम दिनों में फिल्मी दुनिया के लोगों ने भुला दिया था। 1939 में जब बम्बई में भारतीय सिनेमा की रजत जयंती मनाई गयी, तो सिर्फ पाँच हजार रुपये की राशि उन्हें भेंट कर कृतहन फिल्मी दुनिया ने अपना पल्लू झटक लिया। अत्यंत दारूण तथा दीन हीन दशा में 16 फरवरी 1944 को उनका नासिक में निधन हो गया। 1970 में दादा फालके की जन्मदाती देश भर में धूमधाम से मनाई गयी। डाक विभाग ने उन पर एक टिकट भी जारी किया। भारत के राष्ट्रपति ने इसी वर्ष से फिल्म उद्योग को सर्वाधिक योगदान करने वाले व्यक्ति को *दादा साहब फालके अवार्ड* देने की परम्परा आरम्भ की। ● (जे.पी.सी.)

एम.ए. फजलभाई (1903 - 1973)

अकबर फज़ल भाई का प्रमुख योगदान रेडियो, इलैक्ट्रॉनिक्स तथा फिल्मों के क्षेत्र में रहा है। मूक-फिल्मों के युग में उनके पिता का मोटरकारों तथा रेडियो का धंधा था। बंबई में प्रदर्शित पहली 'टॉकी' **'आलम-आरा'** के प्रदर्शन के लिए साउंड फ़िल्म प्रोजेक्ट तथा अन्य उपकरण अकबर के पिता ने ही आयात किए थे। इसके बाद तो 'अकबर सेठ' के नाम से लोकप्रिय फजल भाई ने फिल्म के निर्माण, वितरण तथा प्रदर्शन के क्षेत्रों में बहुमुखी योगदान किया। बंबई के ताड़देव क्षेत्र में पहले व्यावसायिक फिल्म-स्टुडियो **'फिल्म सिटी'** की स्थापना की, जनरल फिल्मस तथा सागर मूव्हीटोन के झंडे तले उस जमाने की सबसे ज्यादा सफल फिल्मों का निर्माण करते हुए सिम्पलैक्स प्रोजेक्टरों, आर.सी.ए. साउंड सिस्टम तथा नैशनल कार्बन्स का भारत में परिचय सबसे पहले उन्होंने कराया। अकबर सेठ सिनेमा उपकरणों का सिर्फ आयात कर ही संतुष्ट नहीं हुए। भारत में ही फोटोफोन के ध्वनि तथा प्रोजेक्शन उपकरणों का निर्माण कर देसी प्रोद्योगिकी विकसित करने को भी प्रोत्साहित किया। जब 3-डी सिनेमस्कोप तथा '70 एम. एम. स्टीरियो फोनिक' प्रणालियों का भारत में आगमन हुआ, तो अकबर सेठ ने इन सभी उपकरणों को भारत में ही निर्मित

करने की व्यवस्था की। दृश्य-श्रव्य शिक्षा के साधनों के महत्व को पहचान उन्होंने 16 एम. एम. के फोटोपोन साउंड प्रोजेक्टरों का निर्माण भी किया। आर्वी (पुणे) तथा देहरादून के भारत के पहले दो उपग्रह केंद्रों में उन्हीं के द्वारा निर्मित उपकरण लगे हैं। उनकी फोटोफोन कंपनी द्वारा निर्मित सिनेमा - उपकरणों का निर्यात कई लातिनी अमेरिकी देशों को हुआ है। ●

आर. नटराज मुदालियार

दक्षिण भारत में फिल्मोद्योग की आधारशिला स्थापित करने वाले **आर. नटराज मुदालियार** का जन्म 26 जनवरी 1885 को वेलोर में हुआ था। मैट्रिक तक शिक्षा प्राप्त करने के बाद वे पैतृक व्यवसाय में जुट गए। दादासाहब फालके के प्रयासों एवं उपलब्धियों के बारे में सुनकर, पढ़कर उन्हें फिल्म निर्माण के क्षेत्र में आने की प्रेरणा मिली। वे पूना आए तथा ब्रिटिश कैमरामेन स्टीवार्ट से सिनेमाटोग्राफी, प्रोसेसिंग, प्रिन्टिंग का प्रशिक्षण प्राप्त कर उन्होंने 1917 में 'इण्डियन फिल्म कम्पनी' की स्थापना की। इसके बाद कुछ साथियों के सहयोग एवं अस्थाई स्टुडियो का निर्माण कर वे 'कीचक वध' नामक फिल्म के निर्माण में जुट गए। सन् 1917 में 35 हजार रुपए की लागत से यह मूक फिल्म बनकर तैयार हुई। दक्षिण भारत में निर्मित यह पहली फिल्म थी। इसके बाद 'द्रौपदी वस्त्र हरण' एवं 'लवकुश' का निर्माण हुआ। इन दोनों फिल्मों में हिन्दी टाइटल भी दिए गए थे, जिन्हें महात्मा गाँधी के पुत्र देवदास गाँधी ने लिखा था। आपकी चौथी फिल्म 'रूक्मणी सत्यभामा' थी। इसमें रुक्मणी का अभिनय ब्राह्मण युवती जानकी ने किया था। इससे पूर्व 'द्रौपदी वस्त्रहरणम्' में द्रौपदी की भूमिका 'श्रीमती वायलट बेरी' नामक ब्रिटिश महिला ने की थी। इसके बाद 'मार्कण्डेय' तथा छठवी फिल्म 'मेइल रावन बनाई गई।

सन् 1917 से 1923 के मध्य 6 मूक फिल्मों का निर्माण कर वे अगली योजनाएं बना ही रहे थे कि उन पर दुर्भाग्य के घातक प्रहार होने लगे। अग्निकाण्ड में उनका स्टुडियो तथा सारे कीमती उपकरण जलकर राख हो गए। बाद में अचानक उनके पुत्र का निधन हो गया। इस आघात के कारण उनको इस व्यवसाय से वैराग्य हो गया। उन्होंने फिल्म निर्माण का कारोबार बन्द कर दिया।

नटराज मुदलियार ने सामान्य उपकरणों से अत्यंत प्रभावशाली दृश्यों को फिल्माने में सफलता प्राप्त की थी। लगभग सात हजार फुट की औसत लम्बाई वाली फिल्मों का निर्माण व्यय उस युग में पन्द्रह हजार रूपए होता था। कलाकारों को मासिक वेतन पर नियुक्ति मिलती थी। सर्वाधिक वेतन लगभग एक सौ पचास रुपए मासिक होता था जो आमतौर पर महिला कलाकारों को दिया जाना था। ●

भालजी पेंढारकर

भालचन्द्र गोपाल उर्फ भालजी पेढारकर का जन्म 1 मई 1899 को कोल्हापुर में हुआ था। मैट्रिक की परीक्षा पास कर वे नौकरी की खोज में पूना आये तथा एक सिनेमा हॉल मं गेटकीपर बन गये। फुरसत के वक्त वे लोकमान्य तिलक के अखबार *केसरी* में छुटपुट काम कर थोड़ी कमाई और कर लेते थे।

केसरी के दफ्तर में रहकर उनमें राष्ट्रभक्ति एवं हिन्दुत्व की भावनाएँ जाग्रत हुई। धीरे-धीरे वे इस क्षेत्र में नेता के रूप में उभरे तथा पण्डित मदन मोहन मालवीय एवं हेगडेवार जैसे मूर्धन्य नेताओं का आशीर्वाद पाकर *हिन्दूमहासभा* के पश्चिम क्षेत्र में प्रमुख नियुक्त हुए। *स्वदेश* स्वभाषा एवं स्वधर्म का प्रचार विस्तार करने का जो प्रण उन्होंने इस पद पर रहते हुए किया उसे वे आजीवन निभाते रहे।

थियेटर में गेटकीपरी करते हुए वे सोहराब मोदी के सम्पर्क में आये, जो उन दिनों पारसी थियेटर चलाया करते थे। भालजी ने भी उनके थिएटर में काम करना शुरू किया। इस विद्या के विभिन्न
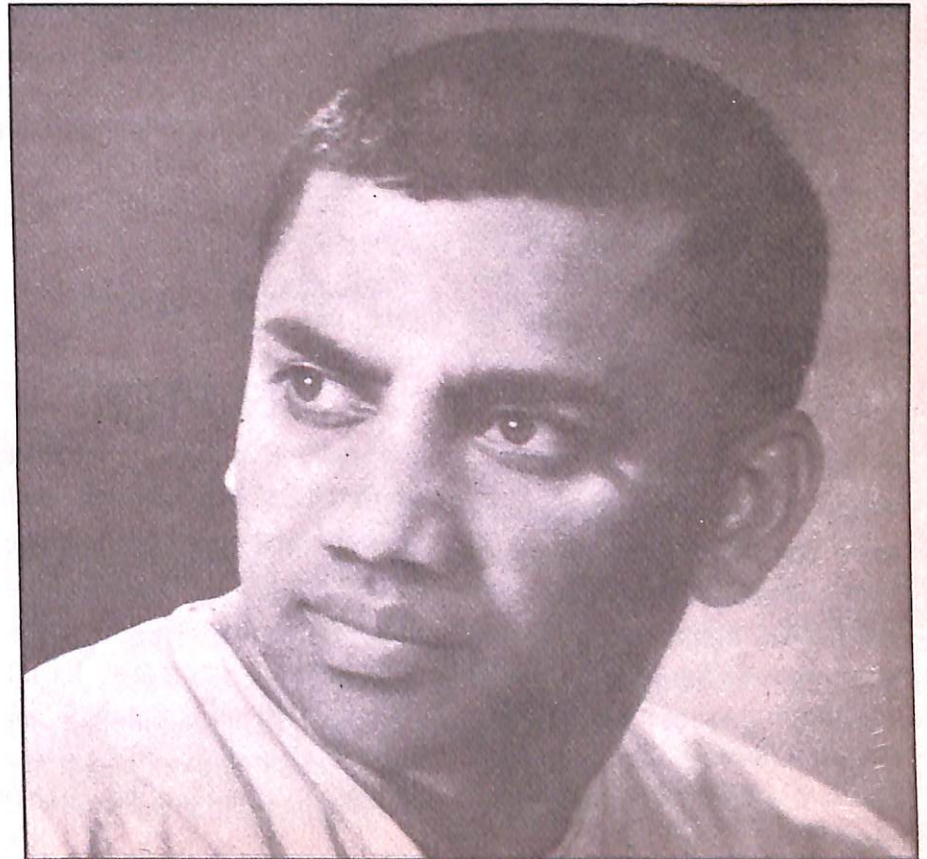
भालजी पेंढारकर

पहलुओं के बारे में गहरी जानकारी प्राप्त की । इसी ज्ञान तथा बहुमुखी जानकारी का फायदा उन्हें तब हुआ जब वे रंगमंच के लिए नाटक लिखने लगे । *कायदे मंत्रक्रांतिकारक, राष्ट्र संसार, अजिक्य तारा* आदि कई ऐतिहासिक एवं राजनीतिक पृष्ठभूमि वाले नाटक उन्होंने लिखे प्रभावशाली संवादों एवं राष्ट्रीय भावनाओं की प्रभुखना के कारण सभी को दर्शकों की प्रशंसा मिली ।

लेखक के रूप में उनकी सफलता देखकर महाराष्ट्र फिल्म कम्पनी के बाबूराव पेन्टर ने सन् 1922 में उन्हें अपनी फिल्म *मार्कण्डेय* की कथा एवं पटकथा लिखने का दायित्व सौंपा । दुर्भाग्य से स्टुडियों में भयानक आग लगने से सारी सामग्री नष्ट हो गई तथा इस फिल्म का निर्माण नहीं हो सका । इसके बाद वे मणिलाल जोशी के सम्पर्क में आये तथा उनके लिए *पृथ्वी वल्लभ* की कथा एवं पटकथा लिखी । इस फिल्म में भालजी ने स्वयं भी खलनायक के रूप में काम किया है । फिल्म ने ऐतिहासिक सफलता प्राप्त की तथा फिल्मोंद्योग को कई नये कलाकारों एवं तकनीशियनों से परिचित कराया । इसके बाद भालजी ने कई फिल्मों की कथा-पटकथा लिखी जिनमें *बाजीराव मस्तानी, राजहृदय,* खूनी खंजर, *जुल्म* आदि प्रमुख हैं । उन्होंने *बाजीराव मस्तानी* (1925) का निर्देशन भी किया तथा अपने भाई बाबूराव पेंढारकर के साथ मिलकर भागीदारी में फिल्म कम्पनी भी बताई । इस कम्पनी द्वारा निर्मित फिल्म *वन्देमातरम आश्रम* में ब्रिटिश शिक्षा प्रणाली के दोषों पर प्रहार किया गया था इस फिल्म को इतना अधिक सेंसर किया गया कि असंतुष्ट होकर भालजी ने इसे प्रदर्शित ही नहीं किया । इसके बाद उन्होंने महाराष्ट्र फिल्म कम्पनी के लिए *रानी रुपमती* (1931) को लिखा एवं निर्देशित किया ।

जब बोलती फिल्मों का युग आया तब भालजी ने श्याम सुन्दर (1932) का निर्देशन किया यह फिल्म सिल्वर जुबली मनाने वाली प्रथम बोलती फिल्म के रुप में प्रतिष्ठित हुई । अगले वर्ष उन्होंने प्रभात फिल्म कम्पनी की *सैरन्ध्री* की कथा, पटकथा, संवाद एवं गीत लिखे । यह फिल्म सवाक् युग की पहली रंगीन फिल्म थी । सन् 1934 में भालजी ने भारत की पहली एनीमेशन फिल्म *बाकेम भाट* का निर्माण किया जो *आकाशवाणी* के साथ प्रदर्शित हुई ।

भालजी ने अपनी स्वयं की फिल्म कम्पनी *प्रभाकर पिक्चर्स* (1943) स्थापित की तथा ऐतिहासिक फिल्म *बहीरजी नाइक* का निर्माण किया । यह फिल्म काफी सफल रही । इसके बाद उन्होंने सामाजिक फिल्में बनायी *मीठी भाकर* (Meeth Bhakar) *मी दारु सोडली माझी जमनी* तथा *साधी मानस* प्रमुख हैं सभी फिल्में सफल रहीं । उनकी धार्मिक एवं ऐतिहासिक फिल्मों में हिन्दुत्व एवं राष्ट्रभक्ति का गौरवगान प्रमुखता से रहना था । 6 दशकों तक वे फिल्म निर्माण की प्रक्रिया से जुड़े रहे तथा ग्यारह मूक, पाँच द्विभाषा (हिन्दी/मराठी) तीन हिन्दी एवं चौंवालीस मराठी फिल्मों के निर्माण में योगदान दिया । उनके द्वारा निर्देशित आखिरी फिल्म *शाबाथ* सून बाई थी, जो सन् 1988 में बनी थी जब भालजी अट्ठासी वर्ष के थे । अपने लम्बे फिल्मी कैरियर के दौरान भालजी ने कई फिल्म सितारों को उद्योग में प्रतिष्ठित किया । इनमें राजकपूर, शान्ता आप्टे, साहू मोडक, सुलोचना (मराठी) दादा कोंडके, सूर्यकान्त प्रमुख हैं । पहली बोलती फिल्म आलम आरा की नायिका जुबैदा को भी वे ही सर्वप्रथम *पृथ्वी वल्लभ* (1925) में अभिनेत्री के रूप में परदे पर लाये थे ।

सिद्धांतों के प्रति दृढ़ निष्ठा रखने वाले भालजी ने फिल्मों को कभी भी मात्र मनोरंजन का साधन नहीं समझा । इस माध्यम के जरिये वे सदैव दर्शकों को *स्वदेश, स्वभाषा* एवं *स्वधर्म* के प्रति प्रेरित करते रहे । ●

डी.जी. अर्थात् धीरेन गांगुली

फिल्मोद्योग में *डी.जी.* के नाम से मशहूर *धीरेन गांगुली* ने भारतीय सिनेमा को जो योगदान दिया है, उसे शायद ही कभी भूला जा सके । भारतीय सिनेमा के पितामह दादा साहब फालके के समकालीन धीरेन गांगुली के लिए उस जमाने में फिल्मों के क्षेत्र में अपना आसान नहीं था । घर के सदस्यों के भारी प्रतिरोध के बावजूद डी.जी. ने इस क्षेत्र में कदम रखा । डी.जी. की पहली फिल्म आयी 'बिलेट फेरेत'

इग्लैण्ड रिटर्न्ड

(विलायत पलट) संयोग से यह बंगाली की भी पहली फिल्म थी । विदेश जाकर पुनः देश लौट आने वाले फॉरेन रिटर्न लोगों पर इस फिल्म में करारा व्यंग्य किया गया था ।

इसके बाद डी.जी. ने पीछे मुड़कर नहीं देखा । समाज की विद्रुपताओं को उन्होंने अपनी फिल्मों का केन्द्र बिन्दु बनाया । कुल 53 फिल्में उन्होंने बनायी, जिनमें से कई को अपार लोकप्रियता मिली । डी.जी. को अपनी फिल्मों के नाम अंग्रेजी में देना पसंद था । लेडी टीचर्स, एक्सक्यूज मी, सर, फ्लेम्स ऑफ फ्लेश जैसे नामों से कई दफे संदेह होता है कि ये फिल्में कहीं अंग्रेजी की तो नहीं हैं । डी.जी. ने कुछ फिल्मों में अभिनय भी किया, लेकिन शुरू से आखिर तक उनकी खास रुचि फिल्में बनाने में रही । मेकअप करने में धीरेन दा का जवाब नहीं था । इसलिए उनके प्रशंसकों ने उन्हें *लोन चेन्नी ऑफ इंडिया* का खिताब भी दिया । उस दौर में भले घर के लोगों के लिए फिल्मों में जाना वर्जित था । खुद डी.जी. इस परिस्थिति से गुजर चुके थे । फिल्मों के लिए हीरोइनें जैसे-तैसे बड़ी मुश्किल से मिलती थीं । लगातार इसके लिए प्रयत्नशील रहना पड़ता था । एक बार डी.जी. के साथ हुआ यह कि वे कलकत्ता की गलियों की खाक छान रहे थे । इसी दौरान उनके बगल से एक युगल निकला । महिला को देखते ही उन्हें लगा यह केयर ब्यूटी है, इसे उनकी आगामी फिल्म की हीरोइन होना चाहिए । तेजी से आगे बढ़कर उन्होंने महिला को रोका और फिल्म

में काम करने का ऑफर दे डाला। इस पर उसके पति ने सख्त एतराज करते हुए कहा कि यदि इतना ही शौक है तो पहले अपनी पत्नी को फिल्म में काम क्यों नहीं करवाते ? डी.जी. को बात लग गयी, तुरंत घर पहुँचे। पत्नी को यह सब बताया और अगली फिल्म की हीरोइन उनकी पत्नी रमोला देवी बनीं। भारतीय सिनेमा को अविस्मरणीय योगदान के लिए डी.जी. को 1975 का दादा साहब फालके सम्मान दिया गया। डी.जी. फिल्मी दुनिया की चकाचौंध में भी एक संत पुरूष की तरह रहे, व्यक्तित्व के इस पहलू ने उन्हें और सम्माननीय बनाया। ●

जन्म : 18 नवम्बर 1901
मृत्यु : 18 नवम्बर 1990

भारतीय सिनेमा के भीष्म पितामह : वी. शांताराम

शांताराम वनकुद्रे

□ **जयप्रकाश चौकसे**

शांताराम का जीवन वृतांत और कृतित्व भारतीय सिनेमा का इतिहास कहा जा सकता है। 78 वर्षीय उद्योग में शांताराम का योगदान 70 वर्ष का है। उन्होंने 20 वर्ष की आयु में बाबूराव पेंटर को अपना गुरू मानकर फिल्मों में प्रवेश किया। सात वर्ष तक हर विभाग का अध्ययन कर 1927 में फिल्म नेताजी पालकर का निर्देशन किया। डी. डब्ल्यू. ग्रिफिथ और सिसिल डिमिल ने मिलकर हॉलीवुड के लिए जो कार्य किया, उससे अधिक अकेले शांताराम ने भारतीय फिल्म उद्योग के लिए किया है।

फिल्म माध्यम के कवित्त अनेक हैं, परंतु इस माध्यम के सबसे बड़े व्याकरण वी. शांताराम हैं, जिन्हें हम भारतीय फिल्मों का पाणिनि भी कह सकते हैं। कैमरे की भाषा के विकास में शांताराम का योगदान सबसे अधिक है। शांताराम के व्यक्तित्व में सबसे सशक्त पक्ष है, उनका नितांत भारतीय होना और उन्हें इसका गर्व भी बहुत रहा है। उन्हें यह दर्द पूरी शिद्दत से होता रहा है ।कि उन्होंने अभिव्यक्ति का ऐसा माध्यम चुना, जो नितांत अभारतीय है। फिल्म की सारी मशीनें विदेशों में बनती रहीं है। उनके जमाने में अधिकांश तकनीशियन भी विदेशी थे और बहुत से भारतीय विदेश जाकर इस उद्योग के तकनीकी ज्ञान को प्राप्त करते रहे थे। शांताराम ने परिश्रम और प्रतिभा से फिल्म माध्यम की बारीकियों को समझा और कई अभिनव प्रयोग कर इस माध्यम का नितांत भारतीय व्याकरण तैयार किया।

शांताराम ने जिस समय फिल्मों में प्रवेश किया, उस काल में फिल्म माध्यम अपने पैर जमाने के लिए जमीन खोज रहा था। विदेशों में भी प्रयोग हो रहे थे। कैमरे की भाषा के उस निर्माणकाल में शांताराम ने अपनी प्रतिभा से नए आयाम खोजे और फिल्म - दर - फिल्म उन्हें मांजकर नए रूप में ढाला। वे पहले भारतीय फिल्मकार थे जिसने क्रेन का उपयोग किया। **अमृतमंथन** देखकर एक विदेशी आलोचक ने शांताराम को कैमरे की भाषा का महान जानकार कहा। शांताराम ने फिल्म माध्यम को पैर जमाने के लिए अपने दिल की जमीन दी।

सन् 1937 में शांताराम ने **"दुनिया न माने"** बनाई, जिसे औरतों की आजादी की पहली फिल्म कहा जा सकता है। आज तक **"दुनिया न माने"** से अधिक क्रांतिकारी फिल्म नहीं बनी है। इस फिल्म में शांताराम ने पार्श्व संगीत का प्रयोग नहीं किया। कथानक के परिवेश में मौजूद स्वाभाविक ध्वनियों का प्रयोग करने वाली यह पहली फिल्म थी। पार्श्व संगीत के बदले पार्श्व ध्वनियों के प्रयोग से अद्भुत प्रभाव पैदा करने में शांताराम सफल रहे।

आज के निर्देशक वीडियो पर विदेशी फिल्में देखकर कथानक चुराते हैं इन फिल्मकारों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि शांताराम ने 1939 में "आदमी" बनाई थी, जो 1974 में अमेरिकन फिल्म "इरमाला डूस" का मूल संस्करण है।" "आदमी में कथानक तो असाधारण था ही परंतु शांताराम ने प्रस्तुतिकरण में अभिनव प्रयोग भी किए। एक दृश्य में दिखाया गया है कि एक फिल्म यूनिट एक गीत का छायांकन कर रही है। "आदमी " के नायक और नायिका

वी. शांताराम के गुरु बाबूराव पेंटर

फिल्म गीत की पैरोडी प्रस्तुत करते हैं । दिलीपकुमार की "राम और श्याम" में इस दृश्य को जैसे का तैसा प्रस्तुत किया गया । "आदमी" के एक दृश्य में अदाललत के स्थिर चित्र पर फैसले की ध्वनि को भी बाद में अनेक फिल्मकारों ने उठाया है ।

1946 में शांताराम ने "डॉ. कोटनीस की "अमर कहानी" का निर्माण किया जो एक सत्य घटना पर आधारित थी । एक भारतीय डॉक्टर ने चीन के लोगों की सहायता और सेवा में अपने जीवन की आहूति दी थी । इस फिल्म के अंतिम दृश्य में डॉ. कोटनीस अपनी चीनी पत्नी को कहते हैं कि जब सर्वत्र शांति होगी, वह भारत जाएगी । डॉ. कोटनीस के शब्दों पर वह दृश्यावली प्रारंभ होती है जिसमें उनकी पत्नी भारत आती है । यह अजीब इत्तफाक है कि डॉ कोटनीस की पत्नी बाद में सचमुच भारत आई । इस क्लाईमेक्स के विचार में नयापन था और प्रस्तुतिकरण में नया प्रयोग, जिसे बाद में कई फिल्मकारों ने अपनाया ।

सन् 1941 में शांताराम ने हिंदू-मुस्लिम एकता पर फिल्म "पड़ौसी" बनाई, जो दो विभिन्न जातियों के पड़ौसी दोस्तों की कथा थी । वे एक - दूसरे के सुख-दुख में काम आने वाले आम इंसानों की कहानी है । इस मानवीय गाथा के प्रस्तुतिकरण में शांताराम ने कई तकनीकी प्रयोग भी किए । एक मुहल्ले में पूरे देश को दर्शाने का प्रयास किया । इस फिल्म के स्वप्न दृश्य में विजातीय विवाह को नए ढंग से प्रस्तुत किया गया । प्रभात फिल्म कंपनी के लिए बनाई गई ये तीन फिल्में - "दुनिया न माने", "आदमी", और "पड़ौसी" को आलोचक शांताराम की श्रेष्ठतम फिल्में मानते हैं । 1950 में शांताराम ने "दहेज" बनाई जिसके प्रभाव के कारण कई राज्यों ने दहेज के विरूद्ध कानून का निर्माण किया । "दहेज" एक सशक्त सामाजिक दस्तावेज था । 1953 में बनी फिल्म "तीन बत्ती चार रास्ता" राष्ट्रीय एकता की फिल्म थी । इस फिल्म में विभिन्न प्रांतों से आई बहुओं की कथा थी । स्वयं शांतारामजी की पुत्रियाँ विभिन्न समुदायों में व्याही गई हैं ।

सन् 1957 में "दो आँखे बारह हाथ" में शांताराम ने एक असाधारण कथा चुनी जिसमें एक जेलर छह कैदियों को खुली जेल में ले जाकर उनके जीवन में परिवर्तन करना चाहता है । इस कथा से ही "शोले" "दुश्मन" और "कर्मा" के मूल बीज प्राप्त हुए हैं । तकनीक की दृष्टि से यह एक श्रेष्ठ भारतीय फिल्म है । ट्राली से लिए गए दृश्यों से अद्भूत प्रभाव उत्पन्न किया गया है । शांताराम की इस फिल्म ने एक और दुनिया भर के दर्शकों को प्रभावित किया है तो दूसरी ओर यह फिल्म, फिल्म निर्माण की एक टेक्सट बुक बन गई । दरअसल शांताराम ने अपनी आरंभिक फिल्मों में ही ट्राली के उपयोग से लोगों को चौंका दिया था । शांताराम सारी जिंदगी तकनीकी तजुर्बे करते रहे और माध्यम की सीमाओं का विस्तार करते रहे ।

प्रारंभिक-काल की फिल्में अति नाटकीय होती थीं और कैमरा एक जगह लगाकर पूरे दृश्य फिल्माए जाते थे । एक तरह से नाटकों का फिल्मीकरण मात्र था । **शांताराम ने कैमरे को गतिमान बनाया और मूवीज नाम को सार्थक किया तथा माध्यम को नाटक की गिरफ्त से आजाद किया ।** प्रारंभ की फिल्मों में ट्रॉली शॉट को नहीं समझ पाने के कारण आलोचकों ने सेट पर हिलने के आरोप लगाए । कालांतर में आलोचकों को शांताराम के प्रयोग का ज्ञान हुआ । **इस तरह शांताराम की फिल्मों ने दूसरे निर्देशकों को ही प्रशिक्षित नहीं किया वरन् आलोचकों को भी सिनेमाई दृष्टि दी ।** ख्वाजा अहमद अब्बास ने शांताराम की फिल्मों की समालोचना पूरे अखबारीय पृष्ठों में छापी और

उन फिल्मों से प्रेरित होकर स्वयं भी पटकथाएँ लिखने लगे। **शांताराम एक ऐसी संस्था बन गए जिसके बहुत से विद्यार्थी तो थे ही परंतु शिक्षक भी निरंतर सीख रहे थे।** इस अथक प्रयास और असाधारण प्रतिभा के मूल में था उनका अडिग भारत प्रेम। यह भारत प्रेम मनोजकुमार के भारत प्रेम से सर्वथा भिन्न था।

शांताराम ने विदेशी सेंसर की आँख बचाकर अपनी फिल्मों में राष्ट्र प्रेम का संदेश दिया। जब शांताराम ने 20 वर्ष की आयु में 1921 में फिल्मों में प्रवेश किया, उस समय महात्मा गाँधी ने भारतीय राजनीति में अपने पैर जमा लिये थे। देश का गाँधीमय होना प्रारंभ हो रहा था,। गाँधीवादी मान्यताओं के एकमात्र प्रतिनिधि फिल्मकार शांताराम रहे और जब अन्य क्षेत्रों में गाँधीवादी मान्यताएँ और आदर्श समाप्त हो गए तब भी शांताराम की फिल्मों में गाँधीवादी जीवित रहा। "दो आँखे बारह हाथ" का नायक खुंख्वार दरिंदों को भी प्रेम और त्याग से अहिंसा के रास्ते पर लाता है।" डॉ. कोटनीस" भी गाँधीवादी रचना है।

फिल्म के शैशवकाल में सीधा सादा चित्रांकन भी लोग ठीक से नहीं कर पाते थे। उन दिनों शांताराम ने प्रतीकों को साहित्यिक प्रयोग कर फिल्म को कला का दर्जा दिलवाया। "दुनिया न माने" में छतरी के प्रतीक से बेमेल विवाह की त्रासदी को उजागर किया। "आदमी" में मंगलसूत्र को प्रतीक बनाकर एक वेश्या के पत्नी बनने की तीव्र उत्कंठा को अभिव्यक्ति दी। "पड़ौसी" में शतरंज का प्रतीक शांताराम ने सत्यजीत राय के बहुत पहले ही इस्तेमाल किया है। "दो आँखे बारह हाथ" में एक मौन प्यार के पनपने के लिए कई स्वाभाविक प्रतीकों का प्रयोग किया है और अंत में नायिका द्वारा चूड़ियाँ तोड़ने पर दर्शक स्तब्ध रह जाता है क्योंकि उनका विवाह भी नहीं हुआ था। 1973 की "पिंजरा" में पक्षी और पिंजरे के प्रयोग से कलाकार की तड़प प्रकट की है। "नवरंग" में तो प्रतीकों का अंबार है। "गीत गाया पत्थरों ने" में सृजन से कठिन विषय को सरल प्रतीकों के सहारे स्पष्ट किया गया है।

गुलामी के दिनों में ब्रिटिश सेंसर से बचने के लिए शांताराम ने धार्मिक चित्रों के नाम पर देश प्रेम की फिल्में बनाई। प्रभात फिल्म कंपनी छोड़ने के बाद राजकमल स्टूडियो के लिए "शकुंतला" का निर्माण किया जिसकी नायिका नारी स्वातंत्र्य की प्रतीक के रूप में उभरी। आलोचकों ने कालिदास के महाकाव्य में परिवर्तन पर आलोचना की परंतु गुलामी के दिनों में हरसंभव पात्र के द्वारा स्वतंत्रता की बात कहना शांताराम अपना धर्म समझते थे।

शांताराम एक समर्पित और समाज के प्रति प्रतिबद्ध फिल्मकार रहे हैं। भारतीय फिल्म उद्योग के भीष्म पितामह शांताराम पूरे 70 वर्ष सक्रिय रहे। उनकी संस्था राजकमल कला मंदिर सबसे अधिक व्यवस्थित, साफ और सुचारू रूप से संचालित संस्था है। उनका सिनेमा गृह प्लाजा भी उच्च कोटि का है। कोई कर्मचारी राजकमल में गंदगी करने की हिम्मत नहीं करता क्योंकि वर्षो से एक स्वच्छ परंपरा के रूप में स्थापित है यह संस्था। अगर हम भारतीय फिल्मों के इतिहास को एक दिन की अवधि मान लें तो शांताराम सूर्योदय के थोड़े बाद आए और सूर्यास्त के थोड़े पहले चले गए। ●

अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के सूत्रधारः हिमांशु रॉय

आज टेक्नोलॉजी ने दुनिया को बहुत छोटा बना दिया है। दूरियाँ सिमट गयी है। आवाज दुनिया के किसी भी कोने में पहुँच सकती है। आज से 65 वर्ष पूर्व दुनिया बहुत बड़ी थी और सात समुद्र पार करना आसान काम नहीं थी। उस समय भी हिमांशुराय की कल्पना इतनी विशाल थी कि उनके लिए दुनिया छोटी ही थी। 1891 में एस समृद्ध परिवार में जन्में हिमांशु रॉय ने स्नातक की परीक्षा पास की और स्टेज तथा सिनेमा का प्रेम उन्हें लंदन ले गया जहाँ निरंजन पॉल से मित्रता हुई और दोनों ने मिलकर *द गॉडेस* नामक नाटक मंचित किया, जिसके नायक हिमांशु राय थे।

हिमांशु रॉय पहले भारतीय व्यक्ति थे जिन्होंने अंतर्राष्ट्रीय सहयोग से फिल्म बनाने की कल्पना की। उन्होंने म्यूनिख (जर्मनी) के इमाल्का कोन्जर्न स्टूडियो के सहयोग से 1925 में *लाइट ऑफ एशिया* का निर्माण किया। इस फिल्म में न केवल जर्मन तकनीशियन भारत आए बल्कि विदेशी धन से महात्मा बुद्ध के जीवन पर आधारित अंगरेजी भाषा की फिल्म भी बनी, जो विदेशों में भी सफल रही। एटनबरो के गाँधी के 60 वर्ष पूर्व हिमांशु रॉय ने भारतीय विषय पर विदेशी सहयोग से अंतर्राष्ट्रीय सफलता अर्जित की। जर्मनी के यू.एफ.ए. स्टूडियो के सहयोग से *शिराज* नामक फिल्म 1927 में बनाई। इस फिल्म को भी अंतर्राष्ट्रीय सफलता मिली। इसके बाद 1929 में हिमांशु राय ने जर्मन सहयोग के साथ ही लंदन के ब्रूस वूल्फ का भी सहयोग लेकर *ए थ्रोऑफ डाइस* नामक रोमांटिक फिल्म बनायी जिसकी पृष्ठभूमि राजपूताना थी और इसी फिल्म की शूटिंग के समय देविका रानी से उनका प्रणय और विवाह हुआ। देविका रानी आर्कीटेक्टर में शिक्षित थीं और इस फिल्म की कला निर्देशक भी थीं।

सन् 1931-32 में हिमांशु रॉय अंगरेजी भाषा में *कर्मा* का निर्माण किया। इस फिल्म में हिमांशु रॉय नायक थे और नायिका थीं देविका रानी। ध्वनि के आते ही हिमांशु रॉय और देविका रानी ने जर्मनी के स्टूडियों में इस नये आयाम का गहरा अध्ययन किया। हिमांशु रॉय पहले भारतीय निर्माता थे, जिन्हें तकनीकी गुणवत्ता का बहुत ध्यान था और उनके सारे तकनीशियन विदेशी थे परन्तु सारे कथानक और कलाकार हमेशा भारतीय होते थे। वे चाहते थे कि पश्चिमी देशों की तरह भारत में भी सर्व सुविधा सम्पन्न स्टूडियो हों, जहाँ विदेशी तकनीशियन भारतीय प्रतिभा को प्रशिक्षित करें। 1935 में उन्होंने अपने सपने को साकार करने के लिए *बाम्बे टॉकीज* की स्थापना की जो भारत की पहली पब्लिक लिमिटेड संस्था थी। आज भी इस तरह की कल्पना कोई नहीं करता। हिमांशु रॉय की प्रतिभा के कारण समाज के श्रेष्ठी वर्ग के लोग *बॉम्बेटॉकीज* में धन लगाने के लिए तैयार हुए और बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स में भी शामिल हुए। उच्च औद्योगिक घरानों को फिल्म की ओर आकर्षित करने का श्रेय हिमांशु रॉय को जाता है। हिमांशु रॉय की "बॉम्बे टॉकीज" वह पहली संस्था थी जिसका नाम पर्दे पर आते ही तालियाँ बजती थीं। 1935 से 1940 तक *बॉम्बे टॉकीज* ने 16 सामाजिक फिल्में बनायीं और अनेक प्रतिभाओं को प्रशिक्षित कर फिल्म उद्योग की सेवा में प्रस्तुत किया। शशधर मुखर्जी, अशोक कुमार, लीला चिटनिस, प्रथम महिला संगीतकार सरस्वती देवी, अमिया चक्रवर्ती आदि कई लोग हिमांशु रॉय की देन थे।

1939 में युद्ध प्रारंभ होने की हिमांशु रॉय के सभी जर्मन तकनीशियन नजरबंद बना लिये गये और इसी कारण उन्हें प्रतिदिन 19 घंटे परिश्रम कर फिल्मों को पूरा करना पड़ा। खराब स्वास्थ के बावजूद वे निरंतर फिल्म कार्य में लगे रहे। जब वे बहुत बीमार हो गए तब *बॉम्बे टॉकीज* को चलाए रखने के लिए देविका रानी ने अपने सहयोगियों की सहायता से *बँधन* की पटकथा तैयार की जिसे अपने आशीर्वाद से हिमांशु रॉय ने नवाजा। बँधन बनने के पूर्व ही उनकी मृत्यु हो गई।

हिमांशु रॉय का आधुनिक एवं अंतर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण भारतीय फिल्म उद्योग को उनका सबसे बड़ा योगदान है। तकनीकी गुणवत्ता के प्रति जागरूकता भी उन्होंने ही हमें दी है। रमेश सिप्पी ने 1975 में विदेशी तकनीशियन की सहायता से *शोले* बनाई और पिछले 16 वर्षों की सफलतम फिल्म "शोले" ही है। एटनवरो ने भी हिमांशु रॉय को ही दोहराया है। इतिहास का कोई भी दौर हो हिमांशु रॉय उसमें आधुनिक ही कहलायेंगे। उनका सर्मपण और कलाप्रियता हमें हर दौर में याद रहेगी। 18 मई 1940 को हिमांशु रॉय का निधन हो गया। ●

बी.एल. खेमका

रतनगढ़, राजस्थान में 25 सितम्बर 1906 को जन्मे *बजरंगलाल खेमका* अपनी शिक्षा पूरी कर 1923 में कलकत्ता आए और शक्क और मोटर-कार के क्षेत्र में कारोबार शुरू किया। लेकिन बायस्कोप के चमत्कार से आकर्षित हो वे हमेशा के लिए इसी क्षेत्र में जुड़ गए। सबसे पहले उन्होंने सिनेमा उपकरणों का धंधा शुरू किया मगर एक वर्ष के भीतर ही 1931 में उन्होंने अपनी ईस्ट इंडिया फिल्म कम्पनी की स्थापना कर टॉली-गंज में अपना स्टुडियो भी कायम कर लिया। उनकी पहली फिल्म *लक्ष्मी* तो मूक थी किंतु तब तक 'टॉकी' फिल्मों का भारत में आगमन हो चुका था और खेमका ने 1932 में 'रामायण' (तमिल) नामक सवाक् फिल्म, जो कि तमिल की पहली सवाक् फिल्म है, बना डाली। उनकी ईस्ट इंडिया फिल्म कंपनी में देश के सभी हिस्सों से आई प्रतिभाओं ने हिंदी, बांगला, तमिल, तेलुगू, मलयालम भाषा की फिल्में बनाई। इतना ही नहीं भारत-ईरान संयुक्त उपक्रम के तहत उन्होंने 1936 में फारसी भाषा की फिल्म 'लैला मजनू' का निर्माण भी किया। उन्हीं के द्वारा 'मुमताज बेगम' (1931) तथा 'भक्त कुचेला' (तमिल, 1936) में क्रमशः बेगम अख्तर और एस. सुब्बलक्ष्मी ने नायिकाओं की भूमिकाएँ की। सन् 1931 से 38 के बीच खेमका ने 75 सवाक् फिल्में बनाई जिनमें अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त पृथ्वीराज-दुर्गाखोटे अमिनीत 'सीता' भी थी, जिसका निर्देशन देवकी बोस ने किया था। सन् 1938 में खेमका ने बेहतर फिल्मों की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए मेट्रीपोलिटन पिक्चर्ज नाम की एक और कंपनी स्थापित की और सिनेमा-उपकरणों के अपने कारोबार को भी 'सेन्ट्रल टॉकी इक्विपमेंट' के जरिए आगे बढ़ाया। सिम्प्लेक्स की मशीनों का भारत, बर्मा और सिलोन में वितरण किया। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान भी उन्होंने जो कई उल्लेखनीय हिंदी और बंगला फिल्में बनाई उनमें केदार शर्मा की 'चित्रलेखा' भी शामिल है।

सन् 1944 में बी. एल. खेमका को फिल्म सलाहकार मंडल का सदस्य नियुक्त किया गया। उन्होंने 1946 में पूर्वी भारत की सबसे पहली स्वचलित फिल्म प्रोसेसिंग लेबोरेटरी (बेंगाल फिल्म लेबोरेटरीज) की स्थापना की। इसके बाद अपना ज्यादा ध्यान इस व्यवसाय पर केंद्रित करने के बावजूद वे 11 दिसम्बर 1973 तक (निधन) बराबर फिल्में बनाते रहे। ●

बाबूलाल चौखानी

पिछली सदी के अंतिम वर्ष में 27 सितम्बर को कलकत्ता में जन्मे *बाबूलाल चौखानी* की गणना बंगाली सिनेमा के अग्रदूत निर्माताओं में की जाती है। पिता की मृत्यु उनके जन्म के कुछ ही रोज हो जाने के कारण उन्हें अपने बाल्यकाल में ही भयानक संघर्ष करना पड़ा और वे औपचारिक शिक्षा से वंचित रह गए। लेकिन अपनी सहज व्यापारिक बुद्धि तथा इस क्षेत्र-विशेष के प्रति सम्मान के कारण उन्होंने अपने इमारती लकड़ी के धंधे को तो शिखर पर पहुँचाया ही मंच और अभिनय की दुनिया से आकर्षित हो वे 1932 में मदन थियेटर से जुड़ गए। मदन थियेटर उन दिनों बंगाल का अग्रणी फिल्म निर्माण संस्थान था। बी.एल. चौखानी की स्वयं की कंपनी का नाम भारत लक्ष्मी था और उसकी पहली दो फिल्में 'छत्र बकावली (उर्दू) तथा 'पति-भक्ति' (हिन्दी) 1931-32 में बनी लेकिन उन्हें थियेटर्स प्रोडक्शन के झंडे तले प्रदर्शित किया गया। इन दोनों फिल्मों की नायिका मिस *कज्जन* थीं तथा नायक क्रमशः *मास्टर निसार* तथा *मास्टर मोहन* थे। लेकिन इसके बाद ही चौखानी ने अपनी स्वतंत्र निर्माण-संस्था तथा श्री भारत लक्ष्मी स्टुडियो की स्थापना की तथा उसके द्वारा निर्मित पहली फिल्म 'चाँद सौदागर' (निर्देशन प्रफुल्ल रॉय) 1934 में प्रदर्शित हुई। उनकी अगली फिल्म 'रामायण' (हिंदी) के निर्देशक तो प्रफुल्ल रॉय ही थे, लेकिन उसे लिखा पंडित सुदर्शन ने था।

हालांकि श्री भारत लक्ष्मी स्टुडियो ने भारत की सभी प्रमुख भाषाओं में लगभग साठ फिल्मों का निर्माण किया, चौखानी की खास नजर बंगाली दर्शकों पर ही थी और बंगाल में उन्हें बंगाली फिल्मों के निर्माता के रूप में ही सम्मानपूर्वक याद किया जाता है। दर्शकों को 'अश्रुविगलित' कर देने वाली उनकी पारिवारिक फिल्में बेहद लोकप्रिय हुई दर्शकों की पसंद को भाँपने के लिए उनके पास जैसे कोई 'छठी ज्ञानेंद्री' थी। इनके अलावा उन्होंने 'पारसमणि', 'अलीबाबा' तथा 'अवतार' जैसी वेशभूषा-प्रधान फिल्मों द्वारा भी आम बंगाली दर्शकों को आकर्षित किया। अपने कलाकारों और तकनीशियनों के साथ भी वे बड़े मधुर संबंध रखते थे और उनके झंडे तले अहींद्र चौधुरी, छवि विश्वास, साधना बोस (कलाकार) मन्मथ रॉय, (लेखक) हिमांशु दत्त, एस. डी. बर्मन, (संगीतकार) जैसे किंवदंती पुरूष एकत्र हुए। 'मा-ओ-छेले' (1954) में उन्होंने बंगाल के सारे नामी कलाकारों को एकत्र कर लिया था। चौखानी की मृत्यु के बाद उनके पुत्र जगदीश ने बंगाल फिल्म जर्नलिस्ट एसोसिएशन के तहत श्रेष्ठ कहानीकार का एक पुरस्कार स्थापित किया हैं। ●

देविका रानी : फर्स्ट लेडी ऑव इण्डियन स्क्रीन

देविकारानी

भारतीय फिल्मों की प्रथम स्वप्न सुन्दरी का दर्जा पाकर हजारों प्रशंसकों को दीवाना बना देने वाली सुन्दरी देविका रानी ने तीसरे और चौथे दशक में फिल्म निर्माण के इतिहास को नया मोड़ दिया। भारतीय ग्रामीण युवती के पात्रों को परदे पर जीवन्त करने वाली देविकारानी अपने वास्तविक जीवन में पश्चिमी शैली की जिन्दगी पसंद करती थीं।

रवीन्द्रनाथ टैगोर के खानदान से जुड़ी देविका के पिता भारतीय फौज में सर्जन जनरल (कर्नल) थे। खुले वातावरण में बड़ी होती हुई वे शिक्षा प्राप्ति के लिए ब्रिटेन गई। वास्तुकला में डिप्लोमा लेकर उन्होंने ब्रिटिश फिल्म निर्माता ब्रूस वुल्फ को साथ डिजाइनर के तौर पर कार्य करना शुरू किया। 'ए थ्रो ऑफ डाइस' नामक फिल्म के निर्माण के दौरान उनका परिचय **हिमांशु राय** से हुआ। दोनों की उम्र में काफी फर्क था। फिर भी दोनों में प्रेम हुआ तथा 1929 में विवाह हो गया। उसी समय 'थ्रो ऑफ डाइस' पूरी हो रही थी। फिल्म की शूटिंग के लिए यह युगल भारत के मन्दिरों में घूमा तथा बाद में दोनों फिल्म की प्रोसेसिंग के लिए जर्मनी गए।

जर्मनी में देविका रानी ने फिल्म कला के महारथियों से प्रशिक्षण प्राप्त किया। यहाँ उन्होंने तकनीकी पक्ष के बारे में पाब्स्ट जैसी विश्वविख्यात हस्तियों से शिक्षा पाई तथा एरिक पामर प्रॉडक्शन यूनिट की योजना में अभिनय का प्रशिक्षण लिया। रंगमंच पर अभिनय का पृथक प्रशिक्षण उन्होंने विख्यात निर्माता मेक्स रेनहार्ड से लिया। प्रशिक्षण का यही दौर बाद में बॉम्बे टॉकीज की स्थापना में उपयोगी सिद्ध हुआ।

बॉम्बे टॉकीज की स्थापना हिमांशु रॉय ने सन् 1934 में की। इसके बाद इस दम्पत्ति ने भारतीय फिल्मोद्योग को नई दिशा देने का अभियान छेड़ा। सभी प्रारंभिक फिल्मों में नायिका के रुप में देविका रानी ने स्वयं अभिनय किया। उनका सौन्दर्य, अभिनय क्षमता तथा उच्चवर्गीय जीवन शैली ने दर्शकों को मोहित कर लिया। इन्हीं विशिष्टताओं के कारण उन्हें 'फर्स्ट लेडी ऑफ इण्डियन स्क्रीन' कहा जाने लगा।

हिमांशु राय के देहांत के बाद 1940 में बॉम्बे टॉकीज का नियंत्रण देविका रानी के पास आ गया। उन्होंने इस प्रतिष्ठान का उच्च स्तर कायम रखा। सन् 1945 में उन्होंने बॉम्बे टॉकीज से नाता तोड़ा तथा रुसी मूल के चित्रकार रोरिख से विवाह कर बंगलौर में रहने लगी।

भारत सरकार ने इस महान अभिनेत्री एवं फिल्मकार को विभिन्न सम्मानों से अलंकृत किया। वे केन्द्रीय सरकार के 'आडियो विजुअल एजुकेशन बोर्ड की सदस्य रहीं। 'संगीत नाटक अकादमी' 'ललित कला अकादमी', 'नेशनल हेण्डीक्राफ्ट्स बोर्ड', 'इण्डियन काउंसिल फार कल्चरल रिलेशन्स' आदि विशिष्ट संस्थाओं की सदस्यता से उन्हें सम्मानित किया गया।

सन् 1958 में उन्हें पद्मश्री से अलंकृत किया गया तथा सन् 1969 में वे दादासाहब फालके अवार्ड की प्रथम हकदार बनीं। सन् 1978 में उन्हें बल्गेरियन मेडल ऑफ ऑनर से सम्मानित किया गया। इण्डियन अकादमी ऑफ मोशन पिक्चर आर्ट एण्ड साइंस द्वारा विशिष्ट सेवाओं के लिए प्रदत पदक सन् 1981 में उन्हें श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने दिया था। अशोक कुमार और दिलीपकुमार को खोजने का श्रेय उन्हें है। अशोक कुमार के साथ उन्होंने कई फिल्मों में काम कर अपनी जोड़ी लोकप्रिय बनाई थी।

फिल्मी दुनिया के 'सरदार': चन्दूलाल शाह

वाणिज्य स्नातक *चंदूलाल शाह* स्टॉक एक्सचेंज के दफ्तर में बैठकर लाखों के वारे-न्यारे करने के साथ ही फिल्म की कहानियाँ भी लिखते थे। उनके तीन शौक थे-फिल्म, स्टॉक एक्सचेंज और रेसकोर्स। घोड़े चुनने में जितने निर्पुण थे, उतनी ही चतुराई से प्रतिभाओं को पहचानते थे। शेयर के इंडैक्स की तरह उनकी कहानियों में नाटकीय मोड़ आते थे। इन तीनों ही शौक को सट्टा कहा जा सकता हैं। परन्तु चंदूलाल शाह की विलक्षण प्रतिभा यह थी कि उन्होंने हर काम व्यावसायिक कुशलता और अपूर्व संगठनात्मक योग्यता से किये जिसके कारण 35 वर्षों में 200 से अधिक फिल्में बनायीं, रणजीत मूवीटोन के लिए ही 15 वर्ष में 100 फिल्मों का

निर्माण किया। सितारा गौहरबाई सदैव ही उनकी प्रेरणा और पार्टनर रही।

चंदूलाल शाह ने उद्योग को अधिकतम सितारे दिये जिनमें से कुछ नाम हैं- राजकपूर, दिलीपकुमार, नूतन, नरगिस, देवआनंद, किशोर कुमार, मोतीलाल, के.एल. सहगल, आगा, सज्जन, मधुबाला, गीताबाली, मीनाकुमारी, सुरैया, ऊषा किरण इत्यादि। उस जमाने में लोग कहते थे कि आकाश में जितने तारें हैं, उतने चंदूलाल शाह के पास सितारें हैं। उनका दूसरा महान योगदान यह है कि इंडिया मोशन पिक्चर प्रोड्यूसर एसोशिएशन जैसी अनेक संस्थाओं के स्थापक सदस्यों में वें अग्रणी थे। इन्हीं कारणों से उन्हें *सरदार* कहा जाता था।

चंदूलाल शाह ने सभी प्रकार की फिल्में बनाई हैं। *हमलोग, फुटपाथ* और *जोगन* जैसी कलात्मक फिल्में उस दौर में बनायी हैं जब तथाकथित कला-फिल्म ने किसी आंदोलन की शक्ल नहीं ली थी। दूसरी ओर *तूफान-मेल* और *तूफान मेल की वापसी* भी बनायी है। विषण की विविधता के साथ ही भारी संख्या में फिल्मों का निर्माण व्यवस्थित ढंग से कर चंदूलाल ने फिल्मों को उद्योग का दर्जा दिया और इसके लिए सरकार से लड़ाई भी लड़ी।

चंदूलाल शाह नेता वल्लभ भाई पटेल के मित्र थे और उनकी सहायता से उन्होंने सेंसर बोर्ड को व्यवस्थित किया। पहले सेंसर की प्रक्रिया बहुत ही लम्बी और जटिल थी। चंदूलाल शाह ने फिल्म उद्योग की गरिमा बढ़ाने के लिए कई कार्य किये। उनके दिये गये वचन के आधार पर बड़ी रकम का आदान-प्रदान हो जाता था। स्टार प्रथा के जमाने में भी उनके स्टुडियों के कलाकार अपने *सरदार* के आदेश के लिए कुछ भी करने को तैयार थे। व्यावसायिक विश्वास के इस भाव को फिल्म उद्योग में *सरदार* ने ही पैदा किया।

चंदूलाल शाह का जन्म 13 अप्रेल 1898 को जामनगर (गुजरात) के एक जैन परिवार में हुआ था। 1964 में वे फिल्म निर्माण से मुक्त हुए और 1975 में उनका निधन हुआ। ●

आर्देशिर ईरानी

गूँगा बोलने लगा: आर्देशिर इरानी

आर्देशिर माखान इरानी ने 14 मार्च 1931 को भारत की पहली बोलती हुई फिल्म *आलम-आरा* का प्रदर्शन किया और बोलती हुई फिल्मों के जनक कहलाये। इरानी को इस बात का श्रेय भी जाता है कि उन्होंने अंगरेजी भाषा में *नूरजहाँ* का निर्माण 1934 में किया। इरानी ने ख्याति की *हैट-ट्रिक उस समय* अर्जित की जब *किसान-कन्या* नामक पहली रंगीन फिल्म 1937 में बनायी। यह आश्चर्य की बात है कि रंगीन फिल्मों का दौर बहुत बाद में शुरू हुआ। इरानी का सिर्फ इतना योगदान नहीं है कि उन्होंने गूँगी फिल्मों को आवाज दी श्याम-श्वेत फिल्मों के जमाने में रंगीन फिल्म बनायी, बल्कि उन्होंने भारतीय फिल्म उद्योग को साहस का एक नया दृष्टिकोण दिया और कहानियों के चयन में इतनी विविधता प्रदान की कि आज भी कोई फिल्म ऐसी नहीं बन रही है जिसका मूल इरानी की बनायी डेढ़ सौ फिल्मों में नहीं मिले। उन्होंने न केवल सभी भारतीय भाषाओं में फिल्में बनायी बल्कि अंगरेजी, बर्मीज, पश्तो और इंडोनेशिया तथा गल्फ देशों की भाषाओं में भी फिल्में बनायी। वे अपनी *इम्पीरियल* कम्पनी को पूरी दुनिया का स्वरूप देना चाहते थे क्योंकि अपनी जवानी में वे अमरीका के यूनीवर्सल स्टुडियो के भारतीय प्रतिनिधि थे और *यूनीवर्सल* ही सदैव उनका आदर्श रहा।

दस दिसम्बर 1885 को जन्में इरानी 1905 में यूनीवर्सल के भारतीय प्रतिनिधि बने और अबदुलअली युसफअली की भागीदारी में 55 वर्ष तक बम्बई में अलेक्जेन्डर सिनेमा चलाया। इरानी ने फिल्म निर्माण के क्षेत्र में 1917 में प्रवेश किया *स्टार फिल्म कम्पनी* नामक संस्था से और *वीर अभिमन्यु* उनकी पहली फिल्म थी। 1919 में इरानी ने *मैजेस्टिक* का नाम से नयी संस्था शुरू की जिसका उद्देश्य केवल ऐतिहासिक विषयों पर फिल्में बनाना था। उन्होंने सबसे अधिक फिल्में *इम्पीरियल* कम्पनी के लिए बनायी। इरानी चालीस की आयु में भारत

के स्थापित निर्माता-निर्देशक-वितरक और प्रदर्शन थे। इरानी की इम्पीरियल कम्पनी ने भारतीय फिल्म उद्योग को सबसे अधिक सितारे दिये हैं - बिल्लीमोरिया बंधु, पृथ्वीराज कपूर, मेहबूब खान, याकूब, मुबारक इत्यादि। इरानी माध्यम के साथ खिलवाड़ भी करते थे। उन्होंने *आलम-आरा* के सेट पर तामिल भाषा में *कालिदास* का निर्माण किया जिसके गीत तेलुगु भाषा में थे क्योंकि संस्कृत के महाकाव्य के लिए तेलुगु ज्यादा उचित भाषा थी। फ्रेंच काप्रा की तर्ज पर इरानी ने *माधुरी में* आधुनिक महिला का पात्र प्रस्तुत किया जिसमें सुलोचना के नये केश विन्यास की उतनी ही प्रशंसा हुई जितनी *लव इन शिमला* (1961) में साधना की लटों की हुई थी।

इरानी और रुस्तम भरूचा ने लंदन जाकर 15 दिनों में ध्वनि मुद्रण की विद्या को सीखा और *आलम-आरा* में उसे अधूरे ज्ञान के सहारे ही आवाज रिकार्ड की। इस बहाने उन्होंने एक नया काम भी अनजाने ही कर दिया। उन दिनों प्राय: रिफ्लेक्टर की सहायता से सूरज की रोशनी का प्रयोग कर आऊट डोर शूटिंग होती थी। इरानी को बाहरी आवाजे कष्ट दे रही थी, इसलिए, उन्होंने स्टूडियो के भीतर रात के सन्नाटे में लाइट लगाकर शूटिंग की। अनजाने में ही पहली बार अप्राकृतिक रोशनी में शूटिंग की परम्परा शुरू हो गई।

आर्देशिर माखान इरानी ने प्रथम और दूसरे विश्व युद्ध के बीच के बीस वर्षों में 158 फिल्में बनायीं और अपनी अंतिम फिल्म 1945 में बनायीं जिसे अस्पी इरानी ने दिग्दर्शित किया था। फिल्म का नाम *पुजारी* था। दादा फालके की तरह इरानी मजबूर होकर नहीं रहें, उन्होंने स्वयं ही युद्ध के समय को उद्योग के लिए खतरनाक माना और अपनी गतिविधियाँ समाप्त कर दीं। उनका बनाया हुआ ज्योति स्टुडियो आज भी साऊंड ट्रान्सफर का कार्य करता है। इरानी की मृत्यु 14 अक्टूबर 1960 में हुई थी। ●

नितिन बोस

फिल्म-निर्माण के हद क्षेत्र में सक्रिय रहे तथा बेहद व्यस्थित ढंग से काम करने वाले *नितिन बोस* का जन्म 27 अप्रैल 1897 को कलकत्ता के प्रसिद्ध उद्योगपति हेमेंद्र मोहन बोस की नौ में से तीसरी संतान के रूप में हुआ था। अन्य धंधों के अलावा एच. बोस फोटोग्राफी के भी अग्रदूत थे और इसीलिए नितिन ने भी अपने फिल्मी कैरियर की शुरूआत फोटोग्राफर के रूप में ही की और बाद में उनकी प्रतिभा हर क्षेत्र में प्रस्फुटित हुई। उनके ग्यारहवें जन्मदिन पर ही उनके पिता ने उन्हें एक चलचित्र कैमरा तथा प्रोजेक्टर खरीद दिया था। पिता की मृत्यु के बाद वे 1916 में मदन थियेटर्स में कैमरामैन के रूप में काम करने की नीयत से गए लेकिन बात बनी नहीं। उन्होंने सिने फोटोग्राफी जारी रहती और 1921 में पुरी की रथ यात्रा पर बनी उनकी फिल्म 103 डॉलर में न्यूयार्क की हर्स्ट कंपनी ने खरीद ली।

नितिन बोस ने कैमरा मैन के रूप में:- इर्फोर्ड टाईन फॉक्स कंपनी के लिए 'खेड़ा आंदोलन' तथा अमेरिकी विमान चालकों के कलकत्ता अवतरण की फिल्मों का चित्रांकन (1922) किया। जय गोपाल पिल्लई की इंडियन सिनेमा आर्ट के लिए 'इनकर्निशन' (1925) का चित्रांकन। नितिन बोस व सतीश मिश्रा की देवदास (1927); शिशिर भादुड़ी की विचारक (1929)। बी.एन. सरकार की इंटरनेशनल फिल्म क्राफ्ट के लिए 'चसर मेखे'। सन् 1930 में बी.एन. सरकार द्वारा न्यू थियेटर्स की स्थापना। नितिन बोस उसके तकनीकी निर्देशक तथा कैमरा-विभाग के प्रमुख नियुक्त हुए। पहली फिल्म 'देना पाव ना' (बंगाली) तथा मोहब्बत के आँसू (हिंदी), दोनों शरद के उपन्यास पर आधारित। देवकी बोस के साथ 1932 में मुलाकात और 'चंडीदास' का निर्माण। दोनों की अगली फिल्म 'पूरन मल' में देवकी बोस से मतभेद और देवकी बोस के न्यू थियेटर्स छोड़ने की बाद नितिन बोस पर निर्देशन की जिम्मेदारी। निर्देशक नितिन बोस:- न्यू थियेटर्स: चंडीदास (हिंदी) 'डाकू मंसूर' (1934) साम्प्रदायिकता के आरोप के कारण प्रतिबंधित। नितिन बोस ने पटकथा भी लिखी। 'धूप छाँव' (हिन्दी) भाग्य-चक्र (बंगाली) में पार्श्व-गायन की शुरुआत। प्रेसिडेंट (1936) 'देशेर माटी' (बंगाली) हिन्दी में 'धरती माता' तपेदिक उन्मूलन के लिए सरकारी प्रेरणा से 'दुश्मन'(1939) संभवत: उनकी सबसे लोकप्रिय फिल्म। न्यू थियेटर्स में अंतिम फिल्म 'काशीनाथ ' थी, जिसमें उन्होंने, 'फ्लैश बैक' से भिन्न कहानी कहने की 'एंटी पोस्टेरियर टेकनीक का पहली बार उपयोग किया।

बंबई में नितिन बोस: 'पराया धन' (हिन्दी) 'विचार' (बंगाली), मुजरिम तथा मजदूर (हिंदी)।

बॉम्बे टॉकीज टैगोर की कहानी बंगाली में 'नौका डूबी' और हिंदी में 'मिलन' शीर्षक से ।'मिलन' (1947) के नायक दिलीप कुमार तथा कैमरामैन राधू कर्मकार थे। एक फिल्म (दृष्टिदान) सुधीर बेनर्जी के लिए बनाने के लिए वे कलकत्ता लौटे लेकिन वहां के लोगों से उपेक्षा पाने पर वापस बॉम्बे टॉकीज में अशोक कुमार के निमंत्रण पर 'समर' और 'मशाल' का निर्देशन (संगीत दोनों में एस.डी. बर्मन का था) माखन लाल जैन के फिल्मकार के लिए 'दीदार' (1950) निर्माता के रूप में 'दर्द ए दिल' (1953) असफल लेकिन सोहराब मोदी के लिए निर्देशित 'वारिस' सफल हुई। कलकत्ता वापसी: 'माधवीर जान्ये' (1955-56) तथा 'जोगा-जोग' (1956-57) बंगाली में। अमिय चक्रवर्ती के निधन के बाद उनकी अधूरी फिल्म 'कठपुतली' को पूरा करने बंबई आगमन। यहीं पर दिलीप कुमार की अपनी महत्वकांक्षी फिल्म 'गंगा-जमुना' (1961) का निर्देशन।

इसके बाद नितिन बोस कोई उल्लेखनीय फिल्में तो नहीं बना पाए लेकिन पूना फिल्म और टी.वी. संस्थान में अतिथि व्याख्याता, हिंदुस्तान फोटो कंपनी, फिल्म सलाहकार समिति के सदस्य। असम सरकार के लिए गुवाहाटी में स्टुडियो निर्माण में तकनीकी सलाहकार के रूप में सक्रिय रहे। न्यूथियेटर्स में सहगल हाड़ी सान्याल, बरुआ, पृथ्वीराज, फणि मजुमदार जैसे कलाकारों के साथ सक्रिय सहयोग भी नितिन बोस की उपलब्धियों में शामिल है।

अम्बालाल पटेल

अप्रैल 15, 1907 में जन्में **अम्बालाल जे. पटेल** की कहानी भारतीय फिल्मों के अग्रदूतों में सबसे ज्यादा विविधता पूर्ण और रंगीन है। एक मामूली किसान के पुत्र के रूप में जन्में अम्बालाल मात्र आठ आने जेब में लेकर घर से चल पड़े और गोधरा के एक सिनेमा-घर में गेटकीपरी से शुरुआत कर बंबई में भारत की पहली रंगीन फिल्मों के मुद्रण और प्रोसेसिंग लेबोरेटरी 'फिल्म सेंटर' के संस्थापक बने। जिंदगी के काफ़ी उतार-चढ़ावों से गुज़रते हुए उन्होंने तीस रुपये में एक कैमरा खरीद कर 1925 में पूर्वी अफ्रीका (मोम्बासा) की यात्रा की। वहाँ तीन बरस रह कर तथा प्रिंस ऑव् वेल्स (बाद में ड्यूक ऑव् विंड्सर) के आगमन की फ़िल्म बनाने के बाद बंबई वापस लौटे। कृष्णा फिल्म कंपनी के प्रबंधक रहने के बाद प्रसिद्ध किसान नेता इंदुलाल याज्ञिक की फिल्म 'किसान' का छायांकन किया। सागर मूव्हीटोन के लिए उनके द्वारा फोटोग्राफ की गई प्रमुख फिल्मों के अलावा उन्होंने **सेठ गोविन्द दास** तथा **द्वारका प्रसाद मिश्र** की 'धुआँधार' का छायांकन भी किया है। मेट्रो गोल्डविन मेयर की 'किम' तथा ट्वन्टिअथ सेंचुरी फॉक्स की 'रेन्ड केम' के लिए स्थिर छायांकन क्रमशः 1937 और 1939 में किया। भारत सरकार के लिए 1940 में कुछ शैक्षिक फ़िल्मों का निर्माण किया। 1946 तक समाचार चित्रों का निर्माण अपनी कंपनी इंडियन मूव्हीटोन न्यूज के झंडे तले किया। सन् 1950 में कृष्ण गोपाल के साथ फिल्म-सेंटर की स्थापना तथा 1952 में पहली कलर फीचर फिल्म 'पॉम्पोश' का काश्मीर की वादियों में छायांकन। कला फिल्म महोत्सव में 'पम्पोश' की सराहना प्रसिद्ध समीक्षक ज्याँ क्सो द्वारा उसे एक 'वास्तविक राष्ट्रीय कार्य' के रूप में की गई। बहुविध - स्वप्नदृष्टा पटेल की भारत का सपना डिस्नेलैंड बनाने की महत्वाकांक्षा पूरी न हो सकी। अम्बालाल के योग्य उत्तराधिकारियों ने **मद्रास** में फ़िल्म सेंटर की एक अनुसंधान इकाई स्थापित कर उनके काम को आगे बढ़ाया है। ●

कृष्ण गोपाल

लखनऊ में 7 नवंबर 1903 को जन्में कृष्ण गोपाल (के.जी.) भारतीय सिनेमा के उन अग्रदूत-निर्माताओं में से हैं, जो कैमरे के सामने के बजाए पीछे काम करते हैं। लखनऊ विश्व विद्यालय से बी.एस.सी करने के बाद उन्होंने 'प्रकाश' पर डॉ बी.एन. रॉय के निर्देशन एक वर्ष में शोध-कार्य किया और इसके बाद 1926 में वे यू.पी. सरकार के हाईजीन इन्स्टीट्यूट के लिए एक योरपीय निर्देशक द्वारा बनाई जाने वाली स्वास्थ्य एवं स्वच्छता संबंधी फिल्मों के कैमरा- मैन बन गए। फिल्मों के छायांकन का यह सिलसिला अगले 50 वर्ष तक चला और उन्होंने प्रारंभिक काल में धीरेन गांगुली (1929) देवकी बोस, पी.सी. बरुआ (1934 तक) न्यू थियेटर्स (1935 से, लाहौर में) तथा बाँबे टॉकीज जैसे व्यक्तियों तथा संस्थानों के लिए छायांकन किया।

के.जी. का सबसे अच्छा युग बंबई में चंदूलाल शाह के रणजीत स्टुडियो में बीता जहाँ अनेक फिल्मों की फोटोग्राफी करते हुए उन्होंने पहली बार बैक-प्रोजेक्शन ('अछूत') तकनीक तथा तूफ़ान के दृश्यों के लिए पवन-चक्कियों का इस्तेमाल किया। इजरा मीर के साथ सूचना तथा वृत्त चित्रों के निर्देशक-कैमरामैन के रूप में किया (1943 - 46)। स्वतंत्र रूप से तमिल फिल्म 'इदु निजामा' (1947) का निर्माण और निर्देशन। भारतीय फिल्म-प्रभाग (फिल्म डिविजन) का संगठन (1948 - 53)।

के.जी. का प्रमुख योगदान श्वेत-श्याम तथा रंगीन फिल्मों के प्रवर्धन (प्रोसेसिंग) के क्षेत्र में है। रंजीत स्टुडियो के लिए उन्होंने चार स्वचलित फिल्म प्रोसेसिंग मशीनें बनाई तथा अम्बालाल पटेल को उनकी फिल्म प्रोसेसिंग प्रयोगशाला 'फिल्म सेंटर' की स्थापना व विस्तार में सहयोग दिया। के.जी. ने फिल्म-तकनीशियनों के संघों के लिए भी महत्वपूर्ण पदों पर कार्य किया। डब्ल्यू. आई.सी.ए. के अध्यक्ष तो वे बरसों रहे। ●

संगीतकार

नौशाद अली

संगीतकार नौशाद अली को भारतीय सिनेमा के प्रति उनके उत्कृष्ट योगदान के लिए 1981 में दादा साहेब फालके अवार्ड प्रदान किया गया। उनके संगीत ने थिएटर और सिनेमा दर्शकों की पीढ़ियों को प्रेरित किया है। अधिकांश विख्यात फिल्मी हस्तियों की भांति ही नौशाद ने अपने कैरियर की शुरुआत मामूली ढंग से की। यद्यपि उन्होंने शास्त्रीय संगीतकार के रूप में प्रशिक्षण प्राप्त किया था तथापि उन्होंने एक थिएट्रिकल कंपनी में पियानो और हार्मोनियम वादक के रूप में अपना कार्य आरंभ किया। 1937 में वे बंबई गए जहाँ वे स्वयं को स्थापित करने के पूर्व अनेक संगीत निर्देशकों के सहायक के रूप में कार्य करते रहे। उन्हें फिल्म **रतन** में पहली महान संगीतीय सफलता मिली। जिन 57 फिल्मों के लिए उन्होंने संगीत रचना की उनमें से 35 फिल्में सिल्वर जुबिली फिल्में रही हैं। अनमोल घड़ी, अनोखी अदा, अन्दाज, मेला, बाबुल, उड़न खटोला, पालकी और बैजू बावरा नामक फिल्में उनकी महानता की गवाही देती हैं। मोहम्मद रफी और लता मंगेशकर जैसे गायकों को सिनेमा में लाने का श्रेय भी नौशाद को प्राप्त है। नौशाद को म.प्र. शासन द्वारा सुगम संगीत के क्षेत्र में दिया जाने वाला लता मंगेशकर अवार्ड 1984 में प्राप्त हुआ है।

संगीतकार

आर.सी. बोराल

भारतीय सिने जगत के प्रति उनके असाधारण योगदान के लिए श्री आरसी. बोराल को 1978 वर्ष के लिए दादा साहब फालके पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

रायचंद बोराल (जन्म 1904) भारतीय फिल्म संगीत के अग्रगामियों में थे। यह लालचंद बोराल के सबसे छोटे बेटे थे। पिता भी एक जाने - माने संगीतज्ञ थे। आरसी. बोराल का पालन-पोषण तो संगीत के साथ-साथ ही हुआ। उन्होंने भारतीय शास्त्रीय संगीत की लम्बी और कठिन साधना की और लखनऊ, इलाहाबाद व बनारस में कई संगीत सम्मेलनों में भाग लिया। फिल्म जगत में आने से पहले उन्होंने आकाशवाणी के भारतीय संगीत अनुभाग में भी काम किया। यह तब की बात है जब भारत में रेडियो प्रसारण अपने शैशव में ही था। चौथे दशक में भारत में बोलती फिल्मों का युग आया और फिल्म निर्माण में संगीत का विशेष महत्व हो गया। आर. सी. बोराल ने न्यू थियेटर्स के साथ संगीत निर्देशक के रूप में काम शुरू किया। उन दिनों पार्श्व गायन और रि-रिकार्डिंग की प्रक्रिया अनजानी ही थी। इसलिए संगीतकारों को दृश्य की वास्तविक शूटिंग के समय ही संगीत संयोजन करना पड़ता था। बोराल ने ही नितीन बोस के सहयोग से भारतीय फिल्म जगत में पार्श्व गायन परम्परा का सूत्रपात किया। यहीं बी.एन. सरकार के माध्यम से कुंदनलाल सहगल को फिल्मों में लाए। इनके निर्देशन में सहगल और कानन देवी ने अपने कुछ सर्वश्रेष्ठ गीत गाए। बोराल की आधारभूमि भारतीय शास्त्रीय संगीत था। इस कारण फिल्मों में उनका संगीत शास्त्रीय आधार पर बना होता था। इन्होंने सहगल की आवाज में शास्त्रीय भावभूमि पर आधारित गजल गायन की नई शैली को लोकप्रिय बनाया। बोराल ने भारतीय फिल्म संगीत में वाद्यीकरण को भी सुधारा और उसमें नए साज जोड़े। फिल्म के सामान्य संगीत से अलग 'इफेक्ट म्युजिक' को बैकग्राउंड संगीत के लिए भाषित किया।

आरसी. बोराल ने अनेक फिल्मों में संगीत दिया।

रायचंद बोराल

कुछ प्रसिद्ध फिल्में जिनके लिए उन्हें आज भी याद किया जाता है - चंडीदास (1934), देवदास (1935), विद्यापति (1937), स्ट्रीट सिंगर (1938), सपेरा (1939), लगन (1941) और सौगंध (1942)। ●

एल.वी.प्रसाद

अक्किनेनि लक्ष्मीवरप्रसाद राव की, जिन्हें कि एल.व्ही. प्रसाद राव के नाम से जाना जाता है भारतीय सिनेमा के प्रति उनके उत्कृष्ट योगदान के लिए 1982 में दादा साहेब फालके अवार्ड प्रदान किया गया। प्रसाद की हिन्दी, तेलुगु, तमिल और कन्नड़ फिल्मों ने देश के लाखों लोगों को आकर्षित किया है। प्रसाद ने फिल्म उद्योग में अपने कैरियर की शुरुआत 1930 में एक जूनियर आर्टिस्ट के रूप में की और वे एक प्रख्यात निर्माता और निर्देशक के रूप में प्रतिष्ठित हुए। उनकी फिल्म **'इक दूजे के लिए'** एक सुपरहिट फिल्म थी। प्रसाद को उनके उल्लेखनीय योगदान के लिए 1970 में फिल्म फेयर अवार्ड (खिलौना), 1978-79 में राजा सेन्डो मेमोरियल अवार्ड (तमिलनाडु शासन द्वारा) 1980 में रघुपति वेंकय्या अवार्ड (आन्ध्रप्रदेश सरकार द्वारा), 1980 में ही उद्योग रत्न अवार्ड (भारत सरकार द्वारा) और 1982 में रामनाथ अवार्ड (सिने टेक्नीशियन एसोसिएशन द्वारा) जैसे अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। निर्माता और/या निर्देशक के रूप में प्रसाद ने जो उत्कृष्ट फिल्में बनाई उनमें से कुछ हैं - शारदा/छोटी बहन/बेटी-बेटे/हमराही/, ससुराल/दासी/माँ/मिलन/राजा और रंक/जीने की राह/खिलौना/शादी के बाद/बिदाई/उधार का सिंदूर/जय-विजय/यह कैसा इन्साफ/(सभी हिन्दी)।

तमिल भाषा में उन्होंने थयिल्ला पिल्लई, इरुवर उल्लम, इद या कमलम् और प्रिया विडई जैसी फिल्मों का निर्माण किया है। तेलुगु भाषा में उन्होंने पलमति उद्धम, मन देशम्, सावुकार, पेल्लिचेसि चुड्डु, मीमांसा समरम् और मनोरमा जैसी फिल्मों का निर्देशन किया है। कन्नड़ भाषा में भी उन्होंने मने बेलिगिडा सोसे और थन्डे मक्कलु नाम फिल्मों का निर्माण किया है।

प्रसाद ने 1965 में प्रसाद स्टुडियोज का निर्माण किया और 1976 में 70 एम.एम. कलर प्रोसेसिंग प्लांट और स्टोरियोफोनिक साउंड रिकॉर्डिंग थिएटर सहित कलर फिल्म लेबोरेटरी का निर्माण किया। उन्होंने अनेक व्यावसायिक संस्थाओं में सक्रिय रूप से भाग लिया और अब वे साउथ इंडियन फिल्म चैम्बर ऑफ कॉमर्स में अध्यक्ष हैं। वे बोर्ड ऑफ फिल्म सेन्सर के एक सदस्य भी हैं।

ऐतिहासिक फिल्मों के प्रणेता : सोहराब मोदी

फिल्म के जादुई माध्यम के लिए इतिहास बहुत ही उचित और सटीक विषय है। **सोहराब मोदी** ने अनेक ऐतिहासिक विषयों पर फिल्में बनाकर भारतीय सिनेमा को संवारा है। सोहराब मोदी के पहले कई फिल्मकारों ने ऐतिहासिक विषयों पर फिल्में बनाई और सफल भी रहे। परन्तु सोहराब मोदी ने अपनी सफल ऐतिहासिक फिल्मों मे प्रामाणिकता और भव्यता के ऐसे प्रमाण प्रस्तुत किए कि उन्हें इस क्षेत्र का अगुवा स्वीकार कर लिया गया। उनकी 'पुकार', 'सिकंदर', पृथ्वीवल्लभ' और 'झाँसी की रानी' इतिहास पर बनी सफल फिल्में हैं। सोहराब मोदी की दूसरी विशेषता थी उनका
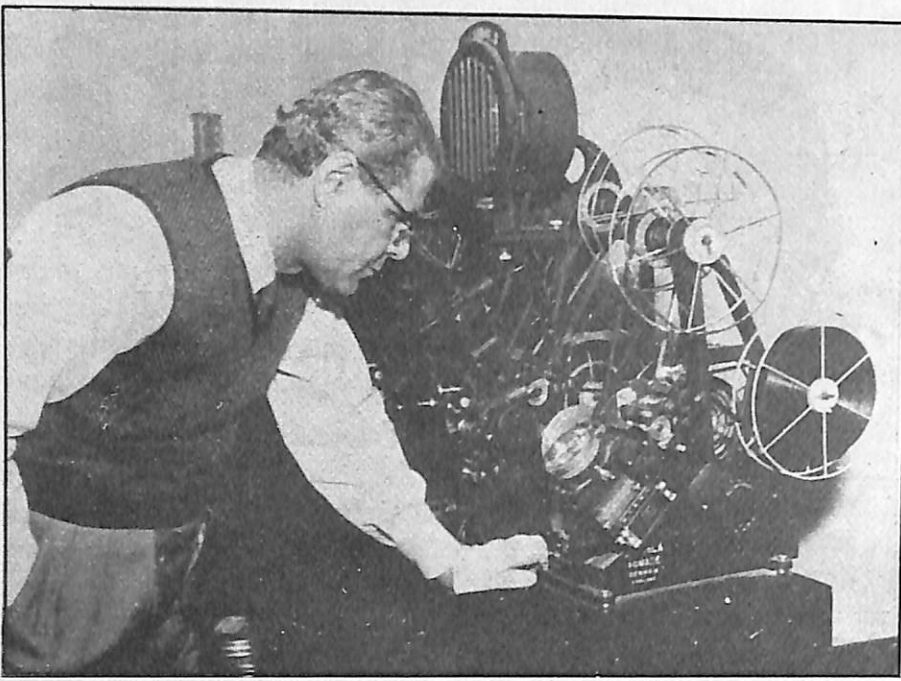
सोहराब मोदी

अटूट राष्ट्र-प्रेम। ऐतिहासिक फिल्मों के बहाने उन्होंने अंग्रेजों के शासन काल में देश-प्रेम की फिल्में साहस के साथ बनाई।

सोहराब मोदी ने वर्षों तक टूरिंग सिनेमा चलाया है और इस कार्य के लिए लंबे दौरे किए। पारसी होते हुए भी सोहराब मोदी को उर्दू का पूरा ज्ञान था क्योंकि उत्तरप्रदेश में उन्होंने इस भाषा की बाकायदा शिक्षा पाई थी! अपने भाई की प्रेरणा से उन्होंने नाटक कम्पनी की स्थापना की, जो शेक्सपीअर के नाटक हिन्दुस्तानी भाषा में प्रस्तुत करती थी। सोहराब मोदी ने संवाद बोलने की विशेष शैली इसी थियेटर कम्पनी में विकसित की। वे अत्यंत सफल स्टेज कलाकार थे। नाटकों की सफलता से प्रेरित होकर उन्होंने "स्टेज कम्पनी" नामक फिल्म निर्माण संस्था प्रारंभ की। 1935 में पहली फिल्म थी "खून का खून" (हेमलेट) जो सफल रही। 1936 और 1937 में "सैद ए हवस (किंग जोन)", आत्म तरंग", और "खान बहादुर" का निर्माण किया। 1938 में मिनर्वा की स्थापना की। दरअसल मिनर्वा को ख्याति के शिखर पर "पुकार" और "सिकंदर" ने पहुँचाया।

सोहराब मोदी ने 35 वर्षों के सृजन काल में 43 फिल्मों का निर्माण किया। "मिर्जा गालिब" के लिए उन्हें राष्ट्रपति का स्वर्ण पदक मिला। सोहराब मोदी ने "झाँसी की रानी" का निर्माण टेक्नीकलर में किया था और फिल्म का सारा लेबोरेटरी कार्य लंदन में हुआ था। उस जमाने में यह अत्यंत साहस का कार्य था। सोहराब मोदी का झुकाव साहित्य की अमर कृतियों की ओर था और उन्होंने शेक्सपअर के नाटकों के अतिरिक्त "लॉ मिसरेबल्स" और "हंचबैक ऑफ नाट्रेडम" जैसी कृतियो पर हिंदी में फिल्में बनाई। "मिनर्वा" के शेर की दहाड़ दशकों तक सिनेमाघरों में गूँजती रही। सोहराब मोदी ने पारसी थियेटर से संवाद अदायगी की परम्परा सिनेमा को दी थी और उनके व्यक्तित्व का प्रभाव इतना जबरदस्त था कि उनकी फिल्मों के सभी पात्र विशिष्ट शैली में संवाद बोलते थे। सोहराब मोदी ने भारतीय सिनेमा के बदलते हुए रुख को स्वीकार नहीं किया इसीलिए उनकी "दहाड़" एक खास काल खंड को ही प्रभावित कर पाई। "पुकार" और "सिकंदर" उनकी कालजयी कृतियाँ हैं। उनकी अंतिम फिल्म "समय बड़ा बलवान" (1969) उनके पूरे कृतित्व का वर्णन करती है। यह अजीब संयोग है कि भारत की अंतिम ऐतिहासिक फिल्म "रजिया सुल्तान" में उन्होंने 94 वर्षीय वजीर की भूमिका की थी।

टूरिंग सिनेमा से नाटक और नाटक से सिनेमा में आए सोहराब मोदी ने एक विधा की खूबियों को दूसरी विधा में प्रयुक्त किया। भारतीय सिनेमा के इतिहास में ऐतिहासिक फिल्मों के लिए सोहराब मोदी हमेशा याद किए जायेंगे। उनका जन्म 2 नवम्बर 1897 को गुजरात में हुआ था और 28 जनवरी 1986 को उनका निधन हुआ। उनके चालीस साल लम्बे फिल्मी जीवन और योगदान के बदले में राष्ट्रपति ने 1969 में उन्हें दादा फालके अवार्ड से सम्मानित किया था। (जे.पी.सी.)

'मदर इण्डिया' महाकाव्य के रचयिता: मेहबूब खान

सिनेमा अपने आप में एक सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली है और इसका महापंडित होने के लिए दूसरी किसी शिक्षा व्यवस्था का स्नातक होना जरूरी नहीं है। यह बात मेहबूब खान ने सिद्ध की। वे अशिक्षित थे और उन्होंने फिल्म माध्यम का स्वाध्याय कर *मदर इंडिया* जैसी महत्वपूर्ण कृति का निर्माण किया। कैमरे की भाषा और सिनेमा का व्याकरण उनकी बाएँ हाथ की ऊँगलियों पर रखा था। भारतीय संस्कृति की समझ नहीं होने के कारण हॉलीवुड ने *मदर-इंडिया* को विदेशी भाषा के श्रेष्ठ फिल्म होने के गौरव से वंचित किया क्योंकि उनकी निगाह में नरगिस को कन्हैयालाल के साथ शादी का प्रस्ताव स्वीकार करना चाहिए था।

मेहबूब खान, गुजरात के बिलमोरा गाँव के अनपढ़ युवक, ने भारतीय फिल्मों को महाकाव्य के कैनवास से परिचित कराया और 1952 में *आन* को 16 एम.एम. पर कलर में कैमराबंद करने का साहस दिखाया। 1956 में *मदर इंडिया* बनाई जो आज भी हॉउस फुल चलती है। इस युवक ने 20 वर्ष की अवस्था में घर से भागकर तीन माह तक बिना वेतन के एक्स्ट्रा के रूप में कार्य किया। नायक बनने का सपना चूर होते ही मेहबूब खान ने एक पटकथा लिखी और केवल आत्मविश्वास के सहारे *जजमेंट ऑफ अल्लाह* (1935) का निर्देशन किया जो सफल रही। नेशनल स्टूडियो के लिए उनकी सफलतम फिल्म थी *औरत* (1939) इसी फिल्म को थोड़े से परिवर्तन के साथ उन्होंने *मदर इंडिया* के नाम से 1957 में फिर बनाया। 1943 से मेहबूब

मदरइण्डिया फिल्म का पोस्टर

स्वतंत्र निर्माता बने फिल्म *तजमा* से वे स्टुडियों के मालिक बने 1952 में। तीस वर्ष में उन्होंने 24 फिल्में बनायीं।

मेहबूब ने उसी दिन प्राण त्याग दिये जिस दिन नेहरूजी की मृत्यु हुई। उन दिनों वे *हब्बा खातून* की पटकथा पर काम कर रहे थे। मेहबूब सिने माध्यम को इतना प्यार करते थे कि उनकी वसीयत के अनुसार मेहबूब स्टूडियों भी बेचा नहीं जा सकता और न ही *मदर इंडिया* का निगेटिव गिरवी रखा जा सकता है। फिल्म के प्रति ऐसी प्रतिबद्धता का दूसरा उदाहरण नहीं मिलता।

मेहबूब ने हमेशा ऐसे कथानक चुने जो बाद में फार्मूले के रूप में अपनाये गये और उन पर सैकड़ों फिल्में बनी। *अंदाज* पहली प्रेम त्रिकोण फिल्म थी। *अंदाज* से *साजन* (1991) तक कास्टयूम थी जिसमें नायक सामंतवादी ताकतों के खिलाफ तलवार बाजी करता हैं। आन (1951) से अजूबा (1991) तक तलवारबाजी की अनेक फिल्में बन चुकी है। *औरत* (1939) और *मदर इंडिया* (1957) के कुछ हिस्से अनेक बार दुहराये गये हैं। *मदर इंडिया* के प्रदर्शन के आसपास ही इसी कथानक पर शम्मीकपूर की *ताँगेवाली* भी प्रदर्शित हुई थी। इस तरह महबूब खान ने भारतीय फिल्म उद्योग को नये कथानकों से संवारा और यह भी सिद्ध किया कि इस माध्यम में महाकाव्य रचे जा सकते हैं।

भारत के गुलामी के दिनों में मेहबूब खान ने *रोटी* में देशप्रेम का अलख जगाया था और अंगरेजों की नीति (विभाजित करो) का पर्दाफाश भी किया था। मनुष्य के लालच के खिलाफ *रोटी* एस सशक्त दस्तावेज था। इसीलिए अंगरेजी हुकूमत ने *रोटी* पर प्रतिबंध लगाया था।

मेहबूब खान रमजान खान का जन्म 1909 में हुआ था और उनकी मृत्यु 27 मई 1964 को ठीक उसी दिन हुई जिस दिन भारत के पहले प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू का देहावसान हुआ था।

स्वर और सौन्दर्य का संगम : कानन बाला

तीस और चालीस के दशक में जिन अभिनेत्रियों ने रुपहले परदे पर धूम मचाई, उनमें एक प्रमुख नाम था काननबाला का। काननबाला (जो बाद में काननदेवी के नाम से मशहूर हुई) का बचपन बड़ा कष्टमय गुजरा। पिता का साया तभी उठ गया, जब वे अबोध बाला थीं। कष्टों और अभावों के दौर में काननबाला को मदन थिएटर्स के बैनरतले बन रही जयदेव' (1926) में राधा की भूमिका मिल गई। काननबाला की तब उम्र थी मात्र दस साल और इस भूमिका के बदले उन्हें पारिश्रमिक के रुप में मिले सिर्फ पाँच रुपए। इसके बाद चार साल तक उनकी कोई फिल्म नहीं आई। सन् 1931 में वे पुनः परदे पर दिखीं। प्रहलाद, जोर बारात, विष्णुमय आदि कई फिल्में उनकी धड़ाधड़ आई और काननबाला की धाक जमने लगी। फिर आया बोलती फिल्मों का दौर (1934), काननबाली की प्रतिभा को एक और छुपे हिस्से को सामने आने का मौका मिला। उनके पास सुरीला कंठ था। बोलती फिल्मों के इस शुरुआती दौर में ऐसी अभिनेत्रियों की ही जरुरत थी जो अच्छा गा सकती हैं। काननबाला इस कसौटी पर खरी उतरीं। राधा फिल्म्स के बैनर तले "श्री गौरंगा" ने उन्हें सही मायने में स्टार बनाया उसी साल आई 'माँ' जिसने अच्छी तादाद में दर्शकों को सिनेमाघरों में खींचा।

काननदेवी का पहला दौर पूरी तरह बंगाली फिल्मों का था। हिंदी में उनकी पहली फिल्म आई 'खूनी कौन'। दो साल बाद न्यू थिएटर्स से उनका संपर्क हुआ। न्यू थिएटर्स के बैनर के नीचे 'विद्यापति' बंगाली और हिंदी दोनों में बनी और काननदेवी को राष्ट्रीय ख्याति मिल गई। के.एल. सहगल को साथ वे 'साथी' में आई और यह फिल्म भी सुपरहिट रही। जवानी की रात, परिचय (बंगाली में, जिसकी हिंदी फिल्म 'लगाम') न्यू थिएटर्स के साथ उनकी कुछ और फिल्में थीं।

ए चाँद छुप न जाना......' 'जवाब' फिल्म का यह गाना तब लोगों की जुबान पर चढ़ गया था। 1942 में आई काननदेवी की यह फिल्म उनकी सबसे हिट फिल्म थी। हिंदी में ही 'कृष्णलीला' ने भी काननदेवी को भरपूर यश और पैसा दिलवाया। इस फिल्म के लिए लक्ष्मीदास आनंद बंबई से कलकत्ता गए क्योंकि काननदेवी बंबई आने को राजी नहीं थीं। देवकी बोस ने इस फिल्म का निर्देशन किया। पंद्रह साल पहले एक साक्षात्कार में काननदेवी खुद कहा था कि इस फिल्म से उन्हें जितनी दौलत मिली, उतनी शायद ही किसी एक अभिनता को एक फिल्म से मिली है। काननदेवी बंबई न जाने की ठाने रहीं। कलकत्ता में ही उन्होंने पचास के आस-पास "श्रीमती पिक्चर्स" की नींव डाली। श्रीमती पिक्चर्स ने कई कामयाब फिल्में बनाई। टॉलीगंज में एक फिल्मी पुरस्कार वितरण समारोह में उनकी आँखे तब के राज्यपाल के नेवल ए.डी.सी. हरिदास भट्टाचार्य से लड़ गई और बाद में वे उनके जीवनसाथी बने। धार्मिक मनोवृत्ति की काननदेवी ताजिंदगी गोपाल की उपासक रहीं। फिल्मोद्योग ने उन्हें सब कुछ दिया और बदले में काननदेवी ने भी अपनी बहुमुखी अभिनय क्षमता का सर्वोत्कृष्ट प्रदर्शन कर उसे समृद्ध किया। 1976 में भारत सरकार ने उन्हें दादा फालके अवार्ड से सम्मानित किया है।

दुर्गा खोटे

दुर्गा खोटे

दुर्गा खोटे का नाम ऐसे व्यक्तित्व की याद ताजा कर देता हैं जिसका सौम्य, सुसंस्कृत रूप अपने आप सभी के आदर और सम्मान का पात्र था। अपने आसपास माधुर्य एवं सुगन्ध बिखेरने वाले इस विराट व्यक्तित्व ने किसी *स्टार* को खुद पर हावी होने का मौका कभी नहीं दिया।

बम्बई में 13 जनवरी 1905 को जन्मी दुर्गाबाई ने अभिनेत्री बनने का फैसला ऐसे जमाने में किया जब पढ़ी-लिखी अच्छे घर की लड़कियों का इस पेशे को अपनाना कल्पना से परे था। दुर्गा बाई के पिता पाण्डुरंग पेशे से वकील थे। रंगमंच में उनकी गहरी रुचि थी। इसीलिए बेटी को भी बचपन से ही अभिनय रोचक लगने लगा। दुर्गा बाई का विवाह सत्रह वर्ष की आयु में एक व्यवसायी विश्वनाथ खोटे से हो गया। दुर्भाग्य से विश्वनाथ जी को अचानक व्यवसाय में भारी घाटा हुआ तथा परिवार आर्थिक संकट में आ गया। दुर्गाखोटे ने पिता से आर्थिक सहायता लेने के स्थान पर ट्यूशन करना शुरू किया। इसी दौरान वाडिया मूवीटोन ने "फरेबी जाल" में उनसे एक छोटी सी भूमिका करने का अनुरोध किया। निर्माता ने जोरशोर से प्रचार किया कि विख्यात सालिसिटर की बेटी फिल्मों में काम कर रही हैं। यह फिल्म प्रदर्शन के बाद बुरी तरह फ्लॉप हुई। लोगों को न तो फिल्म अच्छी लगी और न ही एक भले घर की लड़की का इस व्यवसाय में आना सुहाया। दुर्गाबाई का यह कदम सामाजिक निन्दा का विषय बन गया। उन दिनों की याद करते हुए वे अपनी आत्मकथा *मी दुर्गा खोटे* में लिखती हैं कि इतनी अधिक निन्दा हो रही थी कि मैं आत्महत्या का इरादा करने लगी थी। फिल्म तो फ्लॉप हुई मगर दुर्गा खोटे की प्रतिभा ने बरबस लोगों का ध्यान खींचा। वी. शान्ताराम ने *अयोध्या चा राजा* (1932) के लिए उनका चुनाव कर लिया। वे आत्मकथा में लिखती हैं, जब शान्ताराम भाऊ यह प्रस्ताव लेकर मेरे पास आये, तो मैं कानों पर विश्वास न कर सकी। जैसे-तैसे मेरे मुँह से 'नहीं' निकला। उन्होंने शान्तिपूर्वक मुझसे इस 'नहीं' का कारण जानना चाहा। मैने *फरेबी जाल* के फ्लॉप होने तथा पिता की अनुमति न मिलने का कारण बताया। वे इन दोनों कारणों से सहमत नहीं हुए। उनका कहना था कि *फरेबी जाल* फिल्म बुरी थी मगर मेरा अभिनय अच्छा था।"

अयोध्याचा राजा के बाद तो दुर्गाखोटे ने पीछे मुड़कर नहीं देखा। *राजा रानी, मीरा,महासती अनुसुया, नरसी भगत, महारथी कर्ण, पृथ्वीवल्लभ, चरणों की दासी, हम एक हैं, हमारा घर, हर हर महादेव, माया बाजार* आदि फिल्मों में वे अपनी उपस्थिति का जोरदार एहसास कराने में कामयाब रहीं।

दुर्गा खोटे की अन्य सफल फिल्मों में *राजरानी मीरा, इंकलाब* आदि में वे पृथ्वीराज की नायिका थी। अपने पिता की इस फिल्मी साथिन का जिक्र करते हुए शशिकपूर लिखते हैं, एक दिन पिताजी ने उन्हें घर बुलवाया। वे शर्माती हुई अगले दिन आयी। पिताजी ने उन्हें राखी देकर अपनी कलाई पर बाँधने का अनुरोध किया। दूसरे बार तो हर साल वे पापा की कलाई पर राखी बाँधने आती रहीं।

दुर्गा खोटे सिर्फ सिनेमा से ही संतुष्ट नहीं रही। वे रंगमंच पर भी अपनी प्रतिभा का नियमित प्रदर्शन करती रहीं। रंगमंच पर उनकी सराहना करने वालों में भारत के प्रथम प्रधान मंत्री स्वर्गीय पंडित जवाहर लाल नेहरू भी थे। उन्होंने अपनी निजी निर्माण संस्था फेक्ट का गठन भी किया। सन् 1952 में गठित *फेक्ट फिल्म्स* के जरिये निर्मित *डेजर्टेड वुमन* नामक लघु फिल्म काफी प्रशंसिन एवं चर्चित रही। दुर्गा खोटे ने भारत सरकार तथा फिल्म उद्योग की ओर से कई बार विदेशों में भारत का प्रतिनिधित्व भी किया हैं।

इसके बाद उन्होंने *दुर्गा खोटे प्रोडक्शन्स* का गठन किया तथा इस संस्थान के माध्यम से कई युवा फिल्मकारों को प्रोत्साहित किया। उन्होंने जीवन में कई आघात भी सहे। सन् 1936 में उनके पति का निधन एक कार दुर्घटना में हो गया। बाद में बेटे हरिन की हृदयाघात से मृत्यु हो गयी। उनकी फिल्मकार बहू विजय मेहता ने बाद में फारूख मेहता से शादी कर ली। विजया मेहता का इस विवाह के बाद भी अपनी भूतपूर्व सास से घनिष्ट सम्बन्ध रहा। वे कहती हैं कि दुर्गा बाई को स्मृति से मिटा पाना किसी के लिए भी संभव नहीं हैं।

श्रीमती दुर्गा खोटे ने लगभग छः दशक तक नायिका और चरित्र नायिका की विविध भूमिकाएँ कर भारतीय दर्शकों का मनोरंजन करते हुए उन्हें शिक्षित किया। उनकी इस सेवाओं के लिए भारत के राष्ट्रपति ने 1983 में उन्हें दादा फालके अवार्ड से सम्मानित किया। ● लोकेन्द्र चतुर्वेदी

बोम्मी नरसिंह रेड्डी

तेलुगु सिनेमा के लिए 1937 से 1968 के 31 वर्षों की अवधि स्वर्णयुग मानी जाती हैं। इस अवधि में रचनात्मक अभिव्यक्ति व्यापक स्वरूप में विकसित हुई। आर.प्रकाश, एच.एम.रेड्डी, पुलय्या, रामब्राह्मण, वाय. वी. राव तथा बी.एन. रेड्डी जैसी प्रतिभाओं ने तेलगु सिनेमा को समृद्ध बनाया *बोम्मी नरसिंह रेड्डी* आडिटर थे। आँकड़ों की दुनिया से परदे की दुनिया में आए और बी.एन. रेड्डी के नाम से विख्यात हुए। उन्होंने फिल्म निर्माण को व्यवसाय नहीं माना बल्कि साधक के रूप में इस विधा को सार्थक बनाने का प्रयास किया। उनकी इसी साधना का प्रतिफल थीं फिल्में *वन्देमातरम* (1939), *सुमंगली* (1940), *देवता* (1941) *स्वर्गसीमा* (1945), *मल्लेश्वरी*

1951, *बंगारूपापा* (1956) इसके बाद सार्थक और गंभीर फिल्मों का युग खत्म होने लगा। स्वार्थी, भ्रष्ट तथा मुनाफाखोर मनोवृत्ति के लोगों ने फिल्म निर्माण को कला की बजाय व्यवसाय में बदल दिया।

आन्ध्र प्रदेश के कडप्पा जिले के छोटे से गाँव कोट्टापल्ली में 16 नवम्बर 1908 में एक कृषक परिवार में जन्में तथा शान्तिनिकेतन में उच्च शिक्षा प्राप्त करने की अधूरी आकांक्षा लिये उन्हें हिसाब-किताब की पढ़ाई करनी पड़ी। चार्टेड एकाउण्टेंट के रूप में कार्य करते हुए भी वे मद्रास रंगमंच के बेल्लेरी टी. राघव जैसे महारथियों के जीवन्त सम्पर्क में बने रहे। सन् 1934 में उन्होंने देवकी बोस द्वारा निर्मित फिल्म *सीता* देखी और फिर विख्यात फिल्मकार एच.एम. रेड्डी के साथ मिलकर रोहिणी पिक्चर्स की नींव डाली। उनकी पहली फिल्म *गृहलक्ष्मी* हिट रही। बाद में उन्होंने अपनी स्वयं की निर्माण संस्था वाहिनी पिक्चर्स की नींव रखी तथा पहली फिल्म *वन्देमातरम* का निर्माण किया। इस फिल्म ने पूरे दक्षिण भारत में सफलता के झण्डे फहराए। इस फिल्म ने बुद्धिजीवियों की इस धारणा को मिथ्या साबित कर दिया कि फिल्में सिर्फ गंवारों का फूहड़ मनोरंजन करनी हैं। बाल विधवाओं की समस्याओं पर बनी *सुमंगली* 1940 में प्रदर्शित हुई। यह फिल्म फ्लॉप हो गयी। रेड्डी ने अविवाहित मातृत्व एवं बाल मातृत्व की समस्याओं पर *देवता* (1941) का निर्माण किया। यह फिल्म सुपर हिट साबित हुई। द्वितीय महायुद्ध के दौरान ब्रिटिश सरकार ने कच्ची फिल्मों की कमी के कारण फीचर फिल्म की अधिकतम लम्बाई ग्यारह हजार फुट निर्धारित कर दी। इस चुनौती को स्वीकार करते हुए बी.एन. ने *स्वर्गसीमा* (1945) का निर्माण किया। दस हजार दो सौ छियानवे फुट लम्बी इस फिल्म ने सफलता के कीर्तिमान तो स्थापित किये ही साथ ही पी. भानुमती जैसी सशक्त अभिनेत्री को यश के उजाले में लाने का श्रेय पाया।

इसके बाद बी.एन. मद्रास में एक सर्वसुविधा सम्पन्न स्टुडियो के निर्माण में जुट गये। विजय वाहिनी भारत के विशालतम स्टुडियो के रूप में प्रतिष्ठित हुआ। बाद में विचित्र संयोगों के कारण उनके भाई बी. नागी रेड्डी के स्वामित्व में चला गया। सन् 1951 में *मल्लेश्वरी* का निर्माण हुआ। विजयनगर के सम्राट कृष्ण देवराय पर आधारित इस ऐतिहासिक फिल्म में भानुमति एवं एन.टी. रामाराव ने प्रमुख भूमिकाएं की थी। विख्यात उपन्यास साइलस मार्नर पर आधारित फिल्म *बंगारूपापा* का निर्माण किया। आर्थिक रूप से यह फिल्म असफल रही मगर आलोचकों ने इसे मुझ कंठ से सराहा। सन् 1957 में बनी *भाग्यरेखा* को बी.एन. ने अन्य निर्माता के लिए बनाया था। यह फिल्म सफल रही। सन् 1959 में बी.एन. ने तेलुगु-तामिल फिल्म *राजमुकुटम* का निर्माण किया। *पूजा फलम* (1964) अन्य निर्माता के लिए बनायी। 1968 में *बंगारू पंजाराम* का निर्माण हुआ। हिन्दू महिला के त्यागमय जीवन पर आधारित यह फिल्म असफल रही। इसके बाद बी.एन. ने कोई फिल्म नहीं बनायी।

फिल्म जगत् की विशिष्ट सेवा के लिए उन्हें सन् 1974 में दादा साहब फालके अवार्ड से सम्मानित किया गया। इस प्रतिष्ठाजनक सम्मान को पाने वाले वे प्रथम दक्षिण भारतीय फिल्मकार थे। 8 नवम्बर 1977 को आपका निधन हो गया। मद्रास में जहाँ आपका निवास था, उस रोड का नाम बी.एन. रेड्डी रोड कर आपकी स्मृति को चिरस्थाई बनाया गया है। ●

के. सुब्रमण्यम

तमिल सिनेमा के पितामह *के. सुब्रमण्यम्* भारतीय सिनेमा के उन प्रवर्तकों में से हैं, जिन्होंने सिनेमा को मात्र मनोरंजन का साधन नहीं बल्कि सामाजिक निर्माण का माध्यम समझा था। सन् 1936 में निर्मित उनकी फिल्म *बालयोगिनी* विधवाओं की दुर्दशा के साथ वर्ण व्यवस्था पर भी प्रहार करती थी। मूक युग से फिल्म निर्माण की विधा से जुड़े सुब्रमण्यम् ने *बालयोगिनी* बनाकर विधवाओं खासतौर से ब्राह्मण विधवाओं की दुर्दशा को जिस तरह उजागर किया, उससे तत्कालीन तमिल पण्डितों में कोहराम-सा मच गया। संयोगवश इस फिल्म में विधवा की भूमिका अदा करने वाली अभिनेत्री भी ब्राह्मण विधवा थी। घुटे हुए सिर तथा सफेद साड़ी धारण कर उसने अत्यंत जीवन्त एवं हृदय ग्राही अभिनय किया था। सुब्रमण्यम् के इस दुस्साहस से रूष्ट कुछ पण्डितों ने तंजावुर में जमा होकर उन्हें जाति से निष्कासित करने का निर्णय ले लिया था। इस प्रतिक्रिया से अविचलित रह कर उन्होंने 'भक्त चेता' नामक फिल्म का निर्माण किया तथा हरिजनों को समान दर्जा देने का संदेश दिया। महिलाओं के समान अधिकारों की बात लेकर *सेवासदन* का निर्माण किया। राष्ट्रीय भावनाओं पर केन्द्रित उपन्यास *कल्कि* पर उन्होंने 1939 में *त्यागभूमि* नामक फिल्म का निर्माण किया। यह फिल्म बॉक्स ऑफिस पर हिट रही तथा पूरे देश में चर्चा का विषय बनी। राष्ट्रीयता की भावना का शंखनाद करने वाली इस फिल्म को ब्रिटिश सरकार ने बाद में प्रतिबन्धित कर दिया था। इसके बाद उन्होंने कई सफल धार्मिक फिल्मों का निर्माण किया। सन् 1944 में मानसा मृक्षाणम के जरिये वे फिर तत्कालीन सामाजिक प्रवाह से जुड़े। यह फिल्म उस ब्रिटिश फरमान के तहत् बनी थी जिसके अनुसार प्रत्येक निर्माता को ब्रिटिश साम्राज्य के महायुद्ध अभियान को समर्थन देने वाली कम से कम एक फिल्म बनाना जरुरी था। इस फिल्म की कहानी जापानी जासूसों के भारत में फैले जाल में सम्बन्धित थी फिल्म सें यह सन्देश दिया गया था कि कोई भी भारतीय जापानियों का भारत में रहना पसन्द नहीं करता क्योंकि वे विदेशी हैं। इस तरह फिल्म में राष्ट्रीयता की भावना एवं विदेशी शासन के प्रति अरुचि को दर्शाता गया था। जब ब्रिटिश अधिकारियों की समझ में अपनी बात आयी तब कुछ क्षेत्रों में फिल्म का प्रदर्शन रोक दिया गया।

आजादी के बाद भी वे सामाजिक समस्याओं को ध्यान में रखकर फिल्म निर्माण करते रहे। सन् 1948 में उनकी (गीत गाँधी) प्रदर्शित हुई। आजादी को कायम रखने का सन्देश देने वाली यह फिल्म बहुत चर्चित हुई। इसके बाद 10 वर्षो तक वे दूसरे निर्माताओं की फिल्में निर्देशित कर आर्थिक संकट से उबरने का प्रयास करते रहे। के. सुब्रमण्यम की *बालयोगिनी, सेवासदन* तथा *त्यागभूमि* फिल्मों का समाज पर व्यापक प्रभाव हुआ था। *सेवा सदन* फिल्म देखकर मदुराई के एक वृद्ध दर्शक ने अपने से आधी उम्र की लड़की से विवाह का प्रस्ताव रद्द कर दिया था। उसने अपने पैसों से उस लड़की का विवाह एक युवक से कर आदर्श कायम किया। ●

अशोक कुमार-राजेश खन्ना फिल्म **बेगुनाह**

सदाबहार : अशोक कुमार

□ भूपेन्द्र चतुर्वेदी

भारतीय सिनेमा की दुनिया में जो कुछ लोग जीवित होते हुए किवदंती बने हैं, उनमें एक नाम है **अशोक कुमार गांगुली** का। दादामुनि के नाम से पहचाने जाने वाले अशोक कुमार ने पचास साल से भी ज्यादा सक्रिय फिल्मी जीवन जीकर इतिहास रचा है, वह अपने आप में बेजोड़ है। भागलपुर में जन्मे (11 अक्टूबर 1911) और मध्य प्रदेश के खंडवा शहर में पले - बढ़े अशोक कुमार का असली नाम कुमुदलाल था। कानून की पढ़ाई के लिए घर वालों ने कलकत्ता भेजा, लेकिन उनका मन नहीं रमा। फिल्मी दुनिया के आकर्षण से खिंचे अशोक कुमार अपने बहनोई शशधर मुखर्जी के साथ कलकत्ता से बंबई पहुँच गए। बॉम्बे टॉकीज की तब धूम मची हुई। वहाँ उन्हें प्रयोगशाला सहायक के रूप में रख लिया गया अशोक कुमार ने सपने में भी यह नहीं सोचा था कि बाम्बे टॉकीज की किसी फिल्म में उन्हें नायक बनने का मौका मिलेगा। अचानक एक दिन हिमांशु राय ने यह प्रस्ताव रखा कि अपनी अगली फिल्म 'जीवन नैया' में वे उन्हें बतौर नायक लेना चाहते हैं। हिमांशु राय की पत्नी देविका रानी के सौंदर्य और अभिनय का जादू उस दौर में फिल्म जगत में सिर चढ़कर बोल रहा था। जीवन नैया में अशोक कुमार को उनके साथ ही काम करना था। झिझकते हुए अशोक कुमार ने इस फिल्म में काम किया और 1936 में इस फिल्म के प्रदर्शन के साथ ही अशोक कुमार की परदे की यात्रा का सिलसिला चलता ही चला गया। पाँच दशक तक उन्होंने पीछे मुड़कर नहीं देखा। देविका रानी के साथ उनकी अगली फिल्म थी 'अछूत कन्या' जिसे उस दौर में बहुत सराहा गया। 1943 में फिल्म "किस्मत" आई जिसने अशोक कुमार की किस्मत के ताले खोल दिए। इस फिल्म ने बॉक्स ऑफिस के सारे रिकार्ड तोड़े।

अशोक कुमार जिस दौर में फिल्मों में आए, तब फिल्मों में नाटकीयता हावी थी। पारसी थिएटर का प्रभाव था और संवाद नाटकीय अंदाज में बोलने का रिवाज था। निःसंदेह अशोक कुमार पहले अभिनेता थे, जिन्होंने फिल्मों को गहरे तक प्रभावित किया और यह स्थापित किया कि "फिल्म एक्टिंग" एक विशिष्ट विद्या है। परदे पर अभिनय या संवाद बोलने में नाटकीयता की नहीं, सहजता की जरुरत है और सहजता से ही अभिनय को जीवंत बनाया जा सकता है। अशोक कुमार ने अभिनय में जिस सहजता पर जोर दिया, वही कालांतर में फिल्मों की मुख्य धारा बनी।

बॉम्बे टॉकीज में तब कार्यरत एक जर्मन निर्देशक फ्रेंज आस्टिन ने अशोक कुमार से कहा था कि वे

कभी अभिनेता नहीं बन सकते क्योंकि उनके जबड़े अच्छे नहीं हैं। लेकिन अशोक कुमार ने इस बात को झुठला दिया। चौपन साल में 350 से ज्यादा फिल्मों में उन्होंने भूमिकाएं अदा की हैं और तरह - तरह की भूमिकाओं को बखूबी परदे पर निभाया है। डॉक्टर, जज, वकील, पुलिस इंस्पेक्टर, चोर, शराबी, टैक्सी ड्राइवर, कवि, साधु, रोमांटिक हीरो— शायद ही कोई ऐसा किरदार बचा हो, जो उन्होंने अभिनीत न किया हो। हर भूमिका में वे जँचे और अपनी विलक्षण अभिनय क्षमता का परिचय दिया। जिन निर्देशकों के साथ उन्होंने काम किया, उनकी सूची बहुत लंबी है। विमल रॉय, नितिन बोस, महबूब खान, तपन सिन्हा, बी. आर. चोपड़ा, कमाल अमरोही, ऋषिकेष मुखर्जी आदि, । सिगरेट और बाद में पाइप पीने की उनकी अदा पर लोग फिदा हो गए। अशोक कुमार के प्रशंकों का दायरा दूसरे अपने समकालीन अभिनेताओं की तुलना में बहुत विस्तृत है। सत्तर साल के वृद्ध से लगाकर सात साल के बालक तक के वे चहेते हैं। अशोक कुमार ने कुछ फिल्में भी बनाई (माँ, कल्पना, मेरी सूरत तेरी आँखें) लेकिन कोई जोरदार कामयाबी इस क्षेत्र में उनके हाथ नहीं लगी। भूत-प्रेत की कहानियों के प्रति उनका लगाव दीवानगी की हद तक रहा है। मधुबाला के साथ 1950 में आई फिल्म 'महल' ऐसी ही एक कहानी पर आधारित थी।

बाथरूम में बैठकर गंभीर चिंतन करने वाले अशोक कुमार के व्यक्तित्व में और भी ऐसी कई खूबियाँ हैं, जिनसे लोग उनकी तरफ सहज में आकर्षित होते रहे हैं। अंकशास्त्र और ज्योतिष का उन्हें अच्छा ज्ञान है। होम्योपेथी चिकित्सा पर भी उनकी अच्छी पकड़ है। पाँच दशक तक सिनेमा के परदे पर अपनी उपस्थिति बनाए रखने वाले दादा मुनि को छोटे परदे ने भी अपनी तरफ खींचा। दूरदर्शन के सबसे बड़े सोप ओपेरा "हम लोग" के सूत्रधार की भूमिका में लोगों ने उन्हें पसंद किया। असाधारण अभिनय क्षमता के धनी अशोक कुमार के व्यक्तित्व में सहजता और सरलता जैसे रची बसी है। आज जब जरा सी कामयाबी मिलते ही नए नए हीरो हीरोइनों के दिमाग चढ़ जाते हैं, तब अशोक कुमार की कामयाबी और उनकी सरलता देखकर आश्चर्य ही होता है। पिछले दिनों एक इंटरव्यू में जब उनसे पूछा गया कि आजादी के बाद और आजादी से पहले के भारतीय सिनेमा में उन्होंने क्या फर्क महसूस किया। उनका जवाब था, "आजादी के बाद सभी पलायनवादी हो गए हैं। अब बॉक्स ऑफिस हिट बनाना एकमात्र लक्ष्य और पैसा कमाना एकमात्र मकसद है और गुणवत्ता से किसी का सरोकार नहीं बचा। "तीन भाइयों में सबसे बड़े अशोक कुमार को निजी जिंदगी में कई दुखद प्रसंगों से दो - चार होना पड़ा है। फिल्मी संगीत की एक हस्ती उनके छोटे भाई किशोर कुमार की अल्पायु में मौत ने उन्हें गहरा धक्का पहुँचाया। पत्नी शोभा भी उनका साथ छोड़कर जा चुकी है। लेकिन इस सबके बावजूद अस्सी का मुकाम पार कर चुके दादामुनि थके नहीं है। सन् 1990 का दादा साहब फालके अवार्ड देकर हालांकि उनके फिल्म जगत को दिए गए असाधारण योगदान को सम्मानित किया जा चुका है है। लेकिन लगभग तीस दर्जन फिल्मों में अभिनय करके अशोक कुमार ने भारतीय सिनेमा को जो दिया है, उससे वह शायद ही कभी उऋण हो सके। सदाबहार हीरो के रुप में उनकी छाया कई दशकों तक लोगों की आँखों में तैरती रहेगी।

भव्यता का प्रथम शिल्पी: एस.एस. वासन

सन् 1948 में *एस.एस. वासन* की फिल्म *चंद्रलेखा* का प्रदर्शन हुआ। यह उस समय की सबसे भव्य फिल्म थी और इसकी लागत से उस जमाने की दस बड़ी फिल्में बन सकती थी। *चंद्रलेखा* सबसे अधिक प्रचारित फिल्म थी और इसके साथ ही दक्षिण भारतीय निर्माताओं द्वारा हिन्दी फिल्मों के निर्माण की परम्परा प्रारंभ हुई। यह फिल्म तामिल और हिन्दी में एक साथ बनायी गयी थी। *चंद्रलेखा* की व्यावसायिक सफलता ने भारत में भव्यता की परम्परा शुरू की। 1951 में एस.एस. वासन ने *संसार* बनायी जो मध्यम वर्ग की गरीबी का दस्तावेज थी। दिलीपकुमार और राजकुमार को लेकर 1955 में *इन्सानियत* का निर्माण किया। भारतीय फिल्मों के इतिहास में एस.एस. वासन निर्माण की भव्यता के लिए जाने जाते हैं परन्तु उनकी एक महत्वपूर्ण उपलब्धि यह थी कि उन्होंने फिल्म निर्माण को एक साफ सुथरी व्यवस्था प्रदान की जो अमरीका के बड़े स्टुडियों की परम्परा के समान थी और इसीलिए वासन को दक्षिण भारत का सीसिल बी डिमल कहा जाता है। एस.एस. वासन का जैमिनी स्टूडियो और जैमिनी निर्माण संस्था ने लगभग तीन दशक तक मनोरंजन की दुनिया में दबदबा बनाए रखा और तामिल, तेलगु तथा हिन्दी में दर्जनों सफल फिल्मों का निर्माण किया। तमिल की अमर कवयित्री अवव्यार पर उन्होंने एक महान् फिल्म बनायी जिसे जनता और आलोचकों ने एक स्वर से सराहा। एस.एस. वासन का जन्म 10 मार्च 1903 में गरीब परिवार में हुआ था और बचपन में ही पिता की मृत्यु के कारण वे अपनी माँ के साथ मद्रास आ गये थे। इंटरमीडिएट की परीक्षा पास करने के बाद उन्होंने विज्ञापन का कार्य प्रारंभ किया। उस समय तक विज्ञापन सर्वमान्य उद्योग नहीं या परन्तु व्यवस्था के प्रति बचपन से जागरूक वासन ने इसे बड़े सुचारू रुप से चलाया।

एस.एस. वासन ने बी.वी. अय्यर से *आनंद विकाटन* नामक असफल साप्ताहिक को खरीदा और अपनी लगन से उसे सफल प्रकाशन बनाया। अपने प्रकाशन के लिए वासन ने कथा लिखना भी प्रारंभ किया। उनकी एक कहानी *साथी लीलावती* पर मि. डुंगन ने एक सफल फिल्म बनायी जिसमें एक छोटी भूमिका एम.जी. रामचंद्रन ने की थी जो आने वाले वर्षों में सफलतम अभिनेता बने। एस.एस. वासन ने एक वितरक के रूप में फिल्म जगत् में प्रवेश किया और अपनी योग्यता के आधार पर एक स्टुडियो सरकारी नीलामी में खरीदा और जैमिनी के नाम से पुनः प्रारंभ किया।

वासन ने अपनी माँ से बहुत-सी धार्मिक कथाएँ सुनी थी और उन्हें लोक साहित्य का भी ज्ञान था। आम आदमी के मनोरंजन के लिए वासन ने लोक कथाओं के प्रस्तुतीकरण में सर्कस के तत्वों का समावेश किया और उनकी फिल्मों में दो मनोरंजन विधाओं का उचित मिश्रण हुआ। यही उनका सबसे बड़ा योगदान है। वासन को फिल्मों के हर क्षेत्र से प्रतिभाशाली लोगों को फिल्मों की ओर आकर्षित किया। प्रकाशन, विज्ञापन और फिल्म निर्माण-इन तीनों ही क्षेत्रों में वासन ने व्यवस्था और भव्यता का जादुई उपयोग किया।

फिल्म उद्योग को सरकार द्वारा मान्यता दिलाने के उन्होंने अनेक प्रयास किये और उद्योग की समस्याओं के प्रति लोगों को सजग किया। उन्होंने राज्यसभा

के सदस्य के रुप में फिल्म उद्योग की भलाई के लिए महत्वपूर्ण कार्य किये। जिस तरह उनकी संस्था जैमिनी का बिगुल मनोरंजन की दुनिया में गूँजता रहा, उसी तरह फिल्म उद्योग की भलाई के लिए उनकी आवाज सत्ता के गलियारों में गूँजती रही। 26 अगस्त 1969 में उनका देहावसान हुआ। उनकी प्रमुख हिन्दी फिल्में हैं - *चन्द्रलेखा* (1948) *निशान* (1949) *मंगला* (1950) *संसार* (1951) *मि. सम्पत* (1952) *बहुत दिन हुए* (1954) *इंसानियत* (1955) *राज तिलक* (1958) *पैगाम* (1959) *घराना* (1961) *औरत* (1967) *तीन बहूरानियाँ* (1968) *शतरंज* (1969)। ●

फारमूलों के आदि-गुरू : शशधर मुखर्जी

अमेरीका के सर्वाधिक सफल निर्माता सीसिल बी डिमिल से उनकी निवृत्ति के समय एक पत्रकार ने पूछा कि व्यावसायिक तौर पर सफल फिल्म बनाने का क्या फार्मूला हैं? उनका उत्तर था कि यदि आप गंजे के सिर पर बाल उगा सकते हैं, तो उसी विद्या को सफल फिल्म का फ़ार्मूला मान लें। *शशधर मुखर्जी* गंजों के सिर पर बाल तो नहीं उगा पाये परन्तु सफल फिल्म का फार्मूला उन्होंने लगभग खोज लिया था। उनकी पहली पाँच फिल्में सफल रहीं और इसके बाद भी उनका रिकार्ड 90 प्रतिशत ही रहा। किस्मत, बंधन, कंगन, उनकी पहली हैट्रिक थी, जो उन्होंने बॉम्बे टॉकीज के लिए बनायी थी। अशोक कुमार की बहन का विवाह शशधर से हुआ था और शशधर की सिफारिश पर ही अशोक कुमार को फिल्म लेबोरेटरी में तकनीशियन का काम मिला था।

शशधर मुखर्जी विज्ञान के विद्यार्थी थे और फिल्म व्यवसाय का वैज्ञानिक अध्ययन करने वाले पहले निर्माता। 1913 से 1939 तक फिल्मों में ऐसे लोग आए जिन्हें इस नये और चमत्कारी माध्यम से कुछ कर गुजरने का जोश था। उस युग में धन के प्रति लोगों में विशेष लोभ नहीं था। इसीलिए फिल्मों में सामाजिक प्रतिबद्धता थी। शशधर पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने फिल्म के आर्थिक पहलू पर गहरा विचार किया और सफल फिल्म के नुस्खे की विधिवत खोज प्रारंभ की। उन्होंने अपने युग की युवा पीढ़ी की बेचैनी, असंतोष और आशा-निराशा को समझा और भारतीय फिल्मों में *एंटी हीरो* की रचना की। उनका नायक पहला *एंग्री यंग मैन* था। शशधर की *किस्मत* वह गंगोत्री है जहाँ से अभिताभ की गंगा प्रारंभ होती है। लगभग पचास वर्ष पहले बनी इस फिल्म ने पचास से ज्यादा फिल्मों को प्रभावित किया। मोह भंग के पहले मर्मज्ञ शशधर मुखर्जी थे। युवा पीढ़ी के दर्द को समझने वाले पहले फिल्मकार वे थे। उन्होंने यदि इस दर्द को सामाजिक प्रतिबद्धता से जोड़ा होता, तो वे शांताराम के समकक्ष होते परन्तु उन्होंने युवा वर्ग को अपनी फिल्मी अफीम चटाकर उनके लिए सपनों का मोहक संसार ही पैदा करना उचित समझा। इसी कारण *किस्मत, बंधन,कंगन* जैसी फिल्मों को छोड़कर सफलता की मृगतृष्णा की तरफ वे भागते रहें। दिलीपकुमार अभिनीत *लीडर* उनकी आखिरी फिल्म थी। परन्तु शशधर का स्कूल आज भी कायम है। नसीर हुसैन, ताहिर, सुबोध मुखर्जी और आर.के. नैयर उसी स्कूल के हैं।

बुद्धिजीवी वर्ग शशधर की फिल्मों को लाख हिकारत से देखे, परन्तु इतने विराट सत्य को अनदेखा नहीं किया जा सकता कि फिल्म-माध्यम बिना धन के कुछ भी नहीं हैं। धन बटोरने के लिए सफल फिल्म बनाना अनिवार्य हैं। महबूब खान, गुरूदत्त, बिमल रॉय और राजकपूर जैसे फिल्मकार हमेशा नहीं होते जिन्होंने व्यावसायिक सफलता के साथ कलात्मकता और सामाजिक प्रतिबद्धता को जोड़ा। 90 प्रतिशत असफल फिल्म बनाने वाले उद्योग में 90 प्रतिशत सफल फिल्में शशधर ने ही बनायी और इस गौरव को नकारा नहीं जा सकता।

शशधर ने सेठ तुलाराम जालान के साथ मिलकर फिल्मिस्तान नामक संस्था की रचना उस दौर में की जब बड़ी कम्पनियों के दिन लद चुके थे और स्टार सिस्टम अपने पैर जमा चुका था। मिडास टच के मालिक शशधर को रोकना संभव नहीं था। के आसिफ "मुगले-आजम" की महत्वाकांक्षी योजना में लीन थे। शशधर ने बीनाराय और प्रदीप कुमार को लेकर *अनारकली* बनाई जिसने बॉक्स ऑफिस के रिकार्ड तोड़ दिए। अनारकली का अमर संगीत सी. रामचन्द्र ने दिया था। आज इच्छाधारी साँप वाली फिल्मों की भरमार है और साँप की बीन के सहारे *नगीना* ने करोड़ो का व्यापार किया है। शशधर पहले निर्माता थे जिन्होंने वैजयंतीमाला और प्रदीप कुमार को लेकर *नागिन* बनाई थी। संगीत हेमंत कुमार का था। परन्तु फिल्म की बीन संगीतकार कल्याणजी ने अपने आयातित वाद्य यंत्र क्ले वायलिन पर बनायी थी। क्ले-वायलिन, वायलिन की तरह का वाद्य नहीं दिखता था-वह हारमोनियम की शक्ल का यंत्र होता था। जिस तरह से शशधर की *नागिन* सभी सर्प फिल्मों की मूल प्रेरणा है, उसी तरह क्ले-वायलिन आजकल के *सिंथेसाइजर* का मूल संस्करण है। यह एक वैज्ञानिक सत्य है कि साँप के कान नहीं होते, परन्तु शशधर ने बीन पर डोलने वाले साँप की नई किंवदंती की रचना की और आज इसका विरोध करना मूर्खता मानी जायेगी।

शम्मीकपूर *रेल का डिब्बा, लैला मजनू* जैसी कई फिल्मों की असफलता से निराश होकर शशधर के पास पहुँचे। शशधर ने शम्मी को अपनी मूँछों से छुटकारा दिलाया और *रिबेल स्टार* की छवि गढ़ी। शशधर ने शम्मी को नये अंदाज में प्रस्तुत किया। फिल्म *तुमसा नहीं देखा* और इसी के साथ शम्मी कपूर का अनोखा ढंग चल पड़ा। शशधर ने अपनी परम मित्र नसीम बानू की बेटी सायरा बानू को भी शम्मी के साथ *जंगली* में, अपने भाई सुबोध के द्वारा, प्रस्तुत किया। शशधर को सितारा बनाने की महारत हासिल थी।

आगे चलकर शशधर ने *फिल्माया* नामक कंपनी का निर्माण किया। *लव इन शिमला, दिल देके देखो* और *हम हिंदोस्तानी* फिल्मालय की पहली तीन फिल्में थी, जो जबरदस्त हिट साबित हुई। यह शशधर की चौथी थी। शशधर ने युवा पीढ़ी को फिल्मों का शिक्षण देने के लिए ही फिल्मालय संस्थान चालू किया, जिसने साधना, आशा पारेख, संजीव कुमार जैसे सितारे दिये।

शशधर को वह सम्मान नहीं मिला जिसके वे सच्चे हकदार थे क्योंकि उन्होंने कभी फिल्म निर्देशित नहीं की। वह परदे के पीछे रहे जिसके कारण उन्हें ग्लेमर युक्त ढंग से नहीं देखा गया। ●

राजकपूर: आधी हकीकत, आधा फसाना

□ जयप्रकाश चौकसे

राजकपूर स्वतंत्र भारत के प्रतिनिधि फिल्मकार रहे हैं। 1948 में 23 वर्ष की आयु में राजकपूर ने अपनी पहली फिल्म *आग* का निर्माण और निर्देशन किया। *आग* आजादी की अलसभोर की फिल्म थी और उस काल के युवा-मन का दर्पण थी। 1985 में उनकी निर्देशित अंतिम फिल्म *राम तेरी गंगा मैली* उस दुश्चक्र पर प्रकाश डालती है जिसने देश की ऊर्जा को नष्ट किया। वह दुश्चक्र हैं "पैसे से सत्ता और सत्ता से पैसा" बनाना। विचारों के प्रदूषण पर यह पहली फिल्म है। अपनी 19 वीं फिल्म *हिना* की कल्पना राजकपूर ने की थी जिसे उनके पुत्रों ने उन्हीं की परम्परा में पूरा किया है। अलगाववाद और हिंसा की शक्तियों पर प्रेम की विजय की फिल्म *हिना* मानवीयता का दस्तावेज है। राजकपूर की परम्परा अर्थात् सामाजिक प्रतिबद्धता के साथ मनोरंजन प्रदान करना। राजकपूर अन्य फिल्मकारों से अलग इसलिए हैं कि उन्होंने आधी हकीकत और आधा फसाना इस योग्यता से प्रस्तुत किया कि वे भारत की जनता की सामूहिक चेतना का एक हिस्सा बन गये और उनका सिनेमा आम आदमी के जीवन का मुहावरा बन गया। भारतीय सिनेमा में राजकपूर का सबसे बड़ा योगदान यह है कि उन्होंने सिनेमा के प्रति अधिकतम दर्शकों को जागरूक बनाया और सिनेमा का मतवाला प्रेमी बनाया। उनकी सभी फिल्में दर्शकों के नाम लिखे प्रेम-पत्र की तरह सिद्ध हुईं। राजकपूर के पास दर्शकों से आत्मीय सम्बन्ध बनाने का अद्भुत माद्दा था।

संवेदनशील राजकपूर भारतीय समाज और समय के गंभीर छात्र थे, इसलिए उनका सिनेमा भारतीय समाज का प्रतिबिंब रहा और अपनी कई फिल्मों में उन्होंने भविष्य में होने वाली घटनाओं का संकेत भी दिया। 1951 में बनी *आवारा* में उन्होंने भविष्य की हिंसा का स्पष्ट संकेत दिया। आवारा का एक संवाद था - "आप मुझे फाँसी दे सकते हैं, लेकिन मुझे फाँसी देने से पाप, क्रोध और *हिंसा का जहर जो समाज में तेजी से फैल रहा हैं* वह नहीं रुकेगा— अपराध के कोड़े मुझे उस गंदी गटर से मिले, जो हमारी चाल के पास से बहती है। आप मेरी फिक्र न करें परन्तु अपने बच्चों को उस गटर से बचा लीजिए"। इसी तरह *श्री 420* आज के विराट् भ्रष्टाचार का पूर्व-अनुमान थी। *जागते रहो* की इमारत भारत की प्रतीक थी। *जिस देश में गंगा बहती है* डाकुओं के आत्म-समर्पण का सिनेमा भारत की आधी हकीकत और आधा फसाना है। स्वयं राजकपूर की जिन्दगी और मौत भी आधी हकीकत और आधा फसाना ही थी। धार्मिक आख्यानों की खुराक पर पले हुए भारतीय दर्शक के लिए आधी हकीकत और आधा फसाना पहुत ही प्रभावकारी तरीका था।
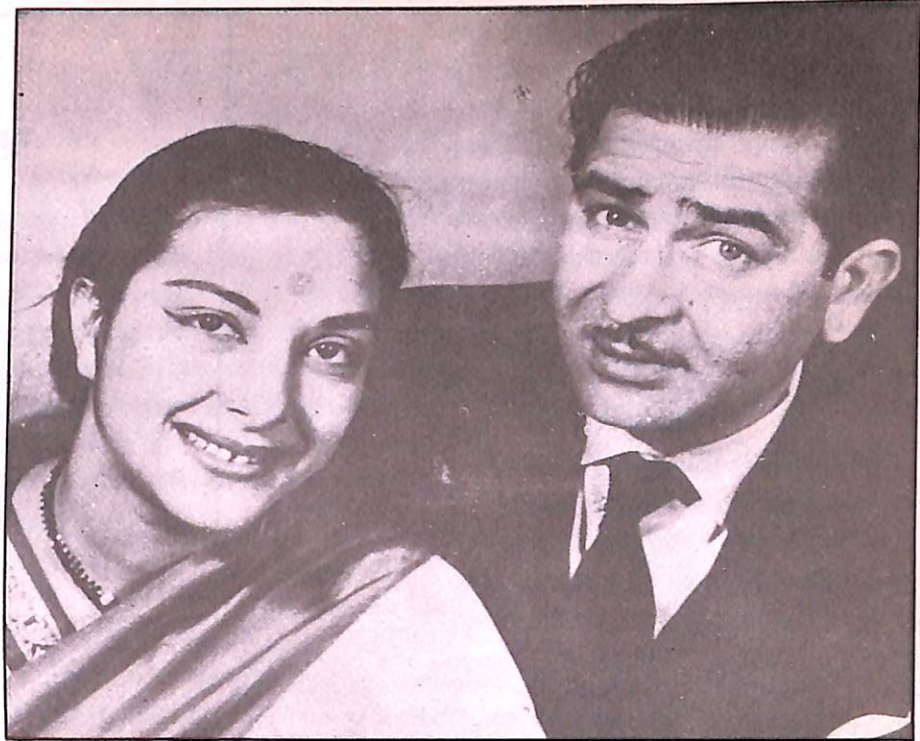
राजकपूर-नरगिस की लोकप्रिय जोड़ी

राजकपूर का सिनेमा अपने समय का प्रतीक होते हुए भी सार्वकालिकता और सार्वभौमिकता की कसौटी पर खरा सिद्ध होता है। *आवारा, श्री 420* और *जागते रहो* पर समय की धूल नहीं जम पायी हैं। राजकपूर के सिनेमा की मानवीयता ही उसे सार्वकालिक बनाती है। राजकपूर का दूसरा बड़ा योगदान यह है कि उसने व्यावसायिक सिनेमा को अंतरराष्ट्रीय पहचान दिलाई। *आवारा, श्री 420* और *संगम* ने विदेशों के अनेक सिनेमाघरों में गोल्डन जुबली मनाई है। कम्युनिस्ट देश, खाड़ी के देश, चीन और लेटिन अमेरिका में राजकपूर के सिनेमा ने भारतीय राजदूत का कार्य सम्पन्न किया। पश्चिम के देशों में राजकपूर के सिनेमा पर स्वीकृति की मुहर सन् 85 में लगाई जब उनकी फिल्मों का वहाँ प्रदर्शन हुआ।

राजकपूर का सिनेमा सभी देशों और काल खंडों में लोकप्रिय इसलिए बना कि वह आम आदमी के साधारण जीवन का महाकाव्य है। राजकपूर के पात्र सूर्यवंशी, चन्द्रवंशी योद्धा वीर पुरूष नहीं हैं- वे कमजोर आम आदमी हैं- जेब काटते हैं। 'शांति से गुजारा हो सके" (श्री 420) जैसी साधारण महत्वकांक्षा के लिए मरते हुए जीते है। राजकपूर का नायक निर्यात की जेब से अपने लिए मुठ्ठी भर प्यार चुराना चाहता है। आम आदमी की इस साधारण-सी इच्छा की अभिव्यक्ति के कारण ही *आवारा, बूट पॉलिश, जागते रहो*और*श्री 420*महान् कृतियाँ बनी हैं।

राजकपूर 27 वर्ष की आयु में स्टुडियो के मालिक बने। उन्होंने फिल्म से धन कमाकर फिल्मों पर ही

लगाया। दूसरे फिल्मकारों की तरह अन्य स्थायी व्यवसाय में सुरक्षा नहीं खोजी। फिल्मों के प्रति उनका समर्पण भक्तिभाव के समकक्ष था और इस बात ने फिल्मकारों की एक पीढ़ी को प्रभावित किया। राजकपूर संपूर्ण फिल्मकार थे। फिल्म विधा के हर क्षेत्र का ज्ञान उन्होंने अथक परिश्रम करके अर्जित किया था। अपने उद्योग को सामाजिक सम्मान दिलाने के लिए उन्होंने जीवन भर परिश्रम किया।

राजकपूर का एक योगदान यह भी है कि उन्होंने नई प्रतिभाओं को खोजा और सफल ढंग से प्रस्तुत किया तथा उनका परिमार्जन भी किया। उनके द्वारा प्रस्तुत चेहरे और प्रतिभा ने पूरे फिल्म उद्योग को वर्षों तक संवारा। प्रतिभाओं की यह सूची बहुत लम्बी है। राजकपूर ने फिल्म संस्कृति का विकास किया और समाज के हर वर्ग से इसे स्वीकृत कराया। ●

कपूर-परिवार

मनोरंजन की दुनिया में कपूर-परिवार एकमात्र परिवार है जिसकी चार पीढ़ियों ने फिल्मों अग्रणी भूमिका की है। पहली पीढ़ी के पृथ्वीराज कपूर ने फिल्म और स्टेज पर नायक की भूमिकाएँ कीं। दूसरी पीढ़ी में राजकपूर, शम्मीकपूर और शशिकपूर भी नायक रहे। तीसरी पीढ़ी में रणधीर, ऋषि, राजीव, कुणाल और संजना ने अग्रणी भूमिकाएँ कीं। चौथी पीढ़ी में करिश्मा अपनी पहली फिल्म से ही सितारा बन गयी। इनमें से किसी ने भी एक्सट्रा या सहयोगी कलाकार बनकर अपना फिल्म कैरियर शुरू नहीं किया। कपूर-परिवार का नाम गिनीज बुक ऑफ रिकार्ड्स में सम्मलित किया जाना चाहिए। प्रायः बैरीमूर परिवार से इनकी तुलना की जाती है परन्तु बैरीमूर परिवार की सभी पीढ़ियों ने नायक या नायिका के बतौर काम नहीं किया हैं।

स्वर कोकिला लता मंगेशकर

लता मंगेशकर के पहले गुरु उनके पिता दीनानाथ मंगेशकर थे, जो महाराष्ट्र के जाने माने कलाकार थे। मास्टर दीनानाथ मंगेशकर ने अपनी योग्य पुत्री को संगीत के बारे में वो सब कुछ सिखा दिया जो वह स्वयं जानते थे। लता ने 4 वर्ष की आयु में शास्त्रीय संगीत सीखना शुरू कर दिया और 7 वर्ष की उम्र में उन्होंने पहला संगीत कार्यक्रम प्रस्तुत किया। 1942 में पिता की मृत्यु के बाद लता को ही परिवार का दायित्व उठाना पड़ा। उस समय वे केवल तेरह वर्ष की थीं। अपने पिता की मृत्यु के केवल आठ दिन बाद ही लता को मास्टर विनायक की मराठी फिल्म पाहिली मंगलागोर में अपनी भूमिका करनी पड़ी इस फिल्म के संगीत निर्देशक दत्ता दावजेकर थे, जिनके निर्देशन में बाद में 1947 में लता ने पार्श्व गायिका के रूप में **आपकी सेवा** में फिल्म के लिए अपना पहला गीत गाया। लता की गायन क्षमता को पहचान कर संगीत निर्देशक गुलाम हैदर ने उनसे बम्बई टाकीज की फिल्मों में गीत गवाये। तब से लता मंगेशकर निरन्तर महानता

न भूतो न भविष्यति : लता

की सीढ़ियां चढ़ती गई। **मजबूर, पद्मिनी, अन्दाज, लहर, बाजार** और **बरसात** फिल्मों ने फिल्मी संगीत में लता के पाँव हमेशा के लिए जमा दिए और वे लाखों संगीत प्रेमियों के दिलों पर राज करने लगीं।

गीत गाने के साथ-साथ लता ने अभिनेत्री, निर्माता और संगीत निर्देशक के रूप में भी काम किया। किन्तु उनका वास्तविक कर्म क्षेत्र संगीत ही रहा। 1950 और 1960 के दशकों में उन्होंने प्रमुख मराठी कवियों की रचनाओं को प्रस्तुत किया। 1970 के दशक के प्रारम्भिक वर्षों में लता ने महाराष्ट्र के सबसे लोकप्रिय मध्य कालीन संत-गायक संत तुका राम के भक्ति गीत रिकार्ड कराए। संस्कृत में भगवद् गीता की रिकार्डिंग उनकी महानतम उपलब्धि मानी जाती है। उन्होंने मीराबाई के भजन और गालिब कि गजले भी गाई हैं। लता मंगेशकर ने लगभग 15 भाषाओं में गीत गाए हैं।

भारतीय फिल्म उद्योग में आज भी लता मंगेशकर को गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त है। सिनेमा के बदलते हुए स्वरूप और मूल्यों में भी वर्षों तक लता ने अपनी लोकप्रियता कायम रखी है और फिल्म दर्शकों की तीन पीढ़ियों के बीच बराबर लोकप्रिय बने रह कर अपनी अद्भुत क्षमता का परिचय दिया है। अधिक प्रशंसनीय बात ये है कि उन्होंने संगीत के स्तर से किसी भी तरह का समझौता किए बिना ये उपलब्धि हासिल की है। 1969 में उन्हें पद्मभूषण से सम्मानित किया गया। फिल्मी दुनिया की चमक-धमक उनके जीवन का अभिन्न अंग है और उनकी आवाज को समूचा भारत अपना मानता है, किन्तु आज भी सादगी, विनम्रता और सौम्यता उनके चरित्र की मुख्य विशेषताएं हैं। म.प्र. शासन ने उनके नाम से सुगम संगीत के क्षेत्र में लता मंगेशकर अवार्ड स्थापित किया है, जो फिल्म संगीतकार तथा गायकों को दिया जाता है। 1989 में राष्ट्रपति ने इस स्वरकोकिला दादा फालके अवार्ड से सम्मानित किया है ●

मृणाल सेन

फिल्मों के माध्यम से कटु भारतीय यथार्थ का चित्रण करने वाले *मृणाल सेन* की प्रतिष्ठा देश के सर्वाधिक सक्रिय एवं गंभीर सिने निर्देशक के रूप में है। इनकी फिल्में अक्सर विवाद का केन्द्र बनती रही हैं। बॉक्स ऑफिस पर असफल रहती हैं मगर फिर भी निर्माता उनसे फिल्में बनवाने को लालायित रहते हैं। ष विश्व भर में होने वाले फिल्मोत्सवों में आमंत्रित किये जाने वाले, अनेक अलंकरणों एवं अन्तरराष्ट्रीय अवार्डों से विभूषित मृणाल सेन वर्ष में औसतन एक फिल्म पूरी करने का वक्त निकाल लेते हैं।

मृणाल सेन की फिल्मी यात्रा को तीन खण्डों में रखकर आकलन करना बेहतर होगा पहले वर्ग में *आकाश कुसुम* से पूर्व बनी याने 1965 तक की फिल्में आती हैं। फिल्म निर्माण में उनकी रूचि साउण्ड रिकार्डिंग तकनीक में रूचि में हुई। बाद में उन्होंने कुछ दिनों तक स्टुडियों में काम भी किया। इस माध्यम के बारे में सूक्ष्म अध्ययन के उद्देश्य में उन्होंने यह नौकरी छोड़ दी। *इण्डियन पीपुल थिएटर आन्दोलन* के साथ वे जुड़े और साथ ही लेखन का कार्य भी करने लगे। चार्ली चैप्लिन की जीवनी, कारेल चापेक *द चीट* का बंगाली अनुवाद इसी लेखन प्रक्रिया के फल हैं। फिल्म सोसायटी आन्दोलन से भी उनका सीधा सम्पर्क रहा। सन् 1952 में कलकत्ते में हुआ अन्तरराष्ट्रीय फिल्म समारोह उन्हें सामयिक अन्तराष्ट्रीय प्रवाह से परिचित करा गया। इसके बाद 1956 में बनी उनकी पहली फिल्म *रात भोर* बुरी तरह फ्लॉफ हुई। इसके बाद *नील आकाशरे नीचे* आयी। कलकत्ता की बंगाली गृहिणी तथा चीनी हॉकर की दोस्ती पर आधारित कथानक वाली यह फिल्म आर्थिक दृष्टि में संतोष जनक रही। इसके बाद *बैशे श्रावण* (1960) में बनीं। इन फिल्मों से कलात्मक परिपक्वता का थोड़ा आराम मिलने लगा था। बैशे श्रावण महायुद्ध तथा अकाल से पीडित ग्रामीण बंगाल की पृष्ठभूमि में निर्मित फिल्म थी। बीस वर्ष बाद बनी *अकालेर संधनि* का भी यही विषय था। पुनश्च, *प्रतिनिधि, अवशेषे* के बाद *आकारकुसुम* बनी। यह फिल्म उच्च मध्यमवर्गीय वर्ग के युवक के रोमांस एवं महत्वाकांक्षाओं की विशिष्ट शैली में कही गयी थी। समीक्षकों द्वारा व्यापक रूप से सराही गयी यह फिल्म मृणाल सेन के लिए उत्साहवर्द्धक सिद्ध हुई। वे हिन्दी, उडिया, तथा तेलुगु सिनेमा की और मुड़े। उड़िया में *माटीरा मानुष* (1966) तथा हिन्दी में *भुवन सोम* (1969) आयी। तत्कालीन फिल्म वित्त निगम के सहयोग से कम बजट में निर्मित इस फिल्म को दर्शकों ने खूब पसन्द किया तथा समीक्षकों ने समांतर सिनेमा का श्रीगणेश इसी फिल्म से माना।

इसके बाद सेन ने कलकत्ता पर चार फिल्में आयी। सभी का विषय राजनीति था। *कलकटा 71, इन्टरव्यू* (1971) *कोरस* 1974) और पदातिक। इनमें कलकत्ता के सामाजिक, राजनीतिक जीवन की विसंगतियों का दस्तावेज दर्शाया गया है।

मृणाल सेन का कृतित्व एवं व्यक्तित्व पूरे विश्व में सम्मान के साथ स्वीकारा जाता हैं। अवार्ड तथा अलंकरण उनके लिए गौण हैं। यह बात अलग है कि वे विवाद का हमेशा केन्द्र बने रहे। अभिव्यक्ति के सटीक माध्यम की तलाश में वे निरंतर आगे बढ़ते रहें हैं। उनके कैरियर का तीसरा दौर हिन्दी फिल्म *मृगया* (1976) से शुरू हुआ शोषण, दमन तथा अन्याय को दर्शाने वाली फिल्में हिन्दी, तेलुगु एवं बंगाली में बनी। *मृगया* ब्रिटिश कमिशनर तथा आदिवासी के रिशतों पर आधारित थी। उड़िया की ओका उरिकथा।

(Oka Oori Katha) प्रेमचन्द की कहानी कफन पर आधारित थी।

इसके बाद सेन कलकत्ता लौटे। वापसी के बाद *एक दिन प्रति दिन, चालचित्र, खारिज,खण्डर* बनायी जो तत्कालीन मध्यमवर्गीय शहरी जीवन पर केन्द्रित थी।

मृणाल सेन देश के सर्वाधिक *एंग्री फिल्ममेकर* माने जाते हैं। *एक दिन अचानक* और *महापृथ्वी* उनकी नयी फिल्में हैं। ●

खण्ड आठ : फिल्म ट्रेड संस्थान

फिल्म स्टुडियो (बम्बई)

ए

आशा स्टुडियो
सायन, ट्रॉम्बे रोड, चेम्बूर
बम्बई - 71

बी

बसंत पिक्चर्स (स्टुडियो)
चेम्बूर, बम्बई - 71

सी

चाँदीवली आउटडोर स्टुडियो
चाँदीवली रोड, साकीनाका के पास
अंधेरी (ईस्ट) बम्बई - 72

ई

एसेल स्टुडियो
साहनी एस्टेट, ट्रॉम्बे
बम्बई - 88

एफ

फेमस (महालक्ष्मी)
20, डॉ.ई. मोजेस रोड
महालक्ष्मी, बम्बई - 11

फिल्म सिटी
गोरे गाँव (ईस्ट)
बम्बई - 79

फिल्मालय
सीजर रोड, अम्बोली
अँधेरी (वेस्ट)
बम्बई - 58

फिल्मिस्तान स्टुडियो
एस.वी. रोड, गोरे गांव
बम्बई - 62

जे

ज्योति स्टुडियो
केनेडी ब्रिज, बम्बई - 4

के

कमालिस्तान
महाकाली केव्ज रोड
अंधेरी (ईस्ट), बम्बई - 93

एम

मेहबूब स्टुडियो
हिल रोड, बांद्रा (वेस्ट)
बम्बई - 50

एन

नटराज स्टुडियोज प्रायवेट लिमिटेड
194, अंधेरी कुर्ला रोड
अंधेरी (ईस्ट)
बम्बई - 69

आर

आर.के. फिल्म्स एण्ड स्टुडियोज ट्रॉम्बे रोड, चेम्बूर,
बम्बई - 71

राजकमल कला मंदिर
परेल, बम्बई - 12

रणजीत स्टुडियोज
दादा साहेब फालके रोड
दादर, बम्बई - 14

एस

सेठ स्टुडियोज
194, अंधेरी कुर्ला रोड
अंधेरी (ईस्ट)
बम्बई - 69

स्वाति स्टुडियोज
ईश्वर भाई पटेल स्टेट
गोरे गाँव (ईस्ट)
बम्बई - 63

रेकार्डिंग स्टुडियो

ए

आरती रेकार्डिंग स्टुडियो
7-बी, संगीता अपार्टमेंटस,
लीडो सिनेमा के पीछे
बम्बई -49

एक्मे
बॉम्बे एसी मार्केटिंग
ताड़देव, बम्बई - 34

अजंता
पाली हिल, बांद्रा (वेस्ट)
बम्बई -50

आनन्द रेकार्डिंग स्टुडियो
जिगजेग रोड, परपाली मार्केट
बांद्रा (वेस्ट) बम्बई -50

आराधना साउंड सर्विसेस
अरविंद चेम्बर्स, सेठ स्टुजियोज
अंधेरी (ईस्ट), बम्बई-69

आडियो फाइल थियेटर
41, पाली हिल्स
भाटिया - बंगला
बांद्रा, बम्बई - 50

बी

बॉम्बे साउंड सर्विसेस
एस.के. भोले रोड, आगरा बाजार
बम्बई - 25

बी. आर. साउंड-एन-म्यूजिक
बी.आर. हाउस, जुहू रोड
बम्बई - 49

बीट्स एंटरप्राइजेस
306, अरूण चेम्बर्स, तीसरी मंजिल
ताड़देव, बम्बई - 34

ब्लेज
कांग्रेस बिल्डिंग,
सेकंड कॉन्वेंट स्ट्रीट
कोलाबा, बम्बई-5

ब्रॉडवे रेकार्डिंग सेंटर
ब्रॉडवे शॉपिंग सेंटर
दादर, बम्बई - 14

डी

डीपर स्टुडियो
डी. कुन्हा हाउस, जेकॉब सर्कल
बम्बई - 11

डिम्पल
पाली हिल, बांद्रा (वेस्ट)
बम्बई - 50

ई

एवरेस्ट रेकार्डिंग स्टुडियों
एवरेस्ट बिल्डिंग, पहली मंजिल
ताड़देव, बम्बई - 34

एवरशाइन स्टुडियो
बीना बीना, स्टेशन के सामने
बांद्रा (वेस्ट), बम्बई - 50

एफ

फेमस रेकार्डिंग
तारदेव, बम्बई - 34

फेरोग्राफर्स
सरदार भगतसिंह रोड
कोलाबा, बम्बई - 39

फिल्म सेंटर
ताड़देव, बम्बई - 34

फिल्मसिटी रेकार्डिंग स्टुडियोज
गोरे गाँव (ईस्ट)
बम्बई - 70

फिल्मालय
अंबोली, अंधेरी (वेस्ट)
बम्बई - 56

जी

गीतांजली
14, ए रोड, खार (वेस्ट)
बम्बई - 52

गित्री साउंड रेकार्डिंग स्टुडियों
24, संगीत, 6 - रोड
जे.वी.पी.डी. स्कीम
बम्बई - 56

एच

एच.एम.वी. रेकार्डिंग
सर पी. एम. रोड
बम्बई - 1

के

कल्याण
जयंत विला, वर्ली मार्केट के सामने
बम्बई - 14

कैरिअर
रेडीमनी टेरेस, वर्ली
बम्बई-18

केलव
यूनियन पार्क, रवार (वेस्ट)
बम्बई - 52

एम

मेहबूब रेकार्डिंग सेंटर
हिल रोड, बांद्रा (वेस्ट)
बम्बई - 50

एन

नटराज स्टुडियोज
अंधेरी कुर्ला रोड
अंधेरी (ईस्ट)
बम्बई - 69

पी

पाम बीच
नेपियन सी रोड
बम्बई - 6

आर

आर के. स्टुडियो
ट्रॉम्बे रोड, चेम्बूर
बम्बई - 71

आर. टी.वी.सी.
अमा हाउस, स्ट्रेंड सिनेमा के पास
कोलाबा, बम्बई-5

रेडियोजेम्स
305, नीलम, वर्ली
बम्बई - 14

रेडियोजेम्स
फेमस, महालक्ष्मी
बम्बई - 11

रेडियोवाणी
नीलम, वर्ली,
बम्बई - 18

राजकमल कला मंदिर
परेल, बम्बई - 12

रेनबो रेकार्डिंग
सुपर बाजार, पहली मंजिल
चेपल लेन, सांताक्रुज (वेस्ट)
बम्बई - 54

एस

एस.एल. रेकार्डिंग
वालचंद टेरेस, तारदेव रोड
बम्बई - 34

सरगम
शकुंतला अपार्टमेंट
बेसमेंट, 5-रोड
रवार (वेस्ट), बम्बई - 52

श्री साउंड
गोकुलदास पेस्टा रोड
दादर, बम्बई - 14

साउंड डिजाइनर
दस्तूर बिल्डिंग, चौथी मंजिल
266, पेरिन,
नरिमन बाजार, गेट सेंट फोर्ट बम्बई -1

स्टुडियो सी रॉक (प्रतिमा स्टुडियो)
लेंड्स एंड, बांद्रा (वेस्ट) बम्बई - 50

स्टुडियो साउंड
खान मंजिल
28 वाँ रोड, रवार (वेस्ट)
बम्बई - 52

सुमीत
किंग्स इंटरनेशनल हॉटेल
जुहू चर्च, बम्बई - 49

संदीप इलेक्ट्रॉनिक्स (रेकार्डिंग स्टुडियो)
वैकुंड सोसायटी, लालभाई पार्क
अंधेरी (वेस्ट)
बम्बई - 58

सन्नी सुपर साउंड
सन्नी विला, गांधी ग्राम रोड
जुहू, बम्बई - 49

सुपर ट्रेक साउंड रेकार्डिंग
एस-24, फेमस सिने बिल्डिंग
महालक्ष्मी, बम्बई - 11

सिस्टम
नीलम, वर्ली
बम्बई - 18

टी

द फोर्थ डायमेंशन स्टुडियो
तल मंजिल, सेंचुरी भवन बिल्डिंग
वर्ली, बम्बई - 25

वी

वृंदावन स्टुडियो प्रायवेट लिमिटेड
उमरगाँव, बम्बई

डब्ल्यू

वेस्टर्न आउट डोर
बॉम्बे समाचार मार्ग, फोर्ट
बम्बई - 23

एक्स

जेवियर इंस्टिट्यूट ऑफ
कम्युनिकेशन्स
सेंट जेवियर्स कॉलेज
बम्बई - 1

फिल्म ट्रेड संस्थान

आंध्र फिल्म डिस्ट्रीब्यूटर्स काउंसिल
गांधीनगर, विजयवाड़ा

आंध्र प्रदेश फिल्म चेंबर ऑफ कामर्स
फ्लेट नं. 1, 5-9 - 22/42
आदर्स नगर, हैदराबाद - 83

सेंट्रल सर्किट सिने एसोसिएशन
म्युनिसिपल पार्क
भुसावल - 1

इस्टर्न इंडिया मोशन पिक्चर्स एसोसिएशन
98-ई, चौरंगी स्कवेअर
कलकत्ता - 72

हैदराबाद स्टेट फिल्म चेंबर ऑफ कॉमर्स
3460, राष्ट्रपति रोड
सिकंदराबाद

कर्नाटक फिल्म चेंबर ऑफ कॉमर्स
28, फर्स्ट मेन क्रेजेंट रोड
हाय - ग्राउंडस् बेंगलौर - 1

केरल फिल्म चेंबर ऑफ कॉमर्स
टी.डी. रोड
एर्नाकुलम - 1

मदुराई फिल्म डिस्ट्रीब्यूटर्स एसोसिएशन
44, अवनी मूला स्ट्रीट मदुराई

मलयाली चलचित्र परिषद्
46, डॉ. बी. एन. रेड्डी रोड
मद्रास - 17

मोशन पिक्चर्स एसोसिएशन
52/55 मंगल मार्केट
चाँदनी चौक, दिल्ली - 6

मैसूर फिल्म चेंबर (ऑफ कॉमर्स)
प्रभात टॉकीज
बिल्डिंग, पहली मंजिल केम्पेगोड़ा रोड बंगलौर

साउथ इंडियन फिल्म चेंबर
ऑफ कॉमर्स
फिल्म चेंबर्स बिल्डिंग
टी.आर सुंदरम् एवेन्यू
604 अन्ना सलई
केथेड्रल पी.ओ. मद्रास - 6

तमिलनाडु फिल्म डिस्ट्रीब्यूटर्स कांउसिल
6, वुड्स रोड
मद्रास - 2

अपर इंडिया फिल्म प्रोडक्शन एसोसिएशन
विमला सदन, राधा नगर
वालकेश्वर रोड, आगरा - 282004

अपर इंडिया सिने आर्टिस्ट्स एसोसिएशन
विमला सदन, राधा नगर
बालकेश्वर (रोड, आगरा - 282004

वेस्टर्न इंडिया फिल्म प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन
रवि चेंबर्स, पाँचवी मंजिल
सेलापोज रोड
रिलीफ सिनेमा के पास
अहमदाबाद - 1

वीडियो प्रोजेक्शन संस्थान

अमर प्लास्टिक इंडस्ट्रीज
43, महर्षि कर्वे रोड
बम्बई - 2

अरविन्द
1 आचार्य जगदीश चंद्र बोस रोड
कलकत्ता - 20

आडियो विज्यूअल
20, रॉक हाउस, वर्ली हिल रोड
बम्बई - 18

सिने विजन
सी-93, वाजीपुर इंडस्ट्रियल
एरिया
मेन रिंग रोड, नई दिल्ली - 52

एंटेल प्रोजेक्शन
532, सेंड हर्स्ट ब्रिज
ऑपेरा हाउस, बम्बई - 4

हॉट लाइन प्रोजेक्ट विजन
16, कम्युनिटी सेंटर
न्यू फेंड्स कॉलोनी
नई दिल्ली - 65

कमलदीप इंडस्ट्रीज
416, गोल्डन पार्क, आश्रम रोड
अहमदाबाद - 14

सम्राट वीडियो विजन
सम्राट सिनेमा कॉम्पलेक्स
शंकरपुर, दिल्ली - 34

सुपर वीयू इंटरनेशनल
पुलिस स्टेशन के पीछे
संजीव रेड्डी नगर
हैदराबाद - 38

सिस्टमेटिक्स (इंडिया)
30 ए, पंचरत्न, ऑपेरा हाउस
बम्बई -4

टी.वी. स्कोप
30 ए, पंचरत्न ऑपेरा हाउस बम्बई -4

☐ प्रस्तुति : बद्रीप्रसाद जोशी एवं शशि शर्मा

● खण्ड नौ : फिल्म सोसायटी

फिल्म सोसायटी आन्दोलनः दशा और दिशा

☐ बच्चन श्रीवास्तव

भिन्न देशों में जब सिनेमा का व्यापक विकास हो गया तो देशों में लीक से हट कर प्रयोगवादी फिल्में भी बननी आरंभ हो गईं। ऐसी फिल्में बनती तो अनेक थीं परन्तु व्यावसायिक स्तर पर उनका प्रदर्शन नहीं हो पाता था। कई बुद्धिजीवियों और सिनेमा के गंभीर दर्शकों में इस तरह की फिल्मों के देखने की उत्सुकता जागृत हुई। इस उत्सुकता ने फिल्म सोसायटी की कल्पना को जन्म दिया।

1920 में लंदन में कुछ लोगों ने अपने को संगठित किया। 1925 में लंदन फिल्म सोसाइटी ने अपने द्वार सदस्यों के लिए खोले। भारत में दूसरे विश्वयुद्ध को आरंभ में अमेरिका सिनेमा सोसाइटी की स्थापना की गई। परन्तु युद्ध के कारण संगठन जल्दी ही ठप्प हो गया। अगला प्रयास भी बम्बई में 1942 में हुआ। इसका श्रेय भारतीय सिनेमा के एक हंगेरियन फ्रांस बर्को को है। बर्को फोटोग्राफर थे। इसलिए उन्हें सिनेमा में रूचि थी। उन्होंने बॉम्बे फिल्म सोसाइटी की स्थापना की। कलकत्ता में स्वाधीनता के तुरंत बाद वहाँ के कुछ उत्साही लोगों ने कलकत्ता फिल्म सोसाइटी गठित की। इसके संयोजकों में प्रख्यात फिल्म शिल्पी *सत्यजीत राय* भी थे जो बाद में फिल्म सोसाइटी के महा संघ के प्रधान बने।

राजधानी दिल्ली में फिल्म सोसाइटी आन्दोलन आने में कुछ वर्ष और लगे। हुआ यह कि स्वाधीनता के बाद देश की राष्ट्रीय सरकार ने शिक्षा के प्रसार के लिए विस्तृत योजनाएँ बनाई। उन्हीं दिनों प्रधान मंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू ने अपने सहयोगी शिक्षा मंत्री मौलाना आजाद से प्रौढ़ शिक्षा पर विशेष ध्यान देने का आग्रह किया। आवश्यक सुझाव देने के लिए विशेषज्ञ आमंत्रित किये गये। इन आमंत्रित विदेशी विशेषज्ञों में ब्रिटेन की कुमारी मारी सीटन भी थीं।

मारी सीटन लन्दन के ब्रिटिश फिल्म इंस्टीट्यूट से जुड़ी हुई थी। अपने राजधानी प्रवास में उन्होंने अपने परिचितों के सहयोग से दिल्ली फिल्म सोसाइटी की स्थापना की। श्रीमती मूरियल बसी, कुमारी उषा भगत, जॉन जोशुआ इसके संयोजकों में से थे। इस प्रकार फिल्म सोसाइटी आन्दोलन दिल्ली भी पहुँच गया।

आरंभ में तो फिल्म सोसाइटी की सदस्यता बहुत सीमित रही। परन्तु कुछ भी वर्षों बाद इसकी सदस्य संख्या शीघ्रता से बढ़ना आरंभ हुई। यहाँ तक कि श्री राजीव गाँधी को सदस्यता के लिए चार वर्ष प्रतीक्षा करनी पड़ी थी।

जब लोगों को दिल्ली फिल्म सोसाइटी में सदस्यता मिलने में कठिनाई होने लगी तो कुछ फिल्म प्रेमियों में नई फिल्म सोसाइटी गठित की। इस बीच रुड़की विश्वविद्यालय के प्राध्यापकों ने रुड़की की फिल्म सोसाइटी गठित की।

1959 में कलकत्ता फिल्म सोसाइटी ने एक अखिल भारतीय संगठन बनाने के लिए आवश्यक प्रयास किया। फलस्वरूप कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, दिल्ली तथा रुड़की की की फिल्म सोसाइटियों ने मिलकर अखिल भारतीय स्तर पर अपनी फेडरेशन अर्थात् महासंघ गठित किया। फिल्म शिल्पी सत्यजीत राय महासंघ के अध्यक्ष चुने गए। महासंघ की स्थापना ने फिल्म सोसाइटी आन्दोलन को नया उत्साह प्रदान किया। अखिल भारतीय स्तर पर कार्यक्रम तैयार होने लगे और विभिन्न फिल्म सोसाइटियों के बीच तालमेल रहने लगा।

सच तो यह है कि सन् 70 और 80 का दशक फिल्म सोसाइटी आन्दोलन के लिए स्वर्ण काल कहा जा सकता है। इस दशक में अनेक नगरों में और दिल्ली जैसे महानगर में नई-नई सोसाइटी बनी। देखते देखते अखिल भारतीय महासंघ से लगभग 400 फिल्म सोसाइटियों ने सदस्यता प्राप्त की।

राजधानी दिल्ली में भी इनकी संख्या बढ़कर एक दर्जन तक पहुँच गई। 'सेल्योलॉयड' नाम से एक सोसाइटी बनी तो 'इमेज' नाम से दूसरी। एक ने अपना नाम 'तस्वीर' रखा तो दूसरी ने 'प्रोजेक्ट इंडिया'। इंटरनेशनल सेंटर ने फिल्म क्लब स्थापित की तो राजधानी में रहने वाले केरलावासियों ने दिल्ली मलयाली फिल्म सोसाइटी की स्थापना की। उधर कानपुर, लखनऊ, जालंधर, चंडीगढ़ में भी फिल्म सोसाइटी सक्रिय हो चुकी थीं। अखिल भारतीय महासंघ ने अपने कार्यक्रमों को और सुचारू ढंग से चलाने के लिए उत्तर, दक्षिण, पूर्व तथा पश्चिम में चार क्षेत्रीय शाखाएँ स्थापित की। महासंघ का उत्तरी क्षेत्रीय कार्यालय नई दिल्ली में स्थापित हुआ। इस समय उत्तर भारत की 16 सोसाइटियाँ उत्तरी कार्यालय से जुड़ी हैं। यह कार्यालय 'इफसोन' नाम से अंग्रेजी का एक त्रैमासिक भी प्रकाशित कर रहा है।

कहने को दिल्ली में एक दर्जन फिल्म सोसाइटियाँ है परन्तु आज भी दिल्ली फिल्म सोसाइटी सदस्य संख्या की दृष्टि से सबसे बड़ी है। यह 'डीएफएस न्यूज' नामस से एक मासिक समाचार-पत्र भी प्रकाशित करती है। दिल्ली फिल्म सोसायटी ने अपनी रजत जयंती धूम से मनाई थी। अभी गत वर्ष इसने एक विचार गोष्ठी आयोजित की थी। विचारणीय विषय था - 'नया सोवियत सिनेमा पेरोस्त्रोइका की चुनौती।' इस सोसायटी के पदाधिकारियों में श्रीमती इन्दिरा गाँधी, श्रीमती अरुणा आसफ अली तथा श्री इन्द्र कुमार गुजराल जैसी प्रमुख हस्तियाँ रही है।

भारत में फिल्म सोसाइटी आन्दोलन के लिए सातवाँ दशक महत्वपूर्ण रहा। नई सोसायटियाँ बनी। सदस्य संख्या बढ़ी। परन्तु उसके बाद यह आन्दोलन सिमटने लगा। आज सिमटते हुए संकट की कगार पर आ पहुँचा है। फिल्म सोसायटी आन्दोलन में आए इस संकट के कई कारण है। इनमें से कुछ तो ऐसे है जिनसे निजात पाना संभव नहीं हैं। ऐसे दो प्रमुख कारण है टेलीविजन तथा वीडियो। इन दोनों ने फिल्म सोसायटी के सदस्यों को उससे छीन लिया है। प्रत्येक शुक्रवार को विदेशी तथा प्रत्येक रविवार की दोपहर को प्रादेशिक तथा शनिवार तथा रविवार को हिन्दी फिल्म प्रसारण में दूरदर्शन चर्चित एवम् पुरस्कृत फिल्म प्रसारित कर रहा है। शनिवार को क्लासिक फिल्म श्रृंखला में पुरानी चर्चित फिल्में भी उपलब्ध हो जाती है। छोटे पर्दे पर इतनी फिल्में देखने के उपरान्त फिर सोसायटी के कार्यक्रमों में सम्मिलित होने का अवकाश

विश्व सिनेमा से साक्षात्कार : चेक फिल्म फ्यूनरल सेरेमनीज

कहाँ और किसे है ?

देश भर में फैली वीडियो लाइब्रेरियाँ नई से नई विदेशी फिल्मों के वीडियो कैसेट उपलब्ध करा देती हैं। विदेशी फिल्मों को देखने का शौक इनसे पूरा हो जाता है। अमेरिका या लंदन में फिल्म का प्रीमियर होता है और सप्ताह बाद ही उसका वीडियो कैसेट भारत में मिल जाती है।

उत्तर भारत में राष्ट्रभाषा में प्रसार ने भी थोड़ा विपरीत प्रभाव डाला है। नवयुवकों का अंग्रेजी का स्तर गिर रहा है। अंग्रेजी को जानने समझने वाले कम होते जा रहे हैं। इसका परिणाम यह हो रहा है कि अंग्रेजी भाषी अथवा अंग्रेजी में सब टाइटल्स या विदेशी फिल्में को समझने अथवा आनन्द लेने वाले दर्शक घटते जा रहे हैं।

अच्छे कार्यक्रम, क्षेत्रीय फिल्म सोसायटियों का गठन, विचार गोष्ठियों का आयोजन इस आन्दोलन को गतिशील कर सकते हैं। इस कार्य में शिक्षण संस्थाएं, औद्योगिक संगठन तथा सांस्कृतिक संस्थानों के सहयोग से यह कार्य सरलता से किया जा सकता है। ●

सुचित्रा फिल्म सोसायटी (बंगलौर)

सन् 1971 में स्थापित सुचित्रा फिल्म सोसायटी बंगलौर, देश में अपने ढंग की अनूठी फिल्म सोसायटी है, जिसे सदस्यों और पदाधिकारियों के समर्पित संकल्प ने बंगलौर की एक प्रमुख सांस्कृतिक संस्था बना दिया है। सोसायटी अब तक 1500 देश-विदेश की फिल्मों का प्रदर्शन कर चुकी है। 150 फिल्म समारोह भी आयोजित किए हैं। फिल्म एप्रिसिएशन कोर्स, फिल्मों पर परिसंवाद बहस, कार्यशाला, फिल्म समीक्षा प्रतियोगिता, पुस्तकालय, वाचनालय, मासिक और अनियतकालीन ब्रोशर का प्रकाशन सोसायटी की नियमित गतिविधियाँ रही हैं। अपने परिश्रम और सहयोग से सुचित्रा ने स्वंय का फिल्म आडिटोरियम निर्मित किया है। 200 दर्शक क्षमता वाले इस सभागार में 16 तथा 35 एम.एम. फिल्मों के प्रदर्शन की व्यवस्था है। पता : 36, नाइंथ मेन, बनशंकरी, सेकंड स्टेज, बंगलौर-560070 (कर्नाटक)

● खण्ड दस : फिल्म-कल्चर

फिल्म माध्यम के विभिन्न सोपानों पर सक्रिय व्यक्तियों का संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत है। लेकिन यह सूची सम्पूर्ण नहीं है। प्राप्त एवं उपलब्ध फिल्म पत्रकार, समीक्षक, फिल्म व्यवसायी, और फिल्म संस्थाओं के पदाधिकारियों का यह विवरण उन लोगों के लिए निश्चित ही उपयोगी रहेगा, जो यह जानना चाहते हैं कि फिल्म क्षेत्र में कौन, कहाँ और क्या कर रहा है ?

- सम्पादक

अच्युत पोतदार

जन्म 16 अक्टूबर 1934 (जबलपुर) , इन्दौर में पले और बड़े हुए, एम.ए. (अर्थशास्त्र मध्यप्रदेश में 'महाविद्यालयीन शिक्षा विभाग में व्याख्याता के रूप में कैरियर प्रारंभ तथा बाद में भारतीय सेना में केप्टेन रहे। सन् 1968 से इण्डियन ऑइल कम्पनी में अधिकारी । अभिनय के प्रति बचपन में रुचि तथा 1947 से रंगमंच पर नियमित अभिनय। सन् 1978 में दूरदर्शन धारावाहिकों एवं हिन्दी, मराठी फिल्मों में अभिनय। अब तक हिन्दी की 40, मराठी की 2, फीचर फिल्मों, अनेकों वृत एवं विज्ञापन चित्रों, दूरदर्शन धारावाहिकों तथा रंगमंच प्रस्तुतियों में अभिनय। उल्लेखनीय फिल्में : रामनगरी, दूरियाँ, शायद, विजेता, आक्रोश, अर्धसत्य, सत्य, गोदान, अनंत यात्रा, आघात, कब्जा, राख, रिहाई, तेजाब, परिंदा, प्रहार दिशा, लक्ष्मणरेखा, नरसिंम्हा । प्रमुख टी.वी सीरियल : नुक्कड़, राग-दरबारी, स्वयं सिद्धा, कक्काजी कहिन, भारत एक खोज, वागले की दुनिया, ये दुनिया गजब की।

अनिल नागरथ

जन्म 10 मार्च 1954। बी.कॉम करने के उपरान्त डालमिया डेयरी उद्योग में 10 वर्ष तक एक्जीक्यूटिव के रूप में कार्य किया। गोल्डन टोबॉको लिमिटेड में मैनेजिंग ट्रेनी के नियुक्त तथा रीजनल सेल्स मैनेजर बनकर पद त्यागा। बम्बई जाकर फिल्म 'सुर्खियाँ' का निर्माण। इसके पश्चात फीचर फिल्म 'आज की ताकत' का निर्देशन। फिल्म मेकर्स कम्बाइन ' तथा 'इण्डियन मोशन पिक्चर्स प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन' के वर्तमान सचिव।

पता - बम्बई फ्लैट नं. 112 एवरेस्ट अपार्टमेन्ट, जे.पी. रोड, वरसोवा, अन्धेरी (वेस्ट) बम्बई 400061इन्दौर : पुष्पकुंज हास्पिटल, डाकघर - कस्तूरबाग्राम, इन्दौर - 452020.

अरुण खोपकर

अरुण खोपकर ने भारतीय फिल्म तथा टेलीविजन संस्थान से डिप्लोमा किया। भारतीय सिनेमा के बारे में उनके कई शोधपत्र एवं लेख छप चुके हैं। 1978 में उन्हें लघु चित्र **टोबेको हैबिट्स एंड ओरल कैंसर** के लिए निर्देशक और सह निर्माता का राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान किया गया। वे लगभग 20 लघु चित्रों के पटकथा लेखक और निर्देशक रहे हैं। उन्होंने मणि कौल की फिल्म **आषाढ़ का एक दिन** में मुख्य भूमिका निभाई थी। मराठी में लिखी गुरुदत्त तीन अंकी शोकांतिका को वर्ष 1985 में राष्ट्रपति ने सर्वोत्तम फिल्म पुस्तक के रूप में पुरस्कृत किया था। इसी पुस्तक का हिन्दी अनुवाद म.प्र. फिल्म विकास ने भी किया है।

अश्मकी आचार्य

भारतीय फिल्म एवं दूरदर्शन संस्थान पुणे से निर्देशन में उपाधि। निर्देशन में विशेषज्ञता। विभिन्न विषयों पर लघु और डाक्युमेन्ट्री फिल्मों का निर्माण। एक फिल्म **मिथ्या** अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह पिसारो (इटली) में प्रशंसित। मध्यप्रदेश फिल्म विकास निगम के लिए परिवार नियोजन पर **अब तो चेतो** फिल्म का निर्माण। वर्तमान में बम्बई में सक्रिय।

अभय छजलानी

चार अगस्त 1934 को जन्मे श्री छजलानी 1955 से पत्रकारिता जगत में कार्यरत हैं। 1963 में आप **नई दुनिया** इन्दौर के कार्यकारी सम्पादक हुए। 1965 में कार्डिफ (इंग्लैण्ड) से थामसन फाउण्डेशन पत्रकारिता छात्रवृत्ति। **गुजरता कारवाँ** शीर्षक चर्चित स्तम्भ के अन्तर्गत समय सापेक्ष समस्याओं पर लेखन। **खेल हलचल** के मुख्य सम्पादक। अभी सम्पादक **नई दुनिया** इंदौर।

भारतीय सिनेमा के इतिहास और विकास का दस्तावेजीकरण करने की दिशा में तीन फिल्म विशेषांकों के प्रधान सम्पादक। **भारतीय सिनेमा के 75 साल (1988) सरगम का सफर (1989) परदे की परियाँ (1990)** नामक इन विशेषांकों का देशभर में स्वागत। नई दुनिया देश का एक मात्र दैनिक अखबार है, जिसने फिल्म माध्यम के प्रति इतना संजीदा काम किया है। कई महत्वपूर्ण संस्थाओं के पदाधिकारी। इंदौर टेबिल टेनिस ट्रस्ट, मध्यप्रदेश खेल परिषद् के उपाध्यक्ष। मध्यप्रदेश टेबिल टेनिस एसोसिएशन के अध्यक्ष। इंडियन लेंग्वेज न्यूज पेपर्स एसोसिएशन (इलना) के पूर्व अध्यक्ष। कार्यकारिणी सदस्य इंडियन एण्ड ईस्टर्न न्यूज पेपर्स सोसायटी (आय.ई.एन.एस.)। राज्य स्तरीय साम्प्रदायिक सद्भाव समिति सम्मान, गणेश शंकर विद्यार्थी समन्वय पुरस्कार। श्रीकांत वर्मा स्मृति पत्रकारिता पुरस्कार। पत्रकारिता के सिलसिले में महत्वपूर्ण विदेश यात्राएँ।

असीम चक्रवर्ती

असीम चक्रवर्ती का जन्म चार अप्रैल उन्नीस सौ अट्ठावन को हुआ। हिंदी मुख्य विषय लेकर स्नातक हुए। पहली बार 1973 में बच्चों की एक कहानी प्रकाशित हुई। तब से बच्चों की दर्जनों कहानियाँ विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित । सन् 77 से फिल्म लेखन की शुरूआत। 1981 में मनोरमा पत्रिका के संपादकीय विभाग में नौकरी की शुरूआत। दो साल के बाद 'जनसत्ता', दिल्ली में दो वर्ष तक उपसंपादक के रूप में कार्य। बाद में आनंद बाजार पत्रिका समूह, कलकत्ता के हिंदी प्रकाशन 'रविवार' के साथ छः साल तक जुड़े रहे। वर्तमान में पश्चिम उत्तर प्रदेश के चार जगहों से निकलने वाले हिंदी दैनिक **'अमर उजाला'** के बबई ब्यूरो का कार्य भार। पत्रकारिता की हर विधा में दर्जनों लेख और रिपोर्ट प्रकाशित हो चुके हैं। फिल्म लेखन में विशेष रुचि। फिल्म की हर विधा पर अब तक सैकड़ों लेख प्रकाशित हो चुके हैं। बंगाल के विख्यात नायक उत्तम कुमार पर एक पुस्तक लिखने की योजना।

पता : अमर उजाला ब्यूरो, एम.के. भवन, रुम नं. 3, ग्राउण्ड फ्लोर 89, मिंट रोड, बम्बई - 1.

अनुराग चतुर्वेदी

जन्म 11 जून 1954 उदयपुर (राजस्थान)। शिक्षा एम.ए (समाजशास्त्र), । पत्रकारिता में डिप्लोमा। सन् 1978 से 1985 तक धर्मयुग में उपसंपादक रहे। 1985 से 1989 तक 'रविवार' में विशेष संवाददाता तथा वर्तमान में संडे ऑब्जर्वर (हिन्दी) में विशेष संवाददाता के रूप में कार्यरत। फिल्म संबंधी गंभीर लेखन तथा सेन्ट्रल बोर्ड ऑफ फिल्म सर्टिफिकेट की सलाहकार समिति में 7 अक्टूबर 1991 से सदस्य।

बच्चन श्रीवास्तव

जन्म 12 अप्रैल 1931. । शिक्षा - एम.ए (हिन्दी)। सन् 1950 से श्रमजीवी पत्रकार के रुप में सक्रिय। 'कल्पना', 'फिल्म रेखा', 'राधिका', 'फिल्मांजलि' तथा पाक्षिक पत्रिका 'पालकी' का सम्पादन किया। 'हिन्दुस्तान', 'नवभारत टाइम्स', 'ट्रैनिक ट्रिब्यून' एवं 'माधुरी' के नियमित लेखक रहे। आकाशवाणी के नियमित वार्ताकार।'भारतीय फिल्मों की कहानी नामक पुस्तक के लेखक।

तीसरे तथा चौथे अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह की सलाहकार समिति तथा मयूर पुरस्कार का नाम, डिजाइन आदि चयन करने वाली उपसमिति के सदस्य रहे। सन् 1977 में राष्ट्रीय फिल्म जूरी तथा सन् 1978 में लघु फिल्म जूरी के सदस्य रहे। छठे अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह की चयन समिति तथा सेन्ट्रल फिल्म पेनल के सदस्य रहे।

'दैनिक जागरण' के दिल्ली प्रतिनिधि। दैनिक हिन्दुस्तान के फिल्म समीक्षक। 'फिल्म क्रिटिक्स एसोसिएशन' के अध्यक्ष तथा 'अखिल भारतीय हिन्दी फिल्म पत्रकार परिषद्' के संयोजक।

पता : सी - 256, मिंटोरोड कॉम्पलेक्स, नई दिल्ली - 110002

बद्री प्रसाद जोशी

जन्म 1926 खिलचीपुर (म.प्र.)। शिक्षा - बी.कॉम। सन् 1947-48 में डॉ राममनोहर लोहिया के स्टेनो (हिन्दी) रहे। 1948 से 1950 तक प्रजामंडल के सक्रिय कार्यकर्ता रहे। सन् 1948 से 1955 तक सारंगपुर से प्रकाशित साप्ताहिक राजनीतिक पत्रिका 'महाभारत' का संपादन किया। सन् 1955 में "फिल्म ट्रेड गाइड" पत्रिका में संस्थापक सदस्य के रूप में संबद्ध। सन् 1955 से 1974 तक बम्बई से प्रकाशित 'सिनेवाणी' (साप्ताहिक) का संपादन एवं प्रकाशन। 'हिन्दी फिल्मों का सुनहरा सफर' नामक पुस्तक संबंधी अनुसंधान, संपादन एवं लेखन। सन् 1950 में 'अमर सिंह राठौड़ ' फिल्म के प्रोडक्शन डिजाइनर। 1970 में 'दो चेहरे' के सह निर्माता। 1973 में 'किस्सा कुर्सी का' ,1974 में 'क्षितिज', 1982 में 'जय बाबा अमरनाथ' तथा वृत्त चित्र 'चौथा पालना' एवं 'मौसम बदला है ' के निर्माता के रुप में कार्य। फिल्म वितरण के मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र और सी.पी.सी. आई आदि सभी व्यापारिक संगठनों के सदस्य। 'द ग्रेटर फिल्म प्रोडक्शन को - आपरेटिव सोसायटी' के सचिव, 'मध्य प्रदेश मैत्री संघ' के जनरल सेक्रेटरी तथा 'जर्नलिस्ट सोसायटी' के सदस्य।

पता : 5 एफ. नाज सिनेमा कम्पाउण्ड, बम्बई -4

ब्रजभूषण चतुर्वेदी

जन्म 31 अक्टूबर 1937 भानपुर, मन्दसौर (म.प्र.)। शिक्षा - एम.ए. (राजनीतिशास्त्र), बी.एड.। 1951 में सिनेमा संसार में गेटगीपर के रुप में प्रवेश। सहायक मैनेजर एवं मैनेजर पद के बाद सिनेमा से सतत जुड़े हैं। 1554 से सिनेमा पर नियमित लेखन। 'सुचित्रा फिल्म डायरेक्टरी 'का विगत 16 वर्षों से संपादन। अन्तर्राष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय फिल्म समारोहों में विगत 13 वर्षों से नियमित रुप से शामिल। सेन्ट्रल सर्किट सिने एसोसिएशन सहित कई सामाजिक संस्थाओं द्वारा सम्मानित। रामायण एवं महाभारत पर विशेष लेखों के कारण रामानन्द सागर एवं बी.आर. चोपड़ा द्वारा पुरस्कृत। वर्तमान में म.प्र. शासन शिक्षा विभाग में कार्यरत। भविष्य में सुचित्रा फिल्म डायरेक्टरी का विश्वव्यापी अंक निकालने की योजना।

पता - 22 शास्त्री कालोनी, इंदौर - 452006

बी.के. आदर्श

जोधपुर (राजस्थान) में 1924 में जन्मे **बी.के. आदर्श** ने बम्बई आकर फिल्मी गीत लेखक के रुप में अपना कैरियर शुरु किया। इसके बाद उन्होंने फिल्म निर्माण का कार्य शुरु किया तथा अब तक 30 से भी अधिक फीचर फिल्मों का निर्माण कर चुके हैं। 'हरिश्चन्द्र तारामती' जैसी सफल धार्मिक फिल्म एवं यौन शिक्षा पर आधारित 'गुप्त ज्ञान' काफी चर्चित रही। वितरण व्यवसाय एवं फिल्मी पत्रकारिता से जुड़े हैं। इन दिनों फिल्म उद्योग की व्यावसायिक पत्रिका 'ट्रेड गाइड' का सम्पादन कर रहे हैं।

चन्द्रिमा भादुड़ी

चन्द्रिमा भादुड़ी ने सन् 1958 में बम्बई आकर विख्यात हिन्दी मासिक 'नवनीत' में सहसम्पादिका के रूप में साहित्यिक कैरियर शुरू किया। इसके पश्चात हिन्दी एवं बंगाली की पत्र-पत्रिकाओं में लेखन करती रहीं। सन् 1963 में विख्यात फिल्म निर्माता बिमल राय द्वारा **'बन्दिनी'** में महत्वपूर्ण भूमिका दिए जाने के बाद फिल्मी दुनिया में प्रवेश। बिमल रॉय, नितिन बोस, फणि मजुमदार तथा मोहन सहगल जैसे प्रतिष्ठित निर्माताओं के साथ काम किया। गुजराती भाषा की फिल्म 'वाई वीरमगाँव' तथा 'संसार चे चाल्या करे' का निर्माण एवं निर्देशन किया। प्रसिद्ध तारिका रीता भादुड़ी आपकी बिटिया हैं।

पता: 24, नीलकमल सोसायटी, बरोदा - 2,

4-249, जवाहरनगर रोड, 15 गोरेगाँव (पश्चिम)

बम्बई 400 062,

चंदनमल लूंकड़

चन्दनमल लूंकड़ का जन्म 30 के दशक में महाराष्ट्र के जलगाँव के एक धार्मिक एवं लोकप्रिय जैन परिवार में हुआ। वहीं मराठी अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा दीक्षा लेकर व्यवसायिक परिवार के नाते फिल्म उद्योग के वितरण व प्रदर्शन संस्थाओं में जुट गए। सीमाई क्षेत्र में वितरण का कार्य क्षेत्र विस्तृत करने की दृष्टि से इन्दौर को निवास बनाया। फिल्म व्यवसाय में ही नहीं समाज के अन्य क्षेत्र में भी आप लोकप्रिय रहे हैं। वसंत पिक्चर्स का सी.आई क्षेत्र में एक समय वर्चस्व रहा और सिनेमाघरों का समूल संचालन भी किया। सी.सी. सी. ए, के एक वर्ष अध्यक्ष रहे

दर्शन लाड़

जन्म 11 अक्टूबर 1926, इन्दौर (म.प्र.)। शिक्षा बी.ए, साहित्य रत्न,। लेखन तथा फिल्म क्षेत्र में कार्यरत,। सन् 1948 से 1959 तक पटकथा, संवाद लेखक एवं सहायक निर्देशक के रूप में कार्यरत रहे। 'संगीत सम्राट तानसेन' का लेखन एवं निर्माण व्यवस्था का कार्य किया। सन् 1962 से फिल्म

निर्माण व्यवस्थापक के रुप में 'देवकन्या' 'बहूबेगम', 'चेतना' आदि फिल्मों से जुड़े। दूरदर्शन धारावाहिकों में पटकथा लेखन सन् 1985 से कर रहे हैं। गुजराती के दस उपन्यासों का हिन्दी अनुवाद। एक फिल्म 'दूर - दूर पास - पास' जर्मनी में निर्मित हुई। विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में स्वतन्त्र साहित्य लेखन। पता - 105 सुन्दर नगर कालोनी बम्बई 400098.

दिनकर चौधरी

लखनऊ विश्वविद्यालय से स्नातक एवं विधि की डिग्री प्राप्त करने के बाद फिल्म एण्ड टेलीविजन इन्स्टीट्यूट पूना से पटकथा लेखन एवं निर्देशन में डिप्लोमा। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के कई वृत्तचित्रों का निर्माण। हिन्दी फीचर फिल्म 'आकांक्षा' का निर्माण एवं निर्देशन। वृत्तचित्र 'मैथिली शरण गुप्त' को पुरस्कार मिला। इण्डियन फिल्म डाइरेक्टर्स एसोसिएशन के उपाध्यक्ष,। एकेडमी ऑफ सिनेमा एण्ड टेलीविजन आर्ट्स' के संचालक। फिल्म मेकर्स कम्बाइन की कार्यकारिणी के सदस्य।

धीरेन्द्र कुमार परमार

जन्म 17 सितम्बर 1953, उज्जैन। शिक्षा एम.ए. राजनीतिशास्त्र तथा पी.एच.डी. के लिए शोध कार्य जारी। नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा से सन् 1978 में डिप्लोमा प्राप्त एवं बाद में फिल्म इन्स्टीट्यूट पूना में प्रशिक्षित। गोविन्द निहलानी की **'तमस'** एवं अनिल चौधरी के **'कबीर'** नामक दूरदर्शन धारावाहिकों में अभिनय। दूरदर्शन पर प्रसारित धारावाहिक 'जग हँसे खुद रोए' का लेखन, निर्देशन एवं निर्माण। रंगमंच के 25 नाटकों का निर्देशन। नाट्य लेखन के लिए 1987 एवं 1989 में आल इण्डिया रेडियो अवार्ड से सम्मानित। म.प्र. नाटक लोककला अकादमी उज्जैन, क्षिप्रा फिल्म्स उज्जैन, बांगर बाल भवन उज्जैन के संचालक पद पर आसीन।

पता - कामायनी, 26 गीता नगर, बुधवारिया, उज्जैन.

देवेन्द्र खण्डेलवाल

मध्यप्रदेश में जन्म। हायर सेकेण्डरी तक की शिक्षा दुर्ग में पूरी करने के बाद रतलाम से विज्ञान विषय में स्नातक की उपाधि प्राप्त की। फिर शिमला जाकर एम.बी.ए. पाठ्यक्रम पूरा किया। इसके पश्चात फिल्मों में लेखक, निर्मात, अभिनेता एवं निर्देशक के रूप में कार्यरत। अब तक दो सौ से अधिक लघु एवं विज्ञापन फिल्मों का निर्माण जिनमें से कुछ जापान, दुबई एवं इंग्लैण्ड में प्रदर्शनार्थ निर्मित अभिनेता के रूप में पन्द्रह से भी अधिक अभिनेता के रुप में पन्द्रह से भी अधिक हिन्दी एवं प्रादेशिक भाषा की फिल्मों में महत्वपूर्ण भूमिका । मध्यप्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में फीचर फिल्म 'मौन की सजा' का निर्माण एवं निर्देशन जिसमें अशोक कुमार अनिता राज एवं दारासिंह की महत्वपूर्ण भूमिका है। दूरदर्शन पर प्रसारित हास्य धारावाहिक 'भीम भवानी' का निर्देशन। वीडियो फिल्मों एवं वीडियो पत्रिका का निर्देशन।

पता : जी 108, रेडियम अपार्टमेंट हाय वे गोरेगाँव (पुणे) बम्बई 400 063

फिरोज रंगूनवाला

फिरोज रंगूनवाला लगभग दस वर्षों तक बसंत स्टुडियोज, वाडिया बन्धुओं के साथ फिल्म निर्देशन, आलेखन और संपादन का कार्य करते रहे। उन्हें फिल्म-निर्माता के विभिन्न विभागों का सम्पूर्ण व्यावहारिक ज्ञान था। उन्होंने सुप्रसिद्ध साप्ताहिक 'स्क्रीन' के लिए तकनीकी और विश्लेषणात्मक लेख लिखे। फिर वे भारतीय और विश्व सिनेमा पर व्यापक रूप से लिखते रहे। आगे चलकर वे 'स्क्रीन' में लगभग आठ वर्षों तक सहायक संपादक रहे और संपादकीय लेख तथा सिनेमा और उसके इतिहास विषयक लेख लिखते रहे। उन्होंने संडे एक्सप्रेस मैगजीन, इलस्ट्रेटेड वीकली, धर्मयुग, फिल्म फेयर, माधुरी, स्टार एण्ड स्टाइल, स्क्रीन आदि पत्रिकाओं में फ्री लान्स लेखन किया। लगभग आठ भारतीय भाषाओं में उनके लेखों का अनुवाद हुआ है। उनकी प्रकाशित पुस्तकें है - इंडियन फिल्म इन्डेक्स, इंडियन फिल्मोग्राफी, फालके, गुरूदत्त भारतीय सिनेमा के 75 वर्ष, भारतीय चलचित्र का इतिहास, मुकेश, सत्यजीत राय पिक्टोरियल हिस्ट्री ऑफ इंडियन सिनेमा, इंडियन सिनेमा: पास्ट एण्ड प्रेजेन्ट, किनो इंडिया (रूसी भाषा में), ओम स्वाहा (फिल्म आलेख), दि सिनेमा मिस्टीक: बिमल राय।

उन्होंने मूक फिल्मों और बोलती फिल्मों की दुर्लभ सहायक सामग्री के विशाल भंडार का संग्रहण किया है। जिनमें स्टील पोस्टर, पुस्तिकाएँ आदि शामिल है। उनकी इस सामग्री की चलती-फिरती प्रदर्शनी भारत के तेरह शहरों में हुई है।

उन्होंने फिल्मों की विवेचना और मीडिया के प्रभाव पर भाषण दिए और सेमिनारों में निबंध पढ़े है। नेशनलिज्म इन इंडियन सिनेमा, सेवन्टी फाइव इयर्स ऑफ इंडियन सिनेमा और स्विस टी वी के लिए भारत में फिल्माई गई एक रंगीन फिल्म का सह-निर्देशन किया हैं।

आप सेन्सर बोर्ड, एन.एफ.डी.सी. की आलेख सलाहकार समिति, राष्ट्रीय फिल्म अवार्ड समिति, फिल्म सलाहकार बोर्ड, फिल्म क्रय समिति तथा अन्तर्राष्ट्रीय फिल्मोत्सव समिति के सदस्य भी रहे हैं। उन्हें उनकी हिन्दी पुस्तक के लिए शिक्षा तथा समाज कल्याण मंत्रालय का पुरस्कार, पत्रकारिता के लिए फिल्म इन्स्टीट्यूट ऑफ इंडिया का पुरस्कार प्राप्त हुआ और वेनिस अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह में पुस्तक 'इंडियन फिल्मोग्राफी, के लिए डिप्लोमा प्रदान किया गया। वे फिल्म जर्नलिस्टस सोसाइटी के संस्थापक सचिव और पिक्चर पोस्ट नामक पत्रिका के संपादक भी रहे हैं

पता: एम 4, दलाल स्ट्रीट, लेमिंगटन रोड, बाम्बे सेंट्रल के सामने, बम्बई - 400008

जी.पी. सिप्पी

हैदराबाद सिन्ध (पाकिस्तान) में 14 सितम्बर 1914 को जन्मे **जी.पी. सिप्पी** ने गाँधीजी के सविनय अवज्ञा आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया तथा इस कारण 1929 में उन्हें एक वर्ष का कारावास भी भोगना पड़ा। कानून की शिक्षा प्राप्त कर वकील के रूप में कार्य शुरू किया। विभाजन के कारण बम्बई आना पड़ा तथा 1949 से फिल्म निर्माता के रूप में कार्य शुरु। पहली फिल्म **"सजा"** थी। इसके बाद 'बंधन', 'मेरे सनम', 'अन्दाज', 'सीता और गीता' 'शोले' जैसी मेगा हिट फिल्मों का निर्माण। पहली गेवाकलर फिल्म 'शहँशाह' बनाकर भारत में रंगीन फिल्मों का युग प्रारंभ किया तथा शोले का निर्माण 70 एम.एम. में किया तथा स्टीरियोफोनिक ध्वनि का उपयोग भी पहली बार इस फिल्म में ही हुआ। अब तक 40 फिल्मों एवं दूरदर्शन धारावाहिक 'बुनियाद' का निर्माण। फिल्म फेडरेशन ऑफ इण्डिया के अध्यक्ष के रूप में लगातार तीन बार चुने गए। आल इण्डिया फिल्म प्रोड्यूसर्स काउंसिल के अध्यक्ष के रूप में सात बार निर्वाचित हुए। केबल टी.वी. तथा वीडियो के विरुद्ध लगातार संघर्षरत। 'सेन्ट्रल बोर्ड आफ फिल्म सार्टिफिकेट,

में लम्बे समय तक सेवाएं दी हैं।

गौरीशंकर गुप्त

गौरीशंकर गुप्त ने फिल्म व्यवसाय में अपने कैरियर की शुरूआत मेसर्स मून्ही एक्सचेन्ज महू के साथ 1949 में की, जो कि सी.आई. सर्किट में फिल्म वितरण का पहला कार्यालय था। इंदौर में मैसर्स एव्हरग्रीन पिक्चर्स, बंबई का केवल एक शाखा कार्यालय था।

सन् 1949 में उन्होंने ने ओरियण्ट फिल्म्स और प्रभा पिक्चर्स जैसे प्रतिष्ठित वितरण कार्यालयों के प्रबंधक के रूप में कार्य किया और वहीं शक्ति पिक्चर्स सर्किट प्रायवेट लि. में कार्य करने का सम्मान प्राप्त हुआ, जो कि उस समय का सबसे बड़ा कार्यालय था। उसके पश्चात् उन्होंने 'रतन' फिल्म प्राप्त कर अपना स्वयं का वितरण कार्यालय आरम्भ किया जिसका नाम था रतन पिक्चर्स। वर्तमान में वे मेसर्स सरिता फिल्म्ज, इंदौर में कार्य कर रहे हैं। उन्होंने फिल्म व्यवसाय में 42 वर्ष पूरे कर लिए हैं।

उन्होंने सी.सी.सी.ए. के मुखपत्र सी.सी.सी.ए. समाचार (हिन्दी) में तीन वर्षों तक संपादक के रूप में कार्य किया। वे 1975 से 1978 तक लगातार 3 वर्षों तक इसकी कार्यकारी समिति के सदस्य रहे। वे सिने क्लब इंदौर के संस्थापक सदस्य हैं और आज भी सक्रिय हैं।

गुलशन राय

जन्म 2 मार्च 1924, लाहौर। पंजाब विश्वविद्यालय से बी.ए. की उपाधि प्राप्त करने के बाद सन् 1947 में बम्बई आकर फिल्म व्यवसाय में भाग्य आजमाना शुरू किया। वितरक के रूप में पहली उपलब्धि 1951 में फिल्म **'अनहोनी'** के विश्व अधिकार प्राप्त करने से हुई। इसके बाद अब तक बम्बई क्षेत्र में 200 से अधिक फिल्मों का वितरण किया जिनमें से 30 ने सिल्वर जुबली मनाई है।

त्रिमूर्ति फिल्म्स प्राईवेट लिमिटेड के बैनर तले **'जॉनी मेरा नाम'** का निर्माण जो सुपरहिट रही तथा बाद में 'जोशीला', 'दीवार', 'त्रिशूल', 'विधाता', 'त्रिदेव' जैसी हिट फिल्मों का निर्माण। बंगाल, पंजाब, दिल्ली एवं उत्तरप्रदेश फिल्म वितरण इकाइयों की स्थापना। नेशनल फिल्म डेवलपमेंट कार्पोरेशन के संचालक के रूप में लगभग चार चार वर्षों तक कार्य। इण्डियन मोशन पिक्चर्स प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन के वाइस चेयरमेन भी रहे हैं।

पता : 18 सोन मार्ग, नेपियन रोड, बम्बई 400 006

गौरीशंकर शर्मा

जन्म - सन् 1945 महुडिया, नीमच (म.प्र.)। शिक्षा - एम. ए (राजनीतिशास्त्र)। संगीत के प्रति गहरी रुचि होने से बम्बई पहुँचकर सर्वप्रथम फिल्म अभिनेता सचिन के साथ 'प्यारी ममता' नामक फिल्म में कार्य किया। 'कोबरा' और 'आओ प्यार करें' जैसी फिल्मों में आवाज देकर पाश्र्व गायकी के क्षेत्र में कार्य किया। भोजपुरी फिल्म 'शहनाई बाजे, तोहार अंगना' में दिलराज कौर के साथ गायन। लखखु भाई पाठक की फिल्म 'आकांक्षा' में सोलो तथा पुष्पा पागधरे, और मोहन शर्मा एवं फिल्म 'अमरलता' में श्रीमती सुमन चंद के साथ गायन। इनरिको रिकार्डिंग कम्पनी द्वारा चार भजनों का ई. पी. रिकार्ड तथा विश्वास प्रोडक्शन द्वारा गीत-गजलों का कैसेट 'सायबाँ' के नाम से बनाया। वर्तमान में निर्माता राधा जैन व रशीद कुरेशी की शिवकृपा के बैनर तले बन रही फिल्म 'मासूम मोहब्बत' में संगीतकार।

पता : 19 गाँधी नगर, नीमच (म.प्र.)

हेमन्त पाल

जन्म 26 जून 1961, धार (म.प्र.)। शिक्षा बी.एससी.। सन् 1984 से पत्रकारिता में संलग्न। 1984 से 1986 तक नवभारत (इंदौर)। 1987 से 1989 तक नई दुनिया (इंदौर) तथा 1989 से फरवरी 1991 तक जनसत्ता (बम्बई) में उप संपादक। सरस्वती न्यूज एंड पब्लिकेशंस द्वारा भोपाल से प्रकाशित होने जा रहे हिन्दी दैनिक " मध्यभारत" में मुख्य उप संपादक। नवभारत टाइम्स, जनसत्ता, सण्डे आब्जर्वर, नई दुनिया (इंदौर), धर्मयुग आदि कई समाचार पत्र- पत्रिकाओं में फिल्म तथा अन्य विषयों पर लेखन। सात वृत्त चित्रों की पटकथा का लेखन। वर्तमान में दो दूरदर्शन धारावाहिकों की पटकथा लेखन में कार्यरत। भावी योजना फिल्म संगीतकारों पर एक पुस्तक लिखने की है।

पता : 40, श्री कृष्ण नगर, एल.आई.जी. के पास धार (म.प्र.) 454 001

जगदीश कुमार निर्मल

जन्म 31 अक्टूबर 1936, उज्जैन (म.प्र.)। विक्रम विश्वविद्यालय से एम.ए. करने के उपरान्त फिल्म व टेलीविजन इन्स्टीट्यूट, पूना से पटकथा व निर्देशक में डिप्लोमा तथा यूनेस्को रिफ्रेशन कोर्स इन स्क्रिप्ट राइटिंग ऑफ शार्ट फिल्म। उपन्यास, कविता, कहानी एवं पटकथाएं लेखन का शौक। अब तक चार ग्रन्थ प्रकाशित। 1967 से 1987 तक साठ वृत्त चित्रों का निर्माण व निर्देशन। वर्ष 1975 में उत्तर प्रदेश के फिल्म पत्रकार संघ द्वारा वृत्त चित्र के निर्देशक के रूप में पुरस्कृत। दो मराठी एवं हिन्दी की फिल्में एवं दूरदर्शन के धारावाहिकों के निर्माण में व्यस्त। सन् 1967 से 1987 तक महाराष्ट्र के जनसम्पर्क विभाग में उपसंचालक रहे एवं 1987 से 1989 तक यूनिसेफ के कार्यालय में कम्युनिकेशन डेवलपमेंट ऑफिसर के रूप में कार्यरत। हम होंगे कामयाब (हिंदी) तथा बडाल ज्योत (मराठी) कथा चित्रों के निर्माण में व्यस्त।

पता: 304, अम्बादर्शन, महादेव भाई देसाई रोड, बोरीवली (पूर्व)
बम्बई - 400066

जौहर लाल झाँझरिया

जौहर लाल झाँझरिया का जन्म 15 फरवरी 1938 को उज्जैन में हुआ था उन्होंने 1950 में अल्का सिनेमा इंदौर में फिल्मे राजमुकुट के उद्घाटन के साथ फिल्म प्रदर्शन व्यवसाय में प्रवेश किया।

श्री झाँझरिया कांग्रेस में सक्रिय सदस्य है और राष्ट्र के प्रति उनका त्याग सर्वविदित है। 1942 में उन्हें लगभग सोलह माह जेल में रहना पड़ा। वे अजमेर-मारवाड़ कांग्रेस के महा सचिव रहे। म.प्र. कांग्रेस कमेटी के कोषाध्यक्ष रहें। स्वतंत्रता संग्राम सेनानी संघ के अध्यक्ष हैं। अपनी राजनीतिक गतितिविधियों के बावजूद उन्होंने फिल्म व्यवसाय के लिए समय निकाला और जब इंदौर में सी.सी.सी.ए. की स्थापना हुई, तो आरंभिक अवस्था में वे उसकी कार्यकारी समिति के दो वर्षों तक सदस्य निर्वाचित किए गए। वे सी.सी.सी.ए के चेरिटेबल फाउंडेशन को एक न्यासी भी थे।

उन्होंने 1953 में जे.के. फिल्म्स प्रायवेट लिमिटेड नामक एक प्रतिष्ठान की स्थापना भी की है। इंदौर में अलका तथा प्रेमसुख नामक उनके दो सिनेमाघर

जगदीश बनर्जी

कलकत्ता विश्वविद्यालय के स्नातक की उपाधि प्राप्त करने के बाद विख्यात निर्देशक बिमल राय के साथ रहकर प्रशिक्षण प्राप्त किया। 'सुजाता', 'परख','उसने कहा था', आदि फिल्मों में सहायक निर्देशक एवं सहायक छायाकार के रूप में कार्य किया। फिल्म्स डिवीजन के एडहॉक डाइरेक्टर के रूप में कई वृत्तचित्रों का निर्माण किया। पर्यटन को प्रोत्साहित करने वाले वृत्त चित्र 'देहली द सिटी ब्यूटीफुल' के निर्माण हेतु सर्वश्रेष्ठ निर्माता निर्देशक का अवार्ड प्राप्त। हिन्दी फीचर फिल्म 'असंभव' का निर्देशन किया जिसके मुख्य कलाकार सईद जाफरी, रोहिणी हटंगडी, तथा रामेश्वरी हैं। दूरदर्शन धारावाहिक 'अलग' का निर्माण एवं निर्देशन। चिल्ड्रन फिल्म्स सोसायटी में चीफ एक्जीक्यूटिव ऑफिसर के रूप में कुछ समय तक कार्य। इण्डियन फिल्म डाइरेक्टर्स एसोसिएशन, इण्डिन फिल्म राइटर्स एसोसिएशन, इण्डियन डाक्यूमेन्ट्री प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन आदि संस्थाओं के सक्रिय सदस्य।

पता: फ्लेट 2, भारेश्वर टेरेस, 85, डॉ. ए बेसेन्ट रोड,
वर्ली, बम्बई - 400 018

जे. ओमप्रकाश

जन्म 24 जनवरी 1926। शिक्षा- मेट्रिक्युलेशन। सन् 1945 से लाहौर में फिल्म वितरण वयवसाय शुरू किया। विभाजन के बाद सन् 1948 में बम्बई आकर फिल्म उद्योग में विभिन्न प्रकार के कार्य किए जिनमें पत्रकारिता भी शामिल है। सन् 1959 में फिल्म निर्माण प्रतिष्ठान 'फिल्मयुग' की स्थापना की। इस बैनर तले 18 फिल्मों का निर्माण किया। लगभग 11 फिल्मों का निर्देशन भी किया। पूना के फिल्म संस्थान में मानद व्याख्याता एवं फिल्मोत्सव संचालनालय की सलाहकार समिति के सदस्य रहे। इसी प्रकार 'इण्डियन मोशन पिक्चर्स प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन' तथा 'फिल्म प्रोड्यूसर्स ऑफ इण्डियन लिमिटेड' के अध्यक्ष रहे। वर्तमान में 'आल इण्डिया लिमिटेड' के अध्यक्ष रहे। वर्तमान में 'आल इण्डिया फिल्म प्रोड्यूसर्स कौंसिल के अध्यक्ष एवं फिल्म मेकर्स कम्बाइन के को चेयरमेन के रूप में कार्यरत। उल्लेखनीय फिल्में - 'आन मिलो सजना', 'आँधी','अपनापन', 'आस का पंछी' आदि।

पता : शिव प्रतिमा, नार्थ साऊथ रोड नं. 12, जे.वी. पी.डी. स्क्रीन बम्बई-49

जे.पी. तिवारी

मध्यप्रदेश के दमोह नगर से बम्बई आकर फिल्म व्यवसाय से जुड़े। भारतीय संस्कारों पर आधारित फिल्मों का निर्माण करने वाले निर्माताओं को प्रोत्साहन देने हेतु पृथक स्टूडियो का निर्माण। इंपा के पूर्व अध्यक्ष। वेस्टर्न इण्डिया फिल्म प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन की स्थापना। छोटे निर्माताओं को सहयोग देने हेतु विभिन्न कल्याणकारी कार्यों में सक्रिय रूचि।

करूणाकर पाठक

जन्म जबलपुर म.प्र.। शिक्षा एम.ए. (अर्थशास्त्र)। बचपन से ही कविता लिखने व पढ़ने के शौकीन। कविता के साथ रंगमंच से गहरा संबंध। 15-20 नाटकों का मंचन, अभिनय व निर्देशन। मोहन राकेश कृत 'आधे अधूरे' नाटक में एक साथ चार पात्रों एवं शंकर शेष के 'फंदी' में एक साथ नौ चरित्रांक अभिनय। बम्बई के पृथ्वी थियेटर में कई नाटक मंचित। टी.वी. सीरियल रजन, दर्पण तथा महाभारत में अभिनय। कई प्रसिद्ध फिल्में 'औरत', 'कसम भवानी की', 'डाकू हसीना', 'दावत', 'जय बाबा अमरनाथ की','कसम काली की' है। वर्तमान पाठक फिल्म्स के बैनर तले स्वयं की फिल्म 'फाँसी' की शुरूआत करने जा रहे हैं। फिल्मों के लिए कथा-पटकथा तथा संवाद लेखन जारी। फिल्म्स के अलावा सरकार द्वारा मनोनीत स्पेशल एक्जीक्यूटिव मजिस्ट्रेट।

पता : राजमयूर, 19वाँ रास्ता, रवार पश्चिम बम्बई 400 052

कृष्णकुमार पुरोहित

मध्यप्रदेश में जबलपुर में जन्म। बी.कॉम तक शिक्षा प्राप्त करने के बाद राज्य सरकार के विक्रयकर विभाग में सेवारत। गीत लेखक के रूप में साहित्यिक जीवन का प्रारम्भ तथा खेल पत्रकार के रूप में प्रसिद्धि। आदर्श आर्ट्स की पारिवारिक फिल्म 'आज का ये घर' में चरित्र अभिनेता की भूमिका एवं अन्य फिल्मों में चरित्र अभिनेता के रूप में कार्य मालवी बोली की प्रथम रंगीन फिल्म भादवा माता (1983) में नायक की भूमिका। अन्तर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम के अन्तर्गत सन् 1972 में विदेश यात्रा इन्दौर में हुए सांप्रदायिक उपद्रव के दौरान (1984) में बारह लोगों की प्राण रक्षा करने के कारण राष्ट्रपति द्वारा जीवन रक्षा पदक से सम्मानित। सिने आर्टिस्ट एसोसिएशन बम्बई के सदस्य।

पता - 42, ग्रीन लैण्ड, स्नेह नगर, इंदौर 452 001 (म.प्र.)

कृष्ण मोहन श्रीवास्तव

जन्म 1 जुलाई 1950। शिक्षा इण्टरमीडिएट। दिल्ली से प्रकाशित 'हिन्दुस्तान' में तीन वर्ष का प्रशिक्षण लेकर 1972 में पहली साप्ताहिक फिल्म पत्रिका **फिल्म परिचय** का प्रकाशन। 1980 में टी.एम.पी. न्यूज एण्ड फीचर्स सर्विसेस प्रारम्भ। देश के लगभग सभी पत्र-पत्रिकाओं में फिल्म पर लेखन। फिल्मी मासिक 'फिल्मोनिया टी-सीरिज' के उपसंपादक तथा 'आपका अपना सिनेमा' साप्ताहिक के सम्पादक।

पता : पो.बा. न. 16721, खार, बम्बई - 400 052

के.एन.टी. शास्त्री

के.एन.टी. शास्त्री एक सुप्रसिद्ध पत्रकार है और वे राष्ट्रीय फिल्म संग्रहालय से कई वर्षों से सम्बद्ध हैं। राष्ट्रीय फिल्म संग्रहालय की ओर से उन्होंने एल.वी.प्रसाद, बी. नागी रेड्डी तथा पी. भानुमति पर सूचना मूलक पुस्तकें भी तैयार की हैं। ब्रिटिश पुस्तकालय, लन्दन ने इन्हें भारतीय सिनेमा पर प्रकाशित विश्व कोश के लिए तेलुगु सिनेमा संकलन का कार्य सौपा है। के.एन.टी. शास्त्री पुरस्कार विजेता फिल्म दासी में शोधकर्ता के रूप में एवं गैर-कथाचित्र **मा उरू** में पटकथा सहायक के रूप में सम्बद्ध रहे हैं। आदिवारम् आन्ध्र ज्योति में चलन चित्रम् के नाम से इनके लेख बहुत लोकप्रिय हैं। इन्होंने तेलुगु सिनेमा पर निबंध संग्रह का सम्पादन भी किया है। के.एन.टी. शास्त्री आजकल डैक्कन क्रोनीकल में सहायक सम्पादक के रूप में कार्य कर रहे हैं।

मनमोहन सरल

जन्म दिसम्बर 1934 नजीराबाद उत्तर प्रदेश। प्रारंभिक शिक्षा मेरठ में एम.ए. (हिन्दी) एल एल.बी. करने के उपरान्त 1958 से 1961 तक गाजियाबाद (यू.पी.) में महाविद्यालीयन व्याख्याता। 1 जनवरी

1961 से जून 1989 तक हिन्दी साप्ताहिक धर्मयुग में वरिष्ठ सहायक सम्पादक के रूप में कार्य किया। वर्तमान में 'टाइम्स ऑफ इण्डिया के मासिक प्रकाशन फिल्म फेयर के हिन्दी संस्करण के सम्पादक।

हिन्दी एवं अंग्रेजी में लेखन। कहानी लेखन मुख्य विद्या। प्रथम प्रकाशनसन् 1949 तथा अब तक 19 पुस्तकें प्रकाशित जिनमें कुछ संग्रह सम्पादित किए हुए हैं। भारत की सभी प्रमुख पत्रिकाओं से कहानी, कविताएं एवं एकांकी प्रकाशित हुए हैं। कई कृतियों का अनेक विदेशी भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। उत्तर प्रदेश सरकार एवं अन्य कई संस्थाओं द्वारा पुरस्कृत एवं सम्मानित।

अनेक वृत्त चित्र, वीडियो एवं टी.वी. नाटकों की पटकथाओं का लेखन तथा 1991 में मद्रास में हुए अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह के लघु एवं वृत्त चित्रों के चयन हेतु निर्मित जमिन में जूरी। कई समितियों में सदस्य तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर लेखक के रूप में मान्यता प्राप्त ।

पता: 76, पत्रकार मधुसूदन केलकर रोड, बान्द्रा (ईस्ट), बम्बई 400 051

मनमोहन चड्ढा

मनमोहन चड्ढा ने 1973 में अर्थशास्त्र में एम. ए किया। 1976 में उन्होंने भारतीय फिल्म तथा टेलीविजन संस्थान से पटकथा लेखन का डिप्लोमा विशेष योग्यता के साथ प्राप्त किया। 1977 से 1984 तक वे संस्थान में पटकथा लेखन के प्राध्यापक के रूप में काम करते रहे। वे दूरदर्शन पर दिखाए गये लोकप्रिय कार्यक्रम 'हम लोग' में कुमार वासुदेव के सहायक निर्देशक थे। कुमार वासुदेव के निर्देशन में बने एक और दूरदर्शन धारावाहिक अजूबे में वे मुख्य सहायक निर्देशक थे। हिन्दी की अनेक प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में उनकी कहानियाँ प्रकाशित हुई हैं। फिल्मों के बारे में भी उन्होंने काफी लिखा है। उनकी पुस्तक 'हिन्दी सिनेमा का इतिहास' को वर्ष 1991 में सर्वोत्तम सिनेमा पुस्तक का पुरस्कार मिला है। इसके पहले 1988 में आप हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ लेखक-समीक्षक के रूप में राष्ट्रपति द्वारा पुरस्कृत हो चुके हैं।

मनमोहन देसाई

जन्म 26 फरवरी 1937। पिता कीकू भाई देसाई पेरामाउण्ट स्टुडियो के स्वामी एवं अपने समय के प्रतिष्ठित फिल्म निर्माता एवं निर्देशक। बम्बई के सेन्ट जेवियर कालेज में इन्टर तक शिक्षा प्राप्त करने के बाद सन् 1956 से विख्यात फिल्म निर्देशक बाबू भाई मिस्त्री के सहायक के रूप में फिल्म उद्योग में प्रवेश। सन् 1959 में **'छलिया'** का स्वतंत्र रूप से निर्देशन। इसके पश्चात कई सफल फिल्मों का निर्देशन। सन् 1977 में निर्माता के रूप में 'अमर अकबर एंथोनी' की प्रस्तुति। इसी वर्ष 'परवरिश', धर्मवीर, एवं चाचा भतीजा, प्रदर्शित। सभी फिल्में हिट। बड़े बजट की सुंदर सितारों वाली फिल्में बनाने के लिए विख्यात। फिल्म उद्योग की कई संस्थाओं के पदाधिकारी।

मनोहर आशी

सन् 1950 में भोपाल में जन्में **मनोहर आशी** ने हिन्दी साहित्य में एम.ए. किया है। अभिनय एवं लेखन के प्रति बचपन से ही लगाव। नारी समस्याओं पर कई नृत्य नाटिकाओं का लेखन जिन्हें मंच पर विख्यात नर्तकी श्रीमती मल्लिका साराभाई द्वारा प्रस्तुत किया गया। पीटर ब्रुक महाभारत तथा भरत मुनि के नाट्य शास्त्र पर लिखित पुस्तकें प्रकाशित। प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में विभिन्न विषयों पर शोध पत्र-प्रकाशित। विभिन्न वृत्तचित्रों तथा लघु फिल्मों की पटकथा लेखन एवं निर्माण से सम्बद्ध। दूरदर्शन के लिए ध्वनि प्रदूषण पर कार्यक्रम **कर्कश** का निर्माण। विभिन्न नाटकों में अभिनय एवं अब तक 18 बाल महोत्सव का आयोजन। बाल पत्रिका 'समझ झरोखा' का सम्पादन। ट्रायबल आर्ट एण्ड क्राफ्ट ऑव म.प्र. रंगसंधान तथा दिगंत जैसी पुस्तक एवं पत्रिकाओं का सम्पादन। आपने 'सूरज के अंश' नामक वृत्त चित्र का निर्माण-निर्देशन तथा पटकथा लेखन किया है।

पता: 64, कोठारी काम्प्लेक्स, शिवाजी नगर भोपाल - 462 016

मधुसूदन

लेखक एवं निर्देशक के रूप में फिल्मोद्योग में प्रवेश। 'पाकीजा' एवं 'दिल अपना प्रीत पराई' जैसी फिल्मों के लेखन से सम्बद्ध रहे। निर्देशक के रूप में 'अनुराग', 'मेरा मुन्ना' उल्लेखनीय। वीडियो फिल्म 'प्रस्ताव' का भी निर्देशन। 'इण्डियन फिल्म डाइरेक्टर्स एसोसिएशन एवं फिल्म राइटर्स एसोसिएशन के पूर्व महासचिव। द फेडरेशन आफ वेस्टर्न इण्डिया सिने एम्पलाइज के पूर्व अध्यक्ष। वर्तमान में फिल्म फोरम के ट्रस्टी। ऑल इण्डिय फिल्म एम्प्लाइज कानफेडरेशन के महासचिव। मधुसूदन वामन मुकादम

बम्बई विश्वविद्यालय से स्नातक की उपाधि प्राप्त करने के बाद बम्बई के ही फज़लभाई टेक्नीकल संस्थान से 'सिनेमाटोग्राफी' का दो वर्षीय डिप्लोमा पाठ्यक्रम प्रथम स्थान प्राप्त कर उत्तीर्ण किया। बम्बई टॉकीज के जर्मन छायाकार एवं बाद में नितिन बोस के साथ रह कर प्रशिक्षण प्राप्त किया। अब तक 25 से भी अधिक फीचर फिल्मों का छायांकन जिनमें 'दायरा' 'वचन', 'मुगले आजम' प्रमुख हैं। यूनाइटेड स्टेट इन्फार्मेशन सर्विस के न्यूजरील कैमरामेन के रुप में कार्य करते हुए महारानी एलिजाबेथ, राष्ट्रपति केनेडी एवं निक्सन की भारत यात्राओं का कवरेज किया। श्याम बेनेगल जैसे प्रतिष्ठित निर्माताओं के साथ वृत्तचित्र निर्माण में योगदान। फिल्म्स डिवीजन, यूनिट ट्रस्ट ऑफ इण्डिया आदि प्रतिष्ठानों के लिए स्वतंत्र रुप से फिल्म निर्माण। कई विज्ञापन फिल्मों का निर्माण। कई बार विदेश यात्रा। मराठी में तीन फीचर फिल्मों का निर्माण।

पता : 12, दीपाली स्ट्रीट, सिरिल रोड, बान्द्रा, बम्बई 400 050।

मिर्जा इस्माईल बेग

जन्म 1 मई 1930, धार (म.प्र.)। शिक्षा जी.डी. आर्ट (सरजे. जे. स्कूल ऑफ आर्ट्स, बम्बई) बी.ए., बी.एड., इन्टरनेशनल रॉक आर्ट कमेटी पेरिस (यूनेस्को) के सदस्य। परमारकालीन मूर्तियों का विशेष अध्ययन। देश - विदेश में कलाकृतियों का संग्रह। कई एकल प्रदर्शनियां एवं पारितोषिक। शैलचित्रों एवं पश्चिमी निमाड़ के भीलों पर शोध पत्र। आकाशवाणी से 82 नाटक तथा 381 रूपकों का प्रसारण। 15 शैक्षणिक विषयों पर मूल कथा तथा पटकथा लेखन। सिने छायाकार रवि वर्मा के साथ काम किया। फिल्म विकास निगम म.प्र. द्वारा आयोजित फिल्म रसास्वादन' पाठ्यक्रम में सक्रिय योगदान। ओंकारेश्वर एवं धार की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर फीचर फिल्म के निर्माण हेतु पटकथा का लेखन। पता - 28/3 अहिल्या पल्टन, इन्दौर।

चिकेत एवं जयू पटवर्धन

चिकेत एवं जयू की जोड़ी ने बड़ौदा विश्वविद्यालय आर्किटेक्चर में डिग्री ली तथा 1972 से दोनों पूना में इमारतों की डिजाइन बनाने का व्यवसाय ुरु किया 1977 में बनी 'घासीराम कोतवाल' मराठी) कन्नड़ ओण्डा नोण्डु कल्ला डल्ली 'मोहन ोशी हाजिर हो' कैनेडियन फिल्म 'बाय बाय ब्लूज' े लिए दोनों ने आर्ट डायरेक्शन तथा कास्टयुम डजाइन किया। कला निर्देशक के रुप में 'उत्सव' दोनों का कार्य प्रशंसनीय रहा। इस फिल्म में कला निर्देशन के लिए दोनों को 1985 का सर्वोत्तम कला निर्देशक पुरस्कार मिला। निर्देशक के रुप उनकी पहली मराठी फिल्म '22 जून 1897', । यह फिल्म काफी प्रशंसित हुई। फिल्म को राष्ट्रीय एकता पर सर्वोत्तम फिल्म घोषित किया गया। इस फिल्म को कई अवार्ड मिले। अगली हिन्दी फिल्म अनन्त यात्रा' को 1986 की सर्वश्रेष्ठ हिन्दी फिल्म का अवार्ड मिला है। फिल्म को ताशकन्द एवं हवाई के फिल्मोत्सवों में दिखाया गया है।

एन.बी.कामत

जन्म 30 नवम्बर 1920 राजापुर (महाराष्ट्र)। बम्बई में शिक्षा पूर्ण करने के उपरान्त फिल्म निर्माण एवं वितरण के क्षेत्र में प्रवेश। पिछले चार दशकों में कई उत्कृष्ट हिन्दी एवं मराठी फिल्मों का निर्माण जिनमें **दाग** (1952) एवं **'पतिता'** प्रमुख है जिन्हें स्वर्गीय अमिय चक्रवर्ती के साथ मिलकर बनाया था। मराठी के विख्यात लेखक नारायण आप्टे की कहानी पर आधारित फिल्म उमज पडेलतर को 1961 में भारत सरकार ने उत्कृष्टता का प्रमाण पत्र देकर सम्मानित किया। सन् 1978 में **'शक'** (हिन्दी) का निर्माण, जो कई राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय फिल्मोत्सवों में प्रदर्शित एवं सम्मानित हुई। सन् 1978 में बम्बई में **'दृष्टि'** नामक फिल्म सोसायटी की स्थापना। इण्डियन मोशन पिक्चर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स एसोसिएशन, 'बम्बई' के पूर्व उपाध्यक्ष एवं अध्यक्ष, 'फिल्म फेडरेशन ऑफ इण्डिया' के पूर्व अध्यक्ष तथा मराठी चित्रपट निर्माता संघ' के पूर्व अध्यक्ष। 'नेशनल फिल्म आर्काइव पूना' की सलाहकार समिति के सदस्य।

पता : तीसरी मंजिल, विठ्ठल सदन,कांग्रेस हाउस कम्पाउण्ड ,लेमिंग्टन रोड, बम्बई 400 004

एन.एन.सिप्पी

जन्म 27 जून 1931 हैदराबाद (पाकिस्तान)। सन् 1947 में कराची से बम्बई आकर इन्टर तक पढ़ाई। तत्पश्चात् फिल्म वितरण एवं निर्माण में प्रवेश। सन् 1959 में पहली फिल्म 'कातिल' का निर्माण। उसी वर्ष स्वयं की वितरण संस्था 'जनता फिल्म डिस्ट्रीब्यूशन' की स्थापना। अब तक सौ से भी अधिक फिल्में इस प्रतिष्ठान के माध्यम से प्रदर्शित। विभिन्न बेनर्स के लिए 18 फिल्मों का निर्माण 'इण्डियन मोशन पिक्चर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स एसोसिएशन' बम्बई के अध्यक्ष तथा फिल्म फेडरेशन ऑफ इण्डिया', बम्बई के कोषाध्यक्ष। *पता: "मियामी, बी देसाई रोज बम्बई 400 026.*

नीला सत्यनारायण

श्रीमती नीला सत्यनारायण महाराष्ट्र केडर की आई.ए.एस. हैं तथा महाराष्ट्र शासन के अनेक महत्वपूर्ण पदों पर कार्य कर चुकी हैं। वे प्रदेश शासन के समाज कल्याण व सांस्कृतिक कार्य विभाग की सचिव रह चुकी हैं। अपना उत्सव कार्यक्रम की अतिरिक्त महासंचालक के रूप में कार्य कर चुकी हैं। नीला सत्यनारायण की जितनी ख्याति एक प्रशासक के रूप में है उतनी ही एक कवियत्री तथा गीतकार के रुप में भी है। कवियत्री के रूप में उनकी विशेषता यह है कि वे हिन्दी- मराठी और अंग्रेजी इन तीनों भाषाओं में समान रुप से रचना करती हैं। उनके हिन्दी में दो व मराठी में दो काव्य संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। उनकी दो अंग्रेजी कविताएँ अमेरिकन पोइट्री एसोसिएशन यू.एस.ए. द्वारा 'एंथोलॉजी ऑफ पोइट्री' कविता संग्रह में सम्मिलित की गई हैं। उनके हिन्दी काव्य संग्रह असीम को 1980 में भारत सरकार द्वारा पुरस्कृत किया गया है।आप गायिका भी हैं। किराना घराने के उस्ताद उत्तमराव पाटिल व आगरा घराने के उस्ताद स्वर्गीय शिवराम पाटिल के मार्गदर्शन में उन्होंने संगीत साधना की है। उनके द्वारा गाए गीतों पर संगत कैसेट कंपनी द्वारा एक गीत संग्रह कैसेट - "जीवन भर का संगीत" शीर्षक से बना है। नीलाजी स्वयं के गीतों का लेखन और धुनें स्वयं बनाती हैं।फिल्म रंगमंच व सांस्कृतिक विकास महामंडल की प्रबंध संचालक के रुप में वे सम्प्रति कार्य कर रही हैं। फिल्म सिटी के विकास के प्रति वे काफी उत्साहित हैं तथा उसे आधुनिकतम रखना चाहती हैं। वर्ष 1991 में आपके प्रयलों से भारतीय फिल्म विकास निगमों का सम्मेलन बम्बई में हुआ था।

प्रमोद के. गुप्ता

सन् 1972 में दिल्ली से स्नातक होने के बाद फिल्म पत्रकारिता में सक्रिय। **'रंग भूमि'** फिल्म मासिक और **'फिल्म रेखा'** सह - सम्पादक के रूप में सक्रिय हैं। इसके अलावा अपने समय के सुपर स्टार राजेश खन्ना पर एक पुस्तक भी लिखी है। फिल्म नायिकाओं की जीवनी को प्रस्तुत करने वाली पुस्तक 'फिल्मी अप्सराएं' के तीन संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। इसके अलावा प्रमुख दैनिक पत्र और पत्रिकाओं में नियमित लेखन। राजधानी की पंजाबी कला संगम और सिने गोअर्स एसोसिएशन द्वारा सर्वश्रेष्ठ हिन्दी पत्रकार के रूप में पुरस्कृत हो चुके हैं। 1974 से निरन्तर भारतीय अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म समारोहों में पत्रकार के रूप में भाग ले रहे हैं।

पंडित प्रदीप

पूरा नाम **रामचन्द्र द्विवेदी 'प्रदीप'**। जन्म 6 फरवरी 1915। शिक्षा-दीक्षा लखनऊ एवं इलाहाबाद। सन् 1939 में बम्बई आकर फिल्मी गीतकार के रुप में कैरियर शुरु किया। अब तक 125 से भी अधिक फिल्मों के गीत लिखे हैं। राष्ट्रीय चेतना के कई अमर गीतों के रचियता। 'आज हिमालय की चोटी से फिर हमने _ तथा 'आओ बच्चों तुम्हें दिखाएं झाँकी हिन्दुस्तान की' आदि अमर गीत। चीनी आक्रमण के कारण शहीद हुए फौजियों पर लिखा गया गीत 'ऐ मेरे वतन के लोगों जरा आँख में भर लो पानी' गीत ने लोकप्रियता का इतिहास रचा। आज भी लेखन में व्यस्त। *पता : 349, पंचायत, एस. वी. रोड, विले पार्ले (वेस्ट) बम्बई 400036*

पुरुषोत्तम वामन बावकर

सिनेमोटोग्राफर प्रशिक्षु के रुप में सन् 1956 में फिल्मोद्योग में प्रवेश किया। सन् 1959 में असिस्टेण्ट कैमरामेन के रुप में केन्द्रीय सरकार सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय में नियुक्ति, सन् 1972 में डाक्यूमेन्ट्री कैमरामेन तथा 1972 में न्यूज कैमरामेन के रुप में परिवार नियोजन विभाग में पदांकन। सन् 1973 से प्रतिरक्षा मंत्रालय में फोटोग्राफिक अधिकारी (केप्टेन) के पद पर नियुक्त होकर विभिन्न सैनिक अभियानों में छायांकन। दिसम्बर 1980 से फिल्म्स डिवीजन को छोड़कर महाराष्ट्र सरकार के विकास एवं योजना विभाग में रंगमंच एवं सांस्कृतिक विकास निगम के प्रबंधक

एक तंदुरुस्ती हजार नियामत
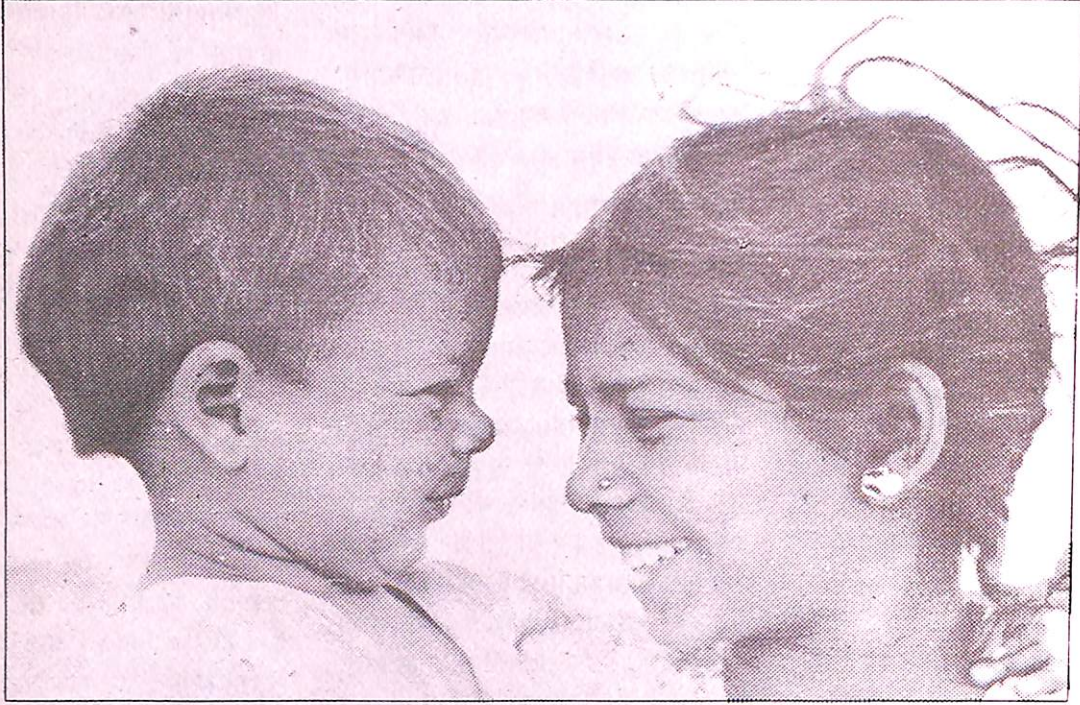
देहाती इलाकों में इलाज के बेहतर इंतजाम

जितनी आपको चिंता होती है अपनी और अपने परिवार की सेहत की उतनी ही जिम्मेदारी सरकार भी मानती है सबकी सेहत की।

मध्यप्रदेश के इस साल के बजट में सरकार ने ऐसे कई कदम उठाये हैं जिनसे आप और आपके परिवार की सेहत का ज्यादा ख्याल रखा जा सकेगा।

गाँव देहात की जरूरतों के मुताबिक सरकार के प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों और उपस्वास्थ्य केन्द्रों को चलाने की जिम्मेदारी लेने जो स्वैच्छिक संस्थाएँ आगे आएँगी उन्हें सरकार पूरी मदद करेगी। इन केन्द्रों पर होने वाले खर्च की पूरी रकम ऐसी संस्थाओं को दे दी जायेगी। इसके अलावा जन सहयोग से जो भी खर्च ये संस्थाएँ करना चाहेंगी कर सकेंगी। डॉक्टर सरकार के होंगे लेकिन इनके अलावा यदि किन्हीं प्राइवेट डॉक्टरों की जरूरत पड़े तो संस्थाएँ उन्हें इन अस्पतालों में अपने खर्च से ला सकेंगी।

इस साल के बजट में सरकार गांव के अस्पतालों के लिए 50 लाख रुपये का अतिरिक्त इंतजाम भी कर रही है।

इतना ही नहीं अगले एक बरस में 100 नये उपस्वास्थ्य केन्द्र, 290 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र और 50 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र भी सरकार खोलने जा रही है।

पिछले एक साल में खोले गये ऐसे 115 केन्द्रों का फायदा तो आपको मिलने भी लगा है।

सरकार के साधनों में स्वैच्छिक संस्थाओं का सहयोग आ जुड़ने का मतलब है - आपके लिए और बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएँ हर जगह। हर कहीं हर वक्त।

मध्यप्रदेश सरकार

के रूप में तीन वर्ष तक कार्य। 1983 से स्वयं की 'श्री बी' 'नामक फिल्म निर्माण इकाई का गठन। कई एनिमेशन, कार्टून एवं वृत्तचित्रों का छायांकन। छायांकन के अतिरिक्त फिल्मों का स्वतंत्र निर्माण, पटकथा लेखन, निर्देशन। 'सहकार', 'चाहत', 'चन्द्रशेखर आजाद' आदि प्रमुख निर्देशित एवं लिखित फिल्में। कई पुस्तकों का लेखन एवं 'इण्डियन डाक्यूमेन्ट्री प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन की त्रैमासिक पत्रिका का सम्पादन। इस संस्था के वर्तमान महासचिव तथा 'क्रिएटर्स फिल्म प्रॉडक्शन को - आपरेटिव सोसायटी लिमिटेड के उपाध्यक्ष।

पता : पुरुष बावकर 12, जापुर्जा, साहित्य सहवास बान्द्रा (ईस्ट) बम्बई 400 051

प्रेमनाथ मल्होत्रा

जन्म पेशावर (पाकिस्तान)। ग्रेजुएशन के बाद फिल्मों में प्रवेश। प्रथम फिल्म - अजीत। हिन्दी रजतपट के लोकप्रिय नायक खलनायक। उल्लेखनीय फिल्में हैं - आग, बरसात, जानी मेरा नाम, दस नंबरी, जानेमन, बॉबी, प्राण जाए पर वचन न जाए। प्रसिद्ध कलाकार स्व. राजकपूर के साले,। भूतपूर्व अभिनेत्री बीना राय के पति तथा अभिनेता प्रेमकिशन के पिता। संगीत प्रेमी, कवि तथा शिव भक्त। *पता : 31 सी, दर्शन अपार्टमेंट, माउंट प्लेजेंट रोड, मलाबार हिल, बम्बई - 400 006*

रऊफ अहमद

कर्नाटक विश्वविद्यालय से विज्ञान में स्नातक। भारतीय विद्या भवन महाविद्यालय बम्बई से पत्रकारिता में स्नातकोत्तर डिप्लोमा (टाइम्स ऑफ इण्डिया स्वर्ण पदक)। टाइम्स ऑफ इण्डिया में प्रशिक्षु पत्रकार के रुप में कैरियर शुरु किया। फ्री प्रेस जनरल में पहले रिपोर्टर तथा बाद में बुलेटिन के फीचर एडिटर। रविवारीय पृष्ठ एवं सिनेमा स्तंभ का सम्पादन। 'सुपर' एवं 'मूवी' के संस्थापक सम्पादक। वर्तमान में 'फिल्मफेयर' 'एवं' सटरडे टाइम्स' का सम्पादन।

पता : सम्पादक फिल्मफेअर, टाइम्स ऑफ इंडिया बिल्डिंग, बम्बई - 400 001.

रघुनाथ नारायण मंडलोई

जन्म 1 जनवरी 1920, कोहदड़, खण्डवा (म.प्र.)। स्वाधीनता संग्राम में सक्रिय योगदान के कारण इन्टर के पश्चात् शिक्षा स्थगित। सन् 1942 से रोजगार की तलाश में बम्बई यात्रा। राजकमल कला मंदिर में सह नृत्य निर्देशक के रूप में कार्य। सन् 1944 से 1954 तक विभिन्न निर्माताओं की लगभग 150 फिल्मों में नृत्य निर्देशन का कार्य। सन् 1954 में ओंकारेश्वर प्रोडक्शन नामक संस्था की स्थापना एवं फिल्म 'सती सावित्री' का निर्माण। इसके बाद 'सती नागकन्या ' का निर्माण। सन् 1956 में रविकला चित्र नामक फिल्म निर्मात्री संस्था की स्थापना एवं 'राम हनुमान युद्ध' का निर्माण। सन् 1958 में 'रानी रूपमती' तथा बाद में "कुँआरी", 'जय गौरी माँ," 'जय गणेश' आदि फिल्मों का निर्माण तथा सन् 1985 में निमाड़ी भाषा की प्रथम फिल्म 'संत सिंगाजी' का निर्माण। *पता - गुरूछाया अपार्टमेन्ट, सुभाष रोड, विले पार्ले (पूर्व), बम्बई 400057।*

राजू भारतन्

जन्म - 5 सितम्बर 1933। 18 वर्ष की आयु से ही लेखन प्रारम्भ। बम्बई के अंग्रेजी दैनिक 'भारत' में खेल सम्पादक के रूप में काम शुरू किया। सन् 1952 से 'इलस्ट्रेटेड वीकली' नामक अंग्रेजी साप्ताहिक से सम्बद्ध। अंग्रेजी में वर्ग पहेली का निर्माण करने वाले पहले भारतीय। अब तक दस हजार से भी अधिक पहेलियों का निर्माण। सन् 1971 से वीकली में सहायक सम्पादक के रूप में कार्यरत तथा पिछले 35 वर्षों से फिल्मी पत्रकारिता से सक्रिय रूप से सम्बद्ध रहे। 'द विक्टरी स्टोरी' नामक फीचर फिल्म का 72-73 में निर्माण। हिन्दुस्तानी फिल्म संगीत से गहरा लगाव। क्रिकेट कमेन्टेटर के रूप में प्रतिष्ठित तथा लता मंगेशकर पर वृहद ग्रंथ तैयार करने में संलग्न। *पता : सहायक सम्पादक, इलस्ट्रेटेड वीकली ऑफ इण्डिया, टाइम्स ऑफ इण्डिया बिल्डिंग, बम्बई - 400 001*

रामराज नाहटा

राजस्थान में जन्में तथा वहीं शिक्षा प्राप्त करने के बाद सन् 1962 से फिल्म निर्माण के क्षेत्र में। अब तक हिन्दी, गुजराती एवं राजस्थानी भाषा में कई फिल्मों का निर्माण। फिल्म व्यवसाय की प्रमुख पत्रिका **'फिल्म इन्फार्मेशन'** का सन् 1973 से सम्पादन - प्रकाशन एवं मुद्रण। इण्डियन मोशन पिक्चर्स प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन' के पूर्व अध्यक्ष।' फिल्म इण्डस्ट्री वेलफेयर ट्रस्ट' के ट्रस्टी। इम्पा वेलफेयर ट्रस्ट' के मैनेजिंग ट्रस्टी। महाराष्ट्र फिल्म स्टेज एण्ड कल्चरल डेवलपमेन्ट कार्पोरेशन लिमिटेड' के संचालक। *पता : फिल्म इन्फारमेशन ऑफिस, मानेक चेम्बर्स, तीसरा माला, नाज सिनेमा कम्पाउण्ड, बम्बई - 400 004.*

राजीव वर्मा

फिल्मों, टीवी धारावाहिकों और नाटकों के लोकप्रिय कलाकार। वास्तुविद, नगर एवं ग्रामीण नियोजन। लगभग 18 वर्षों से रंगकर्म में सक्रिय। पंछी ऐसे आते हैं, रसगन्धर्व, किंग लियर, सखाराम बाइण्डर, रूस्तम सोहराब, कर्मभूमि, गोदान, ब्लेक कॉमेडी आदि नाटकों में अभिनय एवं निर्देशन। टीवी धारावाहिकों चुनौती, अदालत, मुजरिम हाजिर के अलावा फीचर फिल्मों बिजली की बात, मैने प्यार किया में महत्वपूर्ण भूमिकाएँ। आगामी फिल्में, निश्चय, दीदार, जिद आदि। फिल्मों और दूसरे माध्यमों में अब तक विविध भूमिकाएँ विशेषकर चरित्र एवं खलनायक के अभिनय के लिए लोकप्रिय। नाटक के विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने में विशेष दिलचस्पी। भोपाल में रंगकर्म के लिए समर्पित प्रमुख संस्था "भोपाल थिएटर्स" के संस्थापक। अभिनय के लिए कई अवार्ड, यथा अपट्रान अवार्ड, रेडियो एवं टेलीविजन संस्था अवार्ड। *पता : ई-27/45 बंगले भोपाल * फोन 553358*

रामचन्द्र दास

रामचन्द्र दास इन्टर साइंस करने के बाद विख्यात छाया निर्देशक एम.ए. रहमान से प्रशिक्षण प्राप्त करने हेतु मद्रास आए। 6 वर्षों तक मद्रास की फिल्मी दुनिया में सिने फोटोग्राफी की विभिन्न विधाओं का प्रशिक्षण प्राप्त करने के उपरान्त 1966 में बम्बई आए। यहाँ रविकान्त नगाइच, पीटर परेरा, धर्म आर. चोपड़ा तथा डी.सी. मेहता जैसे विख्यात छायाकारों के सहायक के रूप में कार्य किया। इसके बाद स्वतंत्र रूप से लगभग 5 फीचर फिल्मों एवं कई वृत्तचित्रों में छायाकार के तौर पर कार्य किया है। फिलहाल छायांकन निर्देशक के रूप में दो हिन्दी एवं प्रादेशिक भाषा की फिल्मों में काम कर रहे हैं। वेस्टर्न इण्डिया सिनेमाटोग्राफर्स एसोसिएसन' की एक्जीक्यूटिव कमेटी के सदस्य। डब्ल्यू आई.सी.ए. के सचिव कई बार रहे। पिछले चार वर्षों से इसी पद पर कार्यरत। *पता - श्री*

साउण्ड स्टुडियो कम्पाउण्ड, 10, गोकुलदास पास्टा रोड, दादर बम्बई - 14.

राजेन्द्र सिंह होरा

जन्म 1 अक्टूबर 1913 पेशावर। एम. ए. करने के उपरान्त 1953 से बम्बई आकर फिल्म वितरण व्यवसाय प्रारंभ। सन् 1936 में 'विमल राय फिल्म्स' नामक प्रतिष्ठान की स्थापना तथा इस प्रतिष्ठान के माध्यम से बम्बई सर्किट में भारतीय एवं विदेशी फिल्मों का प्रदर्शन। सन् 1962 में 'एलोरा फिल्म्स' नामक प्रतिष्ठान प्रारंभ तथा इसके माध्यम से प्रदर्शन हेतु भारतीय फिल्मों का निर्यात एवं विदेशी फिल्मों का आयात। इण्डियन फिल्म एक्सपोर्टस संघ के अध्यक्ष के रूप में 1967 से 1970 तथा पुनः 1972 से 76 तक कार्यरत। 1980 से आज तक इसी पद पर पुनः कार्यरत। फिल्म फेडरेशन ऑफ इण्डिया में कोषाध्यक्ष के रूप में कार्य किया। उक्त संस्था की एक्जीक्यूटिव कमेटी में 20 वर्षों तक रहे हैं।

राजेन्द्र ओझा

म.प्र. के छोटे से गाँव कुकड़ेश्वर में जन्मे **राजेन्द्र ओझा** ने सन् 1971 से बम्बई की फिल्मी दुनिया में प्रवेश किया। राजश्री प्रोडक्शन्स एवं अन्य विभिन्न संस्थाओं में सहायक निर्माता सहायक निर्देशक के रुप में कार्य किया कई वर्षों तक स्वतन्त्र रुप से फिल्मी पत्रकारिता करने के बाद सन् 1979 में 'स्क्रीन वर्ल्ड' का प्रकाशन शुरू किया। इस वार्षिक संकलन के नियमित प्रकाशन के अतिरिक्त फिल्मोग्राफी, 75 ग्लोरियस इयर्स ऑफ इण्डियन सिनेमा का प्रकाशन। 1913 से 1990 तक की अवधि में निर्मित समस्त भारतीय मूक एवं बोलती फिल्मों का वर्षानुसार विवरण इस संकलन में है। फिलहाल 'माइल स्टोन्स ऑफ इण्डियन फिल्म इन्डस्ट्रीज' नामक ग्रंथ के लेखन में संलग्न।

पता - प्रकाश फोटो स्टुडियो, 295, एन.सी. केलकर रोड, दादर, बम्बई 400 028.

राजेन्द्र जांगले

भारतीय फिल्म एवं दूरदर्शन संस्थान पुणे से स्नातक। अनेक वृत्त चित्र एवं लघु फीचर फिल्मों का निर्माण। अब तक बनाई फिल्मों में **बुद्धिजीवी** और **माण्डव** फिल्म समारोहों में प्रदर्शित। बाण सागर परियोजना पर मध्यप्रदेश फिल्म विकास निगम द्वारा सिंचाई विभाग के लिए निर्मित फिल्म **संकल्प** के निर्देशक। फिल्म को सर्वोत्तम वृत्त चित्र का 35 वाँ राष्ट्रीय पुरस्कार। मध्यप्रदेश माध्यम भोपाल में फिल्म यूनिट के निर्देशक।

राजेश आचार्य

बम्बई की फिल्मी दुनिया में पार्श्वगायक बनने के लिए 1957 में प्रयास किया। सफलता न मिलने पर पत्रकारिता की ओर मुड़कर विख्यात मासिक हिन्दी 'नवनीत' के वितरण विभाग में कार्य शुरू किया। धीरे - धीरे फिल्मी पत्रकारिता में रुचि एवं बाद में 'राजश्री प्रोडक्शन' में सहायक पी.आर.ओ. के रुप में नियुक्ति। 'विमल राय प्रॉडक्शन' में भी निर्माण विभाग में कार्य। चन्द्रिमा भादुड़ी के साथ मिलकर दो गुजराती फिल्मों का निर्माण। *पताः 4/249 रोड नं. 75 जवाहर नगर, गोरेगाँव वेस्ट बम्बई 400 062.*

राजेश राठी

जन्म 5 अप्रेल 1958 कलकत्ता (प.बंगाल)। शिक्षा एम.ए. (अर्थशास्त्र)। आदिवासी झीलों के जीवन पर 35 मिनट का वृत्तचित्र **'ग्लिम्पसेज ऑफ भील्स'** निर्माण के साथ फिल्म क्षेत्र में प्रवेश। इस फिल्म के लेखक, छायाकार, सम्पादक तथा निर्देशक के रूप में भी कार्य किया। कलकत्ता के सुपर -8 फिल्मोत्सव 83 में अवार्ड मिला। सन् 1983 में बम्बई फिल्मी दुनियां में प्रवेश। निर्देशक जगमोहन मूंदड़ा की फिल्म **'कमला'** में सहायक निर्देशक का कार्य। इसके बाद हरीश भोसले द्वारा निर्देशित **'हक'** में मुख्य सहायक निर्देशक रहे। **'विषकन्या'** में एसोसिएट निर्देशक। 'इण्डियन फिल्म डायरेक्टर्स एसोसिएशन' तथा इण्डियन फिल्म राइटर्स एसोसिएशन' के सदस्य। दूरदर्शन द्वारा प्रायोजित कार्यक्रमों के लिए निर्माता व निर्देशक के रूप में पंजीकृत। *पताः गंजवाला अपार्टमेन्ट B /86 छठी मंजिल एस.वी.रोड, बोरिवली (पश्चिम) बम्बई -92*

आर.पी. आनन्द

जन्म 7 अगस्त 1932। ग्रेजुएशन करने के उपरान्त फिल्म प्रदर्शन व्यवसाय से जुड़े। बम्बई के विख्यात 'नाज सिनेमा' के प्रबन्धक के रूप में कार्यरत। 'फिल्म फेडरेशन बम्बई' के पूर्व उपाध्यक्ष एवं कोषाध्यक्ष तथा' थिएटर्स ऑनर्स एसोसिएशन' के अध्यक्ष। बम्बई के सिने प्रदर्शकों की संस्था' लेबर एडवाइजरी काउंसिल' के चेयरमेन। अन्य कई सामाजिक महत्व की संस्थाओं से सक्रिय सम्बन्ध। *पता : 'नाज सिनेमा', लेमिंग्टन रोड, बम्बई - 400 004.*

आर.वी. ईश्वर

जन्म 13 अगस्त 1924। शिक्षा बी.ए. आनर्स एल-एल.बी.। बचपन से ही अभिनय एवं संगीत में गहरी रूचि। कर्नाटक संगीत की दस वर्ष तक नियमित शिक्षा प्राप्त की। मैट्रिकुलेशन के पश्चात् रोजगार की तलाश में बम्बई आकर सन् 1942 से फिल्म वितरण व्यवसाय से जुड़े। मेट्रोगोल्ड विन मायर से सम्बद्ध रहे। सन् 1947 से राजकमल कला मन्दिर के सम्पर्क में आए तथा वी. शान्ताराम के सान्निध्य में रचनात्मक प्रतिभा को विकसित करने का अवसर मिला। छोटे - मोटे संक्षिप्त अवसर अभिनय के मिले किन्तु प्रमुख काम व्यवस्था एवं प्रशासनिक देखभाल का रहा। सन् 1951 में स्टुडियो स्वामियों के छोटे से समूह ने स्वर्गीय मेहबूब खान, वी. शान्ताराम तथा राजकपूर के मार्गदर्शन में 'फिल्म प्रोड्यूसर गिल्ड ऑफ इण्डिया लिमिटेड' की स्थापना की तथा सचिव के रुप में ईश्वर को मनोनीत किया। तब से आज तक निरन्तर अपनी सेवाएं फिल्म उद्योग को संगठित एवं विकसित करने में समर्पित।

पताः 14, महेश्वर, रफी अहमद किदवई रोड, वडाला, बम्बई - 400 031

रीता भादुड़ी

रीता भादुड़ी का जन्म 11 जनवरी 1951 को इन्दौर मध्यप्रदेश में हुआ। सात वर्ष की आयु में माँ श्रीमती चन्द्रिमा भादुड़ी के साथ बम्बई आगमन। पूना के फिल्म संस्थान से अभिनय में स्नातक होने के पश्चात पहली बार 'जूली' में महत्वपूर्ण भूमिका। इसके पश्चात लगभग 40 हिन्दी एवं अनेक प्रादेशिक भाषा की फिल्मों में अभिनय जिनमें 80 गुजराती की हैं। इसके अतिरिक्त मलयाली, पंजाबी तथा भोजपुरी भाषा की कई फिल्मों में मुख्य भूमिकाएं। भावुक एवं संवेदनशील भूमिकाओं के लिए प्रशंसित किन्तु विविध भूमिकाओं को चुनौती मानकर करने की क्षमता। गुजरात सरकार द्वारा चार बार सर्वोत्तम अभिनेत्री के अवार्ड से सम्मानित। 'बनते बिगड़ते' 'गुलदस्ता' 'खानदान' तथा 'मुजरिम हाजिर' जैसे दूरदर्शन धारावाहिकों में भूमिका।

पता : प्लाट नं. 249, फ्लैट नं. 4, रोड नं. 15, जवाहर नगर, गोरेगाँव, बम्बई - 400 062

संतोष जैन

संतोष जैन का जन्म 10 जनवरी 1949 को ग्वालियर में हुआ। वाणिज्य में स्नातक। फिल्म पत्रकारिता एवं फिल्म निर्देशन में सक्रिय। सम्पादक प्रतिछाया फीचर, साप्ताहिक समाचार एवं लेख सेवा। वृत्त चित्र "अश्रु गैस का प्रभावी उपयोग अवधि 20 मि. (हिन्दी - अंग्रेजी) का अश्रुगैस इकाई, सीमा सुरक्षा बल टेकनपुर के लिये निर्माण एवं निर्देशन। हिन्दी कथा चित्र "काकी" का निर्देशन।

फिल्मकार मंच, ग्वालियर के अध्यक्ष (1979 से 1988 तक) के रूप में फिल्म सोसायटी का संचालन। *पता : छाजेड भवन, चिटणीस की गोठ, ग्वालियर - 474*

संतोष गुप्ता

जन्म 2 अगस्त 1958। सन् 1979 में विज्ञान विषय में स्नातक की उपाधि प्राप्त करने के बाद 'केमिस्ट' तथा एकाउण्टेण्ट के रुप में कार्य। बम्बई में नादिरा बब्बर के साथ रंगमंच पर अभिनय की व्यावसायिक शुरूआत। पंकज पाराशर की फिल्म 'अब आएगा मजा' में ' पहली बार परदे पर। इसके बाद 'तमस' ,'होनी अनहोनी' ,'किस्सा शान्ति का', 'मंजिल अपनी अपनी' दूरदर्शन धारावाहिकों एवं 'सुराज', 'गुम्बिश', 'आकर्षण' आदि फिल्मों में अभिनय। सहायक निर्देशक के रूप में 'हादसा', पाँच फौलादी' 'आकर्षण' आदि फिल्मों से सम्बद्ध।*पता : फ्लैट -1, विजय अपार्टमेन्ट, सेन्टजोसेफ एवन्यू, शान्ताकूंज (वेस्ट) बम्बई 54.*

एस. श्रीवास्तव

जन्म लखनऊ। शिक्षा इलाहाबाद। बचपन से ही लेखन का शौक। पढ़ाई के बाद बम्बई आकर संवाद लेखक के रुप में फिल्म उद्योग में प्रवेश। बाद में सामाजिक फिल्म 'आशा' एवं 'बाजे घुँघरु' का निर्देशन। 'वेस्टर्न इण्डिया फिल्म प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन' की 1960 में स्थापना। 'बॉम्बे फिल्म प्रोड्यूसर्स को-आपरेटिव लिमिटेड' के पूर्व महासचिव।

सी. एस. दुबे

कन्नौद जिला देवास (मध्यप्रदेश) में 7 नवम्बर 1924 को जन्मे **सी.एस. दुबे** ने स्वाधीनता सेनानी के रूप में अपने सक्रिय जीवन का प्रारंभ किया। सन् 1942 से प्रारंभ इन्हीं गतिविधियों के कारण उन्हें स्कूल से निकाल दिया गया तथा 21 दिनों का कारावास भी भोगना पड़ा। इन्दौर रियासत के प्रजामण्डल में कुछ दिन सक्रिय रहने के बाद बम्बई जाकर अभिनय निर्देशन एवं फिल्मों के प्रचार कार्य में किस्मत आजमाने का फैसला किया। फिल्मी दुनिया में जगह बनाने के लिए वर्षों तक कठिन संघर्ष करते रहने के बाद 'रोटी कपड़ा और मकान' के बलात्कार दृश्य से वे चर्चित हुए इसके बाद हास्य/खलनायकी भूमिकाओं में वे दर्शकों के चहेते बने। एक सैकड़ा से भी अधिक फिल्मों में काम कर चुके हैं। सामाजिक कार्यों में विशेष रूचि के कारण सन् 1982 से 1988 तक 'स्पेशल एक्जीक्यूटिव मजिस्ट्रेट' के रूप में भी काम किया। राजनीति से गहरे लगाव के कारण अब तक पर कांग्रेसी उम्मीदवारों के चुनाव प्रचार में सक्रिय योगदान दे चुके हैं। *पता: 64/1251 आजाद नगर, वीरा देसाई रोड अँधेरी बम्बई - 400 058,*

डॉ. सुरेन्द्र नाथ तिवारी

गम्भीर फिल्म साहित्य एवं समीक्षा से जुड़े डॉ. **सुरेन्द्रनाथ तिवारी** पिछले 25 वर्षों से दिल्ली विश्वविद्यालय में अध्यपनरत हैं। राष्ट्रीय फिल्म संग्रहालय पुणे से जुड़े फिल्म अध्ययन केन्द्र में प्रोफेसर के पद पर भी काम किया है। विभिन्न विश्वविद्यालयों में फिल्म समीक्षा पाठ्यक्रमों से संबंधित कार्यशालाओं में काम कर रहे है। पुस्तक 'शतरंज के खिलाड़ी' म.प्र. फि.वि. निगम द्वारा प्रकाशित को सर्वोत्तम सिनेमा पुस्तक के रूप में 1989 में राष्ट्रीय पुरस्कार 'स्वर्णकमल' से पुरस्कृत। इसमें सत्यजीत राय द्वारा निर्मित इसी नाम की फिल्म साहित्य के संदर्भ में विशेष अध्ययन। फिल्मों एवं दूरदर्शन नाटकों में अभिनय एवं आलेख लेखन का अनुभव। दिल्ली दूरदर्शन केन्द्र के कार्यक्रमों की स्क्रीनिंग समिति के सदस्य। रंगमंच पर निर्देशन एवं अभिनय का दीर्घ अनुभव। एम. के. रैना द्वारा निर्देशित नाटकों में महत्वपूर्ण भूमिकाएं की "मैं ही हूँ कालपुरूष", 'कबीरा खड़ा बाजार में,' 'हानुष'। फिलहाल 'नया सिनेमा' (भारतीय) शीर्षक पुस्तक के लेखन कार्य में संलग्न *पता - बी.ए/13 सी जनकपुरी नई दिल्ली 110058*

संतोष सिंह जैन

संतोष सिंह जैन का जन्म 5 अक्टूबर, 1921 को राजस्थान की मेवाड़ रियासत में शाहपुरा के निकट स्थित शाहपुरा गाँव में हुआ। 1940 में मैट्रिक उत्तीर्ण होने के बाद वे आगे न पढ़ सके। जनवरी 1941 में वे गोलछा के वितरण कार्यालय में फिल्म प्रतिनिधि बन गए। बाद में वे कृष्णा टॉकीज, इंदौर में सहायक प्रबंधक नियुक्त हुए। उनकी क्षमता और योग्यता के कारण उन्हें गोलछा की भुसावल शाखा में 1952 में प्रबंधक के रूप में पदोन्नत कर दिया गया। उन्होंने एच.एन. एस. राव साहेब को सेंट्रल सर्किट सिने एसोसिएशन की स्थापना में मदद पहुँचाई, जो कि बरार, मध्यभारत, पूर्व - पश्चिम खानदेश, छत्तीसगढ़ और राजस्थान के वितरकों की सर्वोच्च संस्था है। 1952 से 1958 तक वे इस एसोसिएशन के आरंभिक काल में कार्य करते रहे और गोलछा वितरण प्रतिष्ठान के प्रबंधक के रूप में भी अपने कर्तव्यों का निर्वाह करते रहे। 1962 में उन्हें सी.सी.सी.ए. का अध्यक्ष निर्वाचित किया गया और तब से 26 वर्षों तक वे एसोसिएशन के अध्यक्ष बने रहे जो कि गिनीज वर्ल्ड रिकार्ड बुक में स्थान पाने योग्य उपलब्धि है। बाद में उन्होंने गोलछा प्रतिष्ठान की नौकरी छोड़ दी। आगे चलकर वे दो वर्षों तक फिल्म फेडरेशन ऑफ इंडिया के अध्यक्ष रहे। वे राष्ट्रीय फिल्म नीति समिति के एक सदस्य थे, जिसके अध्यक्ष डॉ.वी.व्ही. कारंत थे। वे सूचना तथा प्रसारण मंत्रालय द्वारा नियुक्त उच्चशक्ति संपन्न समिति में फिल्म वितरकों के प्रतिनिधि रहे। वे फिल्म डिस्ट्रीब्यूटर्स कौंसिल के अध्यक्ष भी रहे। सेंट्रल सर्किट सिने एसोसिएशन को केवल उनके नाम से जाना जाता है। उनकी सर्वाधिक उल्लेखनीय उपलब्धि यह है कि उन्होंने इंदौर में फिल्म भवन का निर्माण किया। उन्होंने स्टार सीलिंग सिस्टम का आरंभ किया जिसके कारण 1971 में बंबई के फिल्म जगत् के लिए विवाद का केन्द्र बन गए। 1988 में उनकी इसी स्टार सीलिंग का सभी एसोसिएशनों ने समर्थन किया। इस सिस्टम से न केवल फिल्म, निर्माताओं को अपनी फिल्में पूरी करने में सुविधा प्राप्त हुई, बल्कि वितरकों को भी राहत मिली जो कि फिल्मों में धनराशि निवेशित करते थे। संतोष सिंह जैन भारतीय फिल्म उद्योग के एक समर्पित और सच्चे सिपाही हैं।

स्वरूप चन्द जैन

स्वरूप चन्द जैन का जन्म मध्यप्रदेश के एक छोटे नगर अमरपाटन में हुआ और फलोड़ी (राजस्थान) में वे पले - बढ़े । उन्होंने अपने कैरियर की शुरुआत चतुर्भुज टॉकीज जोधपुर में एक टाइपिस्ट के रूप में की । फिर वे जोधपुर से अमरावती चले गए और कठिन संघर्ष के बाद सी.पी.सी. आई. और राजस्थान के संपूर्ण सर्किट के फिल्म व्यवसायी शंकरलाल जी , राठी के साथ 1964 तक कार्य करते रहे । फिर वे 'जौहर मेहमूद इन गोवा' को लेकर अलग हो गए और उन्होंने अपना स्वतंत्र जीवन आरंभ किया । उन्हें फिल्म वाले लोग 'सर कहा करते थे। उन्होंने सेंट्रल सर्किट सिने एसोसिएशन की अमूल्य सेवा की और एसोसिएशन के निर्माण के समय से लेकर मृत्यु तक इसकी कार्यकारी समिति के सदस्य रहे। श्री जैन को व्यवसाय की कानूनी वार्ता का अच्छा ज्ञान था। वे. सी.सी.सी. ए, के कई बार अध्यक्ष रहे और एक बार फिल्म फेडरेशन ऑफ इंडिया के अध्यक्ष रहे । सी.सी.सी.ए, के अधिकांश नियमों और उप विधियों का निर्माण स्वयं उन्हीं ने किया है ।

वी.बी. पुरोहित

आठ अप्रैल, 1926 को जोधपुर में जन्में वी.बी. पुरोहित ने राजस्थान विश्वविद्यालय से दर्शन शास्त्र में एम.ए, की उपाधि और एल एल.बी. की उपाधि प्राप्त की । एक वकील के रूप में कैरियर की शुरुआत करने के बाद वे फिल्म उद्योग की ओर आकृष्ट हुए और जयपुर के न्यू सुभाष पिक्चर्स प्रायवेट लिमिटेड में शामिल हो गए । उन्होंने इंदौर कार्यालय में भी स्वतंत्र रूप से कार्य किया । 1968 में वे सेंट्रल सर्किट सिने एसोसिएशन, भुसावल में सहायक सचिव नियुक्त हुए और सचिव के पद तक पहुँचे पुरोहित कभी-कभी पत्र पत्रिकाओं में लिखते हैं और अपनी लेखनी के लिए प्रसिद्ध हैं । इंदौर स्थित सीसीसीए का प्रशासनिक कार्यालय उनका वर्तमान मुख्यालय है ।

सुप्राण सेन

जन्म - 12 जनवरी 1946। पिता म.प्र. उच्च न्यायालय में न्यायाधीश । अंग्रेजी साहित्य एवं राजनीति शास्त्र में एम.ए, तथा कानून में ऑनर्स डिग्री प्राप्त करने के बाद बिड़ला उद्योग में सन् 1970 से विधि अधिकारी के रूप में कैरियर प्रारम्भ किया । फिल्मों से गहरा लगाव होने के कारण सन् 1976 से 'इण्डियन मोशन पिक्चर्स प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन' के सदस्य। इसके पश्चात् फिल्म निर्माण से संबंधित कई संस्थाओं से जुड़ कर फिल्म उद्योग के हित में महत्वपूर्ण कार्य किए । बॉण्ड प्रथा को निरस्त करवाया । दूरदर्शन पर प्रसारित होने वाली फिल्मों की रॉयल्टी बढ़वाई । कच्ची फिल्में आयात करने के लिए अधिक विदेशी मुद्रा का आबंटन । जम्बो रोल्स पर आयात ड्यूटी में कमी करवाई तथा ऐसे अनेक कार्य किए । महाराष्ट्र सरकार द्वारा विशेष कार्यकारी मजिस्ट्रेट के रुप में नियुक्ति ।

सुमन चौरसिया

जन्म 26 फरवरी 1951, इन्दौर (म.प्र.) । इन्दौर क्रिश्चियन कॉलेज में शिक्षा । ग्रामोफोन रेकार्ड संग्रह का शौक 1975 से । करीब 8000 रेकार्डस आपके पास हैं जिनमें मुकेश के 90 प्रतिशत गीतों का संग्रह भी है । लता मंगेशकर के सर्वश्रेष्ठ गीत जैसे 'अश्कों से लिखीं' (दामन), 'अब कौन सहारा' (वेदर्द), 'जिन्दगी हम से हुई दूर' (धुआँ) आदि तथा तलत महमूद के अनमोल गीत जैसे 'टूटे हुए दिल' 'हमारी मंजिल' 'दीप जल रहा' (अंधेरी गली), 'हो गए बरबाद हम' (कामिनी)' आदि भी इस संग्रह में सन् 1935 से 1990 तक के गायक-गायिकाओं के रेकार्ड हैं जैसे शान्ता हुबलीकर, अमीरबाई, राजकुमारी, जौहरा, काननदेवी, शान्ता आप्टे, नसीम बैगम अख्तर खान, मस्ताना, मोतीलाल, करन दीवान, पहाड़ी सान्याल, कृष्ण राव, मुबारक बेगम, सुमन कल्याणपुर, मुकेश, रफी, मन्नाडे, तलत मेहमूद आदि । *पता - 9 बड़ा सराफा, इन्दौर*

सुभाष शिरढोणकर

जन्म - 18 सितम्बर 1957, मुरैना । शिक्षा बी.एससी (जीवशास्त्र), एम. ए (राजनीतिशास्त्र), एलएल.बी. । सन् 1978 में ग्वालियर से प्रकाशित 'दैनिक स्वदेश से लेखन की शुरूआत । प्रारम्भ में खेल व फिल्म संबंधी लेखन । बाद में फिल्म पत्रकार के रूप में स्थापित । वर्तमान में 'फिल्म मीडिया पब्लिसिटी' नामक एडवर्टाइजिंग कम्पनी का संचालन । दूरदर्शन धारावाहिक के निर्माता, निर्देशक एवं कलाकारों तथा फिल्मों का प्रचार कार्य । फ्रीलांसर के तौर पर कई फिल्मी व अन्य पत्र-पत्रिकाओं में लेखन । *पता - ई. डब्ल्यू. एस. 49, हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी, मुरैना (म.प्र.)*

श्रीनिवास जोशी

जन्म - 7 अप्रैल 1920, बड़नगर म.प्र. । आगरा विश्वविद्यालय से 1943 में बी.ए, करने के उपरान्त पूना की प्रभात फिल्म कम्पनी में पटकथा एवं संवाद लेखक के रुप में प्रवेश । 1948 से वृत्तचित्रों के निर्माण में लेखक, निर्माता, निर्देशक एवं कमेन्टरीकार के रुप में कार्यरत । 18 हिन्दी एवं 4 मराठी फिल्मों का लेखन तथा स्वतन्त्र रुप से 'मालती माधव' हिन्दी फीचर फिल्म का निर्माण । सरकारी और निजी संस्थाओं के लिए 200 से अधिक वृत्तचित्रों का निर्माण । अनुवादक एवं हिन्दी कथा लेखक के रुप में 14 ग्रन्थों की रचना । आकाशवाणी और दूरदर्शन के लिए नियमित रुप से पटकथा एवं आलेखों का लेखन । महाराष्ट्र सरकार के द्वारा एप्रूव्ड डाक्यूमेंटरी फिल्म निर्माता के रूप में 1989 तक पेनल पर रहे । 'गाँधी फिल्म फाउण्डेशन' के संस्थापक ट्रस्टी एवं स्वाधीनता संग्राम सेनानी । *पता - लिमये बंगला, 40/13 भोंडे कालोनी, एरण्डवन, पुणे - 411004 (महाराष्ट्र) ।*

शक्ति सामन्त

जन्म सन् 1926 । कलकत्ता विश्वविद्यालय से विज्ञान विषय में स्नातक । दो वर्षों तक इमारतों के निर्माण का पारिवारिक व्यवसाय किया । जुलाई 1947 से बम्बई आकर 'बॉम्बे टॉकीज' में सहायक निर्देशक के रूप में कार्यरत । सन् 1954 में स्वतन्त्र रूप से **'हावड़ा ब्रिज'** नामक फिल्म का निर्देशन एवं निर्माण । इसके बाद 'इन्सान जाग उठा', चाइना टाउन' 'कश्मीर की कली', 'आराधना', 'कटी पतंग' आदि फिल्मों का निर्माण । 'शक्ति फिल्म्स के बैनर तले हिन्दी और बंगला में बनी 'अमानुष' सहित 31 फिल्मों का निर्माण जिनमें से 26 को स्वयं निर्देशित किया। 'आराधना' 'अनुराग' एवं 'अमानुष' तीनों फिल्में फिल्म फेयर अवार्ड से सम्मानित । कुछ फिल्में बैरूत, बर्लिन, कैरो एवं ताशकन्द में हुए अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह में प्रदर्शित । 'इण्डियन मोशन पिक्चर्स प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन' के अध्यक्ष । 'सेन्ट्रल बोर्ड ऑफ फिल्म सर्टिफिकेट ऑफ बाम्बे' के चेयरमेन ।

शशिकान्त किणीकर

पुणे विस्वविद्यालय से सन् 1964 में बी.कॉम की उपाधि । विभिन्न प्रतिष्ठानों के एकाउण्ट्स विभागों में कार्यानुभव । पुरानी ऐतिहासिक महत्व

की 25 मराठी फिल्मों की निर्माण सामग्री की खोज में फिल्म आर्काइव को सहयोग। फिल्म विषयक ग्रंथों के लिए तथ्य जुटाने में सक्रिय सहायता गीतांजलि फिल्म सोसायटी की स्थापना। बम्बई, पूना, जलगाँव आदि नगरों में फिल्म निर्माण सामग्रियों की प्रदर्शनियों का आयोजन। फिल्म विषयक लेखों का विभिन्न पत्रिकाओं में नियमित प्रकाशन। फिल्म महोत्सव संचालनालय के कार्यों में नियमित सहयोग। फिल्म निर्माण सम्बन्धी महत्वपूर्ण शोधकार्य जिनके अनुसार पहली मराठी फिल्म 'अयोध्या चा राजा' नहीं 'संत तुकाराम' थी तथा बिना गीतों वाली पहली भारतीय फिल्म 'ढाकेरचा लग्ना' थी। सन् 1932 से जून 1989 की मराठी फिल्मों का एन साइक्लोपीडिया तैयार किया। संगीतकार 'नौशाद' पर मराठी में ग्रंथ लेखन। कई संस्थाओं द्वारा सम्मानित। *पता: सुप्रभा, 6/1 एरंडवणे, कर्वेरोड, पुणे - 411004 (महाराष्ट्र)*

शीलचन्द्र लाड़

जन्म - 12 दिसम्बर 1929, इन्दौर (म.प्र.)। शिक्षा उच्च माध्यमिक, सन् 1950 से फिल्म क्षेत्र बम्बई में कार्यरत। 1950 से 1955 तक रणजीत स्टुडियो में निर्मित फिल्मों का छायालेखन सहायक छायाकार के रूप में किया। प्रसिद्ध एवं पुरस्कृत फिल्म संगीत **संगीत सम्राट तानसेन'** तथा 'महाशिवरात्रि' के निर्माता। सहनिर्माता के रूप में 1957 से 1983 तक 'वीर दुर्गादास', देवकन्या', 'बहू बेगम', 'दास्ताने लैला मजनू' आदि में कार्य किया। सन् 1986 में 'बेडरूम स्टोरी' का निर्माण किया। जिसकी अधिकतर शूटिंग मध्यप्रदेश में हुई। फिल्म उद्योग के अन्य कार्यों में मध्यप्रदेश के फिल्म वितरण व्यवसाय में महत्वपूर्ण योगदान तथा 'वेस्टर्न इंडिया फिल्म प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन' की कार्यकारिणी के सक्रिय सदस्य। *पता - 3 झरना कुटीर, सुभाष रोड़, विले पार्ले (पूर्व) बम्बई 400057*

शोमा ए. चटर्जी

शिक्षा एवं अर्थशास्त्र में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त करने के बाद अर्थशास्त्र की व्याख्याता के रुप में श्रीमती शोमा ए, चटर्जी ने अपना कैरियर शुरु किया। 'सौमैया इन्स्टीट्यूट बम्बई' से पत्रकारिता में डिप्लोमा प्राप्त करने के बाद 1980 से 'फ्री लांस' 'पत्रकार' के रुप में नियमित लेखन प्रारंभ'। नारी समस्या एवं फिल्मों में नारी चित्रण विषय एक सौ से अधिक लेख प्रकाशित,। सन् 1991 में मेनहम (जर्मनी) में हुए फिल्मोत्सव में अन्तरराष्ट्रीय जूरी के सदस्य के रूप में आमंत्रित। सिनेमा एवं नारी पर कई शोध पत्रों का विभिन्न राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलनों में वाचन। नारी विषयक दो पुस्तकें प्रकाशित। 1991 में राष्ट्रपति द्वारा सर्वश्रेष्ठ फिल्म पत्रकार के रुप में पुरस्कृत। *पता: 12, कस्तूरी, गोरीया रोड मुलुण्ड (वेस्ट) बम्बई 400 080*

तेजनाथ जार

विख्यात फिल्म निर्माता एवं लेखक। सन् 1957 से फिल्म निर्माण के क्षेत्र में कार्यरत। अब तक 14 फिल्मों का स्वतंत्र रूप से निर्माण जिनमें 'वचन' 'नकली नवाब' आदि प्रमुख। अन्य निर्माताओं के लिए लगभग 20 फिल्में लिखी। भारत एवं पाकिस्तान की पत्र-पत्रिकाओं में नियमित लेखन। फिल्म लेखक संघ के उपाध्यक्ष।

उदय तारा नायर

बम्बई विश्वविद्यालय से सन् 1966 में अंग्रेजी साहित्य एवं फ्रेन्च में बी.ए, आनर्स की उपाधि प्राप्त करने के उपरान्त 'स्क्रीन' नामक विख्यात फिल्म साप्ताहिक में रिपोर्टर के रुप में नियुक्ति। निरन्तर उत्कृष्ट कार्य के कारण सन् 1988 में पत्र के सम्पादक के रुप में नियुक्ति। एक वर्ष उपरान्त ही इसी समूह के फिल्म व्यवसाय पत्र स्क्रीन ट्रेड इन्फार्मेशन के सम्पादन पद का दायित्व भी मिला है। भारतीय सिनेमा के विभिन्न पहलुओं पर नियमित लेखन। ताशकन्द एवं मास्को में हुए फिल्म महोत्सवों का कवरेज। विख्यात अभिनेता दिलीपकुमार की जीवनी पर ग्रंथ लेखन जारी। *पता: स्क्रीन साप्ताहिक, एक्सप्रेस टावर, नरीमन पाइंट, बम्बई - 400 019*

ऊषा दीक्षित :

सन् 1973 में आकाशवाणी भोपाल में उद्घोषिका। बाद में आकाशवाणी और दूरदर्शन बम्बई के लिए लेखन। कई चर्चित धारावाहिकों जैसे शो थीम, एक कहानी, अधिकार, सुरभी के लिए लेखन एवं सहयोगी निर्देशिका। एक कहानी, धारावाहिक के अन्तर्गत स्वतन्त्र रूप से तुलु, बलि, मिथ्या, ना किन्नी ना, और अधिकार धारावाहिक की कुछ कहानियों का निर्देशन। सुरभि के लिए मध्यप्रदेश की सांस्कृतिक विरासतों और परम्पराओं पर महत्वपूर्ण कार्यक्रमों का निर्माण। ख्याति प्राप्त निर्देशकों जानु बरूआ, दयाल निहलानी, विनोद पाण्डे, भरत रंगाचारी के साथ बतौर मुख्य सहायक निर्देशक के रूप में कार्य। राज बब्बर की फिल्म **कर्मयोद्धा** में दयाल निहलानी के साथ सहयोग। इसके अलावा अमित खन्ना की व्यावसायिक वीडियो पत्रिका बिजनेस प्लस से निरन्तर सम्बद्ध।

उपेन्द्र चानना

जन्म 27 सितम्बर 1953। शिक्षा स्नातक। जर्मन भाषा में डिप्लोमा। अभिनय एवं नृत्य (कत्थक) में विशेष प्रशिक्षण। गंभीर पृष्ठभूमि की फिल्मी पत्रिका 'फिल्म मेकर' में चार वर्ष तक सहायक सम्पादक। विभिन्न पत्र - पत्रिकाओं में नियमित लेखन। भारतीय प्रतिनिधि के रूप में विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय फिल्मोत्सवों में भागीदारी तथा जूरी के रूप में कार्य। अन्तर्राष्ट्रीय वृत्त एवं लघुचित्र फिल्मोत्सव 92' की चयन समिति में नामांकित। 'इण्डियन फिल्म डाइरेक्टर्स एसोसिएशन' के उपाध्यक्ष। 'फिल्म फोरम' के महासचिव तथा स्वतंत्र फिल्म समीक्षक।

ऊदाराम अल्लदास थदानी

जन्म - 24 मई 1924। बी.ए, तक शिक्षा प्राप्त करने के बाद फिल्मों के प्रदर्शन एवं वितरण व्यवसाय से जुड़े। फिल्मों से गहरा लगाव होने के कारण 'थियेटर्स ओनर्स एसोसिएशन' बम्बई के वाइस प्रेसिडेन्ट तथा 'इण्डियन मोशन पिक्चर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स एसोसिएशन बम्बई की कार्यकारिणी के सदस्य। सन् 1975 में फिल्म सेंसर बोर्ड बम्बई के सदस्य रहे एवं टॉकीज ओनर्स एसोसिएशन के पूर्व अध्यक्ष। बम्बई में स्पेशल एक्जीक्यूटिव मजिस्ट्रेट के रुप में कार्यरत। *पता - ब्लू हेवन, लिंकिंग रोड़, बान्द्रा, बम्बई -50*

वनमाला

ग्वालियर के सामन्त परिवार के कर्नल राव बहादुर पवार के घर जन्मी वनमाला ने बी.ए, बी.टी. तक शिक्षा प्राप्त की तथा पूना में शिक्षिका के रुप में कैरियर शुरु किया। इसी दौरान मराठी और हिन्दी में फिल्में बनाने वाली संस्था नवयुग चित्रपट के फिल्म 'लपंडाव' (आँख मिचौली, में नायिका की भूमिका करने का प्रस्ताव मिला। इसके बाद वे सोहराब मोदी के **'सिकन्दर'** शांताराम की **'पर्वत पर अपना डेरा'** चित्र मंदिर की **'वसंत सेना'** आदि

फिल्मों में नायिका के रुप में कार्य किया। स्वतन्त्र रुप से मराठी में **'श्यामची आई'** नामक फिल्म का निर्माण किया। यह फिल्म 1954 में राष्ट्रपति द्वारा स्वर्ण पदक से सम्मानित। इन दिनों फिल्म जगत से सन्यास लेकर मथुरा वृन्दावन में बस गई हैं। वहाँ श्री स्वामी हरिदास कला संस्थान की स्थापना। सांस्कृतिक एवं शिक्षाप्रद फिल्मों के निर्माण में **अभिरुचि।**

बासु भट्टाचार्य

निर्देशक लेखक एवं सामाजिक कार्यकर्ता। फिल्म 'तीसरी कसम' के लिए राष्ट्रपति अवार्ड। अन्य उल्लेखनीय फिल्में 'अनुभव', 'आविष्कार' तथा 'गृह प्रवेश'। 'इण्डियन फिल्म डाइरेक्टर्स एसोसिएशन' के पूर्व अध्यक्ष (1977 से 1984)। फेडरेशन ऑफ फिल्म सोसायटीज' के उपाध्यक्ष। आइ.सी.एल. एजुकेशन सोसायटी बम्बई के अध्यक्ष। 'बोर्ड ऑफ डाइरेक्टर्स, नेशनल फिल्म डेवलपमेन्ट कार्पोरेशन के पूर्व सदस्य। फिल्म महोत्सव संचालनालय द्वारा गठित इण्डियन पेनोरामा समिति' के कई बार अध्यक्ष रहे। म.प्र. फिल्म विकास निगम द्वारा 1991 के फिल्म पुरस्कार निर्णायक मंडल के अध्यक्ष।

वी.पी. साठे

वसन्त प्रभाकर साठे का जन्म 9 अगस्त 1916 को हुआ। सन् 1937 में बम्बई विश्वविद्यालय से ग्रेजुएशन करने के बाद वे ब्रिटिश फिल्म निर्माण संस्थान 'मेट्रो गोल्डविन मायर्स' के बम्बई स्थित कार्यालय में एप्रेन्टिस के रुप में कार्य करने लगे। सन् 1940 से शुरु हुए लेखन के इस कार्य के साथ वे फ्रीलांसर के तौर पर अंग्रेजी फिल्मी पत्रिकाओं में भारतीय एवं विदेशी सिनेमा पर लेख लिखने लगे। इसी दौरान उनका परिचय **ख्वाजा अहमद अब्बास** से हुआ तथा अब्बास के साथ मिलकर उन्होंने हिन्दी सामाजिक फिल्म **'नया तराना'** की पटकथा लिखी। साठे - अब्बास की जोड़ी जमने लगी। वी. शान्ताराम की 'डॉ कोटनीस की अमर कहानी' एवं राजकपूर की 'आवारा', 'श्री चार सौ बीस' बॉबी,' 'राम तेरी गंगा मैली' तथा हिना' की पटकथाएँ भी इसी जोड़ी ने तैयार की है। अब्बास की यथार्थवादी फिल्म, 'धरती के लाल' तथा भारत रूस सहयोग से निर्मित 'परदेसी' से वे संयुक्त निर्माता के रुप में जुड़े। सन् 1950 में उन्होने एम.बी. सामन्त के साथ मिलकर 'बॉम्बे पब्लिसिटी सर्विस' फिल्म विज्ञापन प्रतिष्ठान की स्थापना की। सामन्त के साथ मिलकर साठे ने फिल्म वितरण के व्यवसाय में 'नवचित्रा फिल्म एक्सचेंज' नामक प्रतिष्ठान शुरू किया। मराठी फिल्मों की पटकथा लेखन के कार्य से भी वे पिछले वर्षों में जुड़े हैं। जिन फिल्मों की पटकथाएँ उन्होंने लिखी उनमें से महेश कोठारी द्वारा निर्देशित 'धड़ाकेबाज' एवं 'थरथराहट' गोल्डन जुबिली हिट रही।

फिल्मों से सम्बन्धित विभिन्न संस्थाओं तथा फिल्म महोत्सवों से साठे का गहरा लगाव रहा है। वे चार वर्षों तक फिल्मी पत्रकार समिति, के उपाध्यक्ष रहे। 'फेडरेशन ऑफ फिल्म सोसायटीज ऑफ इण्डिया' के उपाध्यक्ष का पद भार भी उन्होंने छः वर्ष तक संभाला। 'प्रभात चित्र मण्डल' की अध्यक्षता का दायित्व वे पिछले पच्चीस वर्षों से निभा रहे हैं। 'वी शान्ताराम मोशन एण्ड साइंटिफिक' रिसर्च फाउण्डेशन के वे ट्रस्टी हैं। इण्टरनेशनल फिल्म फेस्टिवल ऑफ इण्डिया बम्बई (1984) की कोर कमेटी के वे सदस्य रह चुके हैं। 1984 में वे कार्लोवी वारी फिल्म फेस्टिवल के जूरी सदस्य रहे। उन्होंने कई वर्षों तक ताशकन्द तथा मास्को के फिल्म महोत्सवों का अवलोकन किया। सन् 1952 से 1990 तक भारतीय फिल्म महोत्सव में वे शामिल होते रहे हैं। मराठी में राजकपूर पर लिखी पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है तथा सिनेमा पर लिखे लेखों का संग्रह शीघ्र प्रकाश्य है। *पता : सी 2, सहकार निवास, प्रो. आगाशे पथ, दादर, बम्बई - 400028.*

विनोद तिवारी

जन्म 5 मार्च 1942 मसूरी (उ.प्र.)। आगरा विश्वविद्यालय से अर्थशास्त्र में एम.ए. की उपाधि प्राप्त करने के बाद 'टाइम्स ऑफ इण्डिया' की पत्रकारिता प्रशिक्षण योजना में एक वर्ष तक प्रशिक्षण प्राप्त तथा' फिल्म इन्स्टीट्यूट ऑफ इण्डिया पूना' में फिल्म एप्रीसिएशन का पाठ्यक्रम। ग्यारह वर्षों तक टाइम्स ऑफ इण्डिया की हिन्दी फिल्मी पत्रिका 'माधुरी' का सम्पादन तथा एक वर्ष तक हिन्दी 'फिल्म फेयर' का सम्पादन। प्रेस इन्स्टीट्यूट ऑफ इण्डिया द्वारा उत्कृष्ट फिल्म लेखन पर राष्ट्रीय अवार्ड। भारत सरकार द्वारा एन.एफ.डी.सी. के माध्यम से' भारत महोत्सव हेतु पेरिस एवं न्यूयार्क में कवरेज यात्रा, अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म महोत्सवों हेतु चयन समिति (बम्बई) अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म महोत्सवों हेतु चयन समिति (बम्बई) के सलाहकार पेनल पर फिल्म पत्रकारिता के उत्कृष्ट लेखन चयन (1989) हेतु राष्ट्रीय जूरी। 'प्रिया' फिल्मी पत्रिका का सम्पादन। *पता: फ्लैट नं.4, बिल्डिंग नं.10, ब्लासम सोसायटी, मिलिट्री रोड, मारोल, अन्धेरी (ईस्ट) बम्बई - 400 059*

विनोद भारद्वाज

जन्म : अक्तूबर, 1948, लखनऊ। मनोविज्ञान में एम.ए.। 1973 से 1990 तक 'दिनमान' के संपादकीय विभाग में। अब नवभारत टाइम्स, दिल्ली में मीडिया संवाददाता। 'हवा' कविता के लिए 1981 में भारतभूषण अग्रवाल पुरस्कार। 1982 में सर्जनात्मक लेखन में विशिष्टता के लिए संस्कृति पुरस्कार। कविताओं के जर्मन, रूसी और अंग्रेजी में अनुवाद हुए हैं। जनवरी, 1989 में लेनिनग्राद के पहले अंतर्राष्ट्रीय गैर कथा फिल्म महोत्सव की ज्यूरी में एशिया, अफ्रीका के अकेले प्रतिनिधि के रूप में चुने गये। 1991 में राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार की ज्यूरी के एक सदस्य। प्रकाशित पुस्तकें: जलता मकान, होशियापुर (कविता संग्रह), समकालीन भारतीय कला, नया सिनेमा, आधुनिक कला कोश (संपादित)। *पता : एफ 16, प्रेस एन्क्लेव, नई दिल्ली 110017 (फोन : 663304)*

विट्ठलभाई पटेल

इक्कीस मई 1936 को सागर में जन्मे **विट्ठल भाई** पटेल फिल्म एवं राजनीति में समान रुप से सक्रिय रहे। मध्यप्रदेश मंत्रिमण्डल में मंत्री रहे विट्ठल भाई ने कई फिल्मों के लिए गीत लेखन किया है। विशेष रूप से प्रख्यात फिल्मकार राजकपूर की फिल्मों में उनके लिखे गीत बहुत लोकप्रिय हुए। इनमें फिल्म **बॉबी** के गीत **झूठ बोले कौआ काटे** काफी चर्चित और सफल रहा। हरजाई, धरम करम, प्रेम रोग, दरियादिल आदि कुछ उल्लेखनीय फिल्में हैं जिनमें इनके गीत पसन्द किए गए। गीत के अलावा विट्ठल भाई ने कविताएं भी लिखी हैं। *पता : राधेश्याम भवन, सागर म.प्र.*

विनोद मिरानी

मिरानी दम्पत्ति फिल्म के व्यावसायिक पक्ष से संबंधित पत्रकारिता के लिए विख्यात हैं। विनोदजी

ने स्वतन्त्र पत्रकार के रूप में पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश किया तथा बाद में **बॉक्स ऑफिस** नामक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया। 'ट्रेड गाइड' नामक पत्रिका के भी वे सम्पादक रह चुके हैं। उनकी पत्नी भी सम्पादन के काम में नियमित सहयोग करती हैं।

विकास मोहन शर्मा

दिल्ली विश्वविद्यालय से 1972 में विज्ञान स्नातक की उपाधि प्राप्त करने के बाद बम्बई आकर फिल्मी दुनिया में किस्मत आजमाना शुरु किया। विभिन्न निर्माता एवं निर्देशकों के साथ सहायक के रूप में काम किया। सन् 78 में फिल्म **'अधूरा आदमी'** का निर्माण। फिल्म निर्माण की अगली कड़ी के रूप में 'लिबास' शुरु की जिसका निर्देशन गुलजार ने किया है। शबाना आजमी, नसीरूद्दीन शाह एवं राजबब्बर फिल्म के प्रमुख कलाकार हैं। फिल्म अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह (बंगलौर 1992) में भारतीय पेनोरामा में प्रदर्शित और म.प्र. फिल्म विकास निगम द्वारा फिल्म पुरस्कार 1992 में द्वितीय श्रेष्ठ, फिल्म के रूप में पुरस्कृत।सन् 1988 में दूरदर्शन पर प्रदर्शित धारावाहिक 'किस्सा शान्ति का' स्वतंत्र रूप से निर्देशित किया। सन् 1982 में फिल्म निर्माताओं के कल्याण हेतु गठित संस्था फिल्म प्रोड्यूसर बेलफेयर संगठन' के सचिव के तथा 1983 में 'एण्टी वीडियो पायरेसी संगठन' के अखिल भारतीय महामंत्री नियुक्त हुए। सन् 1984 में इम्पाकी कार्यकारिणी में निर्वाचित। सन् 1986 से फिल्म ट्रेड पत्रिका 'कम्पलीट सिनेमा' शुरु की तथा सन् 1988 से इसके सम्पादन का कार्यभार संभाला है। पता : रुपतारा स्टुडियो, दादा साहब फालके रोड दादर, बम्बई - 400 014

डॉ. विजय अग्रवाल

जन्म 20 जनवरी 1956, चन्द्रमेष, सरगुजा (म.प्र.)। शिक्षा - एम.ए. (हिन्दी) पी एच.डी.। साहित्य, संस्कृति एवं सिनेमा पर देश के अनेक पत्र- पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित। सिनेमा तथा साहित्य समीक्षा में विशेष रूचि। प्रकाशित पुस्तके हैं - कुंजबिहारी चौबे कृतित्व एवं व्यक्तित्व तथा स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में सामंतवाद। भारत (1987) संदर्भ ग्रन्थ, मन जिसका मजबूत तथा राष्ट्रकवि मैथिलीशरण नामक पुस्तकों का संपादन। महान पत्रकार बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' तथा सिनेमा पर एक संकलन प्रकाशनाधीन। उपराष्ट्रपति डॉ शंकर दयाल शर्मा के विशेष कार्याधिकारी के रुप में कार्यरत। पता : एक्स वाई 30, सरोजिनी नगर, नई दिल्ली 110023

डॉ. यासीन दलाल

जन्म 9 जनवरी 1944, उपलेटा, गुजरात। शिक्षा - एम.ए एल.एल.बी. पी.एच.डी। स्कूल एवं कॉलेज में शिक्षक के रूप में कार्य करने के उपरान्त पिछले सोलह वर्षों से सौराष्ट्र विश्वविद्यालय में पत्रकारिता विभाग के रीडर एवं विभागाध्यक्ष के रुप में कार्यरत। जनसत्ता, चित्रलेखा, विदुर एवं अन्य हिन्दी, अंग्रेजी एवं गुजराती पत्रिकाओं में स्तम्भकार एवं फीचर लेखन। साहित्यिक मासिक पत्रिका 'सन्दर्भ का सम्पादन। विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में भाग लेकर शोध पत्र पढ़े। सन् 1984 में पश्चिमी जर्मनी में फिल्म शिक्षा पर हुए सेमीनार में भाग लिया। सन् 1986 में बर्लिन फिल्म फेस्टीवल में भाग लिया। गुजरात सरकार एवं अन्य सामाजिक संस्था द्वारा लगातार पुरस्कृत एवं सम्मानित। विभिन्न प्रादेशिक एवं राष्ट्रीय सम्मेलनों में पत्रकारिता से संबंधित चौबीस से अधिक शोध पत्रों का वाचन हिन्दी, अंग्रेजी व गुजराती में लिखे हुए सत्रह ग्रन्थ प्रकाशित। पता - 5 सौराष्ट्र कला केन्द्र सोसायटी, राजकोट - 360 005.

पी. के. नायर

पी.के. नायर छठे दशक में केरल से बम्बई आए तथा फिल्म निर्देशक के तौर पर प्रशिक्षण प्राप्त करने लगे। स्वर्गीय मेहबूब, विमल रॉय एवं ऋषिकेश मुकर्जी के साथ कुछ वर्षों तक काम करने के उपरान्त उन्होंने स्वतंत्र रूप से निर्देशन के क्षेत्र में स्थापित होने का प्रयास किया। प्रतिभा एवं मौलिकता को पहचान कर फिल्म्स डिवीजन के प्रमुख सलाहकार स्वर्गीय भावनगरी ने उन्हें फिल्म इन्स्टीट्यूट ऑफ पूना में जाने की सलाह दी, जो उन दिनों आकार ले रहा था।

इस नए काम में अनन्त संभावनाओं को देखकर नायर ने 1961 में सन्दर्भ सहायक के रूप में कार्य शुरू किया। इसके बाद जब आर्काइव को संस्थान से पृथक कर स्वतंत्र इकाई के रूप में विकसित करने की योजना अमल में आई तब वे नई प्रोजेक्ट से जुड़ गए। सहायक क्यूरेटर के नवनिर्मित पद का दायित्व उन्होंने 10 नवम्बर 1965 को संभाला। सन् 1976 में इसी पद पर उनके अधिकारों एवं दायित्वों को काफी व्यापक बनाया गया। संस्थान के प्रमुख गिरीश कर्नाड एवं सूचना प्रसारण सचिव जमाल किदवई के प्रयासों में आर्काइवको एक स्वतंत्र शासकीय विभाग का दर्जा मिला। नायर 1984 में आर्काइव के संचालक के पद पर पदोन्नत हुए। अपने कार्यकाल में नायर ने पुरानी अप्राप्य फिल्मों के प्रिन्ट तलाश करने एवं दुर्लभ को सुलभ बनाकर सुरक्षित रखने के लिए अथक प्रयास किए। उन्हें पिछले 50 वर्षों से उपेक्षित पड़े खजाने को खोज कर सुरक्षित रखना था फिल्मों के स्वामित्व को कई बार खरीदने - बेचने की प्रवृत्ति एवं देखभाल में लापरवाही के कारण प्रिन्ट नष्ट हो रहे थे। उन्होंने हर संभव प्रयास किए। सैकड़ों व्यक्तियों की मदद ली तथा ऐतिहासिक महत्व के हजारों प्रिन्ट प्राप्त किए। मूक युग की तथा प्रारंभिक सवाक युग की फिल्में भी उन्होंने प्राप्त करने में सफलता पाई।

फिल्मों को दीर्घकाल तक सुरक्षित रखने के लिए किए गए प्रयासों के साथ ही उन्होंने फिल्म संस्कृति के देशव्यापी प्रचार के लिए भी उल्लेखनीय कार्य किए। फिल्म सोसायटी आन्दोलन का विस्तार, सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक संस्थाओं में श्रेष्ठ फिल्मों का प्रदर्शन, फिल्म निर्माण से जुड़े लोगों की चर्चाएं, परिचचाएं, व्याख्यान आदि आयोजित किए। इसके साथ ही उन्होंने विभिन्न विश्वविद्यालयों में 'फिल्म' को एक विषय के रुप में सम्मिलित करने के लिए राजी किया। फिल्मों से सम्बन्धित पुस्तकों- पत्र पत्रिकाओं को आर्काइव की लाइब्रेरी के लिए जमा करके उन्होंने शोधकर्ताओं को अनुसन्धान के लिए सामग्री उपलब्ध कराई। नायर ने विदेशों में जाकर कई फिल्म महोत्सवों का अवलोकन किया एवं विभिन्न देशों के 'आर्काइव की कार्यप्रणाली का अवलोकन किया। यहाँ से उन्होंने विदेशों में निर्मित ऐतिहासिक महत्व की फिल्मों के प्रिन्ट भी प्राप्त किए। नायर ने पड़ौसी देशों, बांगला देश एवं श्रीलंका में आर्काइव स्थापित करने में सलाहकार की भूमिका अदा की। सलाहकार के रुप में वे यूनेस्को की फिल्म आर्काइव्ज एक्सपर्ट कमेटी में भी रहे। 'एफ.आइ.ए.एफ.' के सदस्य के रुप में 1983 में वे प्रथम एशियाई के रूप में चुने गए। इस तरह लगभग चौथाइ सदी तक सेवाएं देते हुए वे 30 अप्रैल 1991 को एन. एफ. आइ के संचालक के रूप में सेवा निवृत्त हुए।

वी.बी. चन्द्रा

यहएक सुखद संयोग है कि फिल्म एण्ड टेलीविजन इन्स्टीट्यूट ऑव इण्डिया के वर्तमान निर्देशक **वी.बी.चन्द्रा** इसी संस्थान के छात्र रह चुके हैं । पचपन वर्षीय चन्द्रा ने एम.एम.सी की उपाधि इलाहाबाद विश्वविद्यालय से प्राप्त की तथा इसके उपरान्त सिनेमाटोग्राफी में डिप्लोमा इसी संस्थान से प्राप्त किया । छायांकन के साथ ही साहित्य एवं संगीत में उनकी गहरी रुचि है ।

उत्तरप्रदेश सरकार की सेवा में उन्होंने लघु फिल्मों के निर्माण किया है । आठ वर्ष तक वे वृत्त एवं समाचार सूचना चित्रों का निर्माण करते रहे । प्रतिष्ठा और ख्याति उन्हें विदेश तक ले गई तथा सन् 1960 में उनका काम देख विदेशी समालोचक अभिभूत हो उठे । विख्यात फिल्म इतिहासकार ने उन्हें एक 'क्रिएटिव फिल्म मेकर' कहा ।

चन्द्रा बाद में फिल्म्स डिवीजन में डाइरेक्टर हो गए । पिछले 6 वर्षों से वे चीफ प्रोड्यूसर के पद पर कार्यरत थे । जून 1991 में एफ. टी. आइ.आइ. में आए हैं ।

सन् 1990 से वे स्वयं लघु फिल्मों का महोत्सव आयोजित करने वाली इकाई से जुड़े हुए हैं। दरअसल ऐसे आयोजनों की परिकल्पना भी उन्होंने ही की है । 'लिपजिग, ओवरहामन, तथा 'क्रेको' की तर्ज पर इस महोत्सव की रूपरेखा तैयार की है । लघु फिल्मों का पहला महोत्सव उन्हीं के प्रयासों का फल था जो 1990 में बम्बई में उपराष्ट्रपति डॉ शंकरदयाल शर्मा द्वारा उद्घाटित हुआ था । इस महोत्सव को राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर सराहना मिली । हॉलीवुड के एक अखबार ने इसे विश्व विशिष्ट अन्तर्राष्ट्रीय महोत्सवों के समकक्ष निरूपित किया ।

पी.आई. बी. सूचना केन्द्र

भारतीय अन्तर्राष्ट्रीय फिल्मोत्सव देश का महत्वपूर्ण वार्षिक सांस्कृतिक पर्व है । इस उत्सव के बारे में राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मीडिया की दिलचस्पी काफी रहती है । अतः समारोह का विवरण सरलता से सर्वसुलभ करने का दायित्व **'प्रेस इन्फर्मेशन ब्यूरो'** को सौंपा गया है। मीडिया प्रतिनिधियों को समारोह में सम्मिलित होने के लिए विशेष रुप से अधिस्वीकृति प्रदान की जाती है । पी.आई.बी. द्वारा आवश्यक सूचना सामग्री वितरित करने का कार्य मीडिया केन्द्र द्वारा किया जाता है । इन्हीं केन्द्रों से महोत्सव में शामिल होने वाली राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय फिल्मों तथा व्यक्तियों के बारे में छायाचित्र आदि सामग्री दी जाती है । पत्रकार परिषदों का आयोजन तथा विशेष प्रेस प्रदर्शनों का आयोजन भी केन्द्र द्वारा किया जाता है । यहाँ उन अधिकारियों का संक्षिप्त परिचय कराया गया है जो राष्ट्रीय अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह से सम्बद्ध होते हैं ।

आई. राम मोहन राव

राममोहन राव मुख्य सूचना अधिकारी हैं । केन्द्र की सारी गतिविधियाँ 57 वर्षीय राव के निर्देशन एवं मार्ग दर्शन में सम्पन्न होती हैं । सम्पूर्ण प्रचार कार्य एवं पत्रकारों की सुविधा के लिए आवश्यक प्रबन्धों का दायित्व पिछले कई वर्षों से उनके द्वारा कुशलतापूर्वक निर्वाह किया जा रहा है ।

डी. एन. चतुर्वेदी

सूचना केन्द्र प्रभारी अधिकारी, 56 वर्षीय **डी.एन. चतुर्वेदी** प्रेस सम्पर्क संचालक हैं । केन्द्र की विभिन्न इकाइयों के कार्यों का निरीक्षण करना भी उनका दायित्व है । पत्रकार परिषद्, प्रचार सामग्री का वितरण, हिन्दी एवं उर्दू इकाई के पत्रकारों के अधिस्वीकृति प्रदान करना तथा विभिन्न समारोहों एवं प्रेस प्रदर्शनों के आयोजन की व्यवस्था करना भी उनके कार्यों में सम्मिलित है ।

एस.एन. मिश्रा

बावन वर्षीय **शम्भुनाथ मिश्रा** सूचना अधिकारी है तथा मीडिया केन्द्र के विभिन्न कार्यों की देखभाल करते हैं । पिछले ग्यारह वर्षों से कुशलतापूर्वक कार्य निर्वाह करने वाले मिश्राजी हिन्दी इकाई के प्रेस प्रदर्शन, अधिस्वीकृति एवं समारोहों के व्यवस्था प्रभारी हैं ।

राजू कोराह

छियालीस वर्षीय सूचना अधिकारी **राजू कोराह** सूचना केन्द्र में प्रेस प्रचार इकाई का कार्य देखते हैं । इसके साथ ही प्रेस प्रदर्शनों की देखभाल का दायित्व भी उन्हीं के सुपुर्द है ।

सी.आर. लेखरा

पचपन वर्षीय लेखरा अनुभाग अधिकारी के पद पर कार्यरत हैं । मीडिया केन्द्र की व्यवस्था, प्रेस प्रदर्शन, अधिस्वीकृति तथा प्रेस सुविधा आदि का कार्य सन् 1956 से देख रहे हैं ।

टी. आर. शर्मा

पचपन वर्षीय शर्मा मीडिया केन्द्र में सहायक के रूप में कार्य करते हैं । श्री शर्मा मुख्य रूप से प्रेस प्रदर्शनों की देखभाल का कार्य करते हैं ।

इनके अलावा बिष्ट का नाम भी उल्लेखनीय है, जो पत्रकारों/छायाकारों को अधिस्वीकृति पत्र, मुद्रित पुस्तिकाएं और महत्वपूर्ण सामग्री का प्रदाय मुस्कान के साथ करते हैं ।

एम.वी. रामकृष्णैया

एम.वी. रामकृष्णैया बंगलौर के एक वरिष्ठ फिल्म पत्रकार हैं । तीन दशकों से फिल्म समीक्षाएं लिखने के साथ अपने 'चित्र ज्योति' नामक कन्नड़ फिल्म साप्ताहिक पत्रिका का सम्पादन भी किया है । कन्नड़ सिनेमा साहित्य और छायाचित्रों का विशाल संग्रह आपके पास है । पता : सुचित्रा फिल्म सोसायटी 36, नाइंथ मेन बनशंकरी, सेकंड स्टेज बंगलौर - 560070 (कर्नाटक)

एच.एन. नरहरिराव

बंगलौर के फिल्म सोसायटी आंदोलन में एच.एन. नरहरिराव का महत्वपूर्ण स्थान है । व्यवसाय से इंजीनियर होते हुए आप दो दशक से फिल्म सोसायटी क्षेत्र मे सक्रिय हैं। सुचित्रा फिल्म सोसायटी के सचिव और फेडरेशन ऑफ फिल्म सोसायटी ऑफ इण्डिया की क्षेत्रीय परिषद् के सदस्य भी हैं ।

सतीश बहादुर

जिला मुरादाबाद (उत्तर प्रदेश) में सन् 1925 में जन्मे सतीश बहादुर की शिक्षा-दीक्षा इलाहाबाद में हुई । अर्थशास्त्र में एम. ए. (1947) करने के बाद वे कानपुर के डी.ए.वी. कालेज में व्याख्यता के पद पर नियुक्त हुए । सन् 1950 से 1958 तक यहाँ रहने का उपरान्त वे सन् 1963 तक 'यूनिवर्सिटी इन्स्टीट्यूट आफ सोशल सांइसेस आगरा में अध्यापन करते रहे । अर्थशास्त्र का अध्यापन करते हुए उनकी रूचि काव्य, चित्रकला एवं फिल्मों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करने के प्रति बढ़ी । इसी दौरान उन्होंने यूनेस्को द्वारा किए जा रहे अध्ययन में सक्रिय भाग लिया । इस अध्ययन का विषय था, सत्रह विभिन्न संस्कृतियों में फिल्मी नायक की छवि । इस प्रोजेक्ट पर उनके द्वारा किये गये व्यवस्थित कार्य ने अकादमी क्षेत्रों का ध्यान आकर्षित किया । इसी दौरान उन्होंने गंभीर अध्ययन की दृष्टि से फिल्म सोसायटियों से गठन का कार्य हाथ में लिया ।

फिल्म एप्रिसिएशन में उनकी रूचि एवं गंभीर ज्ञान को देखते हुए फिल्म इन्स्टीट्यूट आफ इण्डिया, पूना में उन्हें फिल्म एप्रीसिएशन विषय के प्रोफेसर पद पर नियुक्त किया गया । इस तरह अर्थशास्त्र से फिल्म शास्त्र की ओर मुड़ा यह व्यक्ति पूना के फिल्म इन्स्टीट्यूट का अभिन्न अंग बन गया । सन् 1963 से 1983 तक वे फिल्म सौन्दर्य बोध एवं फिल्म

इतिहास का अध्यापन करते रहे। अपनी विशिष्ट शैली, असामान्य कौशल एवं गंभीर ज्ञान के कारण वे छात्रों में काफी लोकप्रिय रहे। सरकारी सेवा से नियमित अवकाश ग्रहण करने के बाद भी वे मानद व्याख्याता के तौर पर संस्थान में 1986 तक अध्यापन करते रहे। प्रोफेसर बहादुर के विशिष्ट शिष्यों में जया बच्चन, मणिकौल, शबाना आजमी, नसीरूद्दीन शाह, केतन मेहता, ओमपुरी, अदूर गोपाल कृष्णन, सईद मिर्जा और के.के. महाजन हैं।

फिल्म संस्थान में दो दशक तक सेवाएँ देते हुए प्रोफेसर बहादुर ने कई सेमिनारों, महोत्सवों एवं कमेटियों में भारत का प्रतिनिधित्व किया। कई फिल्मी महोत्सवों में वे जुटे भी रहे। प्रोफेसर बहादुर ने संस्थान में अध्यापन तक ही स्वयं को सीमित नहीं रखा। संस्थान के बाहर भी फिल्म एप्रीसिएशन आन्दोलन का विस्तार करने के लिए वे सक्रिय बने रहे। सांस्कृतिक संस्थाओं के गठन एवं विस्तार में उनकी रुचि को देखते हुए फिल्मी मामलों में कई सरकारी विभागों एवं विश्वविद्यालयों ने उनका सहयोग लिया। उनकी प्रसिद्धि का दायरा तथा कार्य का क्षेत्र लगातार बढ़ता रहा। नेशनल फिल्म आर्काइव्ज के निदेशक के साथ मिलकर फिल्म एप्रीसिएशन कोर्स का आयोजन करते रहे। इनके प्रयासों से कलकता के जाधव पर विश्वविद्यालय में एम.ए. स्तर का दो वर्षीय फिल्म अध्ययन पाठ्यक्रम 1992 में प्रारंभ होगा।

दूरदर्शन के लिए तेरह अंकी *बातें फिल्मों* की नामक धारावाहिक की पटकथा भी उन्होंने लिखी। इसके बाद उन्होंने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अनुरोध पर 'अण्डरस्टेण्डिंग सिनेमा (15 भाग) नामक अंग्रेजी धारावाहिक की पटकथा लिखी। यह धारावाहिक शैक्षणिक कार्यक्रमों में प्रसारित किया गया। 'वीडियो ग्रंथ' स्तर के इस कार्यक्रम की सफलता एवं प्रशंसा के बाद उन्होंने 'पाथेर पांचाली' की पटकथा का सूक्ष्म विश्लेषण किया। दो खण्डों वाले इस वीडियो ग्रंथ की पहला खण्ड प्रदर्शित हो चुका है। दूसरे की तैयारी चल रही है।

सामान्य सिने दर्शक के लिए वे फिल्म एप्रीसिएशन पर पुस्तक लिख रहे हैं। यह पुस्तक एक साथ कई भाषाओं में प्रकाशित होगी। पुस्तक के साथ एक छोटी वीडियो कैसेट भी रहेगी जिसमें विभिन्न बिन्दुओं की दृश्य व्याख्या रहेगी। ●

प्रो. सतीश बहादुर का पता है वृन्दावन **759/128,** *प्रभात रोड, पुणे* - **411004** *(महा.)*।

वाय.एन. इंजीनियर

वाय.एन .इंजीनियर ने अतिरिक्त संचालक नेशनल फिल्म आर्काइव का पदभार 1 सितम्बर 1991 से ग्रहण किया है। स्नातक की उपाधि प्राप्त करने के उपरान्त इन्जीनियर ने 'फिल्म एण्ड टेलीविजन इन्स्टीट्यूट ऑफ इण्डिया, में काम करना शुरू किया। बाद में सिनेमाटोग्राफी का पाठ्यक्रम किया। फिल्मी दुनिया में छायाकार जाल मिस्त्री के साथ उन्होंने काम किया है। सन् 1969 में फिल्म्स डिवीजन ने उन्हें सहायक कैमरामेन के पद पर नियुक्त करने का प्रस्ताव रखा। उन्होंने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। यहाँ काम करते हुए उन्होंने कई लघु फिल्मों का सुन्दर छायांकन करते हुए प्रतिष्ठा अर्जित की। फिल्म्स डिवीजन ने उन्हें छः माह के पाठ्यक्रम हेतु 'टेलीविजन ट्रेनिंग कोर्स' मण्डी हाउस दिल्ली भेजा। यहाँ उन्होंने दूरदर्शन के कार्यक्रम प्रस्तुति के कई पक्षों की सूक्ष्म जानकारी प्राप्त की। इसके बाद दिल्ली दूरदर्शन ने उनकी सेवाएं प्राप्त कर ली। उन्हें प्रतिनियुक्ति पर फिल्म एण्ड टेलीविजन इन्स्टीट्यूट पूना की 'टी.वी.विंग' में व्याख्याता बनाकर भेजा। सन् 1975 से 1978 तक उन्होंने यह कार्य किया।

इंजीनियर को इसके बाद 'फिल्मस' में प्रोड्यूसर के पद पर पदोन्नत किया गया।

जयप्रकाश चौकसे

जयप्रकाश चौकसे का जन्म 1939 में मध्यप्रदेश के बुरहानपुर में हुआ। अंग्रेजी और हिन्दी साहित्य में एम.ए. करने के बाद इंदौर के गुजराती कॉलेज में आपने 1964 से 1977 तक अँग्रेजी का अध्यापन किया। सन् 1954 में राजकपूर की फिल्म **श्री 420** देखकर आपके मन में यह विश्वास गहरा हो गया कि फिल्म साहित्य का माध्यम है।

1977 से 1981 के दौरान आपने **शायद, हरजाई, कन्हैया और वापसी** (12 रील) फिल्मों का निर्माण किया। **शायद** तथा **कत्ल** फिल्म की पटकथाएँ लिखीं। **गृहयुद्ध** नामक एक पटकथा पर फिल्मकार **पूर्णचन्द्र राव** ने तमिल फिल्म पिछले दिनों रिलीज की है। **सृजन, रेशमा** और **सेंटर स्प्रेड** नामक पटकथाएँ तैयार हैं। 1973 से जयप्रकाश चौकसे, फिल्मों के गम्भीर पक्ष पर लेखन एवं समीक्षा कार्य में संलग्न हैं। अनियमित रूप से आपकी रचनाएँ नई दुनिया, नवभारत टाइम्स, स्क्रीन, पटकथा, ट्रेड गाइड, फिल्म इन्फारमेशन, माधुरी, साप्ताहिक हिंदुस्तान और दैनिक भास्कर के पृष्ठों पर प्रकाशित हुई हैं। 1977 में राजकपूर के सम्पर्क में आए और पूरे कपूर परिवार के अंतरंग तथा विश्वस्त सहयोगी बन गए। 1982 में **प्रेमरोग** रिलीज कर फिल्म वितरण व्यवसाय को अपनाया। **हिना** के प्रदर्शन पश्चात् यह व्यवसाय, छोटे पुत्र को सौंपकर जयप्रकाश चौकसे, लेखन व्यवसाय को पूर्णकालिक अपनाना चाहते हैं। जननायक राजकपूर नामक उनकी पुस्तक जून 1991 में प्रकाशित हुई हैं।

सुधीर मिश्र

मध्यप्रदेश के शहर सागर से सम्बद्ध सुधीर मिश्र ने मुख्य सहायक निर्देशक के रूप में फिल्मी कैरियर प्रारम्भ किया। सुप्रसिद्ध निर्देशक विनोद चोपड़ा, कुन्दन शाह और सईद अख्तर मिर्जा के साथ कार्य किया। स्वतंत्र निर्देशन में बनी पहली फिल्म **ये वो मंजिल तो नहीं**। बाद में **मैं जिन्दा हूँ** का निर्देशन।

सुधांशु मिश्र

निर्देशक सुधीर मिश्र के छोटे भाई सुधांशु मिश्र भी फिल्म निर्देशन के क्षेत्र में सक्रिय हैं। रांगेय राघव के उपन्यास पर आधारित चर्चित टीवी सीरियल **कब तक पुकारूँ** का निर्देशन किया। मध्यप्रदेश फिल्म विकास निगम के लिए **भीम बैठका** पर एक वृत्त चित्र **निशान** का निर्देशन। वर्तमान में फिल्म **धारावी** निर्माणाधीन। आप भी मध्यप्रदेश के सागर नगर से हैं।

हरमन्दिर सिंह हमराज

अठारह नवम्बर 1951 को जन्मे हरमन्दिर हमराज ने हिन्दी सिनेमा के गीतों के वृहत कोष के प्रकाशन का अनोखा काम किया है। भारतीय स्टेट बैंक कानपुर में कार्यरत हमराज ने देश भर घूमकर, गीतकारों एवं संगीतकारों से सम्पर्क कर दुर्लभ जानकारी हासिल की। बाद में 1931 से लेकर 1970 तक दस-दस साल के चार खण्डों का प्रकाशन किया। इन खण्डों में एक-एक दशक के सम्पूर्ण गीतों की दुर्लभ जानकारी संकलित है। 1971 से 80 तक के फिल्मी गीतों के कोष का कार्य हमराज के सहयोग से नागपुर के विश्वनाथ चटर्जी ने किया है।

जो काम किसी गीतकार, गायक, संगीतकार, ग्रामोफोन कम्पनी या आकाशवाणी ने नहीं किया उस काम को विज्ञान स्नातक हमराज ने कर असंभव को सम्भव बनाया है। उनका पता है: 2331 गोविन्दपुरी, पंजाब एण्ड सिंध बैंक के ऊपर, कानपुर (उ.प्र.)

** अवधेश व्यास * बद्रीप्रसाद जोशी (बम्बई) * लोकेन्द्र चतुर्वेदी * सरला लोकेन्द्र * सुनील मिश्र द्वारा प्रस्तुत*

रंगभूमिः स्वर्ण जयंती

■ प्रमोद गुप्ता

सन् 1931 में मूक फिल्मों का बोलना एक स्तब्ध कर देने वाला अचम्भा माना गया था। मूक सिनेमा को सवाक् होते देख सब आश्चर्यचकित थे। इस कारण हिन्दी फिल्मों की लोकप्रियता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। फिल्में अधिक मात्रा में बनने लगी। फिल्मों के सवाक् होने पर दर्शकों की प्रतिक्रिया देखते हुए यह सोचना स्वाभाविक था, कि जब फिल्मों के बोलने को इतना पसन्द किया गया हैं, तो उसके बारे में पढ़ना भी पसन्द किया जाएगा।

और इसी सोच का परिणाम 1931 में दिल्ली से रंगभूमि के प्रकाशन के रूप में सामने आया। दूसरे शब्दों में हिन्दी फिल्म पत्रकारिता का इतिहास उतना ही पुराना है, जितना कि सवाक् हिन्दी फिल्मों का।

संघर्ष के कारण कुछ समय के लिए बंद हो गई 'रंगभूमि' को सन् 1941 में नए स्वरूप के साथ फिर एक साहसिक पुरुष ने निकालने का प्रयास किया। उस पुरुष का नाम है **धर्मपाल गुप्ता**।

मात्र पचहत्तर रुपए की राशि से इटेलियन कागज का एक रिम लेकर उन्होंने 1941 में रंगभूमि का प्रकाशन पुनः आरम्भ किया। 5 जनवरी 1941 को इसका पहला प्रकाशन आरम्भ हुआ, जिसके मुख पृष्ट पर उस जमाने की लोकप्रिय नायिका **रमोला** का चित्र था। तब से अब तक रंगभूमि निरन्तर प्रकाशित हो रही है। सिर्फ 1947 में बटवारे के कारण कर्फ्यू लगने पर दो अंक प्रकाशित नहीं हो सके।

जनवरी 1991 में रंगभूमि ने अपने प्रकाशन के पचास वर्ष पूरे किए हैं। अपने प्रकाशन के स्वर्ण जयंती वर्ष पूरे करने वाली रंगभूमि पहली पत्रिका है। ऐसा नहीं है कि 50 वर्ष का यह सफर रंगभूमि के लिए सहज और सुगम रहा है। अनेक बार उसे अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए संघर्ष करना पड़ा है। प्रकाशन के आरम्भ में ही, रंगभूमि के लिए संकट तब बना जब उसके मुकाबले में **रसभरी** एक अन्य फिल्म प्रकाशन दिल्ली से ही आरम्भ हुआ। उसके मुकाबले में रंगभूमि को अपनी कीमत कम करनी पड़ी। एक बार नहीं अनेक बार। अन्त में 'रसभरी' से मिलकर दोनों ने एक कीमत तय की।

जिस तरह फिल्मों की संख्या बढ़ी, उसी तरह हिन्दी फिल्म पत्रिकाओं का प्रकाशन भी। देखते ही देखते राजधानी से चित्रपट, युगछाया, चित्रलेखा जैसी फिल्मों का प्रकाशन आरम्भ हुआ। इस कारण रंगभूमि के सामने फिर अपने अस्तित्व को बनाये रखने का संकट आ गया। तब धर्मपाल गुप्ता ने पत्रिकाओं के प्रकाशन में एक नया प्रयोग किया। उन्होंने फिल्मों के पूरे सम्वादों सहित सम्पूर्ण ड्रामे प्रकाशित करने आरम्भ किए। जब रंगभूमि में सर्वप्रथम फिल्म ड्रामा प्रकाशित हुआ, तो सामाजिक फिल्म पत्रिकाओं ने इसकी कटु आलोचना की। बाद में स्वयं उन्ही पत्रिकाओं ने फिल्म ड्रामे प्रकाशित करने आरम्भ किए क्योंकि इस कारण रंगभूमि की प्रसार संख्या में लगातार वृद्धि होने लगी थी। रंगभूमि के जिस अंक में फिल्म **मुगले आजम** का ड्रामा छापा था, उसकी 34,000 प्रतियां प्रकाशित हुई थी जो तब तक का रिकार्ड था। बाद में अप्रदर्शित फिल्मों का चलन चला और फिल्म के प्रदर्शन से पूर्व ही ड्रामे छापने लगे। आज भी फिल्म पत्रिकाओं के वे छपते हैं।

पाठकों के लिए निरन्तर रुचिकर बनाए रखने के लिए रंगभूमि ने विशेषांक निकालन आरम्भ किए। रंगभूमि की सफलता का एक कारण यह भी रहा, कि इसके आरम्भ से ही साहित्य और सिनेमा का संगम रहा है। आरम्भ में अनेक साहित्यिक कृतियाँ इसमें प्रकाशित हुई। रंगभूमि जैसी पत्रिकाओं में कहानियाँ प्रकाशित कर अनेक लेखक फिल्मों में पहुँचे।

रंगभूमि तथा अन्य प्रत्रिकाओं के कारण ही एक तरह से फिल्म पत्रकारिता को मान्यता मिली। पहले दैनिक पत्रों में फिल्म सम्बन्धित सामग्री नहीं होती थी। पाँचवे दशक के आरम्भ में इन पत्रिकाओं की लोकप्रियता को देखकर ही दैनिक पत्रों में फिल्म समीक्षाएं आरम्भ हुई। फिर लेख आदि प्रकाशित होने लगे। आज तो अंग्रेजी पत्र भी सप्ताह में एक या दो फिल्म-पृष्ठ निकालने लगे है।

रंगभूमि : 1941

रंगभूमि : 1991

लेकिन इससे बड़ी विडम्बना क्या होगी, कि जिस हिन्दी पत्रकारिता के कारण आज फिल्म पत्रकारिता लोकप्रिय स्वरूप ले पायी है, उसी को सरकार तथा निजी दोनों स्तर पर अंग्रेजी की अपेक्षा का शिकार होना पड़ रहा है।

दर्शकों के दिलों पर राज करने वाला 'राजमन्दिर'

जयपुर के राजमन्दिर सिनेमा का शुमार न सिर्फ भारत बल्कि एशिया के चुनिन्दा अच्छे छविगृहों में होता है। राजमन्दिर की भव्य और विशाल इमारत अपने शिल्प और सौन्दर्य के लिए तो विख्यात है ही, यहाँ का उत्तम साउण्ड सिस्टम और सत्तर मिलीमीटर की फिल्मों के लिए उपयुक्त विशाल परदा दर्शकों को अद्भुत आनंद की अनुभूति कराते हैं।

शहर के व्यस्ततम क्षेत्र एम.आई. रोड़ पर पाँच बत्ती के निकट स्थित यह छविगृह 1976 में शुरू हुआ था। बम्बई के वास्तुविद् डब्ल्यू.एम. नामजोशी की देखरेख में राजस्थान के कारीगरों ने ही इसका निर्माण किया था। छविगृह के नजदीक ही एक पब्लिक स्कूल भी हैं, जिसके प्रबंधकों ने स्कूल के निकट सिनेमा हॉल बनाने पर आपत्ति उठा दी थी। लिहाजा मामला अटक गया और छविगृह का निर्माण रोक देना पड़ा। काफी विचार-विमर्श के बाद स्कूल प्रबंधकों ने अपनी आपत्ति वापस ले ली मगर इस चक्कर में छविगृह के निर्माण में दस साल व्यर्थ हो गये। छविगृह में प्रदर्शित पहली फिल्म थी *चरस*।

राजमन्दिर की कुल बैठक क्षमता एक हजार 186 दर्शकों की है। सर्वाधिक 450 सीटें ड्रेस सर्किल श्रेणी में हैं, जिसे यहाँ 'रूबी' कहा जाता है। टिकट दर 4 रूपये से लेकर 13 रूपये तक है।

राजमंदिर की मुख्य इमारत में दाखिल होते ही दर्शक एक ऐसी दुनिया में जा पहुँचते हैं, जिसकी कल्पना भारतीय सिनेमाघरों के बारे में आम तौर पर नहीं की जाती। चारों तरफ बिछा नीला-मखमली कालीन, रंग-बिरंगी रोशनी से दमकते झाड़-फानूस, शास्त्रीय संगीत की मद्धिम और मधुर धुन तथा वातावरण में रची-बसी भीनी-भीनी खुशबुएँ-कुल मिलाकर एक अद्भुद समाँ बनता है।

दर्शकों की सुविधा का भी सिनेमा प्रबंधकों ने पूरा ध्यान रखा है। कुर्सियाँ बेहद आरामदायक हैं और साउण्ड व्यवस्था भी अत्याधुनिक हैं। हाल ही यहाँ की ध्वनि व्यवस्था को फोर ट्रेक स्टीरियोफोनिक में तब्दील कर दिया गया है। इस तरह दर्शक अब फिल्म की पट्टी पर अंकित प्रत्येक ध्वनि का आनंद उठा सकते हैं।

इन्हीं सब कारणों से यहाँ फिल्म प्रदर्शित करने की होड़ वितरकों में लगी रहती है। मगर एक बार प्रदर्शित होने के बाद कोई फिल्म जल्दी यहाँ से नहीं उतरती। भारी संख्या में पर्यटक भी प्रतिदिन इसे देखने आते हैं। उन फिल्मों की सूची काफी लम्बी है जो *राजमन्दिर* में सौ या अधिक दिनों तक चलती रहीं। प्रमुख नाम हैं *तराना, अवतार, राम तेरी गंगा मैली, प्रतिघात, मैने प्यार किया*।

समूह में आने वाले लोगों के लिए यहाँ टिकट की अलग व्यवस्था है। छात्रों को भी प्राथमिकता से टिकट दिया जाता हैं, फिर भी यहाँ टिकट हासिल करना थोड़ा मुश्किल काम है। यह छविगृह अपनी उम्र का डेढ़ दशक पूरा कर चुका हैं, फिर भी इसका वही सौन्दर्य आज भी बरकरार हैं। ●

अमृत महोत्सव की ओर प्रभात थियेटर, पुणे

बढ़ती कीमतों, भारी कर बोझ, टी.वी./वी.सी.आर. तथा डिश एन्टीना का विस्तार ऐसे कारण हैं, जो देश के फिल्मोद्योग की कमर तोड़ रहे हैं। इन्ही कारणों से देश भर में थिएटरों को तोड़कर व्यावसायिक काम्प्लेक्स बनाए जा रहे हैं।

विपरीत परिवर्तनों की आँधी के बावजूद पूना का *प्रभात थिएटर* अविचलित हैं। विष्णुपन्त दामले तथा बाबूराव पाई की साझीदारी में निर्मित इस थिएटर का संचालन उनके बेटे ए.वी. उर्फ दादा साहब दामले तथा शरद पाई कर रहे हैं।

इन्दौर के सरदार (स्वर्गीय) आर.एम.किसे द्वारा बनवाई गई यह इमारत प्रभात समूह को 70 वर्ष की लीज पर दी गई थी। इस थिएटर में पहली फिल्म 'लव मी टु नाइट' 21 सितम्बर 1934 को प्रदर्शित की गई थी। प्रभात फिल्म कम्पनी द्वारा निर्मित पहली फिल्म इस थिएटर में प्रदर्शित की गई थी। वह 'अमृत मंथन' थी। स्वर्गीय वी. शान्ताराम द्वारा निर्देशित इस फिल्म के बाद यहाँ अब तक 700 से भी ज्यादा फिल्में प्रदर्शित की जा चुकी हैं। 28 फिल्मों ने सिल्वर जुबली मनाई। इनमें 'संत तुकाराम' 'संत ज्ञानेश्वर' 'रामशास्त्री', 'चाँद', 'रतन', 'मायाबाजार', तथा 'भाभी' हैं। इस वर्ग में वर्ष 1991 में एकापेक्षा एक भी शामिल हुई है।

उन दिनों बैठक व्यवस्था सात वर्गों में विभाजित थी। चार आने से लेकर एक रुपए आठ आने तक की दरों के टिकट होते थे। वक्त के बदलाव तथा थिएटर के नवीनीकरण के कारण अब सिर्फ 2 वर्ग हैं तथा 9 सौ सीटें हैं।

प्रभात थिएटर में मराठी, हिन्दी, अँग्रेजी आदि भाषाओं की फिल्में तो दिखाई ही जाती हैं साथ ही कभी कभी यहाँ मराठी नाटकों का मंचन भी होता है। 'कुल वधू' ऐसा ही नाटक था जिसने 40 के दशक में यहाँ धूम मचा दी थी।

यह थिएटर दक्षिणी महाराष्ट्र का सर्वाधिक महत्वपूर्ण थिएटर है। यहाँ मराठी फिल्मों के प्रदर्शन को प्राथमिकता दी जाती है। डायमण्ड जुबिली वर्ष की ओर मंथर गति से बढ़ रहे इस थिएटर के बारे में उल्लेखनीय तथ्य यह है कि अब तक न तो यहाँ के मालिकों में परिवर्तन हुआ और न ही नाम बदला गया। ●

दुर्लभ रेकार्ड संग्राहक : सुधीर दोडवड़कर

विश्व के जिन हिस्सों में भारतीय फिल्मों के दीवाने मौजूद हैं वहाँ फिल्मी गीतों के ग्रामोफोन रेकार्डों का संग्रह करने वाले शौकीन भी मौजूद हैं। भारत में ऐसे ही एक विशिष्ट संग्राहक पूना के सुधीर दोडवड़कर हैं।

एक निजी कम्पनी में चीफ एक्जीक्यूटिव के तौर पर काम करने वाले 44 वर्षीय सुधीर के पास सी.ए. की डिग्री हैं। संगीत का शौक उन्हें बचपन से था। उनके दादा को शास्त्रीय एवं उपशास्त्रीय संगीत के ग्रामोफोन रेकार्ड सुनने का शौक था। वे ब्रिटेन में बने एच.एम.वी. के 1930 के मॉडल वाले फोनोग्राफ पर इन रेकार्डों को सुनकर आनन्द लेते थे। अपने दादा का संग्रह तथा फोनोग्राम उनके पास सुरक्षित है तथा चालू हालत में है।
सुधीर को सन् 71-72 के दौरान ग्रामोफोन रेकार्ड संग्रह का चस्का लगा। सन् 1940 से 1960 तक की फिल्मों का संगीत उन्हें प्रिय था। इसी अवधि के ग्रामोफोन रेकार्ड जमा करने का अभियान उन्होंने शुरु किया। इस समय एल.पी. तथा ई.पी. का दौर शुरु हो चुका था। वे 78 आरपी.एम. की रेकार्डों का संग्रह करने लगे। वे पूरे भारत की दुकानों से सम्पर्क कर अपनी रूचि की रेकार्डों को खरीदने लगे। अपने इस अभियान का जिक्र करते हुए वे कहते हैं, जब कभी मुझे नए शहर में जाने का मौका मिलता था मैं सबसे पहले वहाँ के चोर बाजार, जूना बाजार यहाँ तक कि वेश्याबाजार का चक्कर भी काट आता था। इन स्थानों में उपेक्षित पड़े कई दुर्लभ रेकार्ड मुझे वाजिब कीमत पर मिल जाते थे। इस समय उनके संग्रह में लगभग तीन हजार 78 आरपी. एम. रेकार्ड, 300 एल.पी. तथा ई.पी. तथा 600 आडियो टेप हैं। इनमें अत्यंत दुर्लभ डब किए हुए फिल्मी गीत हैं। सुधीर के प्रिय संगीतकारों में अनिल विश्वास, ओ.पी. नैय्यर, तलत महमूद, तथा गायिका गीता दत्त है। उनके संग्रह में अधिकांश रचनाएं इन्हीं चारों की हैं। वे बड़े संग्रहकर्त्ता की अपेक्षा दुर्लभ संग्रहकर्त्ता के रूप में अपनी पहचान बनाना चाहते हैं।
उनके पास जिन दुर्लभ रेकार्डों का संग्रह है उनमें पण्डित हुस्नलाल का ठुमरी गायन एवं वायलिन वादन तथा 1950 में बनी फिल्म 'अनमोल रतन' में विनोद द्वारा गाए गए गाने भी हैं। इन गीतों को फिल्म से निकाल दिया गया था तथा इनकी रेकार्ड भी जारी नहीं की गई थी। सुधीर का कहना है कि बड़े गुलाम अली खाँ की विख्यात ठुमरी 'क्या करूँ सजनी आए न बालम' उनके पास पार्श्वगायिका आशा भोसले के स्वर में भी मौजूद है। आशा जी ने इसे सिर्फ हारमोनियम की संगत पर गाया है। उनके पास संगीतकारों द्वारा ट्रायल पीस के रूप में तैयार किये गये रेकार्ड भी हैं।

अपने संग्रह से दोडवड़कर पूरी तरह से संतुष्ट हैं। संग्रह की प्रक्रिया को जारी रखे हुए हैं। उन्होंने कई बार एच.एम.वी. (म्युजिक इण्डिया) को अपने संग्रह से दुर्लभ गीत दिए हैं। ओ.पी. नय्यर, सज्जाद हुसैन, अनिल विश्वास, नौशाद जैसे संगीतकार तथा तलत जैसे गायकों ने उनका संग्रह देखा तथा अपनी ऐसी रचनाओं को सुना जिनके प्रति अब उनके पास भी नहीं हैं। आजकल वे पूना से प्रकाशित होने वाले मराठी अखबार 'केसरी' के लिए नई जारी होने वाली आडियो कैसेट का परिचय लिखते हैं।

● (शक्ति)

संगीत प्रेमी डाकिया : उदय द्रविड़

श्यामवर्ण का डाकिया कन्धों पर पत्रों, पार्सलों तथा पैकिटों का बोझ लादे पूना की सड़कों पर अक्सर पैदल चलता हुआ दिखाई पड़ता हैं। अधेड़ उम्र के इस डाकिए का नाम उदय द्रविड़ है। ड्यूटी के बाद हिन्दी फिल्मों के गीतों का संकलन करना इसका शौक है।

उदय द्रविड़ के दादा पण्डित लक्ष्मण शास्त्री सामवेद का सस्वर पाठ करते थे। इस पाठ के ग्रामोफोन रेकार्ड उस जमाने में तैयार किये गये थे जिनमें से कुछ आज भी पूना के भाण्डारकर संस्थान में सुरक्षित हैं। उदय द्रविड़ के पिता हिन्दी फिल्मों के शौकीन थे। 1948 में प्रदर्शित हिन्दी फिल्म **मेला** को उन्होंने सौ बार देखा था। मुकेश तथा शमशाद बेगम उनके प्रिय पार्श्व गायक थे। 'सुनहरे दिन', 'शबनम' तथा स्वर्गीय महबूब की फिल्म 'अनोखी अदा' से वे बेहद प्रभावित थे।

उदय को फिल्मों के प्रति लगाव विरासत के तौर पर मिला। वे फिल्म संगीत के विकास तथा इस विधा के ऐतिहासिक व्यक्तित्वों से बचपन में ही परिचित हो गए। उन्होंने सन् 1980 से ग्रामोफोन रेकार्डों का संग्रह शुरु किया है। 78 आरपी.एम. के 5 सौ रेकार्ड, 100 एल.पी. 1100 ई.पी. एवं 150 आडियो कैसेट का संग्रह तैयार कर लिया है। पिछले दिनों उनके एक परिचित को घर का पुराना कबाड़ा साफ करने के दौरान पुरानी फिल्मों के गानों के 70 रेकार्ड मिले। यह अनमोल खजाना भी द्रविड़ को उपहार में मिल गया।

उदय द्रविड़ के संग्रह में कुछ ट्रायल रेकार्ड ऐसी फिल्मों की हैं, जो हिन्दी एवं मराठी दोनों ही भाषाओं में बनी थीं। सीता स्वयंवर (1948) 'सैंया' म.प्र. के संगीतकार सज्जाद हुसैन , आदि फिल्मों के ऐसे रेकार्ड उनके पास हैं, जो परदे पर प्रदर्शन के वक्त कट गये थे। सबसे दुर्लभ रेकार्ड उस भारतीय फिल्म का है जिसके लिए सबसे पहले ग्रामोफोन रेकार्ड बने तथा जिन्हें फिल्म के मूल साउण्ड ट्रेक से रेकार्ड पर 1932 में जर्मनी में उतारा गया। द्रविड़ के पास उस फिल्म के चार रेकार्ड हैं ●

खण्ड ग्यारह ● विशेष साक्षात्कार

अग्निपथ पर उम्र का पचासवाँ पड़ाव

■ खालिद मोहम्मद

शहर की सड़कों पर नायिका के साथ कार पर सवार होकर निकलने वाले अमिताभ बच्चन की एक झलक पाने के लिए हजारों लोगों का उमड़ता सैलाब। पुलिस के डण्डे झेलते हुए कार तक पहुँचनेवाला अखबार विक्रेता लड़का, जो इसरार करता है कि उसकी चिकनी पत्रिकाओं में से कुछ अमित जी खरीद लें। सभी पत्रिकाएं घर पर पड़ी हैं मगर फिर भी वे खरीद कर कार में कुछ पत्रिकाएं डाल लेते है। लड़का मुस्कराता हुआ बुदबुदाता है-अब दोस्तों को बताऊँगा कि अमित मेरे ग्राहक हैं"। लोकप्रियता की इस ऊँचाई को सन् 70 के दशक से निरंतर कायम रखने वाले इस महानायक का यह साक्षात्कार शूटिंग के दौरान 'लंच ब्रेक' में होटल में लिया गया।

बीस वर्षों तक निरंतर अभिनय करते रहने के बाद अब तो सब कुछ आसान लगता होगा?

हर बार कैमरे के सामने आने के पहले चिंता, आशंका तथा चुनौती के भाव घेरे रहते हैं तथा अनिश्चय की स्थिति रहती है। यही ख्याल आता है कि जो काम आज तक रहे हैं वह लोगों को पसन्द आएगा भी या नहीं। ठीक होगा या नहीं।

ऐसा तब भी होता है क्या, जब दृश्यों या प्रसंगों की पुनरावृत्ति हो? लगभग वैसा ही अभिनय पहले किया जा चुका हो? तब तो चिंता और भी बढ़ जाती है। पुनरावृत्ति को दर्शक तब तक स्वीकार नहीं करेंगे, जब तक उसे बिल्कुल अलग ढंग से प्रस्तुत न किया जाए। कहानी तथा मूल ढाँचा तो बदलता नहीं इसलिए स्थिति को स्वीकार करते हुए स्वयं को सर्वोत्तम रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास करना पड़ता है।

क्या कैमरे के सम्मुख जाते हुए हर बार आप अपने शरीर के प्रति 'काशंस' रहते हैं?

हाँ, ऐसा ही होता है। समझ नहीं पाता हूँ कि हाथों

अमिताभ को राष्ट्रीय सम्मान : फिल्म अग्निपथ

को कहाँ और कैसे रखूँ। परदे पर कैसा नजर आऊँगा इस बारे में तो हमेशा 'काशंस'रहा हूँ। स्टुडियो में तो शूटिंग काफी नियंत्रित माहौल में होती है क्योंकि यहाँ दर्शकों की ज्यादा भीड़ नहीं रहती। आउटडोर शूटिंग के दौरान दर्शकों की भीड़ को नियंत्रित रखना काफी कठिन हो जाता है। ऐसी स्थिति में लाख कोशिश करने के बावजूद स्वाभाविक अभिनय करना काफी मुश्किल हो जाता है। इसके ठीक विपरीत स्टुडियो में तनावमुक्त एवं व्यवस्थित रहकर अच्छा काम किया जा सकता है।

क्या अभिनय आपको आज भी उत्तेजित करता हैं?

बेशक, करता है। जब यह उत्तेजना समाप्त हो जाएगी तब मैं यहाँ करूँगा क्या?

क्या अब तक यह रोजमर्रा का व्यवसाय महसूस नहीं हुआ?

हाँ, यह रोजमर्रा का काम है मगर उत्तेजक एवं उत्साहवर्धक।

क्या अभिनेता के रूप में आपके विकास की
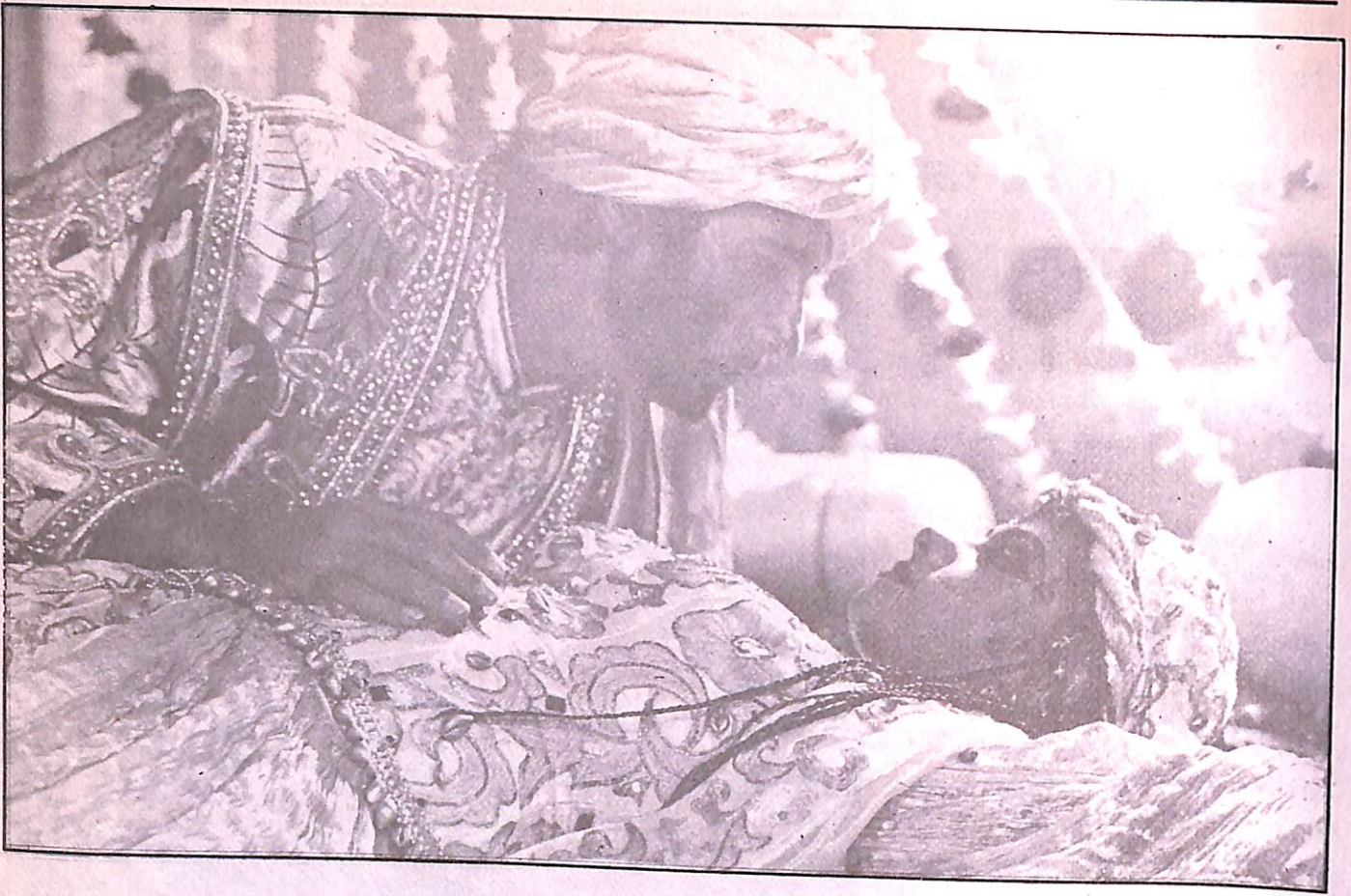
अमिताभ-श्रीदेवी : आगामी फिल्म 'खुदागवाह'

प्रक्रिया अभी चल रही है? क्या स्वयं में अभी भी आपको नए आयाम मिलते हैं?

मैं खुले दिल से स्वीकार करता हूँ कि इस दिशा में ज्यादा उद्दीपन (प्रोवोकेशन) नहीं मिल पाता। अभिनय क्षमता को पूरी तरह से उभारने के लिए 'उद्दीपन' देने का काम पटकथा लेखक, निर्देशक तथा सहयोगी कलाकारों का होता है। आजकल जो भी लिखा जा रहा है, उसमें ताजगी नहीं है। इसीलिए जो उपलब्ध हैं उससे ही काम चलाना पड़ता है। साथी कलाकार भी लगभग वही रहते हैं, जो समान परिस्थितियों में आपके साथ लगभग समान भूमिकाएँ कर चुके थे। इसलिए अभिनय भी दूसरे कामों की तरह हो जाता है। आशा यही है कि यह ढाँचा तथा ऐसी परिस्थितियाँ शीघ्र बदल जाएंगी तथा एक ही कहानी को कई तरीकों से पेश करने के रास्ते निकल जाएंगे। आप अपने संवादों को नए तरीके से कह सकते हैं। सहयोगी कलाकारों से भिन्न शैली में व्यवहार कर सकते हैं। आज की परिस्थिति में अभिनेता इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं कर सकता।

क्या आपको ऐसा कोई दृश्य याद है जिसमें पहली बार आपको एक अभिनेता के रूप में अपूर्व संतुष्टि मिली हो?

इस प्रश्न का उत्तर देने में मुझे कठिनाई होगी क्योंकि सही अर्थों में अब तक के सारे काम से मैं संतुष्ट नहीं हूँ। हमें तो अपने काम के बारे में दूसरों की राय को ही कसौटी मानना पड़ता है। मुझे कई बार कई लोगों ने खास दृश्यों में उत्तम अभिनय के लिए बधाई दी। मगर मैं स्वयं से पूछता हूँ तब सच्चा संतोष कहीं नहीं पाता हूँ।

'सात हिन्दुस्तानी' आपकी पहली फिल्म थी। इसमें आपका प्रदर्शन कैसा रहा।

जैसे-तैसे काम पूरा किया। उस जमाने में मैं दुबला तथा अजीब-सा लगता था। खुशी की बात यह थी कि मैंने जिस चरित्र को परदे पर पेश किया वह स्वयं भी बैचनी से घिरा था। इसलिए सब कुछ ठीक ठाक हो गया।

क्या आप सोचते हैं कि साहित्यकार एवं कवि के पुत्र के रूप में लालन पालन के कारण मिली पृष्ठभूमि ने आपको अभिनेता बनने में सहायता की है?

लालन पालन एवं पृष्ठभूमि से परे हटकर यदि देखें तो पाएंगे कि प्रत्येक व्यक्ति में कुछ मूल गुण रहते है। यही मूल विशेषताएं एवं गुण उसके काम में दिखाई देते हैं। मैं काफी पढ़ता हूँ। दोस्तों एवं सहयोगियों से काफी कुछ सुन लेता हूँ। संवाद की यही स्थिति मेरे प्रदर्शन पर असर डालती है। इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि अभिनय की सिर्फ यही एक शैली हो। अभिनय तो व्यक्ति के भूतकाल से पूर्ण मुक्त होता है। यह तो एक ऐसी अभिव्यक्ति है, जो कैमरा शुरू होते ही व्यक्तित्व पर छाती है। उस समय पुरानी यादें, प्रभाव तथा निजी व्यक्तित्व खो जाता है। वह क्षण उसी के रूप में जिया जाता है जिस पात्र का अभिनय कर रहे होते हैं। हो सकता है कि वह पात्र आपके वास्तविक व्यक्तित्व से पूर्ण भिन्न हो।

क्या आप महसूस करते हैं कि आपने जो भूमिकाएं की हैं उसका आपके निजी व्यक्तित्व एवं जीवन से कोई ताल्लुक नहीं है?

सतही तौर पर तो यह कथन ठीक है। मगर साथ ही यह समझना चाहिए कि आप आम आदमी, गलियों के आम आदमी की भूमिका कर रहे हैं। यह एक संवेदनशील सामान्य व्यक्ति है जिसकी अपनी आकांक्षाएं हैं। अपनी चिंताएं हैं। **लावारिस** का नायक भी ऐसा ही व्यक्ति है। इस आम आदमी के अन्दर एक क्रान्ति पनपती है। अन्याय का प्रतिकार करने की इच्छा, गरीबों का कल्याण करने की कामना तथा कानून एवं व्यवस्था की विचित्र विडम्बनाओं का विरोध करने की तड़प। व्यवस्था की खिलाफत की इस भावना में मैं खुद को इस आम आदमी के समकक्ष पाता हूँ। मेरे माता-पिता के व्यक्तित्व में भी व्यवस्था के प्रति विद्रोह की तीव्र भावना रही है। स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान घर में विदेशी सत्ता के विरोधी वातावरण को मैंने भली प्रकार से महसूस किया है।

अपने मध्यकालीन कैरियर की फिल्म 'सुहाग' में आपने जिस पात्र को जिया है वह सड़क छाप गुण्डा है, जो बीड़ी पीते हुए कोल्हापुरी चप्पलें लहराता है। आपने स्वयं को इस पात्र के कितने निकट महसूस किया है।

मेरी पारिवारिक पृष्ठभूमि एवं निजी व्यक्तित्व कैसा भी रहा हो, मुझे तो भिन्न पृष्ठभूमि के पात्रों का अभिनय करना पड़ता है। इसके बावजूद पटकथा लेखक एवं निर्देशक जिन खूबियों को उस पात्र के जरिए उभारना चाहते हैं, मैं उनमें से कुछ को अपना साथी महसूस करता हूँ। इस तरह पूरी तरह से अजनबी पात्र का अभिनय करते हुए भी लगता है कि थोड़ा बहुत स्वयं को अभिव्यक्त कर रहा हूँ। यह एक तरह की विडम्बना है मगर यह विडम्बना अभिनय की प्रक्रिया को अधिक उत्तेजक एवं रचनात्मक बनाती है।

क्या आप लोगों के हाव भाव को गौर से देखते हैं?

बेशक, ट्रैफिक सिगनल पर। रेल के डिब्बों में लटके हुए। बसों में बैठे हुए लोग। दोस्त, सहयोगी, परिचित सभी लोगों के भिन्न प्रकार के हाव भाव में देखता हूँ। आज ही पत्रिकाएं बेचने वाले लड़के का दोस्ताना व्यवहार मुझे बहुत स्वाभाविक तथा सामान्य लगा।
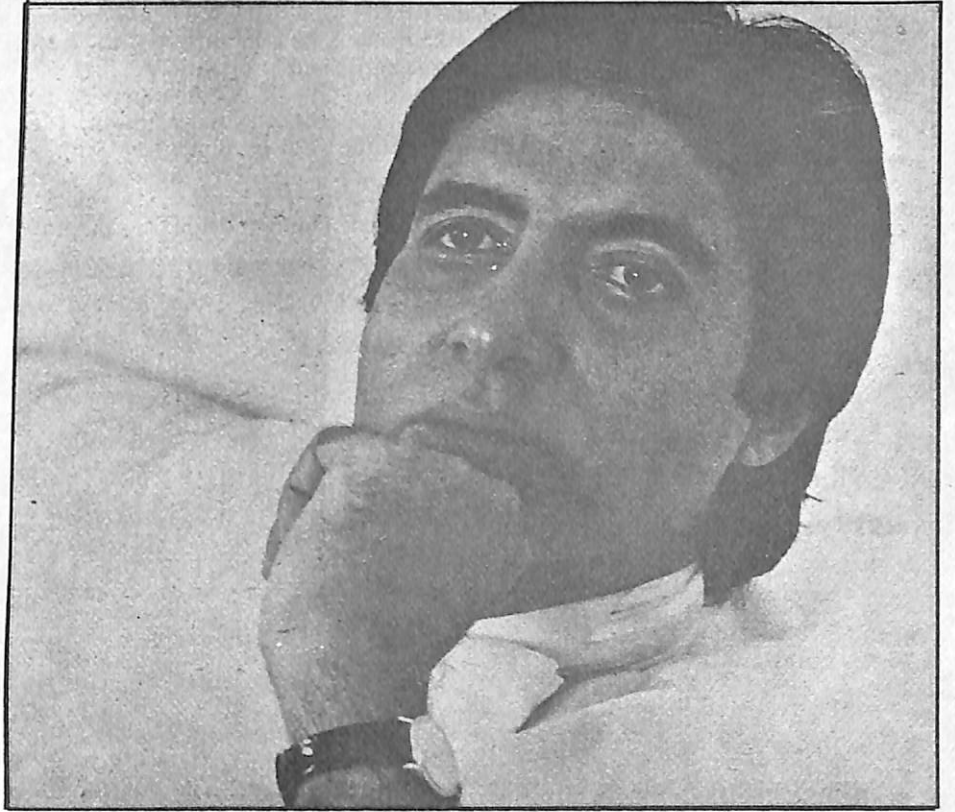
अमिताभ बच्चन : पचासवें पड़ाव का चिंतन

बच्चों के चेहरों पर भावनाओं की लकीरों की दिशाएं बड़ों से बिलकुल अलग रहती हैं। अभिनेता के रूप में आपको अन्य लोगों के हावभाव गौर से देखते रहना जरूरी होता है। ऐसा करने का असर अभिनय की गुणवत्ता पर पड़ता है।

जब आप स्टार बन गए तब आपका रिश्ता वास्तविकताओं से दूर तो नहीं गया?

ऐसी समस्या आती है। मगर मैंने स्वयं को कभी स्टार नहीं माना। मैं एक सामान्य अभिनेता हूँ, जिसकी किस्मत बहुत अच्छी निकली। मैने लोगों से मिलना-जुलना कभी नहीं छोड़ा। लोगों की पहुँच के बाहर कभी नहीं हुआ। सिनेमा हॉल में जाकर फिल्म देखना आज भी जारी है। बच्चों को साथ लेकर रेस्तारा में खाने-पीने जाने में मुझे कोई हिचक नहीं होती। हाँ मैं सड़कों पर टहल नहीं पाता। बाकी सारे काम आम आदमियों की तरह करता हूँ।

'जंजीर' में आपने एक गुस्सैल पुलिस इंस्पेक्टर की भूमिका की थी, क्या यह भूमिका किसी वास्तविक चरित्र से प्रेरित थी?

ऐसा कुछ नहीं था। मैंने जितने शक्तिशाली चरित्र अभिनीत किए हैं लगभग सभी कल्पना द्वारा गढ़े एवं विकसित किए गए है। शायद कुछ वास्तविक जीवन के व्यक्तियों से प्रेरित रहें हों। यदि ऐसा है तब इसका पता लेखक को ही होगा। **त्रिशूल, जंजीर, दीवार,** या **काला पत्थर** के नायकों को लेखक सलीम - जावेद ने गढ़ा था। मैंने इन पात्रों को जिया है। कई बार लेखकों द्वारा गढ़े हुए पात्रों में मैं अधिक डूब नहीं पाता। मुझे लगता है कि यह भूमिका कैसे कर पाऊँगा। **अमर अकबर एंथोनी** का **एंथोनी** तथा **सुहाग** का नायक ऐसे ही पात्र थे। इन पात्रों की विशिष्ट शैलियों के बारे में निर्माता मनमोहन देसाई ने मुझे विस्तार से बताया था। **मुकद्दर का सिकन्दर** तथा **शराबी** का नायक भी निर्देशक की सूक्ष्म एवं स्पष्ट शैली के कारण मुझमें विकसित हो सका। ऐसे पात्रों को जीवन्त करने में मेरा श्रेय कम तथा निर्देशक एवं लेखक का अधिक होता है।

आम लोगों के हावभाव एवं तौर तरीकों को आप सहजता से ग्रहण कर लेते हैं। मसलन 'डॉन'

में पान चबाने की शैली से बारे में तो लेखक राही मासूम रजा ने कुछ नहीं लिखा होगा?

आम लोगों की चरित्रिक विशिष्टताओं एवं हाव भावों की नकल करने में नुकसान क्या है। पान चबाने की शैली का ख्याल मुझे डॉ. रजा को देखकर ही आया। उन दिनों मैं ऋषिकेश मुखर्जी की काफी फिल्मों में काम कर रहा था तथा रजा साहब लेखक थे। इसलिए उनसे अक्सर मुलाकात होती थी। जब मैं **शहंशाह** कर रहा था तब इलाहाबाद के लोगों से ज्यादा सम्पर्क हुआ। कारण था राजनीति। इसलिए मेरे हावभाव एवं बोलचाल की शैली में इलाहाबादी असर आ गया।

क्या बचपन से ही आपको लोगों की नकल करने का शौक था?

मुझे रंगमंच के प्रति बचपन से ही लगाव रहा है। जब स्कूल की स्टेज पर मौका नहीं मिलता था तब घर पर ही दूसरे बच्चों के साथ मिलकर अभिनय का शौक पूरा कर लेते थे। बेंच, खटिया, और चौकी की मदद से मंच बनाकर उसके आसपास चादरें तान कर हम छोटी नाटिकाएं अभिनीत करते थे। काफी मजा आता था। आइने के सामने खड़े होकर संवाद बोलने की भी आदत थी।

क्या लोगों द्वारा स्वयं को अभिनय करते हुए देखा जाना आपको पसन्द आता था?

नहीं, मै बुरी तरह से 'सेल्फ कांशस' हो जाता था। **बचपन का कौन सा ऐसा क्षण है जिसकी याद आपको अब तक हैं?**

पुराने जमाने की 78 आर.पी. एम. रेकार्ड की विशिष्ट धुन मुझें याद रही। पिछले दिनों सितार बजाते हुए वही धुन, सीधी सी धुन फिर से बज उठी थी।

क्या आपको उस फिल्म की याद है जिसे पहली बार देखा था।

वह फिल्म थी लारेल हार्डी की 'फ्लाइंग डसूसेस' मैं यह फिल्म देखकर रोमांचित भी हुआ तथा ठहाकों में डूब-सा गया था। पहली हिन्दी फिल्म मैंने माता-पिता की अनुमति के बिना देखी थी। वह थी दिलीप कुमार की **'पैगाम'** तभी से मैं दिलीप साहब का प्रशंसक हूं।

जब यह कहा जाता है कि आपकी अभिनय शैली पर दिलीप साहब का खासा असर है तब आप पर कैसी प्रतिक्रिया होती है।

मुझे खुशी होती है। वे एक शीर्षस्थ अभिनेता हैं। अपने आप में एक संस्था हैं। अनेक भारतीय अभिनेताओं के लिए प्रेरणा के श्रोत रहे हैं।

पिछले दिनों एक साक्षात्कार में कमाल हासन नेक़हा था कि आपके अभिनय में 'डेनी काये' की झलक हैं?

'डेनी काए', यह बात मैं पहली बार सुन रहा हूँ। मने की बात तो यह कि ऐसा कमल ने कहा। मैंने ऐसी बात सोची भी नहीं। वैसे मैं डेनी काए का प्रशंसक हूँ तथा इनकी सारी फिल्में देख चुका हूँ। 'इन्सपेक्टर जलरल' मैंने स्कूल दिनों में देखी थी। मगर मैं यह नहीं सोचता कि मुझ पर उनका असर है। दूसरे जैसा चाहे सोच सकते हैं।

आपको 'डेनी काए' का कौनसी विशिष्टता ने प्रभावित किया हैं?

उसका सरल चेहरा। बगैर कोशिश किए भावनाओं को बदल-बदल कर चेहरे पर का सकने की विशिष्टता। इसके साथ ही भाषा एवं बोलने का बढ़िया अंदाज। उसके संवाद 'मंचीय' नहीं बल्कि 'सिनेभाई' होते है। वह तेज रफ्तार एवं उतार-चढ़ाव के साथ संवादों की अदायगी कर सकने में सक्षम है। 'कॉमेडी' में भी उसका अन्दाज निराला है। वह सहज होकर कठिन से कठिन भूमिकाएं कर सकता है। वह एक महज संगीतकार भी हैं। वह विश्व का एकमात्र ऐसा व्यक्ति हैं। जिसमें संगीत के शास्त्रीय ज्ञान के न होते हुए भी एक सिंफनी आर्केस्ट्रा का सफल संचालन किया था।

आपने 'इन्सपेक्टर जनरल' को फिल्म में उतारने की कोशिश क्यों नहीं की?

मैं प्रोजेक्ट के बारे में अपनी राय नहीं देता हूँ यह काम हमेशा फिल्म निर्माता पर छोड़ देता हूँ। मैं तो दिया गया काम पूरा करना ही अपना कर्त्तव्य मानता हूँ।

सचमुच? अच्छा तो यह बताइए कि आपने शौकिया रंगमंच पर काम करते हुए अपने अनुभवों से शुरू-शुरू क्या सीखा?

रंगमंच पर काम करने का तात्पर्य है कुछ अस्वाभाविक करना। रंगमंच पर प्रदर्शन अभिनेता की शारीरिक क्षमताओं में वृद्धि करता है। अभिनेता का व्यक्तित्व एवं स्वर प्रबल होना जरूरी हो जाता है। रंगमंच के जरिए आत्मविश्वास बढ़ता है। झिझक दूर होती है। अभिनय क्षमता की कड़ी परीक्षा हो जाती है। यह एक तरह का प्रारंभिक प्रशिक्षण है। अभिनेता को पूरे दृश्य में एक ही बार में प्रदर्शन करना होता है। जबकि सिनेमा शूटिंग में यह काम टुकड़ों में होता है। इसीलिए रंगमंच से आनेवाले कलाकार कैमरे के सामने कम से कम गलतियाँ करते हैं।

रंगमंच पर प्रतिक्रिया का पता भी फौरन चल जाता हैं। पहले ही अंक के बाद आप जान लेते हैं कि आपका काम कैसा है। इस तरह अनुभव लेते हुए आप शौकिया कलाकार से धीरे-धीरे व्यावसायिक अभिनेता बन सकते हैं।

आपने किस तरह के नाटकों में अभिनय किया था?

मैंने 'ऑथेलो' में केसियो की भूमिका की थी। मेरे पिता द्वारा किए गए इस नाटक के हिन्दी अनुवाद पर यह प्रस्तुति आधारित थी। मैं कालेज में विज्ञान का विद्यार्थी था इसलिए रिहर्सल के लिए मुझे ज्यादा वक्त नहीं मिल पाता था। इसके बाद जब मैं कलकत्ता आया तब अभिनय के लिए काफी समय मिला। इन्हीं दिनों मैंने 'अ मेन फार आल सीजन्स' में काम किया। कई संगीत नाटिकाओं में भी काम किया। शेक्सपीयर को भी काफी पढ़ा। एक और नाटक में काम किया जिसका मुझे नाम याद नहीं है। यह अभिनेताओं के एक समूह के बारे में था जिसमें कुछ अभिनेता एक कमरे में बैठकर अपनी निजी ज़िन्दगी के बारे में बातचीत करते हैं। यह आधुनिकतम शैली का नाटक होते हुए भी काफी सफल रहा था। हमारी मण्डली को कलकत्ते के आसपास कई कस्बों में इसी नाटक के मंचन के लिए आमंत्रित किया गया था।

क्या उस वक्त भी आप आवाज के उतार-चढ़ाव तथा संवाद अदायगी के महत्व को समझते थे?

रंगमंच पर तो आवाज की प्रस्तुति निहायत जरूरी तत्व हैं। उस जमाने में छिपे हुए माइक्रोफोन तथा
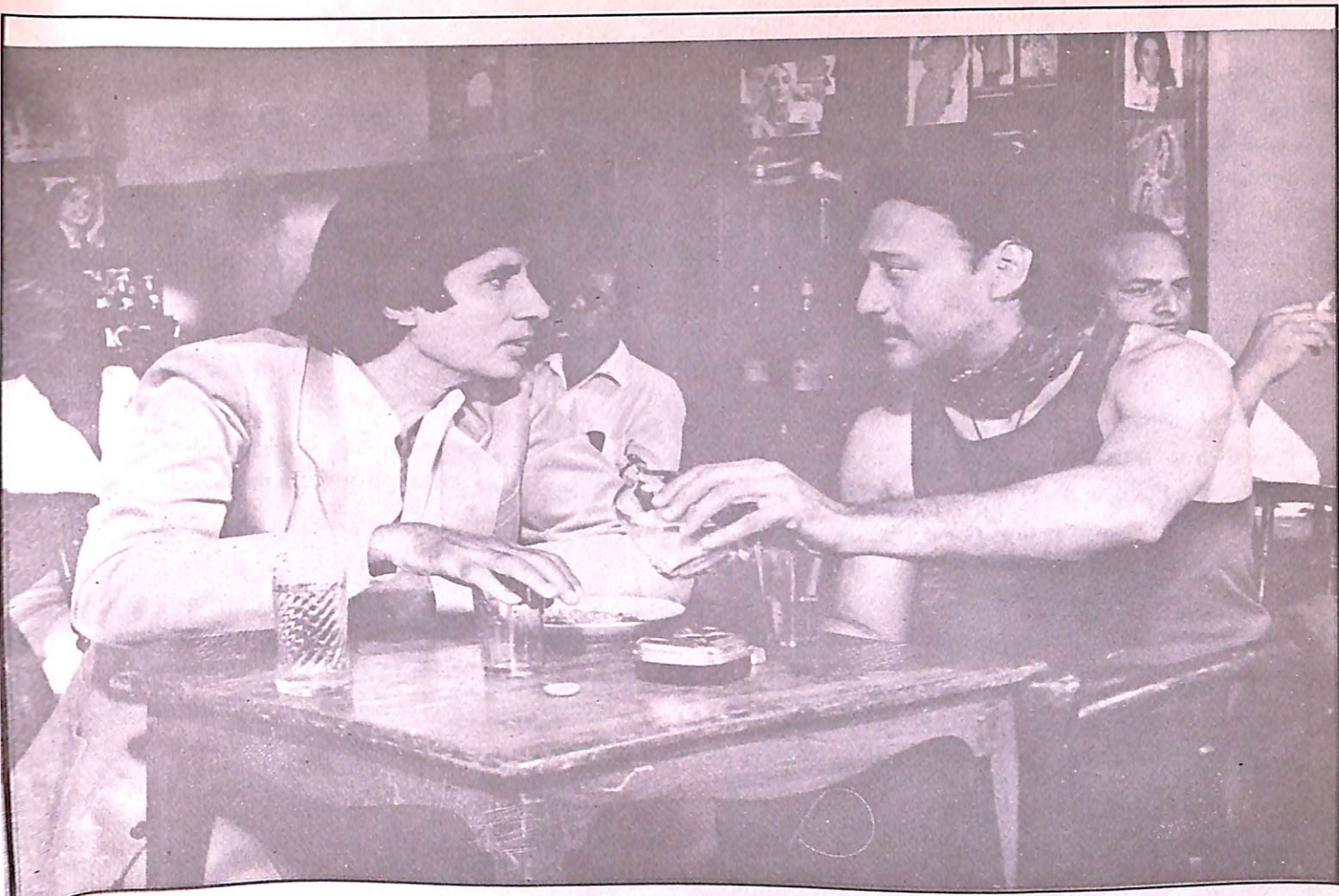
फिल्म अकेला : जैकी श्राफ-अमिताभ बच्चन

आवाज बढ़ाने वाले संवेदनशील उपकरण नहीं हुआ करते थे। इसी कमी ने मुझे आवाज का नियंत्रित उपयोग करने की कला सीखने में मदद की। अपनी आवाज को थिएटर की आखिरी कतार तक पहुँचाना पड़ता है तथा ऐसा करते वक्त भी शोर मचाने तथा चीखने से खुद को बचाना भी पड़ता है। रिहर्सल चार-पाँच माह तक छोटे-छोटे कमरों में चलती हैं जहाँ संवाद काफी धीमी आवाज में बोले जाते हैं। उसके बाद मंच पर आते ही आवाज को काफी तेज करना पड़ता है। वैसे प्रदर्शन की रात मंच पर जाने के पाँच मिनट पहले तक लगता है कि कुछ भी याद नहीं है मगर जैसे ही परदा उठता है तब सारे संवाद स्वाभाविक रूप से बोले जाने लगते हैं।

क्या फिल्मों के दृश्यों हेतु भी आप रिहर्सल करते हैं?

कई बार रिहर्सल करना जरूरी हो जाता है। कई बार बिना रिहर्सल शूटिंग करना ही बेहतर रहता है। मैं निर्देशकों की खातिर काफी रिहर्सल कर लेता हूँ ताकि उन्हें पता चल जाए कि मैं क्या करने वाला हूँ। यह जानकारी पहले से होने पर वे प्रकाश एवं कैमरे की व्यवस्था को ठीक प्रकार से कर रखते हैं। यदि निर्देशक के साथ पहले काम किया जा चुका हैं तब इसकी जरूरत नहीं पड़ती क्योंकि उसे आपके काम के तौर-तरीके मालूम रहते हैं। उसे आपकी क्षमता का ज्ञान हैं। परस्पर समझ हैं। आपसी विश्वास है। सारी बातें ठीक ढंग से सम्पन्न हो जाती है। यदि किसी खास 'शॉट' में वह आपके काम से खुश नहीं है तब 'रीटेक' हो सकता हैं। मैं जहाँ जरूरी होता है, 'रिहर्सल' कर लेता हूँ। मगर रिहर्सल सेट पर ही हो यह जरूरी नहीं मानता। घर या मेकअप रूम में रिहर्सल हो सकती है। जब काफी ज्यादा रिहर्सल की नौबत आती है तब मैं 'फाइनल रीटेक' को अगले दिन के लिए मुल्तवी कर देता हूँ ताकि गुणवत्ता एवं ताजगी दृश्य में बनी रहे।

किन्तु जब पटकथाएं पहले से ही तैयार न हो तब क्या सेट पर कई रिहर्सलों की जरूरत नहीं पड़ती?

मैं इस बात से सहमत हूँ कि हमारे काम के तरीके व्यवस्थित नहीं हैं। हमारे काम का ढ़ंग योजना बद्ध नहीं है। शैली में व्यवस्था नहीं है। यदि सुनियोजित तथा सुव्यवस्थित ढ़ंग से काम किया जाए तब गुणवत्ता काफी बढ़ सकती हैं। इसके साथ ही कच्ची फिल्मों की खपत भी घट सकती है। आज जो भी हो रहा है। ऐसा इसलिए है कि शूटिंग

से पांच मिनट पहले आपको संवाद दिए जाते हैं। यदि अभिनेताओं को संवाद पहले से ही दिए जाएं तो वे 'होमवर्क' कर सकते है, संवादों पर चर्चा भी हो सकती है। सलीम-जावेद के साथ ऐसा नहीं था। वे कई माह पहले से ही पूरी पटकथा तैयार कर दे देते थे।

सलीम-जावेद का अलग होकर काम करना आपको कैसा लगा? क्या इनकी जोड़ी टूटने का आपको अफसोस है?

अलग होने के बाद मैंने उनके साथ काम काफी दिनों के बाद किया। **तूफान एवं अकेला** सलीम खान ने लिखी थी **तथा मैं आजाद हूँ** जावेद अख्तर ने। मैं सोचता हूँ एक टीम के रूप में वे काफी बेहतर थे। मैं यह नहीं कहता कि उनकी निजी गुणवत्ता में कमी आई है। उनमें पर्याप्त ऊर्जा तथा ओज है। मगर फिर भी मैं चाहता हूँ कि वे दुबारा एक हो जाएं।

उनकी निजी विशेषताएं तथा खास गुण कौन से थे?

मैंने जावेद साहब की लेखनी से निकले शब्दों को बेहद शक्तिशाली पाया। मैंने जितने भी प्रभावशाली संवाद अब तक बोले हैं उनमें से अधिकांश उन्हीं के द्वारा लिखे गए हैं। सलीम साहब पटकथा लिखने में लाजवाब हैं। वे पात्र के चरित्र को बहुत सूक्ष्मता से लिख पाने की सामर्थ्य रखते हैं. **जंजीर, दीवार, त्रिशूल** तथा **काला पत्थर** के नायकों का मानसिक संघर्ष तथा तनाव उनकी कलम ने ही इतनी खूबी से उभारा है।

इन लेखकों ने आपके लिए यादगार भूमिकाओं का सृजन किया तथा प्रभावशाली संवाद लिखे। क्या इनके द्वारा लिखे संवादों को आत्मसात कर बोलना आपको आसान लगा था?

मैं इनका ऋणी हूँ क्योंकि इनकी वजह से मुझे बेहतर मौके मिले। हमारे यहाँ फिल्म उद्योग में आम तौर पर लम्बे संवादों को धारा प्रवाह बोल पाता विशिष्ट गुण माना जाता है। ठीक जगह विराम, किसी खास वाक्य शब्द या अक्षर पर जोर देना जरूरी नहीं माना जाता। अभिनेता को संवाद बोलते समय हावभाव, आँखों की गतिशीलता तथा शरीर की मुद्राओं पर वांछित नियंत्रण रखना चाहिए। यह भी समझा जाता है कि दर्शकों को चुप्पी पसन्द नहीं आती। ऐसा ही विदेशों में भी होता है। उदाहरण के लिए 'बेकेट' में पीटर ओ टूल को अपने सह-अभिनेता रिचर्ड बर्टन से बेहतर माना गया क्योंकि उसके पास संवादों के जरिए कहने को अपेक्षाकृत ज्यादा था।

'बेकेट' की तर्ज पर ही निर्मित 'नमक हराम' में आपने भी तो पीटर ओ टूल की तरह जोशीले नायक की भूमिका की है?

जो भूमिका करने को कहा गया मैंने वही की। यदि मुझे वह भूमिका करने को कहा जाता, जो राजेश खन्ना ने की तो मैं उसे भी खुशी से करने को तैयार हो जाता। मैंने ऋषिकेश मुखर्जी से कोई सवाल नहीं किया तथा पूरी निष्ठा से उनकी आज्ञाओं का पालन किया। इसलिए मैं इस विशेष सन्दर्भ में स्वयं को कसौटी पर नहीं कह सकता।

'शक्ति' में भी आपको दिलीपकुमार की अपेक्षा करने को काफी कम था। क्या यही वजह थी कि इस फिल्म में आप अपने प्रदर्शन से प्रसन्न नहीं रहें?

यह एक अच्छी फिल्म हैं। अपनी भूमिका या प्रदर्शन को नापसन्द करने का सवाल ही नहीं उठता। यदि ऐसा होता तो मैं काम करने से साफ इन्कार कर देता। हाँ मैं यह जरूर सोचता हूँ कि पिता एवं पुत्र के संघर्ष की स्थिति में मैं और भी बेहतर काम कर सकता था। अभिनय में ज्यादा गहराई आ सकती थी। वैसे लोगों ने इस फिल्म में मेरे काम को पसन्द किया है।

आपकी फिल्मों में अक्सर दो पात्रों के बीच नाटकीय टकराव की स्थितियाँ आती हैं?

मैं इसे बुरा नहीं समझता। यदि नाटकीयता न हो तब फिल्म व्यर्थ हो जाती है। टकराव की स्थिति लेखक को प्रभावशाली संवाद लिखने का अवसर देती हैं।

क्या ऐसे दृश्यों में आप पर थोड़ा रंगमंच का प्रभाव नहीं आ जाता?

नहीं, कभी नहीं। किसी पात्र को आप बिना शरीर का कोई अंग हिलाए, चीखे चिल्लाए, सजीव कर सकते हैं। हां, यदि निहायत जोशीले या उत्तेजित किस्म के चरित्र को प्रदर्शित करना हो तब हाथ पैर ज्यादा हिलाने पड़ते हैं। सब कुछ 'चरित्र' पर निर्भर रहता हैं. गानों को फिल्माते समय अंग संचालन अधिक होता है। हाथ, आँखें तथा शरीर के अन्य अंगों के माध्यम से गाने का अर्थ समझाता जरूरी हो जाता है। अंगों का संचालन गीत के बोलों से उतार-चढ़ाव के अनुरूप किया जाना जरूरी है। ऐसा करना काफी मुश्किल होता है। एक कान गीत के शब्दों पर तथा दूसरा साथ चल रहे संगीत पर रखना पड़ता है।

नब्बे के दशक में निर्देशकों की शैली, तकनीक तथा दृष्टि में उल्लेखनीय बदलाव हुआ?

निश्चय ही अब निर्देशकों के तौर तरीकों में काफी बदलाव आया है। इस प्रसंग में मैं मनमोहन देसाई का जिक्र करना चाहूँगा। वे नायक के जोश की स्थिति को निहायत खूबी से पेश करने में नायाब और लाजवाब हैं। कई फिल्मकारों ने उनकी नकल करने का असफल प्रयास किया। दरअसल जब तक निर्देशक जोश या उत्तेजना को सही ढंग से पेश करने का सही तरीका नहीं बता पाता है तब तक जोश के दृश्यों में अभिनेता मूर्ख नजर आता है। जब तक निर्देशक एवं अभिनेता के बीच भावनात्मक तारतम्य नहीं होता. तब तक दर्शक दृश्य को स्वीकार नहीं करते।

मैं यहीं कहूँगा कि इस दशक के निर्देशक नए आकार, आधार और रास्ते तलाश रहे हैं। प्रस्तुति की नई शैलियों को विकसित कर रहे हैं। शॉट लेते समय अब उनकी रुचि कैमरे की, विद्युत की, पृष्ठभूमि संगीत की ओर भी बढ़ रही हैं। वे एक्शन, नाटकीय दृश्यांकन तथा क्लाइमेक्स की ओर भी पर्याप्त ध्यान देते हैं। फर्क तो काफी नजर आता है। इसकी वजह पश्चिमी सिनेमा का प्रभाव है यह तो मैं नहीं कह सकता। हो सकता है थोड़ा प्रभाव हो क्योंकि कहानियों के साथ-साथ तकनीकी शैली में भी बदलाव आ रहा है।

क्या निर्देशक अब सिनेमा की चर्चा पहले की अपेक्षा ज्यादा करते हैं?

मुझे उनसे चर्चा करने या उनकी चर्चा सुनने का
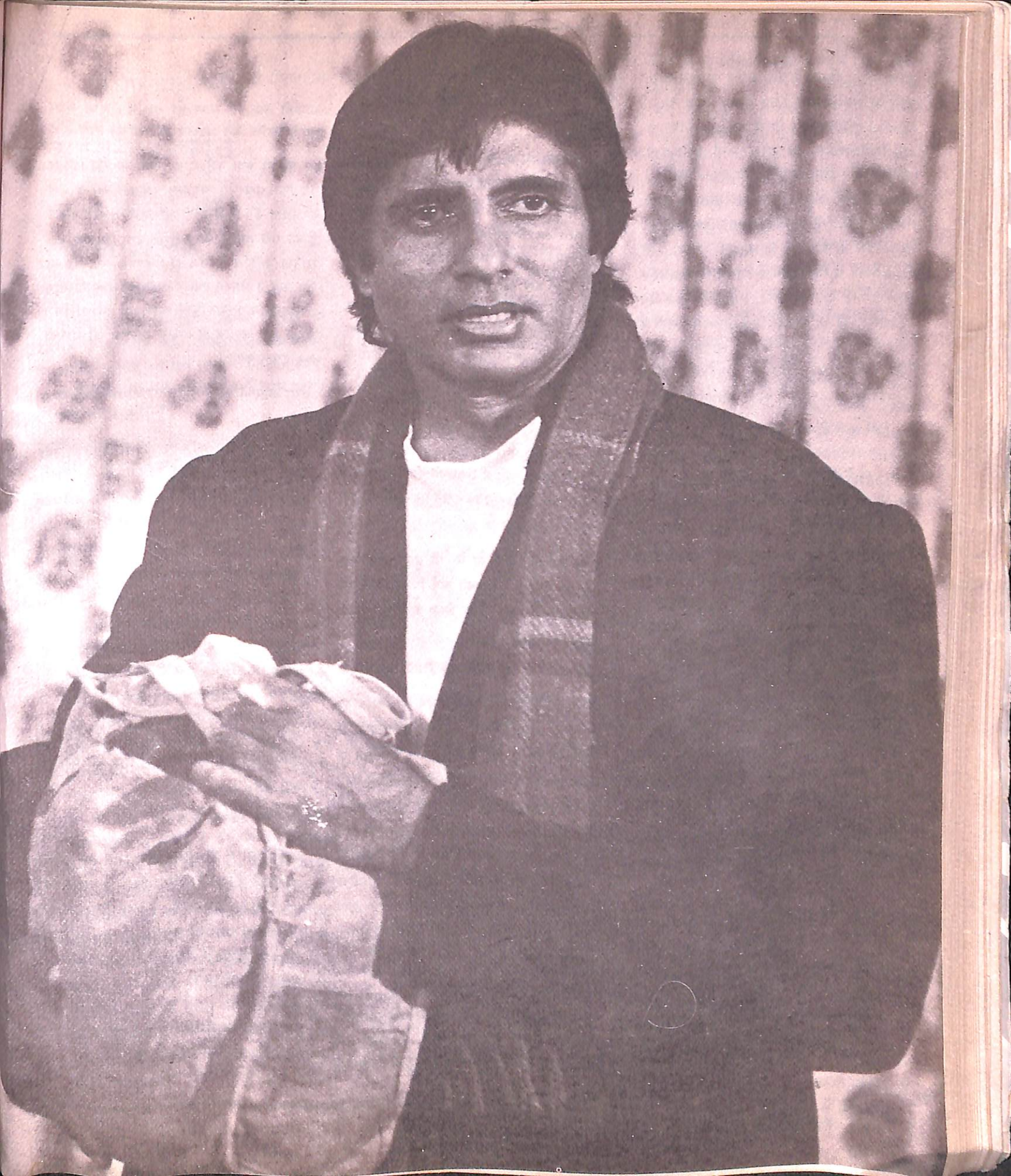
मौका कम ही मिलता है क्योंकि सेट पर काम खत्म होने के बाद मैं घर लौटना ज्यादा पसन्द करता हूँ। वैसे मुझे विश्वास है कि वे अपने तकनीशियनों एवं मित्रों के साथ इस बारे में चर्चा जरूर करते होंगे। फिल्म उद्योग के लिए यह बहुत जरूरी है। यहाँ निर्देशकों को छ फिल्में एक साथ निर्देशित करते रहना होती हैं। लेखक दस-दस फिल्में लिखते हैं। अभिनेता भी ऐसा ही करते है।बेचारा ऐसी पटकथाओं से घिरा रहता हैं, जिसमें स्थितियां एवं संवादों को दुहराया जाना आम बात है। जब छायाकार को छः प्रोजेक्ट एक साथ संभालनी है तब वह उनमें विशिष्टता कहाँ से ला पाएगा। वैसे भी भारत में उच्चकोटि के आधुनिक तकनीकी उपकरणों की उपलब्धि काफी सीमित है।

हमारे देश में तो प्रत्येक व्यक्ति अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ने में व्यस्त है। अभिनेता, निर्देशक, तकनीशियन सभी को अतिरिक्त पैसा चाहिए। इसलिए अतिरिक्त फिल्में करते हैं। धन कमाने की होड़ ने फिल्म निर्माण को रचनात्मक प्रक्रिया की बजाए आर्थिक प्रक्रिया बना दिया है। नृत्य निर्देशक हो या संगीत निर्देशक कोई भी हर रोज नई विधा या नई धुन का सृजन नहीं कर सकता। यहाँ तक कि जूनियर कलाकारों को भी लगभग एक जैसी भूमिकाएं कई फिल्मों में मिल रही है। इसी वजह से हर विधा में 'पुनरावृत्ति' का दोष हैं। इसलिए किसी एक को आरोपित करना ठीक नहीं। इन स्थितियों में यदि कोई लीक से हटकर कुछ नया करने की कोशिश करता है, तब दर्शक और समीक्षक उसे अस्वीकृत कर देते हैं। **अग्निपथ** में आवाज बदलने की मेरी कोशिश का यही नतीजा निकला।

किन्तु मनमोहन देसाई की फिल्यों से मिलने वाले शुद्ध मनोरंजन को तो समीक्षकों की सराहना ही मिलती है।

इसकी वजह मनमोहन देसाई का अपने क्षेत्र में जीनियस होना है। वे दर्शकों को बता देते थे कि उनको मूर्ख बनाया जा रहा है। सारी गैर तर्क संगत स्थितियाँ की प्रस्तुति की जाएंगी मगर आपको मजा आएगा। दर्शक आनन्दित होने के लिए मूर्ख बनना भी स्वीकार कर लेते हैं। वे ऐसे निर्देशक को प्यार करते हैं।

क्या एक अभिनेता के तौर पर आपको यथा स्थिति में बदलाव लाने की कोशिश नहीं करनी चाहिए?

करनी तो निश्चित चाहिए। मगर व्यावसायिक सिनेमा में आर्थिक दाँव और जोखिम इतना भारी रहता है कि यदि बदलाव की कोशिश असफल हो गई, अस्वीकार कर दी गई तब निर्माता बर्बाद हो जाता हैं। मैं किसी को भरोसा दिला कर बर्बाद करने का जोखिम नहीं उठा सकता हूँ। हाँ, यदि नई तर्ज का सिनेमा हो। छोटे बजट की फिल्मों में काम करने का मौका हो तब आर्थिक पक्ष की चिंता किए बिना काम किया जा सकता है। अपने कैरियर के प्रारंभ में मैंने ऐसी ही एक फिल्म **रास्ते का पत्थर** में काम किया था। तब मुझे लगा था कि इतने बढ़िया काम के लिए मुझे **ऑस्कर** का सम्मान भी मिल सकता है मगर यह फिल्म पहले शो के बाद ही नहीं चली। मगर मैं स्थितियों को निराशाजनक नहीं मानता। पीछे मुड़कर देखने पर संतोष मिलता हैं।

क्या फिल्मी अभिनेता के भी कुछ सामाजिक दायित्व होते हैं। आपकी कई फिल्मों में हिंसा और प्रतिशोध को 'श्रेष्ठ' सिद्ध करने का प्रयास किया गया है?

इस विषय पर तो पूरी किताब लिखी जा सकती है। दृश्य माध्यमों की तरह सिनेमा भी समाज को प्रभावित करता है। कई बार लोग गलत बातों से भी प्रभावित हो जाते हैं। किन्तु उन खराबियों के बारे में भी तो सोचिए, जो दूसरे व्यवसायों में पनप रही हैं। वकालत हो या डॉक्टरी हो। राजनीति हो या पत्रकारिता। पुलिस हो या कस्टम क्या इनमें बुराई या खराबी नहीं हैं? सच तो यह है कि पूरे 'सिस्टम' में ही गड़बड़ी या खराबी हैं। इसलिए जब समाज बदलेगा, सुधरेगा तब फिल्में भी सुधर जाएंगी। ऐसा कहकर में अपनी जिम्मेदारी से नहीं बचना चाहता हूँ।

हम देश के सामाजिक ताने बाने को तोड़ने के लिए फिल्में नहीं बनाते। हम लोगों का मनोरंजन करने के लिए फिल्में बनाते हैं। हमने कभी नहीं कहा कि बच्चों को तालीम दिलवाने के लिए उन्हें सिनेमाघरों में भेजिए।

आपकी उम्र 50 साल हो गई है। क्या आप अपनी 'छवि' को बदलने का सोचने लगे हैं?

इस बारे में क्या कहूँ समझ नहीं आ रहा। मगर मैंने फिलहाल नए अनुबन्ध स्वीकार करना बन्द कर दिया हैं। मैं वैसी ही भूमिकाएं करना चाहता हूँ जो मेरी उम्र के अनुरूप हो तथा व्यावसायिक सिनेमा के ढाँचे में फिट हो। क्या करूँगा यह तो तय नहीं है मगर इरादा यही है कि वही भारतीय व्यावसायिक एक्शन फिल्में करूँ मगर कुछ अलग। बदले हुए अन्दाज में। ऐसा अन्दाज जो दर्शकों को पसन्द आए।

क्या आपकी अपनी अभिनय की कोई परिभाषा है?

सच तो यह है कि अभिनय को परिभाषित ही नहीं किया जा सकता। महान अभिनेताओं ने अक्सर अभिनय को परिभाषित किया है मगर मैं नहीं कर सकता। इधर-उधर का शब्द जाल फैलाकर यदि कहूँ कि यह दर्शकों के सामने अविश्वसनीय को विश्वस्त बनाकर पेश करने की कला हैं, या भावनाओं के संप्रेषण की कला है। तब यह शब्दों की थोथी बाजीगरी होगी। अभिनेता के रूप में आप एक अपरिचित परिस्थिति में रख दिए जाते हैं तथा दर्शकों को यह विश्वास दिलाना होता है आप सौंपे गए काम को दिलचस्पी के साथ कर रहे हैं।

आप किसी अन्य को पेश कर रहे होते हैं। अवास्तविक को वास्तविक दिखाने की कोशिश करते है।

क्या यह रचनात्मक हैं?

निश्चित रूप से है। जिस क्षण आप यह सोचना शुरू करते हैं कि जिस चरित्र को आप प्रस्तुत करने जा रहे हैं वह कैसे चलेगा, बोलेगा, दौड़ेगा, गाएगा, चिल्लाएगा, बस, उसी क्षण से आय नए व्यक्ति, नए जीवन की रचना में संलग्न हो जाते हैं।

☐ (सिनेमा इन इंडिया से साभार)
(प्रस्तुतिः लोकेन्द्र चतुर्वेदी)

• विशेष साक्षात्कार

परत-दर-परत

मणि कौल और उनकी फिल्में

□ दीपा गेहलोत

आइए, आपकी ताजातरीन फिल्म 'अहमक' के बारे में बातचीत करें। आपने कहा कि आपने अभिनय-शैली को लेकर प्रयोग किया। रीटेक का झमेला नहीं रखा। इस बारे में आप अपनी बात स्पष्ट करेंगे?

मैंने जो कुछ कहा उसका मतलब यह है कि मैं चरित्र चित्रण के विचार को निरुत्साहित करता हूँ। मेरा तात्पर्य यह है कि प्रत्येक अभिनेता और अभिनेत्री में एक व्यक्ति के रूप में विभिन्न संवेगों और भावों को अभिव्यक्त करने की परिपूर्ण क्षमता होती है। आपके पास निरंतर एक जैसा दिखाई देने वाला चेहरा होता है, किन्तु आपके भीतर बहुत से लोग होते है। इसलिए स्वाभाविक रूप से उन लोगों का अभिनय करने की और चरित्रों का निर्माण करने की आवश्यकता नहीं होती। यह वैसा है जैसे कि कोई संगीतकार अनेक राग गा सकता है, किन्तु वह वही रहता है जो कि वह हैं, और जैसे-जैसे वर्ष व्यतीत होते जाते है वैसे-वैसे वह पाँच भिन्न-भिन्न ढंगों से न गाकर भी एक बड़े कलाकार के रूप में परिपक्व होता है। उसे एक कतिपय शैली के गायक के रूप में कतिपय घराने के गायक के रूप में स्पष्ट जाना जा सकता है। थिएटर के विपरीत, फिल्म अभिनय में व्यक्ति के निकट रहना अधिक अच्छा होता है। मान लीजिए कि आपको **'इडियट'** में प्रिन्स मिश्किन की पात्र-योजना करनी है। आप किसी व्यक्ति को चुनते हैं, क्योंकि वहाँ तक आपका संबंध है, वह आपके लिए प्रिन्स मिश्किन है। आप उसे चुनने में गलती कर सकते हैं, और गलत पात्र-योजना फिल्मों की सबसे बड़ी समस्या है। कठिनाई यह है कि गलत पात्र-योजना का कारण यह नहीं होता कि आपने 'टिपिकल चेहरों' का चयन नहीं किया है। उदाहरणार्थ, आप एक क्रांतिकारी का पात्र प्रस्तुत करना चाहते हैं, और लोगों के सामने क्रांतिकारी की एक विशिष्ट प्रकार की छवि होती है। किंतु हो सकता है कि आपकी मुलाकात किसी ऐसे क्रांतिकारी से हो जाए जो कि एक क्लर्क जैसा दिखाई देता हो, फिर भी हंगामा मचा देने वाला हो। इसलिए आप किसी 'टिपिकल चेहरों' की तलाश नहीं कर रहे होते हैं, बल्कि आप एक आन्तरिक व्यक्तित्व की तलाश कर रहे होते हैं, जो कि उस व्यक्ति का और उस मनुष्य का है। यदि आपको किसी उपन्यास में वर्णित किसी कैरेक्टर से मिलता जुलता व्यक्ति नहीं मिलता, तो इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। आवश्यकता इस बात की है कि कैरेक्टर की आत्मा उस व्यक्ति के हृदय और मन में हो। कैरेक्टर केवल पुस्तकों में विद्यमान हो सकते हैं न कि फिल्मों मे। फिल्मों में व्यक्ति ही भूमिका का निर्वाह करता है। और जो व्यक्ति किसी भूमिका का निर्वाह कर रहा होता है वह स्वयं का वैयक्तिकीकरण कर रहा होता है। मुझे यह देखकर आश्चर्य नहीं होता कि जब मेरी फिल्मों में अभिनय कर चुके अभिनेताओं और अभिनेत्रियों को मैं दूसरी फिल्मों में देखता हूँ, तो वे बिलकुल भिन्न दिखाई देते हैं। किसी कैरेक्टर की भूमिका करने का अर्थ है यह सोचना कि वह कैरेक्टर क्या हैं। स्वयं को पूर्णतः उसके आधीन कर देना, स्वयं को शारीरिक रूप से विकृत करके लगभग वह कैरेक्टर हो जाना फिल्मों में काम नहीं आता। यह तो प्रकृति के विरूद्ध जाने जैसा हैं, चाहे वह कोई व्यक्ति हो। कोई वृक्ष हो या कोई भू-दृश्य हो।

क्या किसी चरित्र को शारीरिक दृष्टि से संवेगात्मक दृष्टि से यथासंभव संकल्पना के अनुरूप चित्रित करना ही अभिनय नहीं हैं?

मेरे विचार से अभिनय मात्र एक व्यवसाय नहीं है वह एक ऐसा व्यक्ति होने का एक कतिपय ढंग है। जहाँ व्यक्ति स्वयं के भीतर अनेक व्यक्तित्वों को बिलकुल नैसर्गिक रूप में स्वीकार करने में सक्षम होता है। अन्यथा आप एक अभिनेता नहीं बनते। जहाँ तक मेरा संबंध है, उसके लिए विभिन्न आन्तरिक व्यक्तित्वों पर कार्य करना निश्चय ही कोई समस्या नहीं होती, किंतु किसी टिपिकल कैरेक्टर की भूमिका करना निश्चय ही फिल्म के लिए एक समस्या होती है। मैं इस बात को जोर देकर कहना चाहता हूँ, क्योंकि होता यह है कि ये आन्तरिक व्यक्तित्व बाह्यतः एक टिपिकल किस्म के व्यक्तित्व में घटित हो जाते हैं और ऐसा लगता है कि हर कोई उसका अभिनय करना चाहता है। जब किसी अभिनेत्री से किसी चरित्र का अभिनय करने को कहा जाता है तो सबसे पहले वह यह जानना चाहती है कि वह चरित्र किसी बुरी औरत का है या किसी अच्छी औरत का है या कि किसी घरेलू औरत का हो या किसी नारी मुक्तिवादी औरत का है। आपको सबसे पहले उस व्यक्ति के भीतरी व्यक्तित्व को जानना होगा, तब संदर्भ महत्वपूर्ण हो जाता है। आपको यह जानना होगा कि क्या वह चरित्र किसी विशिष्ट सामाजिक परिवेश से संबंध रखता है या कि वह ऐसा व्यवहार करता है जो कि उसे बदनाम कर देता है, अर्थात आपको उस परिस्थिति को उस संदर्भ को जानना होगा। जिसमें वह स्वयं को अभिव्यक्त करता है, किंतु जब वे संदर्भ हो जाते हैं तो मैं इस प्रकार के कैरेक्टराइजेशन का विरोध हूँ। मैंने कई ढंगों से कार्य किया है, किन्तु 'इडियट' में कई वर्ष कार्य करने के बाद मुझे बहुत सीधे-सादे हल मिले। अकस्मात् मैं अपने इर्दगिर्द ऐसे लोगों को पाता हूँ जो कि मुझे यह बताते है कि वर्षों से मैं जो फिल्में बनाता रहा हूँ उनमें यह फ़िल्म कहीं अधिक समझ में आती है। मैं जो कुछ करना चाहता था। उसे मैं समझता था और अभिनेताओं/अभिनेत्रियों ने भी जो कुछ मैं उन्हें बताता रहा उसे समझा। संपादन करते समय या स्टुडियो में कार्य करते समय स्टॉफ के लोग फिल्मों को देखते हैं। यद्यपि मेरे चाचा महेश कौल बहुत विद्वान और बुद्धिजीवी थे और उन्होंने पहले-पहले **'गोपीनाथ'** जैसी कुछ अदभुत फिल्में बनाई थी, तथापि अपने उत्तरवर्ती वर्षों में वे बहुत व्यावसायिक फिल्में बनाने लगे थे। जब मैं इन्स्टीट्यूट से वापस लौटा तो उनके साथ रहा। वे फिल्म **'उसकी रोटी'** के बारे में परेशान थे। विशेषतः उन्होंने उसकी गति बहुत धीमी पाई। उनका कहना था कि चाय लाने वाला लड़का भी रूककर आपकी फिल्म देखे। इतने वर्षों में किसी भी चाय लाने वाले लड़के ने रूककर मेरी कोई भी फिल्म नहीं देखी। इस बार जब मैं **'अहमक'** पर काम कर रहा था तो चाय लाने वाला लड़का उसे देखने के लिए रुका और मुझे मेरे चाचा की याद आ गई। (हँसी)।

चाय लाने वाले लड़के ने आपकी फिल्म देखी या नहीं देखी इससे आपको कोई सरोकार था या नहीं?

मेरे विचार से ऐसा कोई भी नहीं होगा जो कि

एक दर्शक-वर्ग न चाहता हो । इसलिए मैं यह नहीं कह सकता कि मैं जानबूझकर एक दर्शक-वर्ग नहीं चाहता । यह मेरे जीवन का सबसे बड़ा भ्रम है । मैं बराबर यही कहता हूँ किंतु जिन पत्रकारों से मेरी बातचीत होती है वे लोग ऐसा कभी नहीं कहते । वे हमेशा यही कहते है कि मैं दर्शक वर्ग की परवाह नहीं करता । आखिरकार यह होता है कि मैं परवाह नहीं करता । मैं किसी दर्शक-वर्ग को सामने रखकर काम नहीं करता । किंतु यह बिल्कुल सच है कि मैं एक दर्शक - वर्ग चाहता हूँ । मैं यह चाहता हूँ कि लोग मेरी फिल्मों को देखे । प्रश्न यह है कि मुझे किसी दर्शक-वर्ग के लिए फिल्म बनानी चाहिए या कि सिनेमा-कला के विकास के लिए फिल्म बनानी चाहिए । कोई चीज मुझसे कहती है कि एक संगीतकार संगीत कला के विकास के लिए कार्य करेगा । एक चित्रकार चित्रकला के विकास के लिए कार्य करेगा । एक कवि काव्य कला के विकास के लिए कार्य करेगा । इसलिए मैं सिनेमा-कला के विकास के लिए कार्य कर रहा हूँ । हो सकता है कि कोई विकास न हो रहा हो और मेरा योगदान शून्य हो । मैं दोहराता हूँ कि मैं किसी दर्शक-वर्ग के लिए कार्य नहीं करता, किंतु मैं एक दर्शक वर्ग चाहता हूँ ।

इससे दो प्रश्न उठते हैं । एक तो यह कि जब आप यह कहते है कि आप एक दर्शक -वर्ग चाहते हैं, तो आप किस प्रकार का दर्शक-वर्ग चाहते हैं ? क्या आप कोई विशेष दर्शक-वर्ग चाहते है जिसकी संवेदन-शक्ति आपकी संवेदन-शक्ति से मेल खाती हो या कि आप चाय लाने वाले लड़के को भी चाहते हैं ?

सबसे पहली बात तो यह है कि मेरे सामने कोई विकल्प नहीं है । किंतु मुझे ऐसा लगता है कि केवल कतिपय वितरण-प्रणाली से अंततः यह प्रकट होगा कि मेरा दर्शक-वर्ग किस प्रकार का हैं । किन्तु वह वितरण प्रणाली अस्तित्व में नहीं हैं । बंबई में तो एक भी ढंग का सिनेमा घर नहीं हैं जैसे कलकत्ता में है । इसलिए यह तो अनुमान की बात है कि क्या ये फिल्में चलेंगी या कि वे किस प्रकार के दर्शक-वर्ग को आकर्षित करेंगी । हमारे पास एक निश्चित प्रकार की वितरण-प्रणाली है और सभी फिल्में उनके निर्माण के समय उस वितरण-प्रणाली के अनुरूप बनाई जाती है । वितरण को किसी निर्माण के अनुरूप एक नवोन्मेषी तंत्र होना चाहिए । अन्यथा आप विकास कैसे करेंगे ? आप किसी दूसरे व्यक्ति तक कैसे पहुँचेंगे ? संभवतः मैं, जिससे कि आप बात कर रही हैं, एक चरम उदाहरण हूँ, किन्तु मेरे कुछ साथी ऐसे हैं जिनकी फिल्में नहीं चलती और वे शायद तथाकथित लोकप्रिय फिल्मों से बेहतर फिल्में बनाते हैं । कोई भी वितरण प्रणाली इतनी लचीली नहीं हैं जो कि स्वयं को नए प्रकार की फिल्मी अभिव्यक्ति के अनुकूल बना सके । यदि कतिपय परंपराओं को जीवित रखा जाए और विकसित किया जाए तो हमें एक पारखी दर्शक-वर्ग मिलेगा । यदि हमारे पास एक पारखी दर्शक-वर्ग न होता, तो शास्त्रीय संगीत में परंपराएं विद्यमान न होतीं । कई बार लोग कहते हैं कि शास्त्रीय संगीत विलुप्त होने जा रहा हैं, किंतु वह कभी विलुप्त नहीं होता ।

पारखी दर्शक-वर्ग से आपका आशय किस प्रकार के लोगों से है ?

मेरा आशय उन लोगों से हैं जो कि उस विद्या में अन्तर्ग्रस्त हों । उदाहरणार्थ, शास्त्रीय संगीत चाहे जितना भी आध्यात्मिक या ऐंद्रिक हो, दुर्भाग्य वश वह चाय लाने वाले लड़के की समझ से परे होता है । इसलिए जब वह उसे सुनता है तो उकता जाता है । उस संगीत में उकताने वाली कोई भी बात नहीं हैं, बात सिर्फ इतनी है कि वह संगीत उसकी समझ में नहीं आता ।

क्या ऐसा नहीं है कि भद्र वर्ग के लोग दूसरे लोगों को अलग-थलग रखने की जानबूझकर कोशिश करते हों, ताकि वे भद्र और अनन्य बने रहें ?

यह बिलकुल संभव है । आप जो कुछ कह रही है वह यह हैं कि जो लोग राजनीतिक दृष्टि से शक्तिशाली हैं वे इसके लिए जिम्मेदार हैं । यह सच हो सकता है, क्योंकि अन्ततः यह उन राजनीतिज्ञों और प्रशासनिकों की समस्या है जो कि देश पर शासन करते हैं । वास्तव में यह उनकी समस्या है । यदि वे चाहें तो निर्णय ले सकते हैं, क्योंकि इस प्रकार का कार्य राष्ट्रीय महत्व का कार्य है और उसे हर किसी तक पहुँचना चाहिए । किन्तु वे वह निर्णय कभी नहीं लेंगे । आखिरकार शासन से यह उम्मीद थी कि वह विभिन्न प्रकार के सिनेमा के लिए सौ सिनेमा घरों का निर्माण करेगा, किंतु कोई भी सिनेमा घर नहीं बनवाए गए है । यह कार्य अग्रता सूची में शामिल नहीं है, और दुर्भाग्यवश कलाकार केवल भद्र वर्ग के सामने प्रदर्शन कर रहा है ।

तो प्रश्न फिल्मों के समझ में आने योग्य होने का है । यदि आपकी फिल्में लोगों की समझ में आती तो हो सकता हैं कि लोग उन्हें देखते ?

बेशक । मुझे पूरा भरोसा है । बात यह है कि मेरी फिल्म लोगों के सामने कई सालों बाद अचानक आती हैं, इसलिए वह लोगों के लिए एक झटके जैसी होती हैं । लोग नहीं जानते कि वे मेरी कृति से कैसे जुड़े और फिर वह दर्शक-वर्ग गायब हो जाता है । क्योंकि मैं एक या दो साल कोई भी फिल्म नहीं बनाने जा रहा होता हूँ । यदि भारत सरकार हर कहीं राष्ट्रीय फिल्म अभिलेखागार की शाखाएँ स्थापित कर सकती तो अच्छा होता । जर्मनी में ऐसा ही एक अभिलेखागार है जो कि फोरम आर्सेनल कहलाता है । और उसकी शाखाएँ हर कहीं हैं । जर्मनी में इस फोरम के जरिए मेरी फिल्मों का पुनरावलोकन किया गया था । इस फोरम के लोग फिल्म-निर्माता की अनुमति से व्यावसायिक उपयोग के लिए फिल्म की कॉपियाँ बनाते हैं और उस फिल्म को आर्सेनल आर्काइन्ज के जरिए जर्मनी में हर कहीं दिखाते है । मुझे ऐसा लगता है कि यदि भारत के हर राज्य में कम से कम एक फिल्म अभिलेखागार होता और दर्शक वर्ग के कतिपय हिस्से के लोग विश्व सिनेमा की वही फिल्में देखने के लिए, जो कि मैंने देखी हैं, नियमित रूप से वहाँ जाते, तो कोई भी समस्या नहीं रहती । क्योंकि मेरे निर्देश-विषयों में सिनेमा कला की कृतियाँ और विश्व में हर कहीं विकसित कतिपय परंपराएँ शामिल होती है । वह आधुनिक कला के साथ हुआ, वह चित्रकला के साथ आरंभ हुआ । जैसाकि पिकासो या मातिस्सी के आप ले में हुआ । उन पर प्रचंड प्रति-सांस्कृतिक प्रभाव पड़े थे । उदाहरणार्थ, मातिस्सी पर इस्लामिक कला का प्रचंड प्रभाव पड़ा था । पिकासो पर कुछ समय तक अफ्रीकी मूर्तिकला का प्रभाव रहा । पॉल क्ले पर पर्शियन मिनिएचरों का प्रभाव रहा । इसलिए, फिल्मों में यह वाकई हकीकत है कि जब आप इटली जाते हैं तो वहाँ यह देखते है कि वहाँ का कोई फिल्म-निर्माता किसी अमेरिकी फिल्म-निर्माता से बहुत अधिक प्रभावित है । या कि जब आप अमेरिका जाते है तो वहाँ के फिल्म निर्माताओं को एशियाई फिल्म-निर्माताओं से प्रभावित पाते हैं । आजकल फिल्में इतनी अधिक
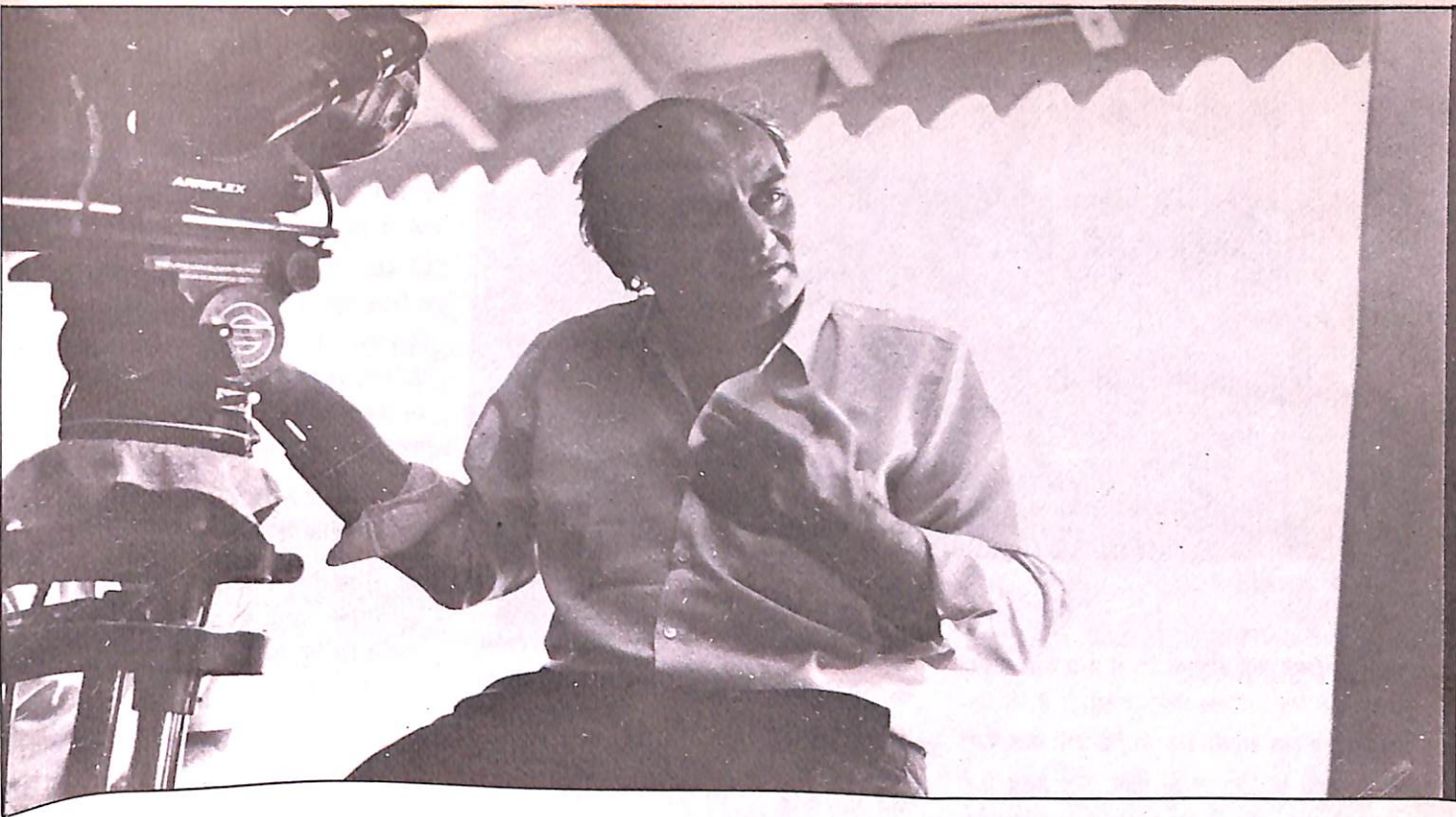
फिल्मकार मणि कौल

यात्रा करती हैं कि आप अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भ में कोई फिल्म बनाने के लिए प्रेरित हो सकते है। कोई भी संस्कृति आपको प्रभावित कर सकती हैं। मुझे विश्वास है कि मेरे जैसे बहुत से फिल्म निर्माता होने वाले है। यदि फिल्म-निर्माण की आर्थिक परिस्थितियों में सुधार नहीं होता,तो समस्याएँ बढ़ सकती हैं। किंतु मुझे जैसे व्यक्ति के लिए, जिसके पास कोई भी प्रजातीय मूलबद्धता नहीं हैं और कोई प्रान्तीय पृष्ठभूमि नहीं है, कोई विवशताएं नहीं हैं। मैं तो स्वयं को एक भारतीय फिल्म-निर्माता भी नहीं कह सकता क्योंकि मुझ पर न जाने कहाँ-कहाँ के प्रभाव पड़े हैं।

इस विषय में कोई भी व्यक्ति आपसे इस अर्थ में असहमत होगा कि आपकी सभी फिल्मों में भारतीय शास्त्रीय संगीत और पारंपरिक भारतीय चित्रकारी का उपयोग किया जाता हैं, जिसके लिए भारतीय संस्कृति का कतिपय अवबोध अपेक्षित है। इसी के साथ यह अचरज की बात है कि आपकी फिल्मों को विदेशों में अधिक सराहा जाता है?

आप जो कुछ कह रही हैं वह सच है। अनेक भारतीय परंपराओं से मेरा बहुत संपर्क है। इसी के साथ अन्य विश्व के लोगों को इकट्ठा करना और यह कहना बेहतर होगा कि आपके पास पूरे विश्व में कतिपय नव-यथार्थवादी परंपर एं है। आपके पास बेस्सन, ओजू, गोदार्द, फेलिनी जैसे लोग हैं। ये लोग लगभग परंपराओं जैसे हैं और सिनेमा में उसी ढंग से काम करते हैं। उन्होंने फिल्म-निर्माताओं के रूप में इतना मूलभूत चिन्तन किया है कि जब आप फिल्म बनाना आरंभ करते हैं, तो इस ढंग से या उस ढंग से विचार किए बिना नहीं रह सकते। दूसरी ओर, मैं अपनी भारतीय परंपराओं को यहाँ तक कि दार्शनिक परंपराओं को भी, उदाहरणार्थ, अद्वैतवादी चिन्तन को अस्वीकार नहीं करता। इस दर्शन ने मुझे अत्याधिक प्रभावित किया हैं। वह बारंबार वास्तविकता के स्वरूप पर प्रश्न उठाता है, जो कि मुझे बहुत रुचिकर लगता है। ग्रंथों में काल की संगणना है और बताया गया है कि कैसे विश्व के भीतर विश्व हैं। वह ब्रह्माण्ड के बारे में और जीवन के बारे में में सोचने का एक संपूर्ण ढंग हैं।

क्या आप स्वयं से यह कभी नहीं पूछते कि आप क्या कर रहे हैं और क्यों कर रहे है?

जी नहीं, क्योंकि मेरे लिए मेरा कार्य एक भावावेश हैं। मैंने अपने एक मार्क्सवादी मित्र से पूछा कि आज जबकि साम्यवाद का पतन हो रहा है उसे कैसा लगता है और उसने कहा कि वह एक आत्मिक पसंद हैं और वह मार्क्सवाद को मानता रहेगा। मैं यह बात पसंद करता हूँ। मेरे दिमाग में संदेह प्रवेश कर सकता है। सीजेन के दिमाग में संदेह प्रवेश करता था और वे अपने ब्रश फेंक दिया करते थे। यदि उन्हें संदेह हो सकता था, तो हम तो नगण्य मत्र्य जीव हैं। और जाहिर है कि हमारे दिमाग में संदेह प्रवेश कर सकता हैं, किंतु हमें जो चीज आगे चलाए जाती है वह है भावावेश। इसलिए यह प्रश्न मेरे दिमाग में कभी नहीं उठता कि मैं क्या कर रहा हूँ मैं अपने कार्य में इतना अन्तर्ग्रस्त हूँ कि अब मैं फिल्में बनाने के सिवाय कुछ भी नहीं कर

फिल्म 'नज़र' (1991)

सकता । मैं यह नहीं सोचता कि मैं कुछ और करने योग्य हूँ । अब हम उस प्रश्न पर लौटते हैं जो कि तब उठा था जब आपने कहा था कि सभी कलाकार अपनी कला के विकास के लिए कार्य करते है । अन्तर केवल इतना है कि संगीतकार, कवि और चित्रकार न्यूनाधिक रूप में अलग-थलग रहकर कार्य कर सकते हैं, किन्तु एक फिल्मकार ऐसा नहीं कर सकता । आपको अपनी दृष्टि को जीवन्त रूप देने के लिए बहुत से दूसरे लोगों पर निर्भर रहना पड़ता है । खर्च की तो बात ही छोड़िए, फिल्मों पर ढेर सारी धनराशि खर्च होती है ।

जहाँ तक एक समूह में कार्य करने का संबंध हैं, आपको अचरज होगा कि आपका कार्य बहुत सुखद हो जाता है और यदि आपकी अन्तर्दृष्टि एक व्यक्तिगत अन्तर्दृष्टि न हो तो वह कार्य पूर्णत: आपकी अन्तर्दृष्टि में बना रहता है । और आपको उसका अहसास होता है । एक बहुत महान सेलो वादक ने एक बार कहा था कि उसने यह कभी नहीं सोचा कि वह क्या कह सकती हैं बल्कि वह हमेशा यह सोचा करती थी कि संगीत क्या कह सकता है । किसी कलाकार की अन्तर्दृष्टि भी अन्तत: एक व्यक्तिगत प्रकार की अन्तर्दृष्टि नहीं होती । उसके मूल में कोई पूर्वग्रह नहीं होते । वस्तुत: वह एक बिलकुल व्यक्तिगत अन्तर्दृष्टि होती है । निश्चय ही उस पर कतिपय दबाव होता है, जो कि बहुत व्यक्तिगत होता है । इसलिए दूसरों के लिए सहभागी होना बहुत आसान होता है । यदि मैं कोई आसपास शिष्य होते और वे कोई व्यक्तिगत चीज नहीं सीखते, बल्कि एक ऐसी परंपरा को सीखते, जिसे कि मैं धारण किए हुए होता और देने की आशा करता । इसका अर्थ यह है कि वे मेरी नकल नहीं करते, बल्कि परंपरा में अपने स्वयं के व्यक्तित्व का विकास करते हैं । मेरे कार्य में भी यही बात है । मुझे बहुत प्रसन्नता है कि मेरे इर्दगिर्द विभिन्न प्रकार के लोग होते हैं । कोई समस्या ही नहीं होती । लोगों से अलग थलग एक व्यक्ति होने का बोध किसी समूह में होने से नष्ट नहीं होता । पैसे का सवाल बाद में आता है । अब चूंकि फिल्म निर्माण एक उद्योग हैं । कतिपय परियोजनाओं के लिए धनराशि उपलब्ध होती है । ऐसी फिल्में भी होती हैं जो कि धन कमाने के प्रयोजन से बनाई जाती है, और वे असफल हो जाती है ।

इसी प्रकार, जिस सिनेमा को किसी ने एक बार अलोकप्रिय सिनेमा कहा था, उसके निर्माता भी जैसे-तैसे अपनी धनराशि वापस पा लेते हैं, किन्तु वह लाभ कमाना नहीं हैं और न धनराशि शीघ्र वापस मिलती है । एक उद्योग है इसलिए गंभीर सिनेमा भी पनप सकता है । मुझे बहुत प्रसन्नता है कि मैं बंबई में हूँ और एक सफल फिल्म निर्माण केन्द्र में हूँ, और मैं उनके लोकप्रिय सिनेमा की सफलता चाहता हूँ, क्योंकि मेरा अस्तित्व वस्तुत: उनकी सफलता पर निर्भर हैं, क्योंकि वे मुझे एक आधारिक संरचना प्रदान करते हैं । मैने राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम की सहायता से **'नज़र'** नामक एक फिल्म बनाई । इसके पहले निगम ने फिल्म **'दुविधा'** के लिए वित्त दिया था । इसी बीच 15 वर्षों का अन्तराल था और इन 15 वर्षों में मैं अपने साधनों से काम चलाता रहा । इसका यह अर्थ है कि जब तक मैं फिल्म बनाना बंद कर चुका होऊँगा तब तक राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम चार या पाँच फिल्में के लिए वित्त दे पाएगा । बात यह नहीं है कि वह मेरे कल्याण के लिए उत्तरदायी हैं । फिल्म्स डिवीजन मेरे लिए बेहतर हैं, किंतु निश्चय ही अब उसके पास धनराशि नहीं है । मैं नहीं जानता कि डाक्युमेन्टरी फिल्मों और फिल्म्स डिवीजन का क्या होगा ।

यदि सरकारी स्रोत बंद हो जाएं तो क्या आप प्रायवेट स्रोत से वित्त पा सकेगें?

यह कठिन होगा । अभी तक मेरी मुलाकात किसी ऐसे प्रायवेट उद्यमी से नहीं हुई हैं, जिसे कि कलाओं अर्थात् सिनेमा कला में दिलचस्पी हो । वे किसी चित्र को दस लाख रूपये देकर खरीद सकते हैं, किंतु फिल्मों में उनकी वैसी ही दिलचस्पी नहीं हैं । मैं सोचता हूँ कि ऐसा क्यों हैं? मैं सोचता हूँ कि मैं अपनी फिल्म 25 लाख रुपयों में नीलाम क्यों नहीं कर सकता, ताकि उस धनराशि में से स्पॉन्सर को कुछ धनराशि देकर मेरी अगली फिल्म को लेकर आगे बढूँ । यदि एक चित्रकार अपने चित्रों को नीलाम कर सकता है तो फिर एक फिल्म-निर्माता के लिए ऐसा करना अनैतिक क्यों हैं? वस्तुत: यदि मैं अपनी फिल्म को नीलाम कर दूँ तो हो सकता है कि लोगों में सनसनी फैल जाए और लोग उस फिल्म को देखना चाहें जो कि 25 लाख रुपयों में नीलाम हुई ।

क्या आप कभी कोई लोकप्रिय फिल्म नहीं बनाएंगे? प्रयोग के लिए भी नहीं?

नहीं, मुझे ऐसा नहीं करना होगा । हो सकता है कि लोग मुझे एक पहेली समझते हों । वे यह समझते हैं कि मैं एक दुर्बोध और विचित्र फिल्म-निर्माता हूँ और कभी-कभी उबाऊ हो जाता हूँ किंतु मेरा यह विचार है कि लगभग पाँच-दस वर्षों बाद सब कुछ बदल जाएगा, क्योंकि अंत में हर चीज का सरलीकरण हो जाता है । हो सकता है कि आज सब कुछ दुर्बोध लगता है । दुर्बोधता के संदर्भ में आप विन्सेन्ट वॉन गॉग से बदतर नहीं हो सकते, अब तो उनका भी इतना सरलीकरण हो गया है

विज्ञापन वाले लोग उनका उपयोग कर रही (हँसी) यदि दस वर्ष बाद वे मेरे ईडिम का उपयोग ज्ञापनों के लिए करें तो मुझे आश्चर्य नहीं होगा।

ाप इस बात को लेकर लगभग एक प्रकार गौरव का अनुभव करने लगे हैं कि लोग ापकी फिल्मों को नहीं समझते ?

दि आप मेरी ताजातरीन फिल्मों को देखें तो आप सा नहीं कहेंगी। वस्तुतः, मैं एक इमेज में कैद कर कार्य नहीं करना चाहता। मेरा यह विचार कि यदि कोई कलाकार दूसरे लोगों द्वारा बनाई ई अपनी स्वयं की इमेज में कैद हो जाता है तो ह कलाकार ही नहीं होता। यह सच है कि पने-आप को बदलना किसी कलाकार के लिए ासान नहीं होता, क्योंकि उसके पास एक संपूर्ण श्व दृष्टि होती है, न कि कार्य करने का मात्र एक तही ढंग। वह एक बहुत गहरी अन्तर्ग्रस्तता होती । यदि आप **भीमसेन जोशी** को **कुमार गंधर्व** ी तरह गाने को कहें तो वे वैसा नहीं गाएंगे, क्योंकि ह एक संपूर्ण विश्व-दृष्टि को बदलने जैसा काम ोगा। मेरे विचार से सिनेमा में आप दो या तीन ार ऐसे मोड़ ले सकते हैं और अपने कार्य को एक नए प्रकार के कार्य में परिवर्तित कर सकते हैं। यदि आप मेरी फिल्मों को देखें तो वे सभी एक दूसरे से बहुत भिन्न हैं। उन पर एक फिल्म निर्माता की छाप हो सकती हैं, किन्तु वे एक-दूसरे से भिन्न हैं। फिल्म अहमक पूर्णतः भिन्न है। सामान्यतः मेरी फिल्मों में कथा बहुत सूक्ष्म होती हैं, किन्तु इस फिल्म में वह वस्तुतः इस अर्थ में संतृप्त हैं कि उसमें कथा बहुत अधिक है। 'इडियट' की यही बात मुझे पसंद आई। उसमें लगभग 35 चरित्र हैं और अनेक छोटी-छोटी घटनाएं हैं। इसलिए वस्तुतः यह फिल्म स्वयं को एक विशाल दिक् में छितरा देती है। 'नजर' और 'अहमक' फिल्में बनाने के अनुभव से मैंनें कुछ सीखा हैं, जिसे मैं अब अपनी डाक्युमेण्टरी फिल्मों में भी उपयोग में लाना चाहूँगा।

आप यह कैसे करेंगे ?

मैं भरतनाट्यम के तिल्लाना फॉर्म पर एक डाक्युमेण्टरी बनाने में बहुत दिलचस्पी रखता हूँ। तिल्लाना वस्तुतः एक परित्याग जैसा है। वह सामान्यतः आखरी प्रस्तुति होता है जिसमें नर्तक वस्तुतः परित्यक्त हो जाता है। वह एक धमाके जैसा आता है। वह 'ख्याल' में 'तराना' जैसा है या ध्रुपद में अर्थहीन अक्षरों का उपयोग करते हुए गाए जानेवाले कतिपय जोड़ जैसा होता है, किन्तु वह परित्याग की ध्वनि जैसा इस अर्थ में होता है कि वह कोई तर्कसंगत बोध नहीं देता बल्कि मात्र आनंद देता हैं। अब मैनें जो सीखा है वह यह है कि जब आप परम्परागत रूप से कोई विषय लेते हैं, उदाहरणार्थ नृत्य तो आपको एक नर्तक की आवश्यकता होती है और नर्तक को एक चेहरे की आवश्यकता होती है। यह बहुत विचित्र बात है कि प्रतिरूप इतना प्रतीकात्मक होता है। नर्तक का चेहरा और आँखें फिल्म के केन्द्र-बिन्दु हो जाते हैं। मैं मानव प्राणी की कल्पना विश्व के केन्द्र के रूप में नहीं कर रहा हूँ, जैसे कि हर चीज उसके उपभोग के लिए बनाई गयी हो। जैसा कि धर्म ग्रंथों में कहा गया है। यह एक मध्यमयुगीन विचार है। प्रश्न यह है कि एक ऐसे मुहावरे को कैसे खोजा जाए जहाँ प्रकृति अधिक बड़ी हो। पृथ्वी अधिक बड़ी हो। और वे एक नाटक में अपनी भूमिका निभा रहे हों जिसे जीवन कहा जा सकता हैं। इसके लिए आपको सबसे पहले मानवप्राणी को केन्द्र बिंदु बनाने के विचार को भूलना होगा। मानव प्राणी को केन्द्र बिन्दु बनाना एक बीमारी हैं, जो कि एक कतिपय प्रकार की नैतिकता और परंपरा से उपजती है।

फिल्म सिद्धेश्वरी में मीता वशिष्ठ

वास्तविकता की ओर देखने की संपूर्ण दृष्टि को बदलना होगा। दोस्तोव्स्की को पढ़ने और उसकी रचना पर फिल्म बनाने का अनुभव विस्मयकारी रहा है। किंतु 'ईडियट' में चरित्र-चित्रण नहीं हैं, प्रत्येक चरित्र एक विश्व हैं। ऐसा लगता है कि विभिन्न विश्व एक दूसरे से टकरा रहे हैं। सभी प्रकार की चीजों का निर्माण हो रहा हैं। मैं दोस्तोव्स्की का बहुत ऋणी हूँ कि उन्होंने मुझे इस विषय का सामना बहुत परोक्ष रूप से करने के लिए विवश किया। फिल्म **'नजर'** में मैंने वहाँ जो कुछ उपलब्ध था उसे दिक् में छितराने का विचार किया। फिल्म 'ईडियट' मे मैंने संपादन और अनुक्रमण (सीक्वेन्सिन्ग) के जरिए उसे काल में बिखेरा है। आप इस ढंग से अनुक्रमण करते हैं कि कथा छितरा जाती है जो कि वस्तुतः एक कालिक समस्या है। यहाँ आप दिक् का विस्तार कर सकते हैं, आप एक ऐसे ढंग से अनुक्रम निर्मित करते हैं कि विस्तारित बोध अकस्मात् अस्तित्व में आता हैं और जहाँ आप एक ऐसा दिक् पाते हैं जो कि हर समय एक अन्य दिक् में विस्तृत होता है। ये दो फिल्में एक-दूसरे के बहुत विरूद्ध हैं। जब आप फिल्म 'अहमक' देखेंगे तो आपको अचरज होगा। मैंने **शाहरुख खान** जैसे अभिनेताओं को लेकर काम किया है।
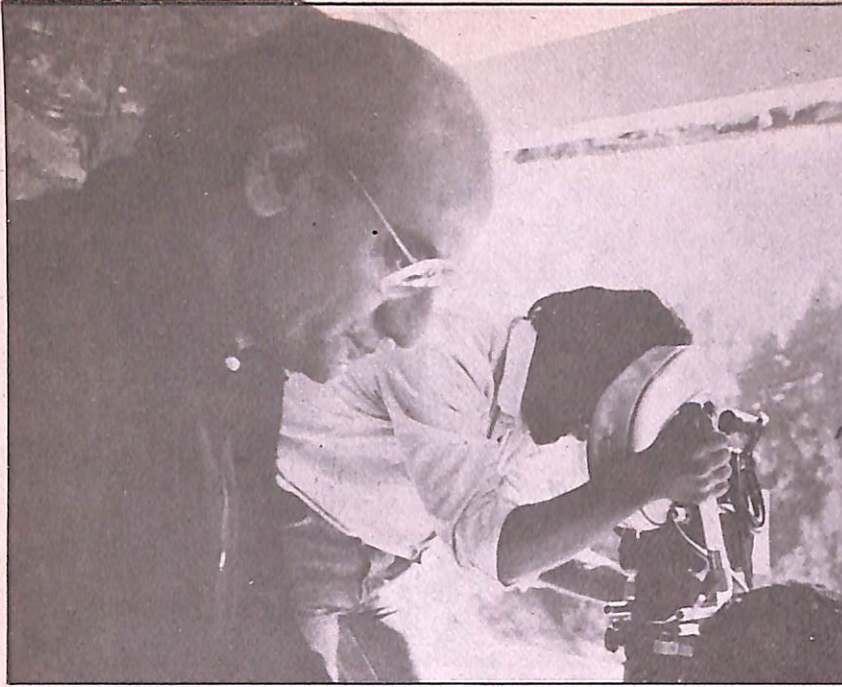
शूटिंग के दौरान मणि कौल

कैसा अनुभव रहा?

उनके साथ मेरा अनुभव दिलचस्प रहा। एक अभिनेता और एक निर्देशक के बीच जो कुछ होता है वह यह है कि अन्ततः दुर्भाग्यवश, उनके बीच का अधिकांश शब्दाडम्बर व्यर्थ हो जाता है। फिर किसी, ऐसी चीज को सम्प्रेषित करना कठिन हो जाता है, जो कि शाब्दिक अनुभव के बाहर जा रही हो। मेरे विचार से शाब्दिकीकरण एक समस्या है। यदि मैं कोई चित्र बना रहा होता हूँ, तो मैं बैठकर उसके बारे में कोई थीसिस नहीं लिखता, मैं तत्काल चित्र बनाना आरंभ कर देता हूँ। इसलिए, मुझे क्या करना चाहिए कि जिस अ-शाब्दिक अनुभव को मैं अपनी फिल्म में लाना चाहता हूँ वह मेरे और उसके बीच भी स्थापित हो जाए। उनके साथ यह हुआ कि मुझे कभी भी समझाना नहीं पड़ा. उन्होंने सिर्फ मेरी ओर देखा और जान लिया कि क्या करना है। यह बहुत अद्भुत था। वस्तुतः मैं अपने अधिकांश अभिनेताओं के साथ यह कर सकता हूँ। मैं उनके साथ बहुत स्वतंत्रतापूर्वक कार्य करता हूँ और अपने कार्य को अविकल भी रखता हूँ, उसे तितर-बितर नहीं होने देता। मेरे लिए यह महत्वपूर्ण है कि मैं हर किसी को स्वतंत्रता और अवकाश दूँ और फिल्म के साथ विकसित होने दूँ।

जब फिल्म 'उसकी रोटी' बनाई गई तो उसे लेकर बहुत वाद-विवाद हुआ और मिश्रित प्रतिक्रियाएं हुईं। अब, जब आप उस पर फिर से विचार करते हैं तो आपको कैसा लगता है।

यह बहुत विचित्र है कि आप मुझसे यह प्रश्न पूछ रही हैं। मैं हाल ही में इस फिल्म के बारे में सोचता रहा हूँ तो मुझे ऐसा अहसास होता है कि किसी फिल्म - निर्माता के पूर्वनिवेश का निर्माण वस्तुतः तब होता है जब वह युवक होता है। उस समय वह जो कुछ भी करता है वह जीवन भर उसका पूर्वनिवेश बना रहता है। मुझे कभी कभी आश्चर्य होता है कि मैं **'उसकी रोटी'** के बारे में इतना अधिक क्यों सोच रहा हूँ। उस फिल्म में मेरे सभी निर्देश हैं। मैं अब भी अनेक ढंगों से यह कोशिश कर रहा हूँ कि 'उसकी रोटी' को न दोहराऊँ, किन्तु अब भी यह विचार मेरे मन में उठता है कि मानसिक वास्तविकता क्या है और भौतिक वास्तविकता क्या है जिसका निरुपण मैंने उस फिल्म में किया है। उस फिल्म में जब मैं ठीक छब्बीस वर्ष का था, मुझे विश्वास था कि भौतिक जीवन और मानसिक जीवन में कोई अन्तर नहीं है। और मैं किसी व्यक्ति की भौतिक उपस्थिति से उतना ही प्रभावित हो सकता हूँ जितना कि मेरे भीतर की भावात्मक और मानसिक उपस्थिति से प्रभावित हो सकता हूँ। वे एक स्तर पर एक पारस्परिक स्तर पर - समान ऊर्जा और समान उत्कटता के साथ कार्य करते प्रतीत होते हैं। फिर मैंने सोचा कि स्त्री के अतीत तथा वर्तमान को उसकी स्मृतियों को अर्थात् फ्लैश बैक को उस स्त्री के जरिए व्यक्तिनिष्ठ रूप से नहीं देखा जाने वाला है। मैंने सोचा कि यहाँ एक फिल्म निर्माता हूँ, मुझे अतीत, वर्तमान और भविष्य में तथा जहाँ कहीं भी चाहूँ वहाँ प्रवेश करने का अधिकार है। यह एक अजीब बात है कि आप उसे अतीत के रुप में अभिज्ञात क्यों करती हैं, क्योंकि फिल्म केवल वर्तमान काल में कार्य करती है। उसके पास भाषा जैसा कोई मुहावरे वाला लाभ नहीं होता। किसी बिम्ब का कोई भूतकाल नहीं होता इसलिए जब तक मैं कोई जुगत काम में न लाऊँ तब तक यह कैसे दिखाया जा सकता है कि कोई बिंब भूतकाल में है। वह उसकी कल्पना में है। तब मैंने महसूस किया कि कोई बिंब भौतिक और मानसिक हो सकता है। मैंने यह मानकर फिल्म को दो लेन्सों के सहारे बनाने का विचार किया - एक एक्सट्रीम वाइड लेन्स, जिसमें फील्ड की गहराई होती है और युनिवर्सल फोकस होता है और एक लांग फोकस लेन्स, जिसके फोकस का रेन्ज बहुत संकीर्ण होता है और इसलिए दूसरी चीजें फोकस के बाहर होती हैं। फिर आप यह मानकर चलते हैं कि एक लेन्स वर्तमान का प्रतिनिधित्व करता है और एक लेन्स अतीत का प्रतिनिधित्व करता है। इसलिए अन्त की ओर मैंने उसे मिश्रित कर दिया। लोगों ने मुझसे पूछा कि क्या ड्राइवर सचमुच वापस लौट आया था या कि वह स्त्री कल्पना कर रही थी? यह अद्भुत था, क्योंकि मैं ठीक यही चाहता था। उस स्त्री के जीवन की त्रासदी इतनी बड़ी है कि उपस्थिति वास्तविक हो या मानसिक और ड्राइवर वापस लौटता है या नहीं लौटता इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। मुद्दा यह नहीं है। जब मैं किसी अन्य फिल्म पर चर्चा कर रहा होता हूँ तो अकस्मात् मैं स्वयं से पूछता हूँ कि क्या वही प्रश्न मेरे दिमाग में है? किन्तु वस्तुतः वह वही प्रश्न नहीं है हालात पूरी तरह से बदल गए हैं। मैं यह नहीं जानता कि फिल्म अच्छी थी या बुरी, किन्तु मैं उस फिल्म के साथ एक निरन्तरता रखे हुए हूँ। मैं उस फिल्म से दूर और दूर जाता रहता हूँ, फिर भी उसके निकट बना रहता हूँ।

उस अवधि की प्रायोगिक फिल्मों की आलोचना में एक बात यह कही जाती थी कि उनमें तकनीक को अपने आप में एक साध्य रूप में उपयोग में लाया जाता था। जब कहने के लिए कुछ भी नहीं होता था तो उनमें इस अभाव को तकनीक के जरिए छिपाने की कोशिश की जाती थी।

पहली बात तो यह है कि मेरे पास कहने के लिए कुछ भी नहीं है, और न कभी था। जिन विचारों अर्थों और अनुभवों को आप प्रकल्पनात्मक रुप में कहना चाहते हैं उन तक आप कोई फिल्म बनाकर ही पहुँच पाते हैं। अन्यथा यदि आप यह जानते हैं कि आप क्या कहना चाहते हैं तो फिर आप कोई फिल्म क्यों बनाते हैं? जब मैं कोई फिल्म बनाता हूँ तो मैं केवल भूतलक्षी रूप में ही परख सकता हूँ कि फिल्म क्या कहना चाहती थी, या कि क्या वह कहीं पहुँची। हो सकता है कि वह वहाँ तक न पहुँची हो, किंतु उसे किसी नए अर्थ तक पहुँचना चाहिए। हो सकता है कि आप अपने दिमाग में कुछ विचार लेकर कार्य आरंभ करें - मैं इसे मानकर चलता हूँ - क्योंकि आप एक शून्य को लेकर कार्य आरंभ नहीं कर सकते। आपके दिमाग में कोई इतिहास होता है, कोई पुराण होता है, आपके जीवन में विभिन्न केन्द्र होते हैं, जो कि घर और विवाह से आरंभ होते हैं और आपके जीवन में विवर्ती केन्द्र तथा दिक् होते हैं। आपके पास यह सब होता है और जब आप अपना कार्य आरंभ करते हैं तब बुद्धि और प्रवृत्ति भी होती है। किन्तु वह आपके कार्य का लक्ष्य नहीं होता। जब अभिनेता इस उधेड़बुन में रहते हैं कि क्या कहना है, तो कभी - कभी मैं उन्हें संदर्भ बताता हूँ, किन्तु मैं यह नहीं जानता कि उन्हें क्या कहना है। क्योंकि प्रत्येक हाव-भाव से एक नया अर्थ उत्पन्न हो सकता है। यहाँ तक कि मैं उसकी प्रतीक्षा भी करता हूँ। मैं अपने अभिनेता को यह नहीं बता सकता कि यह हाव - भाव क्यों दिखाया जाए, क्योंकि हाव - भाव तो केवल एक तन्त्र है। हमें प्रतीक्षा करनी होती है और नए अर्थ का समन्वेषण करना होता है। यह एक महान रहस्य है। मैं अस्तित्ववादियों के संदेहों में या आइडियालॉग की निश्चतताओं में फँसना नहीं चाहता। मैं 'यादृच्छिक' में अधिक रुचि रखता हूँ। यदि आप सब कुछ जानते हैं तो आप कौन सा नवोन्मेष करने जा रहे हैं? मैं अपने अभिनेताओं, कैमरामैन, साउण्ड रिकॉर्डिस्ट से हमेशा यह कहता हूँ कि जब कोई दुर्घटना हो जाए उदाहरणार्थ कैमेरा मूव्हमेण्ट गलत हो जाए या लाइट कम हो जाए तो कभी भी कट न करें। यही एक चीज है जिससे मैं बौखला उठता हूँ। इसलिए वे अब ऐसा नहीं करते। मैं इस जीवन को व्यवस्थित नहीं कर सकते। मुझे केवल उस व्यवस्था की आवश्यकता होती है जो कि एक समूह में कार्य करने के लिए तर्कसंगत हो। मैं चाहता हूँ कि मुझे किसी व्यवस्था की आवश्यकता न हो। मेरा विचार है कि मेरे कैरियर के अन्त में मुझे किसी व्यवस्था की आवश्यकता नहीं होगी। मैं अपने कैमरामैन को साथ लेकर जहाँ जी चाहेगा वहाँ शूट करुँगा। मुझे ऐसी चीजों से प्रेम है जो कि यूं ही हो जाती है और व्यवस्था को तितर - बितर कर देती है।

यह बात उस सिद्धांत को प्रश्नांकित करती प्रतीत होती है, जिसके अनुसार निर्देशक अपने विश्व का स्वामी होता है। उसका कार्य प्रत्यभिज्ञान है और यही चीज उसे तकनीकी निर्देशक से अलग करती है। केवल कम महत्वपूर्ण निर्देशकों के दिमाग में ही कोई अतिदक्ष फिल्म बनाने का विचार रहता है। प्रत्येक कला रूप में ये तकनीकी टाइप होते हैं जो कि अपनी कलाविज्ञता पर पनपते हैं, वे कलाकार नहीं होते। एक कलाकार हस्तक्षेप नहीं करता, वह प्रकृति पर हावी नहीं होना चाहता। मेरे कार्य के बारे में लोगों का यह विचार है कि मैं अभिनेताओं को अभिनय नहीं करने देता और मैं उन्हें किसी भी प्रकार की स्वतंत्रता नहीं देता, जबकि वस्तु स्थिति बिल्कुल उल्टी है।

किसी भी कला रूप का मुख्य प्रयोजन सम्प्रेषण माना जाता है। 'अभिव्यक्ति और सम्प्रेषण शब्दों का अर्थ आपके लिए आपके कार्य के संबंध में क्या है?

जहाँ तक मेरा संबंध है, 'सम्प्रेषण' एक बुरा शब्द है। वह विज्ञापन - कला के आविर्भाव के बाद प्रचलन में आया। यह बात मेरी समझ में नहीं आती कि यदि आप सम्प्रेषण नहीं कर सकते, तो क्या बेचने जा रहे हैं? किंतु मेरे जैसे व्यक्ति को, जिसे कुछ भी नहीं बेचना है, समप्रेषण की कोई आवश्यकता नहीं है। आप किसी अनुभव का सम्प्रेषण नहीं कर सकते। इसलिए मेरी अभिव्यक्ति में आप ऐसा अनुभव पा सकते हैं, जो कि आपके अनुभव के अनुरूप हो या नही। आप मेरे कार्य में कोई अनुभव पा सकते हैं, किंतु आपको मेरे कार्य के उस स्तर से संबंध जोड़ने और एक अर्थ में 'मेरे कार्य के स्तर को ऊँचा उठाने योग्य होना आपकी योग्यता पर निर्भर है। शब्द 'संप्रेषण' का कोई उत्तरदायित्व नहीं है। हिटलर ने भी सम्प्रेषण किया होगा और यह कार्य उसने भली भाँति किया। फिल्म निर्माता अपने दर्शकों को 'फ़ीड' करते हैं ताकि वे पर्दे के सामने निष्क्रिय बने बैठे रहें जैसे कि बच्चे टेलीविजन के सामने बैठते हैं। उनके चेहरों को देखिए वे पूर्णतः मंदबुद्धि दिखाई देते हैं। बुरी से बुरी हालत में वह फिल्म सूचना सम्प्रेषण करती है, किंतु उस सारी अनुपयोगी सूचना से किसे लाभ होता है? सूचना के प्रसार की प्रणाली खतरनाक है। आप उसके साथ क्या करते हैं? वह आपको कूड़ा करकट दे रही है। हो सकता है कि मेरी फिल्में एक जनसमूह - संस्कृति में जनसमूह उपभोग के लिए अभिप्रेत न हों। हो सकता है कि वे व्यक्तिगत संबंधों के लिए अभिप्रेत हों, जैसे कि किसी पुस्तक के साथ और वीडियो पर उनका एक पुस्तक जैसा व्यापक प्रसार हो सकता है, जिस मामले में आप फिल्म के साथ वैसे ही अकेले होते हैं, जैसे कि किसी पुस्तक को पढ़ते समय आप लेखक के साथ अकेले होते हैं। वीडियो में यह एक अद्भुत संभावना है, किंतु उसे भी घटाकर जनसमूह संस्कृति बना दिया गया है।

आप अपने कार्य पर ब्रेसाँ और घटक के प्रभाव का उल्लेख हमेशा करते हैं। क्या आप समझाएंगे कि उन्होंने आपको कैसे प्रभावित किया है?

घटक का मुझ पर जो प्रभाव पड़ा है उसे समझाना अधिक कठिन है। ब्रेसाँ के प्रभाव को समझाना अधिक आसान है। घटक वह थे जिसे कि पारंपरिक रूप से 'चेतन गुरु' कहा जाता है। ब्रेसाँ 'जड़ गुरु' थे। घटक मेरे सामने थे शरीर में और मन में। मैं आपको बताता हूँ कि शिष्य की भलाई के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात उसे जानकारी देना नहीं है बल्कि आपकि उसके मन को अनवरुद्ध बनाना चाहिए। इसके लिए एक आग की आवश्यकता होती है। हर कोई यह काम नहीं कर सकता। जब मैं ऋत्विक घटक से मिला तो उन्होंने मेरी सभी पूर्व संकल्पनाओं को तार - तार कर दिया। ऐसा करने के उनके अपने विचित्र तरीके थे। वे ब्रेसाँ के उत्कट प्रशंसक नहीं थे, किन्तु उन्ही की बदौलत मैंने ब्रेसाँ में कुछ देखा। मुझ पर उनका प्रभाव

बुनियादी था, उस प्रभाव को समझाया नहीं जा सकता, किन्तु स्मृतियों की तरह मिटाया भी नहीं जा सकता। एक विचित्र परस्पर विरोध यह था कि मुझे रंगमंच से नफरत थी और उन्हें रंगमंच में गहरी रुचि थी। मैं उनके कृतित्व से बहुत भाव विव्हल था। जब-जब मैं उनकी फिल्म 'मेघे ढाका तारा' देखता हूँ तब तब यह फिल्म मुझे रुला देती है। किंतु मैं उस प्रकार की इमेजरी को इस प्रकार के अभिनय को कभी भी नहीं ला सकता। मैंने एक चरम स्थिति ग्रहण कर ली। मेरे विचार से मेरा जीवन वस्तुतः घटक के विरुद्ध एक विद्रोही के रूप में आरंभ हुआ। वे जो कुछ भी किया करते थे उसका ठीक उल्टा मैं किया करता था। ब्रेसाँ को लेकर मेरे साथ वैसा ही हुआ जैसा कि सीजेन को लेकर मातिसे के साथ हुआ था।

जैसा कि मैंने एक बार कहा था, मातिसे को सीजेन के प्रति बहुत आदर था। सीजेन एक निर्माता जैसे थे वे स्ट्रोक-दर-स्ट्रोक निर्णय करते थे। मातिसे ने कभी भी वैसा नहीं किया। उनके पास किसी चीनी ड्राइंग का प्रवाह था, उनके पास किसी आकृति का प्रवाह था। किंतु मातिसे ने सीजेन की एक छोटी-सी पेंटिंग अपने कमरे में 35 वर्षों तक रखी थी, और जब उन्हें किसी बात को लेकर संदेह होता था तो वे उस पेन्टिंग को देखा करते थे। यद्यपि उन्होंने उस प्रकार की पेन्टिंग कभी नहीं बनाई। इसलिए अन्ततः ब्रेसाँ की कोई भी बात मुझमें बाकी नहीं रह गई है, किंतु मेरे कार्य में एक बहुत विचित्र ढंग से एक निरन्तरता है। मेरे कार्य में एक आत्म-संयम और गहराई है जिसे कि मैं खोना नहीं चाहता।

आपकी कृति का वर्णन करने के लिए दो शब्दों का अर्थात् 'आत्म संयम' और 'आधिभौतिक' का बहुत आमतौर पर उपयोग किया जाता है।

'आधिभौतिक' वाला अंश गलत है। 'आत्म संयम' का मैं स्पष्टीकरण दे सकता हूँ। आत्म संयम से मेरा आशय यह है कि किसी कृति की ऐंद्रियता, उदाहरणार्थ, 'स्व' के प्रश्न या वास्तविकता के प्रश्न के आन्तरिक अन्वेषणों की हत्या न करे। होता यह है कि जब आप तथाकथित ऐंद्रिय, भौतिक अभिव्यक्ति में उलझ जाते हैं तो आप हमेशा उस चीज की बलि देकर ऐसा करते हैं, जिसे कि 'आन्तरिक' या आध्यात्मिक' कहा जा सकता है। दूसरा दुर्भाग्यपूर्ण उलझाव यह होता है कि आप स्वयं को 'आध्यात्मिक' के साथ पंक्तिबद्ध कर लेते हैं और स्वयं को 'भौतिक' से असंबद्ध कर लेते हैं। वस्तुतः आप धार्मिक और अंधविश्वासी हो जाते हैं और जीवन संबंधी आन्तरिक परिपृच्छा विलुप्त हो जाती है। घटक के लिए 'रूपकात्मक' (मेटाफरिक) अच्छी अभिव्यक्ति है, मेरे लिए 'लक्षणात्मक' (मैटॉनॉमिक) बेहतर शब्द है। रूपक में दिक् किसी दूसरे दिक में रुपान्तरित हो जाता है एक दिक् किसी दूसरे प्रकार के दिक् के साथ किसी व्यापक दिक् के साथ समकालिक हो सकता है, और वही अर्थ देने लगता है। कहा जाता है कि मतिसे भी अधिक लक्षणात्मक अभिव्यक्ति से सरोकार रखते थे, जहाँ कोई अंश अकस्मात् किसी साकल्य से संबद्ध हो सकता है और किसी साकल्य को अनुनादित कर सकता है। वह आवश्यक रुप से किसी अन्य दिक् में 'अन्तरित नहीं होता। मैंने रुपकात्मक की अपेक्षा लक्षणात्मक क्षेत्र में अधिक कार्य किया है।

किसी कारणवश आपका नाम और कुमार शाहनी का नाम एक साथ लिया जाता है। उनके कार्य के बारे में आपके क्या विचार हैं? क्या आप अपनी शैलियों में कोई समानताएं देखते हैं?

वे मेरे एक साथी हैं जिनका मैं आदर करता हूँ। हम दोनों को एक ही कोष्टक में रख देना गलत है, क्योंकि इससे न तो मेरा लाभ हुआ है और न उनका। हमारे कार्य बिल्कुल भिन्न भिन्न हैं। मैं इस भिन्नता को स्पष्ट कर सकता हूँ, किंतु वह एक अन्य चर्चा का विषय होगा। हम दोनों को एक साथ समूहित करने का कारण है हमारे कार्य की गंभीरता। किंतु हम समरूप प्रकार की फिल्में नहीं बना रहे हैं। मेरे विचार से हम दोनों ही लोग फिल्म इन्स्टीट्यूट से संबंधित रहे। हम एक ही क्लॉस में एक साथ थे और हमारी मित्रता बहुत पुरानी और गहरी है।

आपने अंतिम फिल्म को आकार देने के बारे में एक कौतुहलजनक वक्तव्य दिया। अंतिम फिल्म से आपका तात्पर्य क्या है?

(लंबी खामोशी) मैं सोचता हूँ कि यदि कोई अंतिम फिल्म है, जिसे कि मैं बनाना चाहता हूँ, तो वह फिल्म ऐसी होगी जिसका कोई भी अर्थ नहीं होगा यदि यह संभव है। इस क्षण मेरे लिए कोई ऐसी फिल्म बनाना संभव नहीं है, जो कि अर्थविहीन होने की प्रकल्पना नहीं करती, या जैसा कि मैंने पहले कहा, संभाव्य अर्थ की तलाश नहीं कर रही है, जो कि आपके कार्य करने के दौरान मूर्तरुप ग्रहण कर ले। किंतु मैं चीनी चित्रकारों जैसी पूर्ण स्वतंत्रता पसंद करता हूँ, जिन्हें केन्द्र भ्रष्ट कहा जाता है। वे अपनी कृति में एक विचित्र ऊर्जस्वी अमूर्त गुण उत्पन्न कर देते हैं, जिसका अर्थ कुछ भी नहीं होता। वह तर्कयुक्तता का प्रश्न नहीं रह जाता, इसलिए वह अतर्कयुक्तता का भी प्रश्न नहीं है। वह द्विधात्व विद्यमान नहीं रहता। जब अर्थों से कोई सरोकार नहीं रह जाता तो अभिव्यक्ति बहुत गहरी होती है और तब आप एक ऐसी फिल्म बना सकते हैं जो कि कुछ भी नहीं कहती। आखिर आखिर में कभी कलाकारों के साथ ऐसा होता है। वे जीवन में ऐसा आनंद और सौंदर्य देखने लगते हैं, वे ऐसी अनिरुद्ध विश्रृंखलता देखने लगते हैं कि क्या संवादी है और क्या असंवादी है इसका कोई महत्व नहीं रह जाता। इन सभी द्वंद्व विभाजनों का कोई भी अर्थ नहीं रह जाता। चीजों की बहुविधता निरानंद है। जब तक आप यह प्रकल्पना करते हैं कि आप उसका परित्याग कर सकते हैं तब तक यह कठिन है। वह प्रकल्पना गलत है - वह एक असाधारण प्रकार की सिद्धि है।

परित्याग के विचार से आप बहुत ग्रस्त है? मेरे विचार से हर कोई उसकी अपेक्षा करता है। आप भक्ति पंथ के अध्यात्मवाद से भी जुड़े हुए हैं?

निश्चय ही। लोगों ने अपने - अपने ढंग से यह किया है। उसके लिए अधिक गद्यात्मक शब्द है 'समर्पण'; यह शब्द अधिक धार्मिक है। एक प्रत्यय के रुप में उसके साथ अन्तर्ग्रस्त होना उपयुक्त है। वह किसी के साथ भी हो सकता है किंतु वह एक प्रत्यय नहीं है। आप यह नहीं कह सकते कि जीवन परित्याग होना चाहिए यह कि मैं परित्याग कर दूँगा। आपको उसके होने की प्रतीक्षा करनी होती है।

☐ **अनुवाद : मोरेश्वर रामपल्लीवार**

समकालीन सरोकार और गोविन्द निहलानी की फिल्में

■ दीपा गेहलोत

गोविन्द निहलानी ने अपने कैरियर की शुरूआत एक सिनेमेटोग्राफर की हैसियत से की और लगभग दस वर्षों में दस फिल्में बनाकर समानान्तर सिनेमा आन्दोलन के सर्वाधिक सफल फिल्म निर्माताओं में उनकी गणना होने लगी।

'आक्रोश' से लेकर 'तमस' उनकी फिल्मों को, जिनमें 'विजेता', 'अर्द्धसत्य', 'पार्टी' तथा 'अघात' का समावेश होता है, एक क्रियावादी और युयुत्सु प्रावस्था की फिल्में कहा जा सकता है। फिर गोविन्द निहलानी आत्म परीक्षण करने लगे और उन्होंने क्लासिक नाटकों के आधार पर मानवीय संवेग की अज्ञात गहराईयों का अन्वेषण करने वाली फिल्में 'जजीरे', 'पिता' 'दृष्टि' और 'रूक्मावती की हवेली' बनाई। आधुनिक विवाह का विश्लेषण इस अन्तरंग प्रावस्था का चरम बिन्दु था।

अब वे ऐसी फिल्मों में कुछ आलेखों पर कार्य कर रहे हैं, जिनके आधुनिक युग के परीक्षण के लिए समकालीन, लोकप्रिय रूपों का उपयोग किया जाएगा।

यहाँ गोविन्द निहलानी यह बता रहे हैं कि उनकी फिल्मों के सरोकार कौन से थे और वे फिल्में किन चिन्तन-प्रक्रियाओं से होकर गुजरीं और भविष्य में उनका कार्य किस दिशा में आगे बढ़ेगा।

'आक्रोश' से लेकर 'तमस' तक की फिल्मों में सामाजिक राजनैतिक प्रश्नों को लिया गया है और व्यवसाय के बिरुद्ध व्यक्ति की प्रतिक्रिया को दिखाया गया है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे कि आप इन फिल्मों के जरिए अपने क्रोध और अपनी भ्रम-मुक्ति की अभिव्यक्त कर रही हो।

सामान्यतः विषयों के मेरे चयन ने उस विशिष्ट समय-बिन्दु पर मेरे जो सरोकार और पूर्वनिवेश थे, उन्हें प्रतिबिंबित किया है। पुनश्च यह चयन भी आप अपने आसपास की आसन्न वास्तविकता के प्रति जैसी अनुक्रिया करते हैं। उस अनुक्रिया का परिणाम है। जब मैं आसन्न वास्तविकता की बात कहता हूँ, तो वह सांस्कृतिक, राजनैतिक, वैचारिक या किसी भी प्रकार की वास्तविकता हो सकती है। प्रारंभिक प्रावस्था, में जब मैं एक फिल्म बनाने की बात गंभीरतापूर्वक सोचने लगा, एक ऐसी प्रावस्था भी थी, जब मैं **श्याम बेनेगल** के साथ एक कैमेरामैन की हैसियत में काम कर रहा था। वह अवधि राजनीतिक अभिज्ञता में मेरे दीक्षित होने की अवधि भी थी। और विषयों के मेरे चयन में वह प्रतिबिंबित हुई। श्याम की फिल्में उस समय सामाजिक वास्तविकता और सामाजिक प्रश्नों से बहुत सरोकार रखती थीं, इसलिए क्रोध और कुंठा ने मेरी फिल्मों के बहुत बड़े भाग पर दखल कर लिया होगा, किन्तु वे व्यक्ति के अपने अस्तित्व में प्रतिष्ठा के आभास को बनाए रखने के लिए व्यक्ति द्वारा किए जा रहे संघर्ष के विषय में थी। सभी फिल्मों में हमेशा चयन का एक तत्व होता था। मेरी कहानी सामान्यतः तब आरंभ हुई जब मुख्य पात्र के जीवन में किसी क्षण कोई क्राइसिस उत्पन्न हुआ और उस क्राइसिस के समाधान में कतिपय बहुत बड़े विकल्प अन्तर्ग्रस्त थे। विकल्प यह थे कि क्या मानव के रूप में आप अपनी स्वयं की प्रतिष्ठा के प्रश्न पर समझौता कर लें और व्यवस्था के साथ समझौता करके सुविधा का जीवन बिताएं, या कि कोई ऐसा मार्ग चुनें जो कि आपके स्वयं के अस्तित्व को प्रतिष्ठा का खुद की नजरों में आत्म-सम्मान का वृहत्तर बोध देगा। एक अन्य पहलू, जो कि इससे किंचित् भिन्न था। फिल्म 'तमस' में था जहाँ आप यह देखते हैं कि ऐतिहासिक शक्तियाँ व्यक्ति के जीवन को कितना अधिक प्रभावित करती हैं कि परिस्थितियों पर उसका नियंत्रण नहीं रह जाता। वस्तुतः, अपने भोलेपन में वह यह सोचता है कि वह उन्हें उत्पन्न कर रहा हैं, किंतु वह कितने भ्रम में होता है। व्यक्ति के स्तर पर धार्मिक भावनाओं जैसी कतिपय भावनाओं को कैसे भड़काया जाता है और ऐसे आभास का निर्माण किया जाता है कि संपूर्ण समुदाय की वैसी भावनाएं है और उस प्रकार की जोड़-तोड़ का उपयोग राजनीतिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किया जाता है। पुनश्च व्यक्ति शोषण का केन्द्र-बिन्दु हो जाता है। उस बिन्दु तक मैं व्यक्ति को उसके परिवेश के संदर्भ में लेकरचला हूँ।

फिल्म आक्रोश : स्मिता पाटिल-ओमपुरी

आपने जिस सामाजिक और राजनैतिक जागरूकता की बात कही, क्या वह बौद्धिक विकास की एक नैसर्गिक प्रक्रिया थी या कि व्यक्तिगत अनुभव के कारण उत्पन्न हुई थी?

मैं सोचता हूँ कि वह उस विकास का हिस्सा थी, जिसका सूत्रपात बहुत पहले हुआ था। जब हम पाकिस्तान में थे तब मैं एक बच्चा था। बचपन की सारी स्मृतियाँ, जैसे आतंक, भय, हिंसा और खूनखराबे से मेरा पहला साक्षात्कार-ये सभी बातें उस अवधि से आई थीं। मैंनें अपने परिवार में असुरक्षा का दारुण बोध और दूसरे समुदाय के प्रति भय का तीक्ष्ण बोध देखा हैं। आरंभ में आर.एस.एस. की एक शाखा से मेरा संपर्क रहा और एक गाँधीवादी शिक्षक के प्रभाव से बचपन में ही मैंने उससे अपना नाता तोड़ लिया। उस स्तर पर बाहरी विश्व की कतिपय अभिज्ञता का आविर्भाव हुआ। जब मैंने एक व्यवसाय को गंभीरता से अपनाया, तो उस आरंभिक अभिज्ञता ने पुनः मुझे मेरे आसपास के विश्व में रुचि लेने में सहायता पहुँचाई। जब मैं बंबई आया तो मैं किसी को भी नहीं जानता था। मेरे लिए वह एक बिलकुल अजनबी शहर था। मैं अपनें व्यवसाय में कुछ करना चाहता था। किंतु यहाँ अकेले रहते हुए, आधार पाने की कोशिश करते हुए, जो कि उस समय आरंभ हो रहा था, और वह था फिल्म सोसाइटी आंदोलन। मेरे सामने एक संपूर्ण नया विश्व खुल गया। हमने पूरे विश्व से आई हुई फिल्में देखीं। उन फिल्मों में ढेर सारी राजनैतिक विषय-वस्तु थी। मुझे ढेर सारी जानकारी मिली, जो कि उदयपुर जैसे शहर में उपलब्ध नहीं थी। इस प्रकार सिनेमेटोग्राफी के अध्ययन, फिल्म सोसाइटी से हुए संपर्क और बाद में श्याम बेनेगल से संपर्क से मेरी अभिज्ञता के निर्माण में सहायता मिली। इसलिए, मैं यह कहूँगा कि प्रक्रिया का आरंभ बहुत पहले हो चुका था और यह तर्क संगत चरमोत्कर्ष था। मेरे लिए फिल्म 'तमस' एक प्रावस्था का चरम बिन्दु है। यह चरम बिन्दु कतिपय पूर्ण निवेशों और सरोकारों की समाप्ति के संदर्भ में नहीं था, बल्कि वह विशुद्धतः एक कलाकार और एक फिल्म-निर्माता के रूप में चरम बिन्दु था। फिल्म 'तमस' संवेगात्मक रूप से और शारीरिक रूप से और एक फिल्म शिल्पी तथा निर्देशक के रूप में थका देने वाली फिल्म थी। वह थका देने वाली फिल्म भी है और संतोष देने वाली भी। इसलिए एक बिंदु ऐसा आया कि मुझे खाली-खाली लगने लगा। मैंने सोचा, इसके परे क्या किया जाए? चलचित्रीय दृष्टि से मैं एक विशिष्ट प्रकार की तकनीक का अनुसरण कर रहा था, जो कि अपने मूड में बहुत यथार्थवादी थी। मैंने महसूस किया कि मैं उस शैली में जो कुछ कर सकता था उसके एक उच्च बिन्दु पर पहुँच गया था। उसके बाद मैं जो कुछ भी करूँगा वह मेरे लिए एक प्रकार की पुनरावृत्ति होगी - और इस बात से मुझे नफरत है। बौद्धिक दृष्टि से भी मैंने यह महसूस किया कि एक अन्य क्षेत्र है जिसका मुझे समन्वेषण करना चाहिए। वह क्षेत्र था व्यक्ति की आन्तरिकता का क्षेत्र, जिसका समन्वेषण आप तब कर सकते है जब आप क्लासिक रचनाओं की ओर लौटते हैं।

क्या आप अपनी आरंभिक अवधि की फिल्मों को बौद्धिक दृष्टि से आत्मकथात्मक कहेंगे? क्या अपने मुख्यपात्रों को स्वयं के विस्तारों के रूप में देखते हैं?

किसी विशिष्ट समय की फिल्में यह प्रतिबिंबित करती हैं कि एक व्यक्ति के रूप मे निर्देशिक ने फिल्मों के जरिए स्वयं को अभिव्यक्त करने का प्रयत्न किया हो। मेरे मामले में मेरी अधिकांश फिल्में उस आलेख को प्रतिबिंबित करती है। आप उनमें यह दर्शाने वाले कतिपय संकेत पा सकते हैं कि किसी विशिष्ट अवधि में मैं बौद्धिक दृष्टि से क्या था? किन्तु मैं यह नहीं समझता कि मेरी फिल्में कोई प्रक्रिया दर्शाती है। फिल्मों के बीच के या दो वर्ष का अन्तराल था, इसलिए आप यह नहीं जानते कि कोई व्यक्ति एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु पर कैसे पहुँच गया। निश्चय ही आप इन फिल्मों को एक विकास के सूचक के बतौर मान सकते हैं। मुख्य पात्र हमेशा एक विस्तार नहीं होता, यह हमेशा संभव नहीं है, किन्तु बहुधा ऐसा होता है। फिल्म 'आक्रोश' में युवा वकील का सामना एवं गाँव में एक वामपंथी राजनीतिक कार्यकर्त्ता से हो जाता है और वह कहता है आपको यह देखना चाहिए कि किस प्रकार का अन्याय और शोषण चल रहा है। मैं आपकी विचारधारा से सहमत नहीं हूँ किन्तु उसका समर्थन इसलिए करता हूँ क्योंकि आप किसी ऐसे व्यक्ति का बचाव कर रहे हैं, जिसका बचाव किया जाना चाहिए। वकील कहता: इस क्षण मुझे मेरे काम से सरोकार है और मैं जानता हूँ कि बहुत अन्याय हो रहा है। विश्व को बदलना मेरा मिशन नहीं है। किन्तु, इस प्रक्रिया में मैं जो कुछ भी योगदान दे सकूँगा वह दूँगा, यह आज भी न्यूनाधिक रूप में मेरा मार्गदर्शी सिद्धांत है। कोई भी व्यक्ति तब तक महान परिवर्तन नहीं ला सकता जब तक कि उसे विशाल जनता का समर्थन प्राप्त न हो। केवल जन-आंदोलन के जरिए ही परिवर्तन लाए जा सकते है। किन्तु व्यक्ति को लोगों का नेतृत्व करना चाहिए और उन्हें कतिपय विचार प्रदान करने चाहिए। यदि यह नहीं किया जा सकता, तो मेरा कहना यह है कि एक व्यक्ति के रूप में आज जो कुछ भी योगदान दे सकते हैं वह योगदान आपको देना चाहिए।

सभी फिल्मों में 'बिजेता' अलग-थलग लगती है।

ऐसा इसलिए है कि उसमें राजनीतिक विषय वस्तु नहीं है। किन्तु वह भारतीय सशस्त्र सेनाओं के प्रति मेरा अपार आदर अवश्य ही प्रतिबिंबित करती है। हो सकता है कि इसका बहुत स्वागत नहीं हुआ, किन्तु तकनीकी दृष्टि से और अन्यथा वह मेरी बहुत प्रिय फिल्म है। दुर्भाग्यवश, उसके छायाचित्रणात्मक परिणामों को नजर अन्दाज कर दिया गया, क्योंकि यह फिल्म 'आक्रोश' के ठीक बाद आई थी और 'अर्द्धसत्य', 'आघात', और 'तमस' की श्रृंखला में नहीं है, किन्तु वह एक विस्तार फिल्म नहीं हैं, उसमें कतिपय सार है।

क्या आप इस श्रृंखला में 'पार्टी' का उल्लेख करेंगे?

जी हाँ निश्चय ही। 'पार्टी' में भी चयन का तत्व है। कतिपय लोगों ने अपने चयन किए हैं, कतिपय लोगों ने अपने चयनों का औचित्य सिद्ध किया है और इस युवा कवि को एक चयन करना है। वहाँ समस्या यह थी कि क्या परिवर्तन के लिए आपको अपने माध्यम का उपयोग एक हथियार के रूप में करना चाहिए या कि आपको हथियार का उपयोग एक माध्यम के रूप में करना चाहिए।

प्रश्न जटिल है, किन्तु तर्क संगत हैं।

अन्तरंग अवस्था

आपने कहा कि 'तमस' के बाद आपको खालीपन का अनुभव होने लगा और आप क्लासिक

रचनाओं की ओर लौटे । आपने इसे अपनी अन्तरंग प्रावस्था भी कहा है ।

'तमस' के बाद मैं फिर से व्यक्ति से सरोकार रखने वाली कोई फिल्म बनाना चाहता था, किन्तु मैं व्यक्ति के भीतर जाना चाहता था और व्यक्ति को उसके पारस्परिक संबंधों के संदर्भ में देखना चाहता था । उस समय मेरे मन में एक विचार उठा, जिसका उल्लेख मैंने दूरदर्शन पर किया था । मेरा विचार यह था कि मैं सारे विश्व में साहित्यिक कृतियों में यथा प्रतिबिंबित आधुनिक संवेदनशीलता के विकास को खोजूँ । उस सीरिज में, जिसे 'आधुनिक दृष्टि' नाम दिया जाना था, नाटकों, उपन्यासों, लघु कथाओं को शामिल किया जाना था, जिनका चयन आधुनिक संवेदनशीलता के विकास की प्रक्रिया में उनके योगदान या उनके महत्व को दृष्टिगत रखते हुए किया जाना था । हमने इस सीरिज का आरंभ तीन नाटकों को लेकर करने का और दर्शकों की अनुक्रिया जानने का निर्णय किया। इसलिए मैंने तीन नाटककारों का चयन किया - इसन स्ट्रिडबर्ग और लोर्का इणसन के नाटकों में से मैंने एक ऐसे नाटक का चयन किया जो कि बहुत प्रसिद्ध नहीं था, किन्तु मेरी दृष्टि में वह बहुत रुचिकर था क्योंकि उसमें, फ्रायड के अविर्भाव के पूर्व ही, व्यक्तियों के पारस्परिक संबंधों की चर्चा की गई थी । यह नाटक था 'लिटिल इयोल्फ', जिसे लेकर मैंने हिन्दी में 'जजीरें' (द्वीप) नामक फिल्म बनाई । उसके बाद मैंने स्ट्रिडबर्ग की रचना 'फादर' के आधार पर फिल्म **'पिता'** बनाई और लोर्का की रचना 'हाउस ऑफ बर्नार्डा एल्बा' के आधार पर फिल्म **'रुक्मावती की हवेली** बनाई । इन तीनों नाटकों में पुरुष और स्त्री के संबंधों को एक बहुत भिन्न ढंग से देखा गया है, वहाँ स्त्री को बहुत ताजा रोशनी में देखा जा रहा है । इसलिए आप स्त्री को एक बिलकुल भिन्न ढंग से देखते हैं, जो कि एक व्यक्ति के रूप में उतनी ही ताकतवर, कमजोर निर्दय और विश्वासघाती हो सकती है जितना कि पुरुष हो सकता है । इनमें आप यह पाते है कि विद्यमन प्रणाली को एक ऐसी प्रणाली के रूप में देखा जा रहा हैं, जो कि बुनियादी मानवीय आकांक्षाओं को सर्वोच्च प्राथमिकता नहीं देती । उस प्रणाली का हमेशा दुःखद अन्त होगा, जिसमें मूल्यों में कतिपय कृत्रिम समुच्चय को, अर्थात् सम्मान, प्रतिष्ठा, वंश-परंपरा को मानव की इच्छाओं की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है । उसे हमेशा चुनौती दी जाएगी, क्योंकि मानव को आत्मा की दबा कर नहीं, रखा जा सकता । इन तीनों ही फिल्मों में स्त्री केन्द्रीय आकृति बन जाती है, और वे बहुत व्यक्तिगत परिस्थितयों में हैं ।

फिल्म दृष्टि : डिम्पल-शेखत कपूर

ये तीनों नाटक स्त्री-विरोधी भी प्रतीत होते हैं ?

मैं नहीं जानता कि क्या वे स्त्री-विरोधी हैं । निःसंदेह, 'फादर' जैसे नाटक को, तब भी जब वह लिखा जा रहा था, स्त्री-विरोधी कहा गया था । किन्तु मैंने उसे एक ट्रेजडी के रूप में देखने की कोशिश की है, जहाँ किसी संबंध के भीतर, विशेषतः विवाह जैसी संस्था में शक्ति का खेल जीवन साथियों से भी अधिक महत्वपूर्ण बन जाता है ।

सीरिज में शामिल अन्य रचनाएं कौन सी हैं ?

मैं सार्त्र कामू और आर्थरमिलर की कृतियों की लेना चाहता था । मैंने सूची को पूरी तरह से अंतिम रूप नहीं दिया था । मैंने सात या आठ कृतियों की सूची बनाई थी जिनमें से हमने तीन कृतियों को लिया । मैं नहीं जानता कि सीरिज का क्या होगा । मैं कोनरेड के किसी उपन्यास पर और निश्चय ही ब्रेरत की किसी रचना पर फिल्म बनाना चाहता हूँ । पहली तीन फिल्में बना चुकने पर मैंने फिल्म 'दृष्टि' बनाई जिसे कि मैं इस प्रावस्था का चरम बिन्दु कहूँगा । पुनश्च वह बहुत व्यक्तिगत हैं, पुनश्च, विषय संबंध है । अब संदर्भ बदल गया है । संदर्भ है हमारा भारतीय नगरीय मध्यमवर्गीय व्यवसायिक ढाँचा । 'दृष्टि' में यह पूर्वानुमानित करने की कोशिश की गई है कि विवाह की संस्था संभवतः कौन सी दिशा ग्रहण कर रही है और इसमें इस बात का समन्वेषण करने की जो कि आज अभिवाह की अवस्था में हैं, विवाह की संस्था की उत्तरजीविता के लिए किन स्थितियों की और किन परिवर्तनों की आवश्यकता होगी ।

यद्यपि इस फिल्म का संबंध एक उच्च मध्यम वर्गीय पति-पत्नी से है, तथापि वहीं प्रवृत्तियों का उद्गम होता है और फिर वे निथरकर समाज में फैलती हैं । मैं जो बात कहने की कोशिश कर रहा था वह यह थी कि यदि हमारी प्रवृत्तियों को नियंत्रित करने वाली एक सामान्य नैतिकता जैसी कोई चीज है तो जैसे-जैसे हम भविष्य की ओर एक अधिक औद्योगीकृत और खुले समाज की ओर बढ़ेंगे, जहाँ स्त्रियों और पुरुषों दोनों ही को व्यक्तिगत व्यवसाय अपनाने का समान अवसर प्राप्त होगा और जहाँ स्त्री- पुरूष विशुद्धतः अपने स्वयं के पर्यावरण में एक दूसरे के संपर्क में आएंगे, वह सामान्य नैतिकता टिक नहीं पाएगी । इस फिल्म में व्यक्तिगत नैतिकता की संकल्पना का पूर्वानुमान करने की कोशिश की गई है, जहाँ जीवन साथियों के बीच इस बात का निर्णय होना अधिक महत्वपूर्ण होगा कि ईमानदारी

क्या है और बेईमानी क्या है। सही क्या है और गलत क्या है। किसी सामान्य नैतिकता का अस्तित्व नहीं रह जाएगा और वह संक्रमण आसान नहीं होगा। उसके लिए अत्याधिक संवेगात्मक समायोजन और पीड़ा अपेक्षित हैं, किन्तु कोई दूसरा रास्ता भी नहीं है। फिल्म 'दृष्टि' इस समस्या को कोई निश्चित उत्तर नहीं देती, वह प्रवृत्ति में परिवर्तन की संभावनाओं में से एक संभावना का संकेत देती है।

तो फिल्म 'दृष्टि' इस प्रावस्था का चरम बिंदु थी। अगली फिल्म कौन सी होगी?

मैं नहीं जानता, क्योंकि मैंने किसी भी आलेख को अंतिम रूप नहीं दिया है। मैं कुछ आलेखों पर कार्य कर रहा हूँ। मेरा सरोकार हमेशा मेरा अपना समाज रहा है, इसलिए मैं ऐसे रूपों का समन्वेषण करना चाहता हूँ जो कि बहुत समकालीन हों, जैसे कि थ्रिलर, जिनमें हमारे युग के मनस्तापों के सभी तत्वों को उजागर किया जा सकता हैं, जैसे कि संगठित अपराध वाली फिल्में जिनमें यह दिखाया जा सकता है कि आपराधिक शक्तियों और कानून की हिफाजत करने वाली शक्तियों और राजनीति के बीच कैसे-कैसे संबंधों का विकास हो रहा है और जो व्यक्ति किसी विशिष्ट परिस्थिति में संगठित अपराधों के शिकार हो जाते हैं या कि उनमें भाग लेते है उन व्यक्तियों की क्या दुर्गति होती है। पुनश्च, औद्योगीकृत समाज की समस्याओं को उजागर किया जा सकता है, *क्योंकि* ये परिस्थितियाँ बंबई जैसे किसी शहर में ही पाई जाती है, जहाँ स्थान की समस्या है, औद्योगीकरण के दबाव है, सामाजिक प्रणालियों पर दबाव हैं, प्रवासियों की समस्या है जब ये सभी चीजें एक जगह इकट्ठी हो जाती हैं और तनाव काम करने लगता है तो एक विचित्र परिस्थिति विकसित होती है। थ्रिलर फिल्म, जो कि बहुत समकालीन फार्म है, इन तत्वों की अनुक्रिया बहुत अच्छी तरह से कर सकती है। मैं इस फार्म की संभावनाओं का समन्वेषण करना चाहता हूँ, क्योंकि सिनेमा के एक अध्येता के रूप में भी यह फॉर्म मुझे उत्तेजित करता है। जब मैं फॉर्म की बात करता हूँ, तो इसका यह अर्थ नहीं होता कि मेरे सरोकार कमजोर होते जा रहे हैं। यह तथ्य कि 'दृष्टि' के बाद एक वर्ष तक मैं कोई फिल्म आरंभ नहीं कर पाया हूँ। इस बात का सूचक है कि मैं अपने विचारों को लेकर समझौता नहीं करना चाहता। इसी के साथ मैं लोकप्रिय संस्कृति के तत्वों का उपयोग करना चाहता हूँ ताकि मुझे मेरे दर्शक मिले और परियोजनाएँ संभव हो सकें। जब मैं लोकप्रिय रूप की बात कहता हूँ तो मेरा आशय यह होता है कि मैं एक बहुत सुदृढ़ कथात्मक संरचना का उपयोग करना चाहता हूँ। मैने हमेशा कथात्मक संरचना के भीतर कार्य किया हैं, इसलिए मेरे लिए यह कोई बड़ा समझौता नहीं होगा। मैं कुछ सितारों का भी उपयोग करना चाहता हूँ, लेकिन शर्त यह है कि वे अच्छे अभिनेता/अभिनेत्री हो। मैं उनके शारीरिक सौंदर्य से लाभ नहीं उठाना चाहता। तीसरा तत्व है संगीत का उपयोग। संगीत पारंपरिक कथा और रंगमंचीय रूप का एक हिस्सा ही है। पूर्वतर प्रावस्था, जब समानन्तर सिनेमा आरंभ हुआ, प्रतिक्रिया की प्रावस्था थी। लोकप्रिय सिनेमा जो कुछ भी कर रहा था उसके विरुद्ध हम प्रतिक्रिया कर रहे थे। अब वह प्रावस्था समाप्त हो चुकी है, और चिन्तन करने पर मैं यह पाता हूँ कि जो कुछ भी विद्यमान है उसके *ठीक विपरीत हो जाने से आप अर्थपूर्ण* नहीं हो जाते। प्रश्न यह है कि आप इन तत्वों का उपयोग कैसे करते हैं और आपका दृष्टिकोण क्या है। महत्वपूर्ण चीज यह है कि क्या आप अपने कथन पर दृढ़ रहते हैं और क्या आपकी स्थिति अविकल रहती है? यदि ऐसा होता है तो इन सभी तत्वों को लेना समझौता करना नहीं होगा। विशेषतः मेरे लिए मानव की दुर्गति, मानव की दशा हमेशा मेरी रुचि का केन्द्र-बिन्दु रही है। अन्य सभी तत्व अर्थात् रूपात्मक, सौन्दर्यपरक, शैलीपरक तत्व, जैसे रंग, कैमेरा संचालन, रचना, दिक का विन्यास वगैरह वगैरह चीजें द्वितीयक महत्व की हैं। इन सभी चीजों को मेरे सरोकार के प्रक्षेपण में सहायक होना चाहिए और मेरा सरोकार है मानव। इस दृष्टि में रखते हुए जब मैं उन विधाओं की बात करता हूँ, जिनके बारे में मैं सोच रहा हूँ, तो उन्हें अभी अभी मैंने जो कुछ भी कहा है उसके संदर्भ में देखा जाना चाहिए।

इसका अर्थ यह हुआ कि आप कथ्य पर समझौता किये बिना लोकप्रिय विधा में फिल्में बनाएंगे?

मैं लोकप्रिय विधा में फिल्में नहीं बनाऊँगा, बल्कि लोकप्रिय विधा के तत्वों का उपयोग करते हुए फिल्में बनाऊँगा। जब आप लोकप्रिय विधा की बात करते हैं, तो उस विधा में कतिपय गुण होते हैं, जिन्हें स्पष्टतः अभिज्ञात किया जाना चाहिए। सबसे पहली बात तो यह है कि लोकप्रिय विधा अत्यंत सरलतावादी है, वह अभिप्रेरणा, चरित्र चित्रण आदि हर चीज को सरलतावादी समीकरणों में घटा देती हैं। वह सारतः एक यथा स्थिति- उन्मुख विधा है। उसमें इन सभी तत्वों का उपयोग मनोरंजन की मदों की तरह किया जाता है। चाहे वह हिंसा हो या संगीत हो या नृत्य हो। कभी-कभी इस विधा की फिल्में नितांत प्रतिक्रियावादी भी होती है। जब मैं लोकप्रिय विधा के तत्वों का उपयोग करने की बात कहता हूँ तो मैं उन तत्वों का उपयोग ऐसे ढंग से करने की आशा करता हूँ कि फिल्म न तो प्रतिक्रियावादी बने और न साम्प्रदायिक बने और न प्रतिगामी हो। मैं परिवर्तन-विरोधी या यथास्थिति वादी किस्म की फिल्म नहीं बनाऊँगा। कोई बात कहना, किसी नाटकीय संरचना का उपयोग करना, किन्तु प्रगतिशील और खुले दिमाग वाली फिल्म बनाना संभव हैं, और मैं ऐसा करूँगा।

■ अनुवादक - मोरेश्वर रामपल्लीवार

• विशेष साक्षात्कार :

मनमोहन देसाई : अनाथ शिशु को गोद लेने की जरुरत

☐ एस.एम.एस. देसाई

यह देखकर प्रसन्नता होती है कि सिनेमा के दर्शक सिनेमा घरों को लौट रहे हैं। जब 1991 में अधिक फिल्में हिट हुई, तो यह बात साबित हो गई। हिट फिल्मों के लिए वीडियो एक ट्रेलर बन जाता है। लेकिन बुरी फिल्में या फ्लॉप फिल्मों के लिए वीडियो एक खतरा बन जाता है।

'साजन' और 'सनम बेवफा' जैसी फिल्मी ने हर कहीं बहुत अच्छा बिजनेस किया है। प्रति टेरिटरी प्रति फिल्म से कम से कम दो करोड़ रुपए की आमद होनी चाहिए। इनके अलावा और भी दूसरी फिल्में हैं जो कि बॉक्स ऑफिस पर बहुत अच्छी रही है, जिनमें हाल ही की फिल्म 'फूल और काँटे' शामिल है।

यदि केबल टी.वी. का खतरा न होता तो इन सभी फिल्मों ने जो कि बॉक्स ऑफिस पर बहुत कामयाब रहीं, और भी बेहतर बिजनेस किया होता। हम टेकनोलॉजी से तो लड़ नहीं सकते, लेकिन फिल्म उद्योग को केबल टी.वी. नेट वर्कों से उसका जायज हिस्सा मिलना चाहिए। आज के केबल टी.वी. नेटवर्क कोने-कोने में फैल गए हैं और वे केबल पर ताजातरीन फिल्में दिखाते हैं, जिससे कि सिनेमा घरों के बिजनेस पर असर पड़ता है। केबल टी.वी. नेटवर्कों के पास फिल्में दिखाने के अधिकार नहीं हैं, फिर भी वे गैर कानूनी तौर पर फिल्में दिखाए जा रहे हैं। उद्योग द्वारा 'इनफैक्ट' के जरिए चाहे जितने भी छापे डलवाए गए हो किंतु वांछित परिणाम नहीं निकले हैं। पुलिस का यह कर्त्तव्य है कि छापे मारे और कॉपी राइट की चोरी को रोके, जो कि धड़ल्ले से की जा रही हैं, लेकिन ऐसा बिरले ही होता है। पुलिस के लोग अपनी स्वयं की विधि

मनमोहन देसाई

और व्यवस्था संबंधी समस्याओं को लेकर व्यस्त हैं। उन्हें वाणिज्यिक चोरी की रोकथाम करने की फुर्सत नहीं हैं। न्यायालय भी मामलों का निपटारा करने के लिए अपना समय लेते हैं।न्याय देने में विलंब करने का अर्थ है न्याय से वंचित करना। इसलिए फिल्म उद्योग ऐसी स्थिति में फँस गया हैं कि इधर कुँआ है तो उधर खाई है।

मुश्किल यह है कि केबल टी.वी. संकट को समाप्त करने की राजनीतिक इच्छा ही नहीं हैं। कॉपी राइट अधिनियम के उल्लंघन के लिए कठोर दंड की व्यवस्था हैं, फिर भी कोई राज्य शासन इस अधिनियम का कठोरता से पालन नहीं करा रहा हैं। कॉपी राइट की चोरी को संज्ञेय अपराध बनाया गया है, किंतु राज्य शासनों ने इस अधिनियम के क्रियान्वयन की दिशा में बहुत कम प्रयास किए हैं।

मुझे यह कहते हुए अफसोस होता है कि सिवाय तमिलनाडू के, जहाँ कि केबल टी.वी. पर बैन लगा हुआ है, किसी भी राज्य शासन ने केबल टी.वी. ऑपरेटरों के खिलाफ सख्त कार्रवाई नहीं की है। हमने केन्द्रीय शासन से और राज्य शासनों को बारंबार अभ्यावेदन किया है कि केबल टी.वी. का विनियमन किया जाना चाहिए और केबल टी.वी. वालों को इस बात के लिए बाध्य किया जाना चाहिए कि जो फिल्में दिखाते हैं उनके लिए भुगतान करें। किंतु राज्यों ने इस बात को गंभीरता से नहीं लिया हैं। यह आश्चर्यजनक बात है कि केबल फिल्म उद्योग को ही बॉक्स ऑफिस राजस्व की हानि नहीं हो रही हैं, बल्कि फिल्मों से प्राप्त होने वाले राजस्व में कभी होती है तो राज्य शासनों को थी अधिक राशि की, हानि न हो तो थी, समान राशि की हानि उठानी पड़ती है। यह एक सुविदित तथ्य है कि राजस्व की हानि के कारण अनेक सिनेमा घर पिछले पाँच सालों के दौरान बंद हो गए हैं।

आज अधिकांश राज्य शासन यह चाहते हैं कि उनके राज्यों में हिन्दी फिल्म उद्योग का विकास हो। वे बम्बई के फिल्म निर्माताओं को समझा-बुझा रहे हैं फिर भी हिन्दी फिल्म उद्योग राज्यों में विशेषत: हिन्दी भाषी राज्यों में अत्यंत उपेक्षित है। हिन्दी फिल्मों ने न केवल भाषा के रूप में हिन्दी के प्रसार और विकास में और राष्ट्रीय एकता में महत्वपूर्ण योगदान दिया है बल्कि राष्ट्रीय संस्कृति के उन्नयन में भी योगदान दिया है। कोई भी राज्य फिल्म उद्योग को उसकी अपनी कठिनाइयों को पार करते में सहायता देने के लिए आगे नहीं आ रहा हैं। मनोरंजन कर जो कि किसी भी राज्य में 40 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए 150 प्रविशत तक भी है। जब वीडियो पायरेसी और केबल टी.वी. संकट के चलते फिल्म उद्योग की हालत खराब हो रहीं हैं, तो राज्य शासनों का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वे टैक्स को कम करें और उसे युक्तियुक्त बनाए।

आज इस बात की आवश्यकता है कि सभी राज्य शासन फिल्म उद्योग को उसकी समस्याएं हल करने में सहायता पहुँचाएं और एक स्थस्थ वातावरण में विकसित होने में उसकी मदद करे। एक ओर तो दक्षिण भारत में सभी राज्य शासन ने क्षेत्रीय फिल्मों को आर्थिक सहायता देकर और टेक्सों से छूट देकर प्रोत्साहित करने के लिए अपनी-अपनी फिल्म विकास निगम स्थापित किए हैं, वहीं दूसरी ओर जिन राज्यों में हिन्दी मुख्य भाषा है उन राज्यों द्वारा हिन्दी फिल्म उद्योग को प्रोत्साहन नहीं दिया जा रहा है। हिन्दी फिल्म उद्योग एक ऐसे अनाथ शिशु जैसा है। जिसे कोई भी राज्य शासनं गोद नहीं लेना चाहता। ●

● सेटेलाइट टीवी

सांस्कृतिक हमले से गृहयुद्ध की भूमिका

☐ जयप्रकाश चौकसे

टेक्नोलॉजी उस साँप की तरह है जो एक कतार में दर्जनों अंडे देती है और लौटकर उन्हीं अंडों को खाना शुरू करती है। कतार से इधर-उधर लुढ़के हुए चंद अंडे बच जाते हैं। सिनेमा, वीडियो, काम्पेक्ट डिस्क, लेजर बीम यंत्र और अनेक सुविधाएँ जन्म लेती हैं और पुरानी विधाएँ काल कवलित हो जाती हैं। टेली-कम्युनिकेशन के दुनिया में पलक झपकने के पहले ही नयी खोज हो जाती है। *सेटेलाइट टेलीविजन एशिया रीजन* अर्थात् *स्टार* सेटेलाइट की दुनिया में नया है परन्तु उसने एशिया के देशों के लिए अपने प्रोग्राम प्रारंभ कर दिये हैं। एशिया के सभी प्रमुख शहरों में वे उपकरण लग गये हैं जिनकी सहायता से स्टार के कार्यक्रम दिखाये जा सकते हैं। लेजर बीम की सहायता से वीडियो पर दिखायी जाने वाली डिस्क के दृश्य इतने स्पष्ट हैं कि दर्शक अचंभित रह जाता है। इन अविष्कारों ने भौगोलिक सीमाओं के खोखलेपन को उजागर कर दिया है और अब सरकार की आज्ञा के बिना भी एक देश दूसरे देश पर सांस्कृतिक हमला कर सकता है। अब कॉपीराइट के नियमों का उतना मूल्य भी नहीं रहा, जितना कि उन कागजों का जिन पर से मुद्रित हैं। प्रायः दूरदर्शन सेटेलाइट से समय खरीदकर अपने दर्शकों के लिए विदेश से कार्यक्रम लाता है। परन्तु अब *स्टार* जैसे सेटेलाइट विशाल डिस्क एंटिना और केबल टी.वी. ऑपरेटरों के द्वारा सीधे आपके टी.वी. से मुखातिब हैं। विज्ञापन के माध्यम से उन्हें आय प्राप्त होगी। हाँगकाँग में अपना आधार बनाकर *स्टार* पूरे एशिया पर छा गया है। *सी.एन.एन.* और *स्टार* के गठबंधन से अंतरिक्ष में बड़े उपकरणों का द्वन्द होगा। भारत सरकार भी केबल तथा डिस्क एंटेना को कानूनी दर्जा देने जा रही है। मलेशिया ही ऐसा देश है जिसने डिस्क और केबल पर कठोर नियम लगाए हैं।

केबल टी.वी. का एक खतनाक उपयोग भारत में होने जा रहा है। सांप्रादायिक ताकतें केबल पर अधिकार प्राप्त करने का प्रयास कर रही हैं ताकि जहर फैलाने वाले खतरनाक सांप्रदायिक कैसेट दिखाये जा सकें और उसके लिए सभी धर्मांध ताकतें अपनी-अपनी ताकतें लगा रहीं हैं। *भारत में गृहयुद्ध का बीजरोपण टेकनोलॉजी के माध्यम से होने जा रहा है। 51 सेंटीमीटर का मासूम पर्दा अपने इस संभावित घिनौने प्रयोग पर शर्मिंदा हैं।* सरकार न जागरूक है और न ही परेशान है- वह हमेशा की तरह निष्क्रिय है।

यह सच है कि अत्यंत महँगे डिश उपकरण लगाने की क्षमता बहुत कम लोगों में है और बहुत प्रयास के बाद भी एशिया की पाँच प्रतिशत जनता तक ही *स्टार* पहुँच पायेगा। जब भारत में वीडियो आया था, तब उसके दाम लगभग 75 हजार रूपये प्रति सैट थे परन्तु आज बारह हजार में आसानी से उपलब्ध है। यह टेक्नोलॉजी का स्वभाव है कि कुछ ही वर्षों में उपकरण अत्यंत सस्ते हो जाने हैं। अतः यह सोचकर खामोश बैठना कि केवल पाँच प्रतिशत अमीरों तक उपकरण उपलब्ध है, बहुत ही खतरनाक सोच है क्योंकि शीघ्र ही यह फैलने वाला है। पाश्चात्य संस्कृति अच्छी है या बुरी और उसका प्रभाव उचित है कि अनुचित-मुद्दा यह नहीं हैं। मुद्दा यह है कि पाश्चात्य समृद्धि की झलक तीसरी दुनिया के गरीबों में कितना असंतोष पैदा करेगी। आम आदमी को इसकी जानकारी नहीं कि पाश्चात्य देशों में समृद्धि ने सुविधाओं के साथ ही कितनी समस्याएँ भी पैदा की है।

टेक्नोलॉजी की इस घुसपैठ से दुरदर्शन को बहुत हानि होगी। अगर भारत के सभी केबल टी.वी. वाले संगठित हो गये, तो उन्हें अधिक विज्ञापन मिलेंगे क्योंकि सरकारी हस्तक्षेप नहीं होने के कारण केबल के लिए खूब मनोरंजन कार्यक्रम बनेंगे। इसका अर्थ यह है कि कुछ ही वर्षों में दूरदर्शन, आकाशवाणी की तरह पंगु संस्था रह जायेगा। आज जो अँधे अपने-अपने को रेवड़ी बाँट रहे हैं, उन्हें शीघ्र ही अपनी शक्तिहीनता की अवमानना का शिकार होना होगा।

इन सभी चीजों का प्रभाव सिनेमा पर भी पड़ेगा। यह सच है कि सिनेमा तकनीक के जानकारों का स्वर्ण काल आने ही वाला है परन्तु उद्योग की मृत्यु निश्चित है। दोष भी सिनेमा वालों का ही है। छोटे शहरों और कस्बों में सिनेमा के मालिक अपने ग्राहकों को कोई सुविधा नहीं देते। बड़े शहरों में जमीनों के दाम आसमान को छू रहे हैं, अतः सिनेमाघर टूटेंगे और सरकार कुछ नहीं कर पाएगी। उचित तो यह होगा कि केबल टी.वी. वालों पर उनके सदस्यों की संख्या के हिसाब से मनोरंजन कर वसूल किया जाये और सिनेमाघरों से मनोरंजन कर घटाया जाये। अमेरीका की तरह प्रदर्शन के छः माह बाद ही वीडिओ कैसेट बाजार में आएँ और वीडियो तस्करों को कड़ी सजा दी जाये। दूसरी तरफ फिल्म निर्माता बेहतर फिल्में बनाने का प्रयास करें। सफल और समर्थ निर्माता छोटे शहरों में सुविधाजनक सिनेमाघर बनाएँ। यह दुखद है कि फिल्मों के सफल लोग सिनेमा से बनाया धन दूसरे क्षेत्रों में लगाते हैं।

जब तक सरकार सिनेमा को एक विषय के रूप में शिक्षण संस्थाओं में प्रारंभ नहीं करती, तब तक समझदार दर्शकों को एक पीढ़ी तैयार नहीं होगी। जब बुरी फिल्में असफल होगी, तो निश्चिय ही सार्थक फिल्में बनना प्रारंभ होंगी। सच तो यह है संचार विभाग या मानव संसाधन मंत्रालय सिनेमा उद्योग के बारे में कुछ नहीं कर सकता। सरकार को चाहिए कि सिनेमा के लिए स्वतंत्र मंत्रालय की स्थापना करें, जिसके आधीन केबल इत्यादि सभी कुछ मामले हों। इस मंत्रालय की सहायता के लिए जानकर लोगों की एक समिति का गठन किया जाना चाहिए जिसमें व्यावसायिक सिने उद्योग को पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए। ●

मध्यप्रदेश के दर्शनीय स्थल एवं फिल्म लोकेशन

☐ सुनील मिश्र

मध्यप्रदेश, भारत का हृदय प्रदेश है। प्रकृति ने अपनी बहुमूल्य नैसर्गिक सम्पदा से इसे सौन्दर्यवान बनाया है। यहाँ के पेड़-पौधे, यहाँ की वनस्पतियाँ, पर्वत मेखलाएँ, जलप्रपात और नदियाँ सभी श्रृंगार स्वरुप में प्रदेश को खूबसूरती प्रदान करते हैं। कहा यही जा सकता है कि ये अनुभूतियों का प्रदेश हैं।

प्रदेश के विभिन्न शहरों में कहीं न कहीं ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व की सम्पदा मानों कुदरती अनिवार्यता-सी है। खजुराहो, माण्डू, उज्जैन, कान्हा, पचमढ़ी, भेड़ाघाट इत्यादि स्थल इसी तथ्य को सचाई का भरोसा देते हैं।

छाया : घनश्याम शर्मा — माण्डवगढ़

खजुराहो

विंध्याचल पर्वत की तलहटी में बसा छोटा-सा, लगभग पाँच हजार की आबादी वाला खजुराहो अन्तर्राष्ट्रीय महत्व का स्थान है। छतरपुर से थोड़ी दूर स्थित खजुराहो ने सैकड़ों वर्ष पुरानी भव्य और समृद्ध कलानगरी के रुप में ख्याति अर्जित की है। यहाँ के मंदिर, यहाँ के देवालय ग्यारहवीं सदी की चन्देल कला का अनुपम उदाहरण हैं। ग्रेनाइड और लाल बलुआ पत्थरों से बने विशाल और भव्य मंदिर, और उनकी बाहरी दीवारों में उत्कीर्ण सैकड़ों प्रतिमाओं के जरिए संस्कृति की सम्पूर्णता का एक साथ दर्शन किया जा सकता है। उत्तर भारत की नागर शैली में बने चन्देलों के ये मन्दिर शैव मत के अलावा वैष्णव तथा जैन मत का भी प्रतिनिधित्व करते हैं। मंदिरों की वास्तुकला अपनी भव्यता के कारण सौन्दर्यमयी नजर आती हैं, यहाँ पर मूर्तियों का शिल्प संयोजन भी अनूठा हैं।

साहित्य के नौ रसों श्रृंगार, शौर्य, करुणा, अद्भुत, हास्य, भय, वीभत्स, रौद्र और शान्त का दर्शन करने दुनिया भर के पर्यटक वर्ष भर खजुराहो आते रहते हैं। हर वर्ष आमतौर पर फरवरी और मार्च में खजुराहो वाद्य, वृन्द, नृत्य, संगीत और पक्षियों के उन्मुक्त कल्लोल से भर उठता है जब यहाँ नृत्य समारोह का आयोजन किया जाता है। खजुराहो पर अनेक फिल्मकारों ने वृत्तचित्र, रुपकचित्र तैयार किए हैं, जिन्हें राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त हुए है।

उज्जैन

माण्डू

नैसर्गिक वैभव तथा मनोरम दृश्यावलियों से भरा पूरा माण्डव का किला प्रदेश की विन्ध्य पर्वत श्रेणी के 2079 ऊँचे पठार पर स्थित है। इन्दौर के निकट धार जिले से कुछ दूरी पर माण्डू इतिहास के निर्माण एवं ध्वन्स की कहानी का प्रमाण है। यहाँ का किला राजा बाज बहादुर और रानी रुपमती के प्रणय की गाथा का गवाह है। माण्डू की हवाओं में इनके प्रेम के गीत आज भी गूँजते है। दूर-दूर से पर्यटक माण्डू की सैर करने आते हैं और यहाँ के सौन्दर्य और नैसर्गिक छटा का सुरुचिपूर्ण छायांकन कर जाते है। जैसे डंका, दिल दिया दर्द लिया, किनारा, खुशबू मध्य प्रदेश फिल्म विकास निगम की फिल्म **स्थाल गाथा** कुमार शाहनी भी यहीं बनी है। यह स्थल अब सांस्कृतिक समारोहों का केन्द्र भी बन गया है।

महेश्वर

उज्जैन

क्षिप्रा के तट पर स्थित उज्जैन अपनी पारम्परिक विरासतों के लिए राष्ट्रीय पहचान रखता है। जिन चार स्थानों पर पवित्र स्नान के पर्व कुम्भ का आयोजन
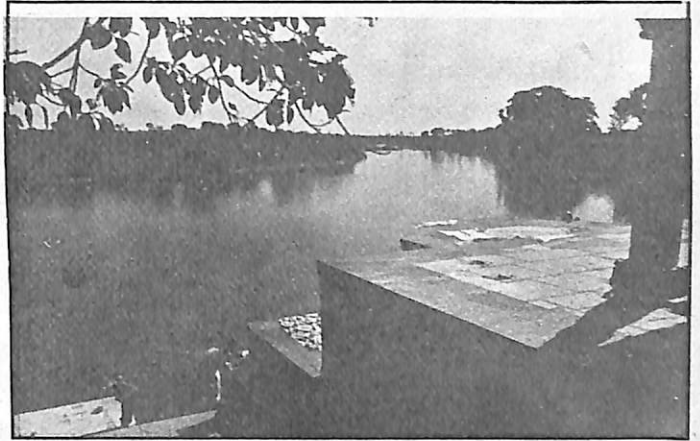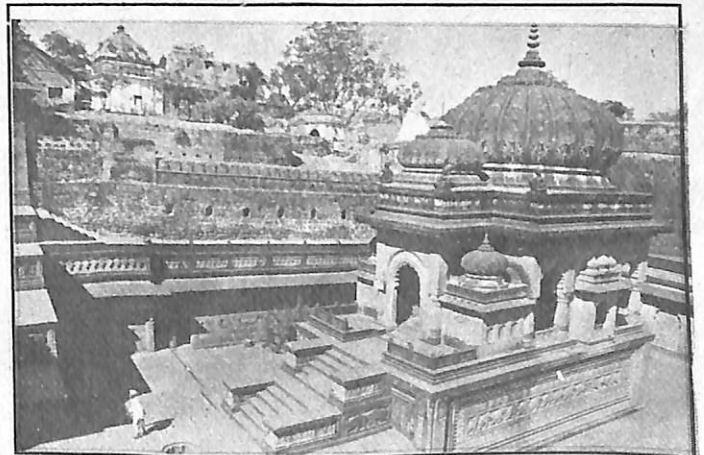
किया जाता है, उज्जैन इनमें प्रमुख है। यहाँ का प्रसिद्ध महाकालेश्वर का मंदिर पावन शैव परम्परा का परिचायक है। अप्रैल मई 1992 में उज्जैन में आयोजित सिंहस्थ पर्व की तैयारियाँ चल रही हैं। वर्ष भर यहाँ भी देश भर से लोग आते जाते हैं। उज्जैन ही से लगे स्थानों में कालियादेह, भैरोगढ़, महिदपुर आदि प्रमुख हैं जो स्थायी महत्व के हैं। यहाँ पर पिछले दिनों 'काल भैरव' फिल्म की लगभग सम्पूर्ण शूटिंग की गई है।

कान्हा

एशिया के सर्वश्रेष्ठ वनों में प्रदेश के मण्डला जिले का कान्हा नेशनल पार्क, वन्य प्राणियों के संरक्षण प्रबंधन की दृष्टि से अनुपम पर्यटन स्थल है। ये 257 किलोमीटर क्षेत्र में फैला है। कान्हा वस्तुतः एक प्रतीकात्मक नाम है, जहाँ पर कि बंजर और हालो घाटी के संरक्षण की गाथा छिपी है। जंगली पशुओं से परिपूर्ण कान्हा नेशनल पार्क में हमेशा ही सैलानी आते-जाते रहते है।

पचमढ़ी

पचमढ़ी अपनी प्राकृतिक खूबसूरती और खुशगवार मौसम के कारण एक चर्चित स्थान बन गया है। यहाँ का वातावरण और भौगोलिक मिजाज सभी को खूब भाता है। इसी कारण लोग यहाँ आते-जाते हैं। पचमढ़ी होशंगाबाद जिले के पिपरिया से 53 किलोमीटर दूर हैं। सतपुड़ा की मुकुटमणि पचमढ़ी, पर्वतश्रेणियों के मध्यवर्ती पठार पर ईशान कोण पर स्थित है। इस पठार का भौगोलिक क्षेत्रफल 23 वर्ग मील और ऊँचाई 3500 फुट है।

पचमढ़ी स्थित पाण्डव गुफा, जटाशंकर का मंदिर, त्रिधारा, धूपगढ़, जमुना कुण्ड, कौलेट नसेग व क्लैमेरिस पांइट भी दर्शनीय स्थल हैं यहाँ पर **थोड़ा सा रुमानी हो जाएँ** टीवी सीरियल **भारत एक खोज** और ब्रिटिश भारत सहयोग की फिल्म **एन इलेक्ट्रिक मून** का खूबसूरत फिल्मांकन भी हुआ है।

भेड़ाघाट

संगमरमरी चट्टानों से बहता पानी भेड़ाघाट की प्रमुख पहचान है। यह जबलपुर में स्थित हैं, जो मध्यप्रदेश के सैलानियों के आकर्षण का प्रमुख केन्द्र है। यहाँ पर प्रख्यात फिल्मकार राजकपूर ने फिल्म **जिस देश में गंगा बहती है** का फिल्मांकन (ओ बसंती पवन पागल) भी किया था।

साँची

भोपाल से लगभग 40 मील की दूरी पर बौद्ध शिल्प तथा भारतीय संस्कृति के गौरवमय केन्द्र साँची के स्तूप के बारे में सभी जानते हैं। साँची का सम्बन्ध सम्राट अशोक से हैं। ये स्थल अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यटकों को आकर्षित करता है।

खजुराहो : छाया घनश्याम शर्मा
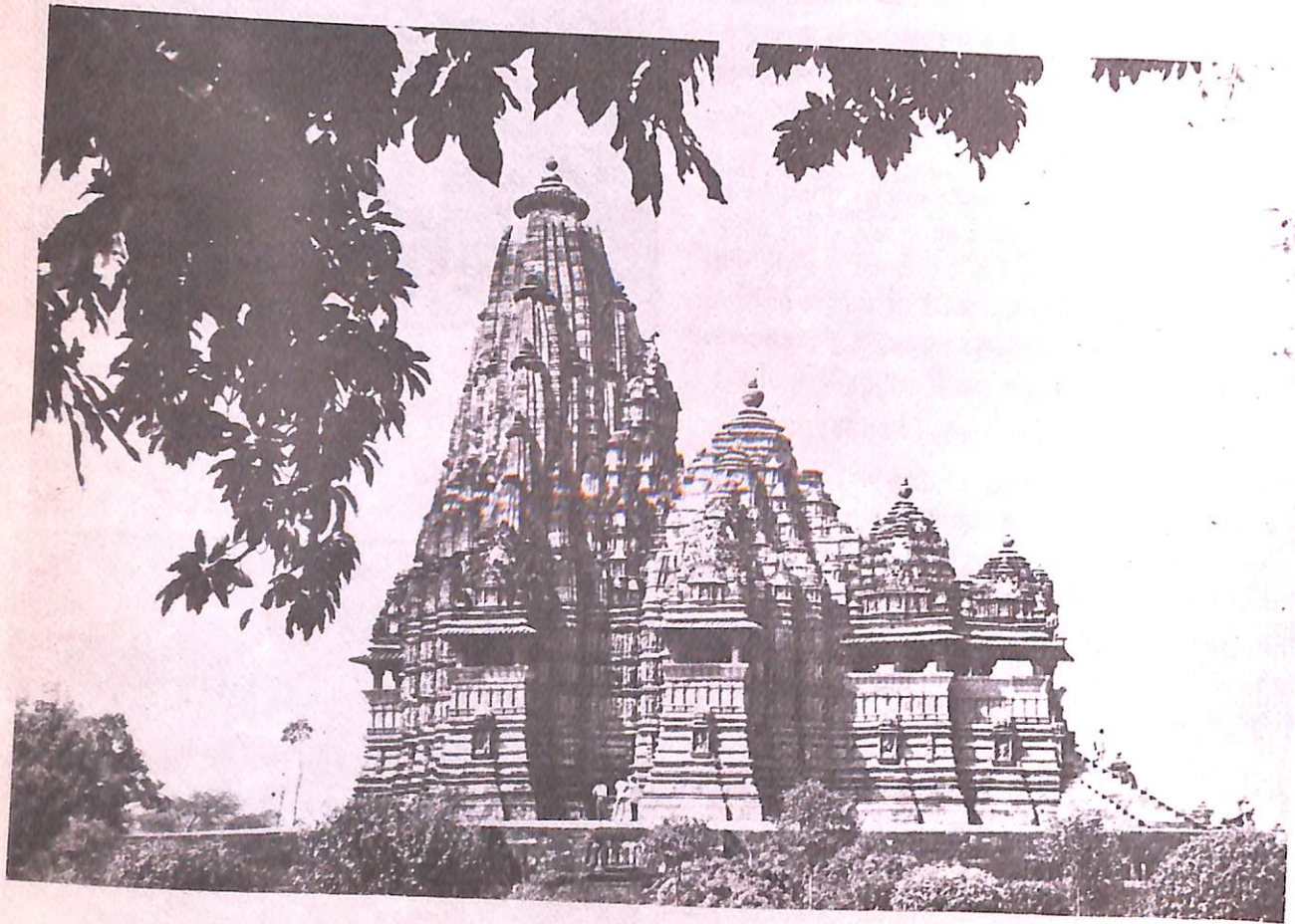
1991 में निर्मित हिन्दी फिल्में

संकेत : (बे) बैनर: (नि) निर्माता : (नि*) निर्देशक : (क) कथा: (प) पटकथा: (सं) संवाद: (गी) गीतकार : (सं*) संगीतकार : (छा) छायाकार: (पा) पात्र:

प्रमाण-पत्र विवरण

(यू) - यूनिवर्सल : (यूए) यूनिवर्सली एडल्ट : (ए) एडल्ट

ए

(अँगरेजी वर्णमाला क्रम से)

अंधा सच (यू) 13 रील
(बे) शिव नारायण

अनजाने रिश्ते (यू) 15 रील
(नि) राजेश बहल
(नि*) दिलजीत सिंह
(गी) मजरूह सुल्तानपुरी
(सं*) आनंद मिलिन्द
(पा) वसन्त सेना /अशोक कुमार शेखर सुमन/आलोकनाथ/ रजा मुराद

आखरी चीख (ए) 16 रील
(नि) रेशमा रामसे
(नि*) (क) किरण रामसे
(गी) अन्जान - अनवर सागर
(पा) श्रीप्रदा/अनिल धवन/ पूनम दासगुप्ता/विजय अरोरा/ विजयेन्द्र घाटगे/ नीलम मेहरा/ कंवलजीत /राजेन्द्रनाथ
(सं*) बप्पी लाहिरी

आज का सेमसन (ए) 14 रील
(नि) (नि*) (क) कुकू कपूर
(गी) इंदीवर-अभिलाष
(सं*) प्रेम गुप्ता
(छा) रॉकी फोंसेका
(पा) रेशमा सिंह/हेमन्त बिरजे/ किरण कुमार/साहिला चड्ढा/ गुलशन ग्रोव्हर/गोगा कपूर

अजूबा (यू) 21 रील (भारत सोवियत यह निर्माण)
(नि) (नि*) शशि कपूर
(क) प्रयागराज - ब्रिजकटियाल - भारत - बी. भल्ला
(गी) आनंद बक्षी
(सं*) लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल
(छा) पीटर परेरा
(पा) डिम्पल कापडिया/अमिताभ बच्चन/ ऋषिकपूर/ सोनम / सईद जाफरी/शम्मी कपूर सुषमा सेठ/अमरीशपुरी/ टीनू आनंद

अफसाना प्यार का (यू) 14 रील
(नि) संजय सेक्सरिया
(नि*) एम शाहजहाँ
(क) (प) (सं) बोनो डेब/रमेश पंत
(सी) अन्जान-समीर
(सं*) बप्पी लाहिरी
(छा) डब्ल्यू बी.राव
(पा) नीलम/आमीरखान/राकेश बेदी बीना/नीतापुरी/सईद जाफरी/ किरण कुमार/जया माथुर/ जीत उपेन्द्र/विजू खोटे/ अमिता नांगिया दीपक तिजोरी

शशिकपूर की फिल्म अजूबा
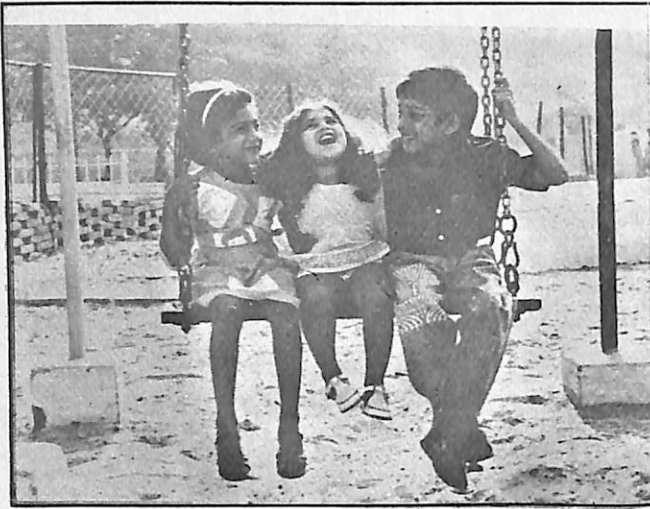
हिन्दी में डब फिल्म अंजलि

आई मिलन की रात (यू) 19 रील

(नि) गुलशन कुमार	(पा)	शाहीन/अविनाश वाधवा /
(न*) के. पप्पू. अनुपम खेर		कुनिका/आलोक नाथ /
(क) (प) (स) केशव राठोड़/एम परवेज		कुलभूषण खरबंदा/अरुणा इरानी/
(गी) समीर - मजरूह सुल्तानपुरी		रीता भादुड़ी/ परेश रावल बीरबल
(सं) आनंद - मिलिन्द.		सुष्मिता मुखर्जी
(छा) श्रीपद नातू.		

अंधेरी रात. (डब) (ए) (14) रील.

(बे) - श्री पद्मावती देवी प्रोडक्शन.

अंजाम हवस का. (मलयालम से डब) (ए) (12) रील

(बे) विजयलक्ष्मी प्रोडक्शन्स

अंग लगा ले (तमिल से डब) (ए) (12) रील.

(बे) माणेक इन्टर प्राइजेस.

और एक धर्मात्मा (डब) (ए) (15) रील.

(नि) एआर एस. शर्मा	(पा)	आयशा जुल्का/नागार्जुन
(नि.) क्रान्ति कुमार		शोभना/देवराज/कृष्णाम् राजू/
(गी) इंदीवर - ब्रिज बिहारी		प्रभाकर
(सं.) लक्ष्मीकांत प्यारेलाल		

आदमी और अप्सरा (डब) (ए) (15) रील.

(नि) के राघवेन्द्रराव.	(पा)	श्रीदेवी/चिरंजीवी/अमरीश पुरी।
(सं) एम. सिन्हा		बेबी शामली/प्रभाकर/रामी रेड्डी/
(गी) - इंदीवर		बेबी शालिनी/
(स) इल्याराजा		
(छा) के. प्रकाश		

औरत और परिन्दा (मलयालम से डब) (यूए) (12) रील.

(बे) किरण इन्टरप्राइजेस'

अंजलि : (तमिल का हिंदी संस्करण) (यू) (14) रील.

(नि) नितिन मनमोहन.	(पा)	रेवती /रघुवरन
(नि*)(क) (पा) मणी रत्नम्		बेबी शामली/मास्टर तरुण
(सं) जावेद सिद्धकी		बेबी श्रुति/ प्रभु/
(गी) - समीर		
(सं) इल्याराजा		
(छा) मधु आंबट		

अजूबा कुदरत का (यूए) (16) रील.

(नि) शेख महम्मद शकील	(पा) -	मिट्ठी/हेमंत बिरजे/दीपक पाराशर/
(नि.) तुलसी. व श्याम रामसे		बीना/ शक्तिकपूर
(क) (प) (सं) गीतांजली सिंह /सलीम हैदर		बेबी श्वेता/ मानेक इरानी/जॉनी
(सं) अजीत सिंह.		लीवर/हुमा खान/मेकमोहन
(छ) गंगू रामसे		

और ढोल बजता रहा (यू) (11) रील.

(बे) दूरदर्शन

अकेला (यू) (18) रील.

(नि) मुशीर रियाज	(पा)	मीनाक्षी शेषाद्रि/अमिताभ बच्चन/
(नि*) रमेश सिप्पी		अमृता सिंह/जेकी श्राफ/
(क) (प) सलीम खान		किरण जुनेजा/ शशि कपूर/
		आदित्य पंचोली/कंवलजीत
(गी) आनंद बक्षी		हेलन /विक्रम गोखले/
		मास्टर अंतरिक्ष।
(सं) लक्ष्मीकांत - प्यारेलाल		कीथ स्टीवेन्सन.
(छा) के.के. महाजन.		

बी

भेड़ियों का समूह (यू) (14) रील

(नि) (नि) (प) एम. के शंकर	(पा)	राजश्री पिंगले/गीता नायक/
(सं) उदयबल सिंह		शिवाजी/ सतम/सुनील चौहान/
		विजय सूद/भरत कपूर/
(गी) योगेश, दर्पण शर्मा		मोहन चोटी/ब्रह्मचारी/
(सं*) तृण चक्रवर्ती		मंगल ढिल्लो
(छ) पुरुष बावकर		

बेनाम बादशाह (यू ए) (15) रील

(नि) के. रामजी	(पा)	जूही चावला/सीमा देव/रोहिणी हट्टंगडी
(नि*) के रविशंकर		शिल्पा शिरोडकर (मेहमान कलाकार)/
(क) (प) (स) इकबाल दुर्रानी		अनिल कपूर/अशोक सराफ/अमरीश पुरी/
		राकेश बेदी/सतीश शाह/सुधीर पांडे

(गी) आनंद बक्षी — मास्टर मंजुनाथ/विजू खोटे
(सं*) लक्ष्मीकांत प्यारेलाल
(छा) के. व्ही रमन्ना

बदनाम रिश्ते. (मलयालम से डब) (ए) (12) रील
(बे) सन्तोष इन्टरनेशनल्स

बहारों की मंज़िल (यू) (16 रील
(नि) पी. सुब्बाराव (पा) मोना/रीमा लागू/जीत उपेन्द्र/सुनील/लहरी/अजीत वाच्छानी/सतीष शाह
(नि*) (प) (स) - माधव राव/बी.एम.व्यास
(गी) देव कोहली,रविन्दर रावल, श्याम अनुरागी, गोहर कानपुरी
(सं*) राम - लक्ष्मण
(छा) पी. देव

बिजली और बादल (यू) (16) रील
(नि) (नि*) मोहन टी. गेहानी. (पा) श्रीप्रदा/सोना/अजय कुमार (नई खोज)/अनुपम खेर/अजीत वाच्छानी/राकेश बेदी/शक्ति कपूर/सलीम/गोगा कपूर/सुनील धवन/राजेश विवेक/
(क) विवेक कुमार सिद्धंत
(गी) दलीप ताहील
(सं) अनवर उस्मान
(छा) अशोक राव

बालक अम्बेडकर (डब) (यू) (13) रील.
(बे) श्री भाग्यर्ती फिल्म्स

बदन (मलयालम से डब)
(बे) मंगलसिंह एन्ड कंपनी

भारत एक खोज (यू) (39) रील (7 भागों में)
(बे) (नि) राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम एवं श्याम बेनेगल

भाभी (यू) (16 रील
(नि) जवाहर लाल बाफना - वंसत डोषी (पा) भानुप्रिया/जूही चावला/संगीता नाईक/शोभा प्रधान/साहिला/गोविन्दा/आनंद बलराज/गुलशन ग्रोव्हर/अजीत वाच्छानी/शशिपुरी/दिनेश हिंगू/
(नि*) (क) किशोर व्यास
(प)(सं) शक्तिमन/नवाब आरजू -
(गी) हसरत जयपुरी-देव कोहली - नवाब आरजू
(स*) अन्नू मलिक
(छ) यू.एस. श्रीनिवासन

बदला जंगली का (तेलुगु से डब) (यू)15 रील
(बे) राम आर्ट मूव्हीज

बंजारन (यू) (16) रील
(नि) ओमप्रकाश मित्तल - रामसिंह (पा) श्रीदेवी/रेणू आर्य/अंजना मुमताज/मधु मल्होत्रा/ऋषिकपूर/ओमशिवपुरी/प्राण गुलशन ग्रोवर/कुलभूषण खरबंदा/सुधीर पांडे रजा मुराद/राकेश बेदी
(नि*) हरमेश मल्होत्रा
(क) जगमोहन - सतीश व्यास
(प) (स) डॉ. राहीमासूम रजा -रविकपूर
(गी) आनंद बक्षी
(सं*) लक्ष्मीकांत - प्यारेलाल
(छा) श्यामराव सिपोसकर

बदले की रात (मलयालम से डब) (ए) (14) रील
(बे) नवशक्ति आर्ट फिल्मस्

बेनाम रिश्ते (ए) (14) रील
(नि) अजय बगथरिया - शम्मी चौधरी (पा) अनुराधा पटेल/नीतापुरी/जया माथुर/मोहन भंडारी/अनिल धवन/याकूब/मदन जैन
(नि) श्याम गुप्ता
(क) (प) (स) शेखर ताम्हणे/श्याम गुप्ता
(गी) दीपक स्नेह - रमेश मोहित
(सं.) सुखविन्दर सिंह

सी

करन्ट (यू) (14) रील
(बे) राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम

डी

दीवाने (ए) 15 रील
(नि) इन्दरजीत शर्मा - मोहिन्दर (पा) अनुराधा पटेल /सुप्रिया पाठक/बिंदू/स्वप्ना/बीना/अर्चना पूरणसिंह/शेखर सुमन/चंदर शर्मा/अनुपम खेर/राजन सिप्पी मानेक इरानी
(नि*) चन्दर शर्मा
(गी) इंदीवर
(सं*) उषा खन्ना

दुश्मन देवता (यू) 17 रील
(नि) (नि*) अनिल गांगुली (पा) डिम्पल कपाड़िया/सोनम/सुलभा देशपांडे/कुनिका/ धर्मेंन्द्र/आदित्य पंचोली/गुलशन ग्रोवर/सदाशिव अमरापुरकर/श्रीराम लागू ए.के. हंगल/जमुना/मास्टर विजय
(प) (सं) सचिन भौमिक/अनवर खान
(गी) अन्जान - इंदीवर
(सं*) बप्पी लाहिरी
(छा) प्रताप सिन्हा

दूर नहीं सबेरा (यू) (10) रील
(बे) डो - रे - मे फिल्म्स
(नि) राजेश भाटिया (पा) डॉली शर्मा/अक्षय आनंद/परेश रावल/अनुपम खेर/दीपक सिन्हा आकाश खुराना मुश्ताक मर्चेन्ट/सुनील रेगे।
(नि*) रवि रॉय
(क) रॉबिन भट्ट -
(गी) पयाम सईदी इब्राहीम अश्क
(सं*) राजेश रोशन
(छा) अशोक बहल

दो मतवाले (यू) (18) रील

(नि) पुष्पा एस. चौधरी (पा) सोनम/शिल्पा शिरोड़कर/सुषमा सेठ/

(नि*) (क) अजय कश्यप संजय दत्त/चंकी पांडे/गुलशन ग्रोव्हर/

(सं) महेश रावत किरन कुमार/शक्तिकपूर/कादर खान

(गी) समीर- संतोष आनंद अंजना मुमताज/आशा सिंह/ प्रीति सप्रू/

(सं*) लक्ष्मीकांत - प्यारेलाल विजू खोटे

(छा) के.व्ही. रमन्ना

100 दिन (ए) (17)

(नि) जय मेहता (पा) माधुरी दीक्षित/मुनमुन सेन/ सबीना/जैकी श्राफ/

(नि*) पार्थो घोष जावेद जाफरी/अजीत वाच्छानी/

(क) (प) (सं) देव ज्योति रॉय/भूषण वनमाली लक्ष्मीकांत बेर्डे/जय कालगुटकर।

(गी) रविन्द्र रावल-देव कोहली- दिलीप ताहिर

(सं*) राम-लक्ष्मण

(छा) अरविन्द लाड़

दूसरी बीबी (मलयालम में डब) (ए) 14 रील

(बे) सालगिया एण्ड कंपनी

दिल है कि मानता नहीं (यू) 16 रील

(नि) गुलशन कुमार - मुकेश भट्ट (पा) पूजा भट्ट/शुभाखोटे/शम्मी/रोमा माणिक(मेहमान कलाकार)

(नि*) महेश भट्ट आमीरखान/अनुपम खेर/राकेश बेदी

(क) (प) (सं) रॉबिन भट्ट/शरद जोशी राजेशपुरी/जावेद खान/टिंकू तलसानिया।

(गी) समीर - सन्तोष आनंद समीर चित्रे/अवतार गिल/मुश्ताक खान

(सं*) नदीम श्रवण

(छा) भूषण पटेल - प्रवीण भट्ट

धर्म-संकट (यूए) 18 रील

(नि) उमेश एन.कोठारी (पा) अमृतासिंह/साहिला/श्रीप्रदा/

(नि*) एन.डी. कोठारी विनोदखन्ना/राजबब्बर/अमरीशपुरी/

(क) (प) (सं) भरत भल्ला/ जफर एहसान/डॉ. अचला नागर शक्तिकपूर/रोहिणी हटंगडी/असरानी जानकीदास/सतीश शाह/दारा सिंह

(गी) विश्वेश्वर शर्मा - पुष्पा वर्मा सुधीर दलवी

(सं*) कल्याण जी- आनंद जी

(छा) डब्ल्यू बी.राव

डांसर (यू) (17) रील

(नि) राजकुमार लुधानी (पा) मोहिनी (नई खोज)/अंजना मुमताज/

(नि*) किशोर व्यास अक्षय कुमार/मोहनीश बहल/कीर्तिसिंह/

(क) (प) (स) अफजल खान/ नवाब आरजू दिलीप ताहिल/गजेन्द्र चौहान/लक्ष्मीकांत बेर्डे गुरूचरन / आनंद बलराज / मास्टर

(गी) समीर अभिषेक/बेबी शमीन
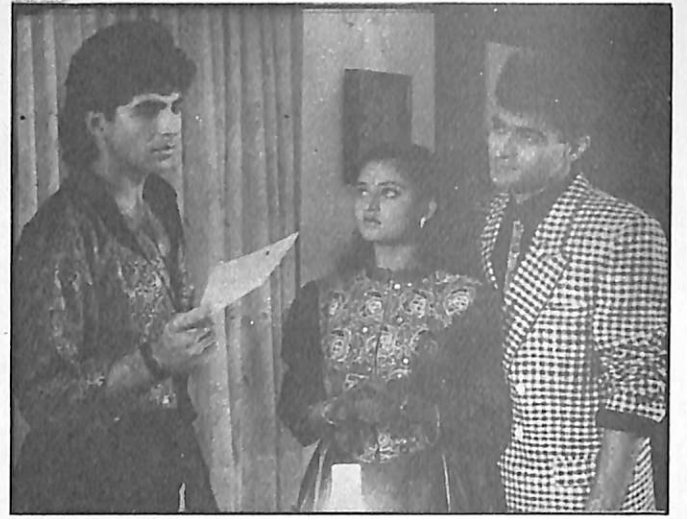
फिल्म डांसर

(सं*) आनंद - मिलिन्द

(छा) एस.पप्पू

दुर्गा (यू) 10 रील

(बे) राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम

दीक्षा (यूए) (14) रील

(नि) राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम एवं दूरदर्शन (पा) राजश्री सांवत/सत्य भामा/

(नि*) अरूण कौल मनोहर सिंह/नाना पाटेकर

(क) डॉ. यू.आर. अनन्तमूर्ति के.के. रैना/विजय कश्यप/मास्टर

(प) उमेश कलबाग - अरूण कौल - जे.पी. दीक्षित आशीष मिश्रा

(सं*) मोहिन्दर जीत सिंह

(छा) एके. बीर

डाकू मुन्नी बाई (तेलुगु से डब) (ए) 13 रील

(नि) वाय. राजकुमार (पा) जया सुधा/विजय ललिता/

(नि*) एन.एच. राव शारदा/मुरली मोहन/मोहनबाबू

(गी) ब्रिज बिहारी

(सं*) सोनिक ओमी

(छा) कन्नप्पा

दस्तूर (यूए) (15) रील

(नि) हरीश मुंजाल - प्रेम चुघ (पा) शर्मिला टेगौर/पम्मी देव/डॉली

(नि*) अनिल मट्टू मिन्हास/अमिता नांगिया/कुलभूषण

(क) (सं) स्व. विजय पंडित/ खरबंदा/सुरेश ओबेरॉय/आलोकनाथ/ डॉ. राही मासूम रजामनोहर सिंह/रजा मुराद/

(गी) मजरुह सुल्तानपुरी हरीश मुंजल/जॉनी लीवर

(सं*) आनंद मिलिन्द

(छा) शंकर वर्धन

दौलत की जंग (यू) 18 रील

(नि) जलील एहमद (पा) जूही चावला/रेणू जोशी/जमुना/
(नि*) एस.ए. कादर आमीरखान/शफी इनामदार/कादरखान/
(प) (सं) नवाब आरजू/अख्तर सुहेल टीकू तलसानिया/जूनियर मेहमूद / परेश
(गी) मजरूह सुल्तानपुरी रावल/दिलीप ताहिल/किरण कुमार
(सं*) आनंद - मिलिन्द
(छा) दामोदर नायडू

फर्स्ट लव लेटर

इ

एक दो तीन (यू) (5) रील (बड़ी)
(बे) भारतीय बाल फिल्म समिति

एक नादान लड़की (मलयालम से डब) (ए) - (10) रील
(बे) श्री पार्वती कम्बाइन्स

एक घर (मने) (यू) (10) रील
(नि) रवि मलिक (पा) दीप्ति नवल/रोहिणी हट्टंगडी
(नि*) (क) (प) गिरीश कासरवल्ली नसीरुद्दीन शाह/मायको चंद्रा/
(सं*) एल वैद्यनाथन बी.एस.अचर
(छा) एस रामचंद्र

एफ
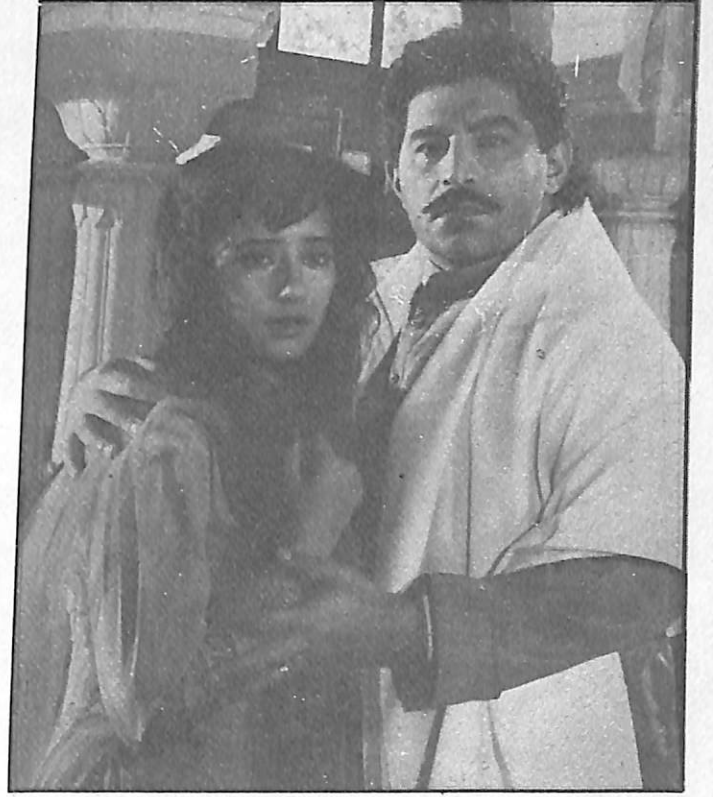
फरिश्ते (यू) (20) रील
(नि) सत्ती शौरी (पा) श्रीदेवी/स्वप्ना/जयाप्रदा/बीना
(नि*) अनिल शर्मा धर्मेन्द्र/विनोद खन्ना/रजनीकांत/
(क) शब्द कुमार कुलभूषण खरबंदा/सदाशिव अमरापुरकर।
(गी) आनंद बक्षी ए.के.हंगल/राजेन्द्रनाथ/मास्टर बंटी
(सं*) बप्पी लाहिरी
(छा) अनिल ढंढ़ा

फतेह (यूए) (17) रील
(नि) मुकेश दुग्गल (पा) सोनम/एकता/संजय दत्त/
(नि*) (क) (सं) तलत जानी/ जावेद सिद्दकी मोहसिन खान/सुरेश आबेराय शफी इनामदार/सत्येन कप्पूर
एम शमीम सुखविन्दर ार्मा जावेद खान/मानेक इरानी/अवतार गिल।
(छा) निर्मल जानी

(फर्स्ट लव लेटर) (यू) (18) रील
(नि) पहलाज निहलानी (पा) मनीषा कोइराला/बीना/सोनिका गिल/
(नि*) शिव रीमा लागू/सुषमा सेठ/विवेक मुशरान/
(क) (प) (सं) राम केलकर/कमलेश पांडे गुलशन ग्रोवर/दिलीप ताहिल/हरीश पटेल
(गी) अन्जान डेनी/पेंटल/चंकी पांडे।
(सं*) बप्पी लाहिरी
(छा) बलदेव सिंह

जी

घर परिवार (यू) (16) रील
(नि) बी.के. जायसवाल- मोहन जी प्रसाद (पा) मीनाक्षी शेषाद्रि/शोमा आनंद/मौसमी चटर्जी/ऋषि कपूर/राजेश खन्ना/
(नि*) (क) (प) मोहन जी प्रसाद/ के.बी. पाठक राज किरण/प्रेम चोपड़ा/कादर खान
(गी) अन्जान
(सं*) कल्याणजी - आनंदजी
(छा) श्रीनिवासन

गुनहगार कौन ? (यू) (15) रील
(नि) रीना खान - शारदा रॉय - अंजू रॉय (पा) सुजाता मेहता/संगीता बिजलानी/
(नि*) अशोक गायकवाड़ निशीगंधा/राज बब्बर/मोहसिन खान/
(क) (प) (सं) संतोष सरोज/ राजकुमार बेदी सईद जाफरी/सत्येन कप्पूर/परेश रावल/
(गी) मजरूह सुल्तान पुरी अंजना श्रीवास्तव/गुड्डी मति
(सं*) आर.डी. बर्मन
(छा) अनवर सिराज

गलत सम्बन्ध (मलयालम से डब) (ए) 14 रील

(बे) विजयलक्ष्मी प्रोडक्शन्स

गंगा जमुना की ललकार (ए) (16) रील

(नि) (नि*) कांति शाह (पा) श्री प्रदा/संजीवनी बिडकर/सीमावाज/
(क) (प) (सं) महेन्द्र देहलवी/ अजय कुमार/कादर खान/शगुफ़ाअली/
बशीर बब्बर गोगा कपूर/दिलीप ताहिल/अरुण माथुर/
(गी) महेन्द्र देहलवी - सनम गाजीपुरी राजेश विवेक/चरण देव
(सं*) विजय बटालवी
(छा) विनोद बारोट

गौरी (यू) (15) रील

(नि) विजयवीर सिंह त्यागी (पा) स्वप्ना/बिंदू/मीरा माधुरी/राजेश खन्ना
(नि*) सुधाकर शर्मा अनुपम खेर/सदाशिव अमरापुरकर/
(क) आलोकनाथ/राहुल चीमा/दीपक सिन्हा/
(प) (सं) मास्टर मेंहदी मर्चेन्ट
(गी)
(सं*)
(छा)

एच

हम (यू) (19) रील

(नि) रोमेश शर्मा (पा) किमी काटकर/दीपा साही/आशा शर्मा
(नि*) मुकुल एस. आनंद शिल्पा शिरोडकर/ अमिताभ बच्चन/
(क) (स) रविकपूर- मोहन कौल/ कादरखान रजनी कांत/गोविंदा/अनुपम खेर/
(गी) आनंद बक्षी डेनी/अन्नू कपूर/रोमेश शर्मा/
(सं*) लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल शम्मी/कादरखान/अपराजिता/
(छा) डब्ल्यू बी.राव

हवाई धमाका (डब) (ए) 15 रील

(बे) दिनेश सालगिया

हमने प्यार किया (ए) (15) रील

(नि) जे.एस. शाह - शीला गोसाल (पा) चंद्रिका/श्यामली/जया माथुर/
(क) (प) डॉ. दीपक स्नेह/बी. चंद्रा जीत उपेन्द्र/अजिक्य देव/
(गी) समीर अजीत वाच्छानी।
(सं*) अमर उत्पल
(छा) युसूफ कोंडाइजी

हफ्ता बंद (ए) (17) रील

(नि) (नि*) (क) दीपक बलराज विज (पा) वर्षा उसगाँवकर/एकता/शम्मी/
(प) (सं) सलीम हैदर किशोली शहाणे/सुलभा देशपांडे/
(गी) जावेद अख्तर जैकी श्राफ/आदित्य पंचोली/
सदाशिव अमरापुरकर/मुकरी/
(सं*) बप्पी लाहिरी बबलू मुखर्जी/आनंद बलराज

हफ्ताबंद

(छा) किशोर कापाड़िया बलविन्दर (नई खोज)

हुस्न का बाजार (मलयालम से डब) (ए) (14) रील

(बे) सत्या फिल्म कंपनी

हिना (यू) (19) रील

(नि) आर.के. फिल्म्स एण्ड स्टुडियो (पा) जेबा बख्तियार/अश्विनी भावे/
(नि*) रणधीर कपूर फरीदा जलाल/रीमा लागू/ऋषि कपूर/
(क) जैनेन्द्र जैन सईद जाफरी/किरण कुमार/दिलीप धवन/
(प) के.ए. अब्बास - व्ही.पी. साठे रजा मुराद/कुलभूषण खरबंदा/शफी
(गी) रवीन्द्र जैन-नक्शलायलपुरी इनामदार/मोहनीश बहल/टीनाघई
मौलाना कुदसी
(सं*) रवीन्द्र जैन
(छा) राधू करमकर

हुस्न के लुटेरे (मलयालम से डब) (यू) 12 रील

(बे) संतोष इन्टरनेशनल्स

हसीनों का बदला (मलयालम से डब) (यू) (14) रील

(बे) पी.पी. इम्पस

हाय मेरी जान (यू) (16) रील

(नि)(नि*) रूपेश कुमार (पा) आयशा जुल्का/हेमामालिनी
(क) (प) (सं) एम फरहाशाही/ जया माथुर /निरूपराय /कुमार गौरव
ब्रिज कटियाल सुनील दत्त/राजेन्द्र कुमार/ रजामुराद
(गी) नक्शलायलपुरी इंदीवर- रूपेश कुमार/भारत भूषण/
मजरुह सुल्तानपुरी- महेन्द्र देहलवी
(सं*) बप्पी लाहिरी
(छा) ओमी बहल
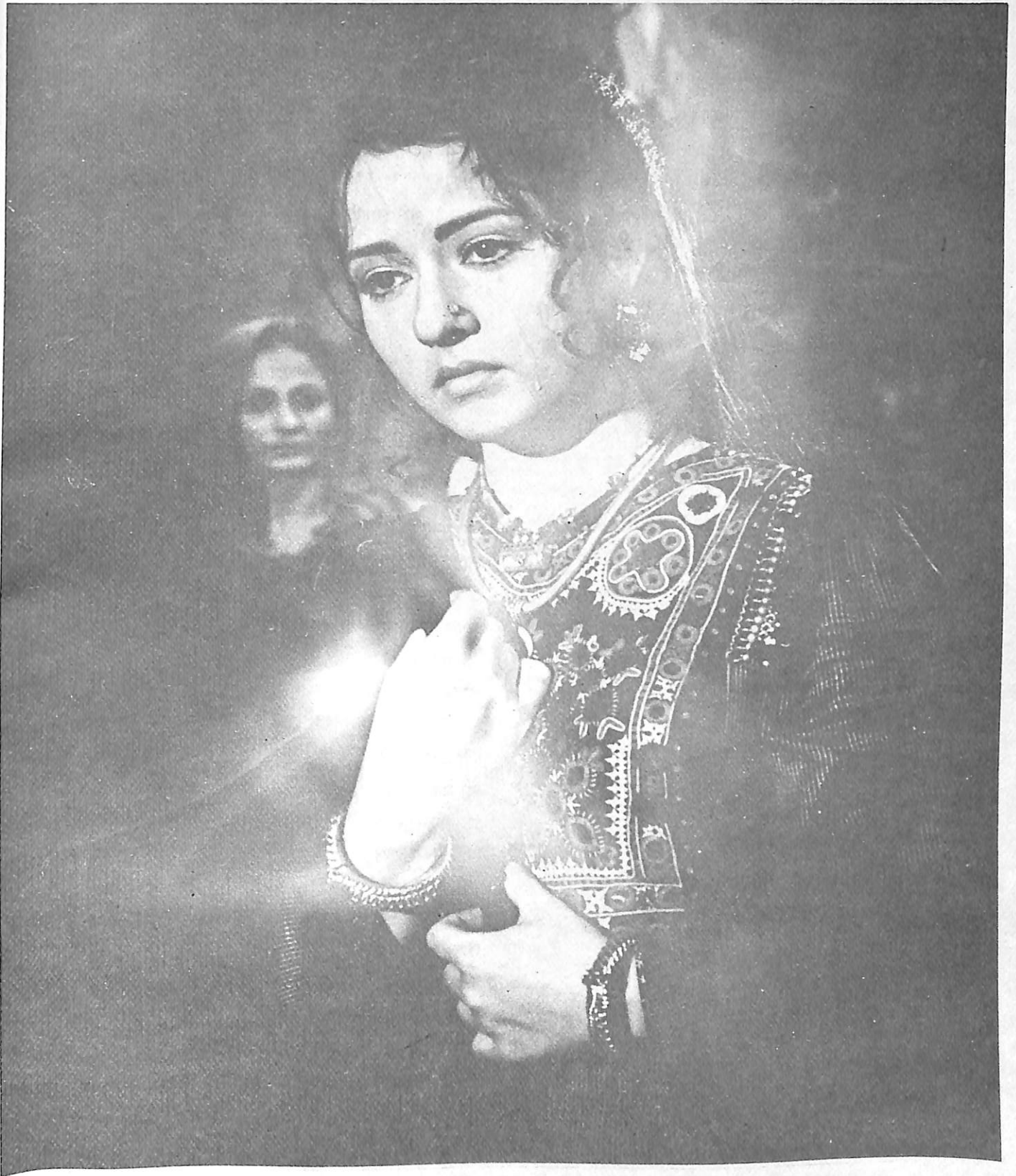
फिल्म हिना में जेबा बख्तयार

हम भी कुछ कम नहीं (यू) (10) रील

(बे) भारतीय बाल फिल्म समिति

हसीन वादियों में (यू) (14) रील

(नि*) के. एस. गोपाल कृष्ण (पा) साहिल/उपासना सिंह/अनिल धवन

आई

(सं*) संगीत राजा

इज्जत (ए) (17) रील

(नि) सलीम अख्तर (पा) संगीता बिजलानी/जैकी श्राफ/

(नि*) अशोक गायकवाड़ सदाशिव अमरापुरकर/शक्ति कपूर/

(क) (प) संतोष सरोज - सलीम गुलशन ग्रोवर/रजा मुराद/अमजद खान

(सं) इकबाल दुर्रानी - संतोष राकेश बेदी/हरीश पटेल/परेश रावल

आनंद बक्षी बेबी उर्वशी/अरुणा ईरानी (मेहमान)

(सं*) अन्नू मल्लिक

(छा) अनवर सिराज

इन्द्रजीत (यूए) (18) रील

(नि) स्व. रमेश बहल (पा)जया प्रदा/अमिताभ बच्चन/नीलम

कुमार गौरव/विजयेन्द्र घाटगे/

(प) (सं) अजीज कैसी/कादर खान सदाशिव अमरापुरकर/सईद जाफरी

(गी) गुलशन बावरा गुलशन बावरा/कादर खान

(सं*) आर.डी. बर्मन अजिक्य देव/सुरेश चटवाल/अवतार गिल

(छा) पीटर परेरा

इन्साफ की देवी (यू) (16) रील

(नि) शबनम कपूर - बी. एस शाद (पा) रेखा/उपासना सिंह/अंजू/महेन्द्रू/

(नि*) (प) एस. ए. चंद्रशेखर बेबी स्वीटी/जितेन्द्र/कादरखान/

(क)शोभा सुधाचंद्रन/नीरज मेहरा/शक्ति कपूर

(सं) शबद कुमार इशरत अली/योगराज

(गी) इंदीवर

(सं*) बप्पी लाहिरी

(छा) मनमोहन सिंह

इंदिरा (यू) (18)

(नि) बालम मोहला (पा) हेमा मालिनी/उपासना सिंह/स्वप्ना

(नि*) नृपेन मोहला रोहिणी हट्टंगडी/खुशबू/सुरेश ओबेरॉय

(गी) वर्मा मलिक - अख्तर इंदौर प्रेम चोपड़ा/हेमंत बिरजे/राकेश बेदी

(सं*) कमलकांत सत्येन कपूर/अभिषेक/शैल चतुर्वेदी ।

इन्सपेक्टर धनुष रील

(नि) के. नित्यानंद - आर.एफ.माणिकचंद (पा) संगीता बिजलानी/रूपा गांगुली/

(नि*) तुलसी व श्याम रामसे अमिता नांगिया/जमुना/
विष्णुवर्धन/सुरेश ओबेरॉय/

(क) (प) प्रयागराज करण सिंह/जेक गौड़/टीकू

(सं) तनवीर खान तलसानिया/सदाशिव अमरापुरकर/

(गी) इंदीवर बेबी गुड्डू

(सं*) बप्पी लाहिरी

(छा) गंगू रामसे

जान की कसम (यू) (16) रील

(नि) जावेद रियाज- फरहा जावेद (पा) कृष्णा/अर्चना पूरनसिंह/साथी

(नि*) सुशील मलिक गांगुली/सुरेश ओबेरॉय/रणजीत/

(क) बाबा खान रजा मुराद/जी.पी. सिंह/सत्येन कपूर/

(गी) समीर प्रमोद माउथु/बिल्लु बंदर

(सं*) नदीम - श्रवण

(छा) दीपक दुग्गल

जंगल रोमांस (डब) (यूए) (14) रील

(बे) अर्जुन इन्टरनेशनलस्

जीवन दाता (यू) (15) रील

(नि) श्रीमती शीतल श्रीवास्तव (पा) किमी काटकार/सोनू वालिया/

(नि*) स्वरूप कुमार अमित नांगिया/कानन कौशल/

(क) अनवर खान चंकी ापांडे/आदित्य पंचोली/?

(गी) अनवर सागर देवकुमार/नवीन निश्चल/रजा मुराद

(सं*) राजेश रोशन गुलशन ग्रोवर/अमरीशपुरी (मेहमान)

(छा) बी. गुप्ता किरण कुमार/

जवान दिलों की रानी (मलयालम से डब) (ए) (14) रील

(बे) चौधरी कम्बाइन्स

जूली डांसर (डब) (ए) (14) रील

(बे) एन.डी. आर प्रोडक्शनस्

जंगल ब्यूटी (ए) (16) रील

(नि) (नि*) (क) दिलीप गुलाटी (पा) जोशीना (नई खोज)/कुनिक/अंजली

(सं) अनवर खान राज / राजीव कुमार/राकेश बेदी/

(गी) शैली शैलेन्द्र पुनीत इस्सर/बॉबक्रिस्टो/जोगिन्दर/

(सं*) बप्पी लाहिरी युनूस परवेज/गोगा कपूर

(छा) अनिल ढंढा

जुम्मा-चुम्मा इन लंदन (यू) (9) रील

(नि) कीर्ति त्रिवेदी (पा) अमिताभ बच्चन का रंगमचीय प्रदर्शन/श्रीदेवी/अमीर खान/नीलम/अनुपम - खेर/सलमान खान

यह एक प्रयोगात्मक फिल्म है। परम्परागत रूप में फिल्म न होकर मूल वीडियो रूप से पूर्ण फिल्म में इसे रूपांतरित किया है।

जिस्म और जान (ए) 11 रील

(वे) पॉल कींगी

जंगल की रातें (मलयालम से डब) (यूए) 14 रील

(वे) टोपाज प्रोडक्शनस्

जंगल क्वीन (यू) 14 रील

(नि) रमेश - पुरुषोत्तम (पा) पूनम दासगुप्ता/लीना कामथ/श्रीरेखा/संजीवनी बिडकर/सीमा वज्र अंजुश्री/(नई खोज)/रघु खोसला/सतीश शाह/गिरिजा शंकर/दिलीप ताहिल/फिरोज ईरानी/गजेन्द्र चौहान

(नि*) के. चंद्रा

(क) (प) (सं) महेन्द्र देहलवी/चंद्र कौशल

(गी) समीर

(सं*) आनंद मिलिन्द

(छा) निशा तेलंग

झूठी शान (यू) (17) रील

(नि) अश्करी जाफरी - संजय गुलाटी (पा) शबाना आजमी/पूनम ढिल्लो/नादिरा/पल्लवी जोशी/मिथुन चक्रवर्ती/ कंवलजीत/शक्ति कपूर/देवेन वर्मा/जगदीप

(नि*) (क) रंजन बोस

डॉ. राही मासूम रजा

(गी) योगेश जावेद अख्तर

(सं*) आर.डी. बर्मन

जंगल सुन्दरी (मलयालम से डब) (ए) 12 रील

(वे) ड्रीमलेंड इन्टरनेशनल्स

जवानी बनी दीवानी (मलयालम से डब) (ए) (12) रील

(वे) कल्याणी फिल्म इन्टरनेशनल्स

के

खतरा (ए) (15) रील

(नि) पी. राममोहन ए प्रभाकर गौड़ (पा) एकता/कोशा/प्रभा मिश्रा/सुमित सहगल रजामुराद/हुमाखान/विकास आनंद/गोगा कपूर/राकेश मेहता/मोहन चोटी मानेक ईरानी/राजेश विवेक

विनोद कुमार गौड़

(नि*) (प) (सं) एच.एन. सिंह

(क) पी. राममोहन

(गी) आशारानी - सुरेश - अनवर सागर श्याम राज

(सं*) आदेश श्रीवास्तव

(छा) किशोर कपाड़िया

खून का कर्ज (यू) (16) रील

(नि) बप्पी सोनी (पा) डिम्पल कापडिया/किमी काटकर/संगीता बिजलानी/सुषमा सेठ/अंजना मुमताज/संजय दत्त/विनोद खन्ना/रजनीकांत / किरण कुमार/सुधीर पांडे शक्ति कपूर/अंजना श्रीवास्तव/जूनियर मेहमूद /राजेश पुरी/अनिल धवन।

(नि*) (क) मुकुल एस. आनंद

(स) कादर खान

(गी) आनंद बक्षी कादरखान

(सं*) लक्ष्मीकांत प्यारेलाल

कर्ज चुकाना है (यू) 18 रील

(नि) (नि*) (क) विमल कुमार (पा) जूही चावला/शोभा आनंद/शुभा खोटे/कादरखान/ सीमा देव /गोविंदा/राजकिरण// गुलशन ग्रोवर/कादर खान/असरानी/भारत भूषण/सत्येन कपूर/विजु खोटे/मेहमूद जूनियर/मास्टर गणेश

(प) (स) ग्यानदेव अग्निहोत्री

(गी) इंदीवर शादाब लोहोरी

(सं*) राजेश रोशन

(छा) अनिल ढंढा

खूनी पंजा (ए) (17) रील

(नि) एस के. तलवार-विनोद तलवार-अचल तलवार (पा) सरगम/विद्याश्री/रीता भादुड़ी/बीना सीमा वज/टीना घई/जावेद खान/सुधीर पांडे/अजीत वाच्छानी/अनिल धवन/

(नि*) विनोद तलवार

(क) (स) (प) सलीम युसूफ/एस. ताहिर जगदीप

(गी) गोहर कानपूरी - अख्तर इंदौरी

(सं*) सुरिन्दर कोहली

(छा) मनीष भट्ट

कातिल निगाहें (मलयालम से डब) (ए) (14) रील

(वे) अनुमान इन्टरप्राजेस

कुरबान (यूए) (15) रील

(नि) बूबी केंट (पा) आयशा जुल्का/कुनिका/सुनील दत्त/सलमान खान/रोहिणी हट्टंगडी/कबीर बेदी गुलशन ग्रोवर/राजेशपुरी सुबीराज/गोगा कपूर/भरत कपूर/जया माथुर स्वप्ना/ साहिला चड्ढा (मेहमान कलाकार)

(नि*) दीपक बहरे

(क) (स) विनय शुक्ला

(गी) समीर

(सं*) आनंद - मिलिन्द

(छा) थामस जेवियर

कसम काली की (यू) 15 रील

(नि) श्रीमती आशा, एम. सिंह (पा) अनिता राज/कानन कौशल/हेमंत बिरजे राज बब्बर (मेहमान कलाकार) / शक्ति कपूर सुधीर पांडे/जावेद खान/पारिजात/ भरत कपूर/महेश आनंद

(नि*) कमर नारवी

(क) (प) पार्थो मुखर्जी/ उमर खैय्याम सहारनपूरी

(गी)योगेश-कुलवंत जानी-नादान

(सं*) कमल कांत

(छा) एफ.आर.खान

कौन करे कुरबानी (ए) (16) रील

(नि) (नि*) (क) अर्जुन हिंगोरानी (पा) अनिता राज/सोनिका गिल/कुनिका/अर्जुन हिंगोरानी/धर्मेन्द्र/गोविन्दा

(प) (सं) खालिद अबरार/सैय्यद अबरार

कर्मयोद्धा : राजबब्बर

(गी) अन्जान इंदीवर | हेमन्त बिरजे/गुफी पेंटल/दीपक
(सं*) कल्याण जी- आनंद जी | विश्वजीत (मेहमान कलाकार)/
(छा) बी. गुप्ता | तिजोरी/

कोहराम (ए) 16 रील
(नि) इकबाल सिंह (पा) अनिता राज/सोनम/अरुणा ईरानी
(नि*) कूकू कोहली धर्मेन्द्र/ जीतेन्द्र/अमरीशपुरी/
(क) (सं) महेश शांन्डिल्य/ चंकी पांडे / सदाशिव अमरापुरकर
डॉ. राही मासूम रजा स्व. विनोद मेहरा/ मास्टर संदीप
(गी) इंदीवर - अन्जान
(सं*) बप्पी लाहिरी
(छा)सीबा मिश्रा

कमसिन कली (मलयालम से डब) (ए) (14) रील
(बे) केरल फिल्म डिस्ट्रीब्यूटर्स

कुँआरी दुल्हन (मलयालम से डब) (ए) (14) रील
(बे) सपना फिल्म सरकिट्स

कानून और सजा (तेलुगु से डब) (ए) (14) रील
(बे) गोविन्द प्रोडक्शनस्

कर्मयोद्धा (यूए) (19) रील
(नि) विनोद बब्बर - किशन बब्बर (पा) डिम्पल कपाड़िया/नीलिम/
(नि*) (क) (प) दयाल निहलानी अजीम/सरिता जोशी/निशीगंधा/राजबब्बर/
(सं) वंसत देव ओमपुरी/जावेद जाफरी / मनोहर सिंह/
(गी) नादिरा जहीर बब्बर परेश रावल/पारिजात/मोहन गोखले/दीपक
(सं*) अजित वर्मन काजिर
(छा) संजय धरनकर

खूनी हवस (तमिल से डब) (ए) (13) रील
(बे) ग्रेट शिवा इन्टरनेशनल्स

खुदाई (यू)
(नि) उस्मान खान (पा) माधवी/दीपिका/आशा शर्मा/शबनम/
(नि*) (क) जॉनी बक्षी - आनन्द राजेश खन्ना / ब्रेन्डो बक्षी/गुलशन ग्रोवर/
(गी) सुदर्शन फ़कीर अजय वाधवकर/अरुण बक्षी/राजे खान
(सं*) जगजीत सिंह

कल की बातें (यू)
(बे) बाबा मलगांवकरस्

एल

लखपति (यू) 15 रील
(नि) (नि*) (के) जल बालीवाल (पा) शोभा आनंद/सरला येवलेकर/निरूपाराय/
(गी) अख्तर रोमानी डॉ. श्रीराम लागू/अरुण गोविल
(सं*) इकबाल कुरैशी भारत भूषण/गोगा कपूर/इकबाल कुरैशी
(छा) एके. कदम

लम्बू दादा (यू) (16) रील
(नि) (नि*) (क) शरद चौधरी (पा) माधवी/अरुणा ईरानी/ऋतु प्रिया/
(प) के. बी. पाठक कबीर बेदी/किरण कुमार/परेश रावल
(सं*) राजेश रोशन महेश आनंद
(छा) प्रदीप पई

लड़की बदनाम सी (यू) 12 रील
(बे) टिम्मी फिल्म्स

लिबास (यू) (14) रील
(बे) स्नेह शक्ति पिक्चर्स

लुट गई लैला (मलयालम) (ए) (12) रील
(बे) ट्रस्ट इन्टरनेशनलस

लव (यू) (15) रील
(नि) श्याम बजाज (पा) रेवती/रीता भादुड़ी/शहनाज
(नि*) (क) सुरेश कृष्णा सलमान खान/अमजद खान/शफी
(प) (सं) सुरेश वासवानी/ इनामदार/बबलू मुखर्जी/अरुण बक्षी
जावेद सिद्दीकी
(गी) मजरूह सुल्तानपुरी दिनेश हिंगू/मेहमूद खान/सुधीर
(सं*) आनंद मिलिन्द
(छा) एस.एम. अनवर

लम्हे (यू) (19) रील

(नि) (नि*) यश चोपड़ा (पा) श्रीदेवी/वहीदा रहमान/इला अरूण/
(क) (प) (सं) हनी इरानी/ मंजू मिश्रा/ अनिल कपूर/अनुपम खेर/
डॉ. राही मासूम रजा मनोहर सिंह/दीपक मल्होत्रा (नई खोज)
(गी) आनंद बक्षी डिप्पी सागू (नई खोज) हिम्मत सिंह/ विनोद
(सं*) शिव-हरि
(छा) मनमोहन सिंह

लक्ष्मण रेखा (ए) (18) रील

(नि) सत्येन्द्र पाल चौधरी प्राण (पा) संगीता बिजलानी/शिल्पा शिरोडकर/
(नि*) सुनील सिकन्द रोहिणी हट्टगडी/नसीरूद्दीन शाह/जैकी श्राफ/
(क) करण राजदान डैनी/प्राण/अंजना श्रीवास्तव/
(गी) आनंद बक्षी रजा मुराद/ओम प्रकाश/करण राजदान/
(सं*) लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल सुधीराज (मेहमान कलाकार) विजू खोटे/
(छा) वी. दुर्गा प्रसाद अमजद खान शम्मी कपूर

एम

मीत मेरे मन के (यू) (17) रील

(नि) (नि*) (क) मेहुल कुमार (पा) सलमा आगा/आयशा जुल्का (नई खोज)
(प) (सं) नुसरत सईद/अनवर खान नीलम मेहरा/शहनाज/फिरोज खान/
(गी) रवीन्द्र रावल प्रसेनजीत /शफी इनामदार/राकेश बेदी/
(सं*) बाबूल बोस पुनीत इस्सर / किशोर आनंद
(छा) रूसी विलीमोरिया

मस्त कलन्दर (यूए) (17) रील

(नि (नि*) राहुल रावेल (पा) डिम्पल कापड़िया/शम्मी कपूर/धर्मेन्द्र/
(क) सलीम खान अनुपम खेर/अमरीश पुरी/प्रेम चोपड़ा
(गी) आनंद बक्षी शक्ति कपूर/शरद सक्सेना/मास्टर आशुतोष
(सं*) लक्ष्मीकांत - प्यारेलाल
(छा) राजन कोठारी

मजबूर लड़की (ए) (13) रील

(नि) नजीम रिजवी (पा) श्रीप्रदा/कुनिका/पंकज धीर/
(नि*) (क) राम पाहवा अंजना श्रीवास्तव/आलोकनाथ/
(गी) समीर वी. सुब्बाराव जावेद खान/चंद्रशेखर/नजीम रिजवी
(सं*) किशोर सिंह
(छा) व्ही. सुब्बाराव

मीठी मीठी रातें (मलयालम से डब) (ए) 12 रील

(बे) सालगिया एन्ड कंपनीज

मोहब्बत का नशा (मलयालम से डब) (ए) (14) रील

(बे) एन.एस. फिल्म इन्टरनेशनलस

मीना बाजार (ए) (15) रील

(नि) राज.व्ही. छाबड़ा (पा) रूपा गांगुली/पूनम दासगुप्ता/श्रद्धा वर्मा/
(नि*) पी. चंद्रकुमार आशालता/विक्रम राजदान (नई खोज)
(क) धर्मवीर राम संधू राज/सुधीर/ओमपुरी/विजू खोटे/
(गी)नरेश शर्मा इशरत अली/राजेश पुरी व शक्ति कपूर
(छा) किरण (मेहमान कलाकार)

मेरा दिल तेरे लिए (यू) (16) रील

(नि) श्रीमती शोहरेन भगत (पा) ममता/अंजना मुमताज/अरुणा ईरानी/
(नि*) (प) एस.ए चंद्रशेखर नीरज (नई खोज) शैली कपूर/रजामुराद/
(क) (स) शोभा/मिराक मिर्जा गोपी भल्ला/कादरखान/टीकू तलसानिया/
(गी) रवीन्द्र रावल अरुण वर्मा
(सं*) बाबुल बोस
(छा) एस. जयचन्द्रन

मजा मस्ती का (मलयालम से डब) (ए) 14 रील

(बे) ड्रीमलेंड इन्टरनेशनलस

मुद्दत की प्यास (मलयालम से डब) (ए) (12) रील

बे स्वीट ड्रीम फिल्म्स

मिलन की आग (ए) 15 रील

(नि) वी.सी.अग्रवाल - भूपेश्वर त्यागी (पा) श्रीप्रदा/रीता भादुड़ी/मीरा माधुरी/
(नि*) (क) के. आर. रंगन अंजली सेन/मदन जैन/भरत कपूर
(गी) (सं*) रवीन्द्र जैन

मरही का दीप (हिंदी संस्करण पंजाबी फिल्म का) (यू) 14 रील

(नि) राष्ट्रीय फिल्म विकास (पा) दीप्ति नवल/आशा शर्मा/
निगम और दूरदर्शन राजबब्बर/पंकज कपूर
(नि*) (प) सुरिन्दर सिंह परीक्षित साहनी/कंवलजीत
(क) गुरदयाल सिंह
(सं*) मोहिन्दर जीत सिंह
(छा) अनिल सहगल

मेरी जानेमन (ए) 15 रील

(नि) (नि*) चंदर शर्मा (पा) पूनम दासगुप्ता/सुनयना/शबनम/
(क) (स) कमला सी शर्मा/ बिन्दू/ कामथ/नीरज व महर्षि ठाकुर (नई खोज)
डॉ. अचला नागर कादर खान /शक्ति कपूर/मास्टर ओंकार
(गी) हसरत जयपुरी - अनवर सागर
(सं*) बाबुल बोस
(छा) राम अलम

माँ (यूए) 19 रील

(नि) अंजू शर्मा (पा) जयाप्रदा/साहिल चड्ढा/सुषमा सेठ/
(नि*) अजय कश्यप जितेन्द्र/अरुणा ईरानी/गुड्डी मारुति/
(क) (प) (स) श्याम गोयल विजु खोटे/गुलशन ग्रोवर/कादर खान/
(गी) हसरत जयपुरी देव कोहली- बी.एम.व्यास/इशरत अली/शक्ति कपूर/
रानी मालिक ब्राऊनी कुत्ता

(सं) अन्नू मल्लिक

(छा) के.व्ही. रमन्ना

मीरा का मोहन (यू) (17) रील

(नि) गुलशन कुमार (पा) अश्विनी भावे/लीना कामथ/

(नि*) के रविशंकर अविनाश बाधवान/प्राण/ब्रान्डो बक्षी/

(क) (प) (सं) ग्यानदेव अग्निहोत्री /आलोक नाथ/दीपक सराफ/राजहंस

शौकत हुसैन

(गी) इंदीवर

(सं*) अरूण पोडवाल

(छा) के. व्ही. रमन्ना

मौत की सजा (ए) रील

(नि) देवकी (पा) अनिता राज/सोनिका गिल/आलोक

(नि*) देवेन्द्र खण्डेलवाल नाथ/अशोक कुमार/देवेन्द्र/प्रेम बेदी/

(क) (प) व्ही के शर्मा/रमेश जोशी सतीश कौशिक/सुधीर पांडे/गिरिजा शंकर

(गी) माया गोविन्द रणजीत/दारासिंह

(सं*) अनूप जलोटा

(छा) एम. सम्पत

एन

नंबरी आदमी (यू) 17 रील

(नि) डिमप्पी (पा) किमी काटकर/संगीता बिजलानी/

(नि*) स्वरूप कुमार सोनू वालिया/अरुणा ईरानी/अंजना

(गी) वर्मा मलिक - अन्जान मुमताज/मिथुन चक्रवर्ती/

(सं*) बप्पी लाहिरी कुणाल गोस्वामी/सुरेश ओबेराय/

अमरीशपुरी/नवीन निश्चल/राकेश बेदी

नमकीन हनीमून (डब) (ए) 14 रील

(बे) सुरेश मुव्ही क्रिएशनस

नया जहर (ए) 15 रील

(नि) प्रवीण ठक्कर (पा) रागिनी/अलका कुबल/डिस्को शांति

(नि*) ज्योति स्वरूप (मेहमान कलाकार) उत्तम मोहंती

(क) सुदीप शताब्दी राय/अर्जुन/डॉ. श्रीराम लागू

(प) (सं) चार्थो मुखर्जी/इकबाल दुर्रानी नवीन निश्चल/अजीत वाच्छानी

(गी) इंदीवर-माया गोविंद

- विनोद महेन्द्र शैल चतुर्वेदी

(सं*) कल्याण जी आनंद जी

(छा) मनीष भट्ट

नरसिंहा (यूए) 20 रील

(नि) (नि*) (क) एन चंद्रा (पा) डिम्पल कपाड़िया/उर्मिला/निवेदिता जोशी

(प) कमलेश पांडे उषा नाइकर्णी/सन्नी देओल/

(गी) जावेद अख्तर ओमपुरी शफी इनामदार/अच्युत पोद्दार/

(सं*) लक्ष्मीकांत - प्यारेलाल सतीश शाह/बृज गोपाल/शैल चतुर्वेदी

(छा) विनोद प्रधान

नाचनेवाले गानेवाले (यू) (19) रील

(नि) (नि*) (क) बी. सुभाष (पा) शीबा/साथी गांगुली/सरला

(प) (सं) महेन्द्र देहलवी/कादर खान येवलेकर/शाहबाज/कादरखान/रजा

(गी) महेन्द्र देहलवी - अन्जान मुराद/अनंत महादेवन/अवतार गिल/

(सं*) बप्पी लाहिरी राजा दुग्गल

(छा) राधू करमकर

नसीबवाला (यू) (15) रील

(नि) देवीन्दर गिल (पा) नूतन/शोमा आनंद/बिन्दू/

(नि*) कल्पतरु, आदित्य पंचोली/अनुपम खेर/अशोक

(क) (प) (सं) के.वी. पाठक/सराफ/ गुलशन ग्रोवर/श्रीराम लागू/

इकबाल दुर्रानी आलोकनाथ/शफी इनामदार

(गी) अन्जान - इंदीवर - समीर

(सं*) अकबर बालम

निशानी (यूए) (16) रील

(बे) गीता फिल्म्स

नागमणि (यू) 17 रील

(नि) गुलशन कुमार (पा) शिखा स्वरूप/अरुणा ईरानी/कुनिका

(नि*) व्ही. मेनन अर्चना पूरणसिंह/डिस्को शांति/ सुमित

(क) महेन्द्र देहलवी सहगल/आलोकनाथ/ किरण कुमार

(गी) संतोष आनंद - सतीश शाह/राकेश बेदी/गजेन्द्र चौहान/

समीर देव कोहली

(सं*) अन्नू मल्लिक मंगल ढिल्लों /तेज सप्रू

(छा) मंगेश सांवत

नेत्रहीन साक्षी (यू) 12 रील

भारतीय बाल फिल्म समिति

नामचीन (ए) 15 रील

(नि) (नि*) (क) अजीत देवानी (पा) एकता/भानू/दया डोंगरे/आरसी/

(प) (सं) सलीम हैदर/एस.मिराक मिर्जा आदित्य पंचोली/रजामुराद/सतीश

(गी) देव कोहली-शैलेन्द्र शाह/दिलीप ताहिल गुलशन ग्रोवर

(संड) अन्नू मल्लिक /राजेन्द्र नाथ/बीरबल/ श्रीप्रदा

(छा) मनीष भट्ट (मेहमान कलाकार)

नेहरु द ज्वेल ऑफ इंडिया

(नि) राजन लाल (पा) प्रताप शर्मा/तनूजा/

(नि*) (क) कुमार किरण गिरीश कर्नाड/रीता भादुड़ी

(सं) डॉ. राही मासूम रजा अनुपम खेर/इफ्तेखार/

(गी) मजरूह सुल्तानपुरी - अली सरदार जाफरी अमजद खान

(सं*) सलील चौधरी

(छा) नदीम खान

नाग सुंदरी (डब) (यू) (15) रील.

(वे) विजय सरवण फिल्मस

ओ

कोई फिल्म नहीं.

पी

प्यार का देवता. (यू) (18) रील.

(नि) ललित कपूर (पा) माधुरी दीक्षित/मौसमी चटर्जी/रूपा
(नि*) के. बापैया - गांगुली/निरुपा रॉय/अरुणा ईरानी
(क) बाल मुरूगन किशोरी शहाणे/मिथुन चक्रवर्ती/
(प) (सं) - ज्ञानदेव अग्निहोत्री/ सुरेश ओबेरॉय/राज किरण/असरानी/
कादर खान/ विजुखोटे/सत्येन कप्पू/मंगल ढिल्लों
(गी) आनंद बक्षी .
(सं*) लक्ष्मीकांत प्यारेलाल
(छा) ए वेंकट

पत्थर के इन्सान. (यूए) (16) रील.

(नि) (नि*) (प) सोमु मुखर्जी (पा) श्री देवी/ पूनम ढिल्लो/ अंजना मुमताज
(क) /(सं.) के भाग्यराज/ मुनमुन सेन/अमिता नांगिया/विनोद
तनवीर खान. खन्ना/ जैकी श्राफ/सईद जाफरी/
(गी) इंदीवर/अन्जान - ओम शिवपुरी/महेश आनंद/सतीश शाह/
(सं*) बप्पी लाहिरी
(छा) आलोक दासगुप्ता

पत्थर के फूल (यू) (20) रील.

(नि) जी.पी. सिप्पी (पा). रविना टंडन/रीमा लागू/सलमान खान/
(नि*) अनंत बालानी. विनोद मेहरा/किरण कुमार/मनोहर सिंह
(क)(प) सलीम खान. विवेक वासवानी/गोगा कपूर/अरुण
(गी) देव कोहली - रविन्दर रावल बक्षी/दिनेश हिंगू
(सं*) राम लक्ष्मण
(छा) एल. नागराजन - निर्मल जैन.

पाप पेट का (डब (ए) (12) रील.

(बे) स्वीट ड्रिम फिल्म्स.

पक्का बदमाश (यू) (14) रील

(नि) (क) तेजनाथ जार (पा) दिव्या राणा/किरण जुनेजा/सुरेश
(नि*) ए सलाम. - ओबेरॉय/करण शाह/अमजद खान/
(प) एस. पी. बक्षी शरद सक्सेना/
(गी) कुलवंत जानी - हसरत जयपुरी- असद भोपाली
(सं*) उषा खन्ना.
(छ) श्याम सिपोसकर

प्रतिज्ञाबद्ध

पिता (यू) (14) रील.

(बे) गोविन्द निहलानी.

पाप की आँधी (यू) (16) रील.

(नि) रमेश गवलानी. (पा) फरहा/अमृता सिंह (मेहमान कलाकार) बीना
(नि*) मेहुल कुमार अंजना मुमताज/धर्मेन्द्र/आदित्य पंचोली
(क) ललित महाजन शक्ति कपूर/राजकिरण/रजामुराद/किरण
(गी) आनंद बक्षी कुमार/पुनीत इस्सर/सत्येन कप्पू/मैक मोहन
(सं*) लक्ष्मीकांत - प्यारेलाल
(छा) रूसी बिलिमोरिया.

प्यार हुआ चोरी चोरी (यू) (16) रील.

(नि) रमेश राव (पा) गौतमी (नई खोज) /शिखा स्वरूप/शुभा खोटे/
(नि*) के बापैया मिथुन चक्रवर्ती/अनुपम खेर/शफी इनामदार/
(क) - प्रियदर्शन जावेद खान/शक्ति कपूर/युनुस परवेज/
(प) (सं) अनवर खान जूनियर मेहमूद/मुश्ताक मर्चेन्ट/
(गी) आनंद बक्षी
(सं*) लक्ष्मीकांत प्यारेलाल
(छा) ए. वेंकट

प्रतिज्ञाबद्ध (यू) (18) रील.

(नि) बी. आर चोपड़ा. (पा) सुजाता मेहता/नीलम/अमिता नांगिया
(नि*) रवि चोपड़ा बीना/सुनील दत्त/ मिथुन चक्रवर्ती/
क प सं सचिन भौमिक असरानी/कुमार गौरव/शफी इनामदार/
सतीश भटनागर डॉ राही अनुपम खेर/दिलीप ताहिल/युनुस परवेज/

(गी) हसन कमाल - सतीश भटनागर

(सं*) - कल्याणजी आनंद जी.

(छा) धरम चोपड़ा

प्रेम कैदी (यू) (16) रील.

(नि) डी. रामा नायडू. (पा) करिश्मा कपूर व हरीश (नई खोज) /रमाविज

(नि*) के मुरलीमोहन राव अंजना मुमताज/शफी इनामदार/परेश रावल/

(क) (प) सं) परचुरे बंधु/ असरानी/भारत भूषण/हरीश पटेल/

डॉ राही मासूम रजा दिलीप ताहिल/

(गी) समीर

(सं*) आनंद मिलिन्द

(छा) के. रवीन्द्र बाबू.

फूल बने अंगारे (यू) (17) रील.

(नि) (नि*) के.सी. बोकाड़िया. (पा) रेखा/बिंदू/बीना/रजनीकांत/प्रेम

(क) एम. सुब्बय्याह. - चोपड़ा/शफी इनामदार/परीक्षित साहनी/

(प)/(सं) शणमुघसुंदरम्/अनवर खान आलोकनाथ/अपराजिता/चरण राज/

(गी) अन्जान दिलीप ताहिल/

(सं*) बप्पी लाहिरी.

(छा) बाबू.

ईरानी/

(क) बाल मुरूगन किशोरी शहाणे/मिथुन चक्रवर्ती/

(प) (सं) - ज्ञानदेव अग्निहोत्री /कादर खान/सुरेश ओबेरॉय/राज किरण/

(गी) आनंद बक्षी . असरानी//विजुखोटे/सत्येन कप्पू/

(सं*) लक्ष्मीकांत प्यारेलाल मंगल ढिल्लों

(छा) ए. वेंकट.

प्रतिकार (यू) (16) रील.

(नि) फिरोज ए. नाडियादवाला. (पा) राखी/माधुरी दीक्षित/सोनू वालिया/

(नि*) टी. रामाराव. सुष्मिता मुखर्जी/निरुपा रॉय/ अरुणा ईरानी/

(क) प्रभात रॉय. उर्मिला भट्ट/अनिल कपूर/ मोहसिन खान/

(प) (सं) परचुरे बंधु/ अनवर खान. परेश रावल/लक्ष्मीकांत बेर्डे/ ओमप्रकाश/

(गी) आनंद बक्षी असरानी/सतीश शाह /अमिता नांगिया

(सं*) बप्पी लाहिरी.

(छा) व्ही. दुर्गा प्रसाद.

प्यासी अप्सरा (डब) (ए) (12) रील.

(बे) सालगिया एन्ड कंपनी.

पापा आए खुशियाँ लाए (यू) (9) रील.

(बे) भारतीय बाल फिल्म समिति.

पापी परिन्दा (डब) (ए) (14) रील.

किक्कू आर्टस्

पीताम्बर (ए) (19) रील.

(नि) रावजी ए. लिम्बानी. (पा) जया स्वामी/ रवि किशन (नई खोज)

प्रतिकार

(नि*) इमरान. शैला खान/जया माथुर/जगदीप/

(क) (गी) खालिद. किरण कुमार/शिवा/रजा मुराद/युनुस

(सं*) सूरज किरण परवेज/

(छा) अशोक राव.

प्यार भरा दिल. (यू) (16) रील.

(नि) अनीस. (पा) दीपा/तनूजा/रीमा लागू/तुषार वोहरा/

(नि*) चंद्रा बारोट. आलोक नाथ/ रजा मुराद/ राकेश बेदी/

(क) (प) सं) कौशल भारती /नीला/महेश राज/नवनीत (नई खोज)

(गी) योगेश - हसरत जयपुरी हरीश भीमानी/मास्टर रजत/

(सं*) निखिल विनय

(छा) दिलीप दत्त

प्यार की मस्ती (मलयालम से डब) (ए) (10) रील.

(बे) ग्रेट शिवा इन्टरनेशनल्स

प्रेम जंग. (तेलुगु से डब) (यूए) (15) रील.

(नि) अशोक होंडा. (पा) नागार्जुन/अमला/भारती/

(नि*) एस.व्ही राजेन्द्र सिंह अमजद खान/देवराज/

(प)(सं) एस शुक्ला.

(गी) समीर

(सं*) हम्सा लेखा

(छा) पी.एस. प्रकाश.

फूल और काँटे (ए) (19) रील.

(नि) दिनेश पटेल (पा) मधु/अजय देवगण (नई खोज)/

(नि*) कूकू कोहली अरुणा ईरानी/अपराजिता/ रघुराज/

(क) (प) इकबाल दुर्रानी जगदीप/सत्येन कप्पू/आरिफ खान/

(गी) समीर - रानी मलिक अमरीश पुरी/रजामुराद/इकबाल दुर्रानी/

(सं*) नदीम श्रवण सुरेश चटवाल /पंकज बेरी/गोगा कपूर
(छा) थॉमस जेवियर

प्रहार. (यूए) 16 रील
नि. सुधाकर बोकाड़े (पा) डिम्पल कापाड़िया/ माधुरी दीक्षित/शिवाली
नि* नाना पाटेकर देशपांडे/वैशाली दांडेकर/नाना पाटेकर/
(क) (प) / (सं) सुजीत सेन नाना पाटेकर/हृदय लानी. हबीब
तनवीर/पारितोष/अच्युत पोद्दार/
(गी) आनंद बक्षी - मंगेश कुलकर्णी कर्नल बी.के. सिंह चंद्रशेखरन/कर्नल
सं* लक्ष्मी कांत प्यारेलाल. जे गोंझालेवीस/अंकुश मोहित/
छादेबू देवधर

प्यार का साया (यूए) (15) रील.
(नि) (क) बी. सुभाष (पा). अमृता सिंह/शीबा/मोहनिश बहल.
(नि*) विनोद वर्मा राहुल रॉय/बृज गोपाल/घनश्याम/
(प) (सं) मुश्ताक मर्चेन्ट अवतार गिल/जॉनी विस्की/
डॉ राही मासूम रजा (अनंत महादेवन/
(गी) समीर
(सं*) नदीम - श्रवण.
(छा) आलोक दास गुप्ता.

प्यासी दिलरुबा (मलयालम से डब) (ए) (11) रील.
(बे) हेमा आर्ट पिक्चर्स

क्यू

कुरबानी रंग लाएगी (यूए) (15) रील.
(नि) के. के. तलवार (पा) पद्मिनी कोल्हापुरे/पूनम/
(नि*) राज सिप्पी. ढिल्लो/काजल किरण/संजय दत्त/
(क) प्रयाग राज शक्ति कपूर/सुजीत कुमार/सत्येन कप्पू/
(प) (सं) मोहन कुमार रवि कपूर / कादरखान/पेंटल/गुरुबचन/
(गी) गुलशन बावरा
(सं*) लक्ष्मीकांत प्यारेलाल
(छा) अनवर सिराज

कातिल हुस्न का (मलयालम से डब) (यू) (10 रील.
(वे.) स्वीट ड्रिम्स फिल्मस्

आर

रूहानी ताकत (ए) (14) रील
(नि) दीपक शर्मा (पा) श्रीप्रदा/नीलम मेहरा/संध्या राज/
(नि.) (क) (प) मोहन भाखरी. नीता कपूर/गुरदास मान/जावेद खान
(सं) एम. ठाकूर सूरज चड्ढा/शगुफा अली/ के. के. राज/
(गी) समीर मंजर सबुरी किरण कुमार/जगदीप/
(सं*) नरेश शर्मा.
(छा) अरविन्द भाखरी.

रामवती (यू) (16) रील.
(नि) कांति शाह (पा) उपासना सिंह/रीमा लागू/संजीवनी
(नि*) यश चौहान. विडकर/सीमा वाज/अनुपम खेर
(क) (सं) अमृत आर्यन/बशीर बब्बर सुनील पुरी/ किरण कुमार/सतीश
(गी) वर्मा मलिक/ दिलीप ताहिल महन्द्र देहलवी शाह/कादरखान/शैल
(छा) विनोद बारोट. चतुर्वेदी/अवतार गिल/

रामगढ़ के शोले यू (13) रील
(नि) राजेन्द्र एस जरीवाला (पा) भानुशाली/उपासना/ नरगिस/
(नि*) (क) अजीत देवानी. मेनका/विजय कुमार सक्सेना/
(सं) मिराक मिर्जा आनन्द कुमार/नवीन राठौर/किशोरी/
(गी) देव कोहली दिलीप ताहिल हरीश पटेल अमजद खान/
(सं*) अन्नू मल्लिक, बीरबल/जूनियर मेहमूद/ जॉनी लीवर/
(छा) मनीष भट्ट

रुक्मावती की हवेली (यूए) (15) रील.
(वे) गोविन्द निहलानीज

रणभूमि (यू) (15) रील.
(नि) विजय सिन्हा (पा) डिम्पल कापाड़िया/ नीलम/अमिता
(नि*) दीपक सरीन नांगिया/ऋषि कपूर/जितेन्द्र/
(क) के.के. सिंह रमेश भल्ला शत्रुघ्न सिन्हा/ शेखर सुमन/सईद जाफरी/
(गी) सन्तोष आनंद/ गुलशन ग्रोवहर/ अंजन श्रीवास्तव
असद् भोपाली/ के.के. सिंह मंगल ढिल्लों।
(सं*) लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल
(छा) रमेश भल्ला

रुपए दस करोड़ (यूए) (17) रील
(नि) वामन के. देशमुख (पा) अमृता सिंह/सोनू वालिया/दीपिका/
(नि*) सिकन्दर भारती अमिता नागिया/राजेश खन्ना/चंकी पांडे/
(क) (प) (सं) शबद् कुमार/तनवीर खान अविनाश वाधवान/सदाशिव अमरापुरकर/
(गी) अन्जान सिकन्दर भारती ओम शिवपुरी/किरण कुमार/सुधीर दलवी/
(सं*) बप्पी लाहिरी सत्येन कप्पू/विजू खोटे/
(छा) कमलाकर राव

एस

सौगन्ध (यू) (16) रील
(नि) अशोक अद्नानी (पा) राखी/शांतिप्रिया/रूपागांगुली/
(नि*) राज सिप्पी बीना/अमिता नागिया/अक्षयकुमार/
(क) पी.डी. मेहरा पंकज धीर/मयूर/कंवलजीत/मुकेश खन्ना/
(प) (सं) इकबाल दुर्रानी पेंटल
(गी) समीर
(सं*) आनंद मिलिन्द
(छा) अरविन्द लाड

शिकारी (यू) (17) रील (भारत-सोवियत सह निर्माण)

(नि) परवेश सी. मेहरा (पा) वर्षा उसगाँवकर/नताशा/अंजना-

(नि*) उमेश मेहरा - लतीफ फैजीण्ह मुमताज/मिथुन चक्रवर्ती/नसीरूद्दीन शाह/

(क) विनय शुक्ला - कोस्कोव गुलशन ग्रोवहर/रज़ा मुराद/

(गी) आनंद-बक्षी अच्युत पोद्दार/अमरीश पुरी/आबिद/

(सं*) अन्नु मल्लिक दारा सिंह /विनोद मेहरा (मेहमान कलाकार)

(छा) एस.पप्पू - एल ट्राविस्की लिलीपुट

स्वामी अय्यप्पा (तामिल से डब) (14) रील

(बे) विजय आदित्य क्रिएशन्स

शिवा दादा (डब) (यूए) 15 रील

(नि) दिनेश सालगिया (पा) शांति प्रिया/सिल्क स्मिता/

(नि*) के. राघवेन्द्रराव नागार्जुन

(क) सत्यमूर्ति

(सं) वेणू कुमारी

(गी) नक्शलायलपुरी

(सं*) रवीन्द्र जैन - हंसलेखा

(छा) के. एस. प्रकाश

सिसकती कलियाँ (मलयालम से डब) (ए) (14) रील

(बे) ड्रीमलेंड इन्टरनेशनलस्

शिव-राम (यूए) (17) रील

(नि) जय शर्मा (पा) संगीता बिजलानी/एकता/नीतापुरी/

(नि*) जगदीश ए शर्मा जितेन्द्र/जावेद जाफरी/आदित्य पंचोली/

(क) (प) (सं) एस खान/अनवर खान किरण कुमार/सदाशिव अमरापुरकर/

(गी) अनवर सागर यशवन्त दत्त/

(सं*) राजेश रोशन

(छा) जो डिसूज़ा

स्वर्ग यहाँ नर्क यहाँ (यू) (19) रील

(नि) राजीव कुमार (पा) सुमलता/शिल्पा शिरोडकर/शम्मी/

(नि*) (क) विमल कुमार गुड्डी मारुति/मिथुन चक्रवर्ती/

(प) (सं) ज्ञानदेव अग्निहोत्री/ कादरखान गुलशन ग्रोवहर/मंगल ढिल्लों/

(गी) इंदीवर कादरखान /अवतार गिल/भारत भूषण/

(सं*) राजेश रोशन मास्टर अमित/

(छा) अनिल ढंढा

सौदागर (यू) (21) रील

(नि) (नि*) (क) सुभाष घई (पा) मनीषा कोइराला/दीप्ति नवल/दीना

(प)/(सं) सचिन भौमिक/कमलेश पांडे पाठक/पल्लवी जोशी/शुभा खोटे/मालविका

(गी) आनंद बक्षी तिवारी/दिलीप कुमार/राजकुमार/विवेक मुशरान/

(सं*) लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल अनुपम खेर/अमरीश पुरी/मुकेश खन्ना/

(छा) अशोक मेहता गुलशन ग्रोवहर/जैकी श्राफ (मेहमान कलाकार)

शंकरा (यू) (16) रील

(नि) डी. तन्ना (पा) नीलम/सबहा/सुषमा सेठ/सुलभा-

(नि*) सुदर्शन नाग देशपांडे/जुगनू/सन्नी देओल/शक्ति कपूर/

(क) (सं) जममोहन कपूर /विजय सिन्हा किरण कुमार/परेश रावल/

(गी) हसन कमाल - बोस्की प्रभु राजेश पुरी/श्रीप्रदा

(छा) श्याम राव

सपनों का मंदिर (यू) (15) रील

सुभाष घई की फिल्म सौदागर
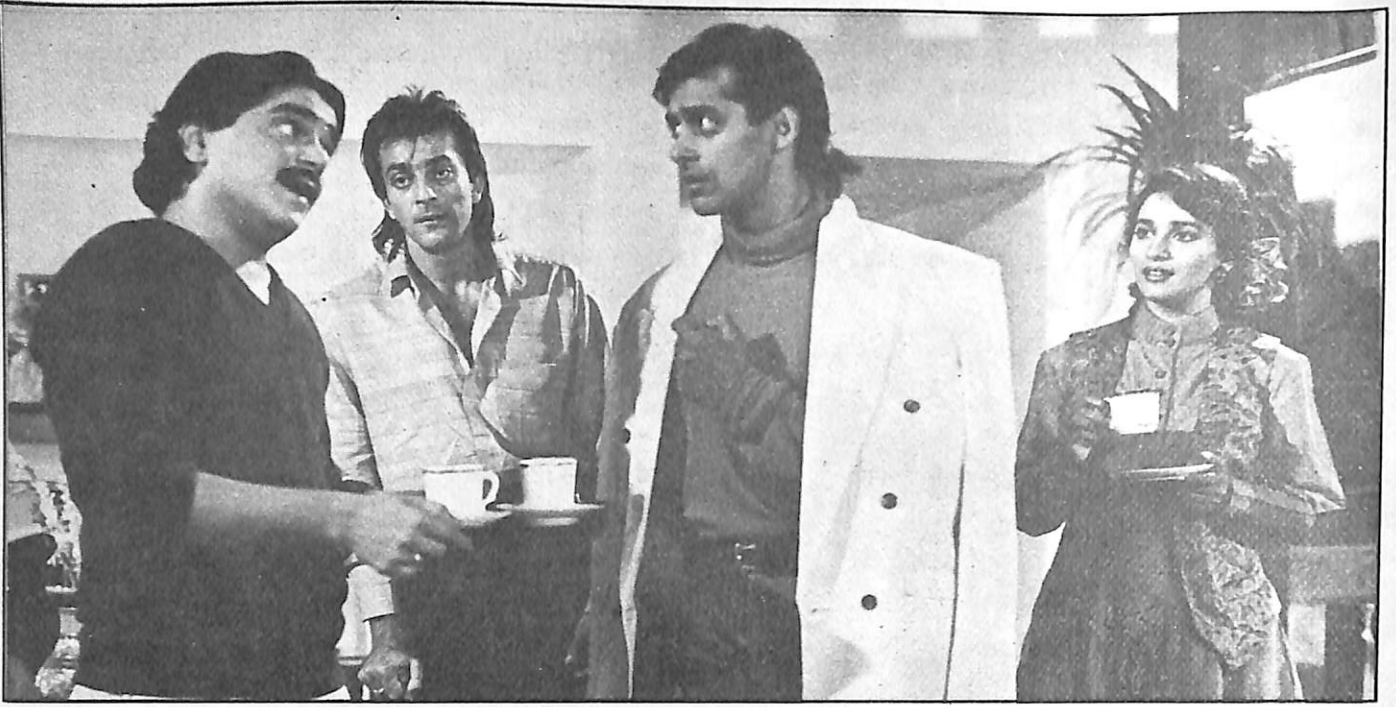
साजन

(नि) सुरेश कुमार जैन (पा) जयाप्रदा/श्रीप्रदा/जितेन्द्र/
(नि*) प्रदीप जैन सुमित सहगल/असरानी/
(क) (प) (सं) मुकेश बक्षी गुलशन ग्रोवहर/कादर खान/
(गी) हसन कमाल- समीर जॉनी लीवर/मास्टर सन्नी (नई खोज)
(सं*) लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल
(छा) एस.एल. शर्मा

साजन (यू) (19) रील
(नि) सुधाकर बोकाड़े (पा) माधुरी दीक्षित/एकता/रीमा लागू/अंजना-
(नि*) (छा) लारेन्स डिसूजा - मुमताज/दीपिन्ती/सलमान खान/संजय दत्त/
(क) (प) रीमा राकेश नाथ कादर खान/लक्ष्मीकांत लक्ष्मीकांत बेर्डे/दुग्गल/
(गी) समीर- फैज अनवर मास्टर सन्नी/मास्टर इमरान/तेज सप्रू/
(सं*) नदीम श्रवण

साथी (ए) (17) रील
(नि) मुकेश दुग्गल (पा) वर्षा उसगाँवकर/सोनी राजदान/आदित्य
(नि*) महेश भट्ट पंचोली/मोहसिन खान/अनुपम खेर/
(क) (प) (सं) राबिन भट्ट- आकाश खुराना जावेद खान/परेश रावल
(गी) समीर हसरत जयपुरी अवतार गिल/अनुराधा पौडवाल
नवाब आरजू (मेहमान कलाकार)
(सं*) नदीम श्रवण
(छा) प्रवीण भट्ट

सौ करोड़ (यू) (२०) रील
(नि) (निड) (क) देव आनंद (पा) फातिमा शेख/अनन्य मुखर्जी(नई खोज)
(सं) दिलीप परदेशी सोनिका गिल/देव आनंद/
(गी) सूरज सनीम रमण कपूर (नई खोज) /शफ़ी इनामदार/
(संड) बप्पी लाहिरी नसीरूद्दीन शाह/अनुपम खेर/डॉ. श्रीराम लागू/
(छा)डी.के. प्रभाकर विक्रम गोखले

सड़क (ए) (१६) रील
(नि) मुकेश भट्ट (पा) पूजा भट्ट/नीलिमा अजीम/नादिरा/
(निड) महेश भट्ट सोनी राजदान/संजय दत्त/जावेद खान/
(क) राबिन भट्ट- आकाश खुराना सदाशिव अमरापुरकर/.
(गी) समीर - सुरिन्दर साथी- रानी मलिक मनोहर सिंह/अवतार गिल/
(संड) नदीम - श्रवण दीपक तिजोरी
(छा) प्रवीण भट्ट

स्वर्ग जैसा घर (यू) (१५) रील
(नि) मेहमूद नजीर (पा) सोनम/अनिता राज/सोनूवालिया/
(निड) स्वरूप कुमार स्वप्ना/राज बब्बर/सुमित
(क) केशव राठोर सहगल/आसिफ शेख/सदाशिव
(गी) मजरूह सुल्तानपुरी अमरापुरकर/राकेश बेदी/नवीन निश्चल/
(संड) बप्पी लाहिरी गुलशन ग्रोवर/भारत भूषण/
(छा) अनिला मित्रा

सोने की जंजीर (ए) (१५) रील
(नि) अर्जुन मूलचंदानी (पा) वर्षा उसगाँवकर/सबीना/
(निड) शिवकुमार सुषमा सेठ/प्रसन्नजीत/

(क) राम केलकर - अनवर खान आसिफ शेख/लक्ष्मीकांत बेर्डे/
(गी) समीर
(सं*) आनंद - मिलिन्द

सैयाँ के गाँव में (यू) (४) रील

(बे) राधा श्री वैधस्

साँसों की सरगम (यू)

(नि) जे.पी. परदेशी (पा) रीना/सलमा/नेहा कपूर/
(निङ) (क) एस. के. चांद- आनंद त्रिपाठी रक्षा मेहता/अर्जुन थापर/
(गी) आनंद त्रिपाठी - एम.एल.राही/प्रकाश मवकर जितेन्द्र सहानी/
(m‡b*) एस. सुरेन्द्र चरणजीत भूपेन्द्र अशोक बांठिया/संजय सिंह
(छा) के.सी. राजा

टी

तू मेरी बाँहों में (डब) (ए) (14) रील

(बे) आरआर फिल्म इन्टरनेशनलस

टेस्ट ट्यूब बेबी (ए) (14) रील

(नि) (नि*) मोहन सुलीभवी (पा) सीमा वज/गीताजंली/
(गी) कुलवन्त जानी रेखा परमार/रामसिंह
(सं*) एस मदन

तकदीर के रंग (यू) (14) रील

(नि) गुरमेल सिंह वस्म
(नि*) अशोक मान
(सं*) सी.के. चौहान

तू मेरी मैं तेरा (मलयालम से डब) (ए) (14) रील

(बे) एस.एन.एस. फिल्म

त्रिनेत्र (ए) (17) रील

(नि) त्रिलोचन एस. बवेजा (पा) दीपा साही/शिल्पा शिरोडकर/अंजना-
(नि*) (क) हेरी बवेजा - मुमताज/मिथुन चक्रवर्ती/अनुपम खेर/
(प)/ (सं) धर्मवीर राम/ कादर खान/अमरीशपुरी/लक्ष्मीकांत बेर्डे/
डॉ. राही मासूम रजा
(गी) समीर विजू खोटे/मुकरी/धर्मवीर/मैक मोहन/
(सं*) आनंद - मिलिन्द शक्ति कपूर
(छा) दामोदर नायडू

तुलसीदास (यू) (16) रील

(नि) अमरजीत बांगिया (पा) नवनी परिहार/लीनी झंबवड़कर/
(नि*) आत्माराम वीरेन्द्र सिंह/नारायण भंडारी/
(क) (प) आत्माराम - जयशंकर श्रीवास्तव शाहनवाज/मास्टर संदीप/
(गी) मीरा - पुष्पा वर्मा व तुलसीदास के मूल पद
(सं*) पंडित रामनारायण
(छा) युसूफ कोंडा जी

यू

कोई फिल्म नहीं

वी

विष्णु - देवा (यू) (18) रील

(नि) शाकिर व शकील नूरानी (पा) नीलम/संगीता बिजलानी/कुनिका/
(नि*) (प) के. पप्पू अरुणा ईरानी/सन्नी देओल/आदित्य
(स) अनवर खान पंचोली/आलोकनाथ/कुलभूषण
(गी) अन्जान खरबंदा/डैनी/बॉब क्रिस्टो/विजू /
(सं*) राजेश रोशन खोट
(छा) सुशील चोपड़ा

वाल्मिकी (यू) (14) रील

(नि) बसंत बी.शाह (पा) टीना घई/सुरेश ओबेरॉय/
(नि*) अरविन्द भट्ट जगदीश/
(क) (प) (स) केशव राठौड़
(सं*)सी. अर्जुन
(छा) चंदू देसाई

विवाहित जीवन (मलयालम से डब) (ए) (14) रील

(बे) विजय गणपती आर्टस्

वासना (ए) (14) रील (पा) श्रीप्रदा/नयनतारा/मंजुश्री/रीता भादुड़ी/
(नि) रघुनाथ सिंह संगीता बानो/रजनीबाला/
(नि*) (क) आर ठाकुर कुणाल/राजेश पुरी/गजेन्द्र चौहान/
(प) (सं) ओ.पी. शुक्ला राजेश निगम/जूनियर मेहमूद/बब्बन
(गी) सुरूर लखनवीर
(सं*) अजय स्वामी
(छा) ए लतीफ

विषकन्या (ए) (16) रील

(नि) सोलिला परीदा (पा) पूजा बेदी/मुनमुन सेन/कुणाल
(नि*) (क) जगमोहन मुंदड़ा गोस्वामी/आकाश खुराना/सतीश कौशिक
(प) / (सं) धर्मवीर राम/ सुरेन्द्र पाल/अनंत महादेवन/भरत कपूर/
डॉ. अचला नागर हुमा खान/कबीर बेदी (मेहमान कलाकार)
(गी) गुलरेज
(सं*) बप्पी लाहिरी
(छा) एस.एम. अनवर

(डब्ल्यू)

वो सुबह कभी तो आयेगी (यू) (15) रील

(बे) जे.के. फिल्म इन्टरप्राइजेस

एक्स

कोई फिल्म नहीं

ये आग कब बुझेगी

वाय

योद्धा (यू) (16) रील

(नि) करीम मोरानी-	(पा)	संगीता बिजलानी/शिल्पा शिरोडकर/
अली मोरानी-सुनील सूरमा		सनम (नई खोज)/ अंजना मुमताज/
(नि*) राहूल रवेल		संजय दत्त/सन्नी देओल/शफी इनामदार/
(क) (प) के.के. सिंह		परेश रावल/अंजन श्रीवास्तव/
(गी) आनंद बक्षी		अभिनव चतुर्वेदी/ अन्नू कपूर/
(सं*) बप्पी लाहिरी		

(छा) रंजना कोठारी अशोक गुंजाल प्रवीण व पुष्पल भट्ट

ये आग कब बुझेगी (यू) (18) रील

(नि) (नि*) सुनील दत्त	(पा)	रेखा/बिन्दु/दीना पाठक/शीबा (नई खोज)
(क) (प) भारत बी. भल्ला		जमुना/सुनील दत्त/कबीर बेदी/रणजीत/
(स) डॉ. राही मासूम रजा		शक्ति कपूर/प्रदीप कुमार/सत्येन कपूर/
(गी) (सं*) रवीन्द्र जैन		इफ्तिखार / भारत भूषण

(छा) रामचंद्र सिंह - बोस्की

यारा दिलदारा (यूए) (17) रील

(नि) श्रीमती तेरेसा मिर्जा	(पा)	रुचिका पांडे/रोहिणी हटंगडी/अमिता
(नि*) (क) मिर्जा बंधुगण		नागिया/सीमा वाज/आसिफ शेख/ सईद
(गी) मजरूह सुल्तानपुरी -		शाहिद बिजनोरी शाहरूख मिर्जा
जाफरी/कादरखान/		अमजद खान/ अशोक
(सं*) जतीन-ललित		सराफ/ लक्ष्मीकांत बेर्डे/शक्ति कपूर/

(छा) दीपक दुग्गल

जेड

कोई फिल्म नहीं

☐ **प्रस्तुति पी.आर. जोशी**

वर्ष 1991 का प्रमुख फिल्मी घटनाक्रम

- **खलनायक** तथा चरित्र अभिनेता प्राण ने फिल्मी जीवन के पाचस साल पूरे किए। 'यमला जाट' फिल्म के कैरियर आरंभ करने वाले प्राण अब तक तीन सौ से अधिक फिल्मों में काम कर चुके हैं। खानदान/जिस देश में गंगा बहती हैं/मधुमती/जंजीर/विक्टोरिया नं. 203/बॉबी/उपकार उनकी उल्लेखनीय फिल्में हैं।

- **भारत** की प्रथम हिन्दी फिल्म मासिक पत्रिका 'रंगभूमि' ने अपनी (1941-1991) स्वर्ण जयंती मनाई।

- भारत कर 22वाँ अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह 10 से 20 जनवरी 91 तक मद्रास में आयोजित।

- **'अंजलि'** मणि रत्नम् द्वारा निर्देशित तथा पांच राष्ट्रीय पुरस्कार से सज्जित तमिल- हिन्दी फिल्म का आस्कर अवार्ड के लिए नामांकन। **रणधीर कपूर** द्वारा निर्मित निर्देशित हिना फिल्म का नामांकन भी।

- **श्यामली** चार वर्षीय बाल नायिका (अंजलि फिल्म) भारत की सबसे छोटी लेकिन सबसे अधिक आय कर अदा करने वाली तारिका घोषित।

- **तीस** के दशक में निर्मित एवं चर्चित सिनेमा घर 'ऑपेरा हाऊस, (बम्बई) हमेशा के लिए बंद।

- फिल्मकार व्ही. शांताराम ने, प्रभात फिल्म कंपनी से, अलग होकर 1941 में राजकमल कलामंदिर की नींव रखी थी। शंकुन्तला/दो आँखे बारह हाथ/नवरंग/ झनक-झनक पायल बाजे/तीन बत्ती चार रास्ता/पिंजरा जैसी श्रेष्ठ फिल्म देने वाला यह संस्थान अपना स्वर्ण जयंती वर्ष मना रहा है।

- **पाँच** साल तक पति-पत्नी की तरह रहते हुए कमल हासन और सारिका ने अपने रिश्तों को विवाह बंधन में बाँध लिया।

- **बी.एल. सरकार** द्वारा कलकत्ता में 1931 में स्थापित न्यू थिएटर कंपनी ने अपनी डायमंड जुबली मनाई। फिल्मों में पार्श्व गायन की परम्परा इसी थिएटर ने आरंभ की थी। कानन देवी/जमुना/पहाड़ी सन्याल/के.एल.सहगल/पंकज मल्लिक/जगमोहन/बिमल रॉय/के सी. जेड. इसी कंपनी की देन हैं।

- **तीन** सालों तक लगातार फिल्म 'शोले' के प्रदर्शन का सम्मान अर्जित करने वाला तथा बम्बई का गौरव **मिनर्वा** लगातार हानि के कारण बंद।

- **आशा भोसले** ने (पार्श्व गायिका) 'स्वर गंधार संगीत कोष' के अनुसार अपनी दीदी से अब तक 5454 गीत अधिक गाए हैं।

- **जया बच्चन (भादुड़ी)** पुनः भारतीय बाल चलचित्र समिति की अध्यक्ष नियुक्त।

- **त्रिवेन्द्रम** में 14 से 23 नवम्बर की अवधि में सातवाँ अन्तराष्ट्रीय बाल फिल्म समारोह आयोजित।

- **रामायण** धारावाहिक की सीता (दीपिका चिखलिया) और रावण (अरविन्द त्रिवेदी) गुजरात से लोकसभा के लिए निर्वाचित। सुनीलदत्त ने अपनी बम्बई लोकसभा सीट पर पुनः विजय प्राप्त की।

- **महाराष्ट्र** सरकार ने नासिक नगर पालिका के माध्यम से **"दादा साहब फालके** स्मृति प्रोजेक्ट" के लिए "पाँडव गुफाएँ" बम्बई आगरा मार्ग पर 11 हेक्टर भूमि प्रदान की। इस भूमि पर दादा साहब फालके का स्मारक का निर्माण होगा।

- **फिल्मों** से बिग (बड़ा) बातें बड़ी-बड़ी होती हैं। बिग बजट /बिग स्टार/बिग स्क्रीन/हर काम बड़ा करने में चक्कर में कुछ निर्माता अपनी शान समझते हैं। वर्ष 1991 में अधिक लम्बाई रिलीज हुई फिल्में - नरसिंहा (5876) फुट सौदागर (5845), फरिश्ते (5382), लम्हें (5193), अकेला (5191), हिना (5180), साजन (5116), हम (5065), और अजूबा (5018) हैं।

- **अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिका** 'द टाईम' हिंदी फिल्मों की समीक्षा कभी भूलकर भी प्रकाशित नहीं करती हैं। लेकिन इस साल, राजकपूर के आखरी सपने के रूप में निर्मित "हिना" की समीक्षा छापकर पत्रिका ने सबको चौका दिया।

- **मृणाल सेन** ऐसे प्रथम भारतीय व्यक्ति हैं, जो इन्टरनेशनल फेडरेशन ऑफ फिल्म सोसायटीज के नान-यूरोपियन अध्यक्ष निर्वाचित हुए।

- **राजीव गाँधी** पर दक्षिण अफ्रीका निवासी आनंद सिंह एक फिल्म निर्मित करने जा रहे हैं।

- **सिनेमा** अध्ययन पर दो वर्षीय मास्टर डिग्री कोर्स अकादमी के तौर पर जाधवपुर विश्वविद्यालय आगामी सत्र (1 जुलाई, 1992) से प्रारंभ कर रहा है. इसी तरह हिंदी फिल्म संगीत (1931-1991) की हीरक जयन्ती के अवसर पर जेवियर संचार संस्थान द्वारा फिल्म संगीत पर एक लघु पाठ्यक्रम का आयोजन किया गया।

- **मनी मेघालई श्रीलेखा** 12 वर्षीय बालिका ने एक तेलुगु फिल्म के लिए मद्रास में 14.12.91 को एक गीत रिकार्ड कर विश्व में सबसे छोटी प्रथम संगीत निर्देशिका होने का गौरव प्राप्त किया। इसके पूर्व वह 175 फिल्मों में संगीत सहयोग कर चुकी हैं।

- **28 दिसम्बर 91** को फिलमकार **फणी मजूमदार** ने हीरक जयंती वर्ष मनाया। न्यू थिएटर्स कलकत्ता से सम्बद्ध होने से साइन सोसायटी बम्बई ने पन्द्रह दिन, तक स्ट्रीट सिंगर (1930), रजत जयंती (1939), मुक्ति (1937) , डॉक्टर (1941), आंदोलन (1951), ऊँचे लोग व आकाशदीप (1965) फिल्मों के प्रदर्शन आयोजित किए।

- **1991** में जितने नए चेहरों ने प्रवेश कर सुनहरे परदे को दमकाया, उतना पिछले 9 दशकों में कभी नहीं हुआ। 14 नायक व 28 नायिकाओं नें फिल्मी प्रवेश लेकर अपनी किस्मत चमकाई है।
- एक नई तकनीक का विकास एक प्रक्रिया के द्वारा अब विडियो फिल्म को 35 एम.एम. फिल्म परिवर्तित किया जा सकता है।

स्मृति शेष

जनवरी

6. दक्षिण भारत के मशहूर फिल्म निर्देशक एवं ट्रिक फोटोग्राफर रवि नगाईच (52)का निधन धारावाहिक रामायण, फिल्म द ट्रेन, फर्ज व रानी और लालपरी में उनकी प्रमुख कृतियां हैं।

10. नागपंचमी, नाग देवता तथा नागचंपा जैसी फिल्मों के निर्माता निर्देशक विनोद देसाई (62) का बम्बई में निधन।

10 स्वतंत्रता-संग्राम सेनानी, निर्देशक तथा अपने समय के सफल कॉमेडियन मिर्जा मुशर्रफ (85)। इनकी प्रथम फिल्म "कजाक की लड़की" थी व अंतिम "अंजाम खुदा जाने"। आपने 300 से अधिक फिल्मों में काम किया।

14. चार दशकों में पचास से अधिक फिल्मों में छाए रहे फिल्म संगीतकार चित्रगुप्त (73) का निधन। भाभी के मशहूर गीत "चली चली रे पतंग मेरी चली रे" के साथ 'बूट-पॉलिश, मैं चुप रहूँगी, व परदेशी विशेष फिल्में। आनन्द-मिलिन्द दो बेटे आज के सफल संगीतकार हैं।

24. मलयालम फिल्मों के लेखक व निर्देशक पी. पद्मराजन (46) का कोझीकोडे में निधन।

27. प्रकाश पिक्चर्स फिल्म कंपनी से सम्बद्ध 100 से अधिक फिल्मों के ध्वनि रिकार्डर ('नरसी भगत','भरत मिलाप', 'राम राज्य' व 'गूँज उठी शहनाई) लाभुभाई भट्ट (75) का बम्बई में निधन।

30. सत्यजित राय के सहायक रहे, व जेमिनी के लिए गुजराती सफल फिल्म "घरे घरे माटीना चुल" के निर्देशक दयाभाई भक्त (56) का बम्बई में निधन।

फरवरी

1. बी. एन शर्मा, (72) बाम्बे साउंड सर्विस से सम्बद्ध अनुभवी प्रमुख साऊंड रिकार्डिस्ट का बम्बई में निधन।

15. मेहबूब फिल्म्स की 'अमर' व 'मदर इंडिया' के ध्वनि अंकन को श्रेष्ठ फिल्म फेयर अवार्ड से सम्मानित, साऊंड रिकार्डिस्ट कौशिक ढोलाभाई का निधन।

16. अपनी प्रथम कन्नड़ फिल्म 'नांदी' से राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय अवार्ड से सम्मानित कन्नड़ निर्माता निर्देशक एन लक्ष्मीनारायण (58)।

21. भारतीय सिने दर्शकों के दिलों पर अपनी सादगी तथा भावुक अभिनय की छाप छोड़ने वाली 4 दशकों से सक्रिय अभिनेत्री **नूतन समर्थ** (बहल) (52) का असामायिक निधन। हमारी बेटी से रजत पट पर आई। मुजरिम हाजिर धारावाहिक से दूरदर्शकों को नूतन जी ने बहुत प्रभावित किया। पाँच बार फिल्म फेअर पुरस्कार से सम्मानित हुईं।

25. "पापा कोसम"व 'रंगुला रत्नम्' से चर्चित एवं 400 तेलुगू फिल्मों में चरित्र अभिनय अंजाम देने वाले चरित्र अभिनेता **पी. त्यागराजु** (51) का हैदराबाद में निधन।

मार्च 'मैं खिलौना नहीं' "मैं आजाद हूं" व धारावाहिक 'अदालत' के कलाकार शक्ति शर्मा (बंटी) का बम्बई में निधन।

16. दक्षिण भारत के सत्यजित राय समझे जानेवाले मलयालम फिल्मकार जी. अरविन्दन (55)। अपने 17 वर्ष के कार्यकाल में अरविन्दन अनेक राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित हुए। 'उत्तरायणम्', 'कांचन सीता', 'कुम्मट्टी', 'पोक्कुइबिल', 'चिदम्बरम्' और 'वास्तुहरा' आपकी प्रमुख फिल्में हैं।

16. ज्योति स्वरूप, प्रमुख लेखक निर्देशक 1959 में 'संतान'/'पड़ोसन'/'मियाँ बीबी राजी',/बिन बादल बरसात के साथ दूरदर्शन के लिए 'आ बैल मुझे मार, 'सुनहरे सपने, बसेरा व मौसी धारावाहिक का निर्देशन

अप्रैल

2. पंजाबी फिल्म कलाकार **जगतार पहलवान** का बम्बई में अवसान। इनकी प्रमुख पंजाबी फिल्में 'कुड़मई','शरीका', 'अंगरेजन' व 'जत्ती जमई सुखमई' है।

26. तमिल फिल्मों के मशहूर संगीतकार आर. सुदर्शनम् का मद्रास में निधन (78)

27. **प्रबोध जोशी** (63) प्रसिद्ध गुजराती लेखक व नाट्यकार। नाटक 'पट्टानी जोड़' व 'कदम मिला के चलो' बहुत चर्चित रहे। 'हरे काँच की चूड़ियाँ"/"उस रात के बाद" (हिन्दी)/"रमत रमाड़े राम"/"कालपी" "खोला नो खुन्दार", "आनंद मंगल" गुजराती की कहानी लिखी।

मई

1. **बाबूराव पोद्दार** (72) अनुभवी कला निर्देशक/40 वर्ष से अधिक समय तक/फिल्मों को कला निर्देशन/अलीबाबा चालीस चोर के लिए सम्मानित/रामपुर का लक्ष्मण/परवरिश/अदालत/लोहा/घर हो तो ऐसा/ दूध का कर्ज प्रमुख फिल्में।

14. मराठी फिल्म निर्माता **विनायक राव** सारस्वत, (72)। संत निवृत्ति/नामदेव/गोरा कुम्हार/चांदोवा सभी मराठी फिल्मों का निर्माण।

19. सौ फिल्मों में चरित्र अभिनेता की भूमिका व लेखन कार्य सम्पादन करने वाले **एस.एन. बनर्जी** (88) का बम्बई में निधन। कारदार प्रोडक्शन से सम्बद्ध रहें। प्रमुख फिल्में 'दास्तान'/चौदहवीं का चाँद/आशीर्वाद/पैगाम/खूबसूरत।

29. शशांक लालचंद (48) पूना साउड रिकार्डिस्ट।

जून

4. **राज कटारिया** (50)। भोजपुरी सफल फिल्म "भैय्या दूज" के निर्माता।

9. **राज खोसला** (66)। स्थापित फिल्मकार। गुरुदत्त जैसे फिल्मकार के सहयोगी के रूप में अपने कैरियर की शुरूआत मिलाप/सी.आय.डी./काला पानी/दो बदन/मेरा साया/वो कौन थी/दो रास्ते/मेरा गाँव मेरा देश/ मैं तुलसी तेरे आँगन की राज खोसला की चर्चित फिल्में।

17. **हाजी कासम** स्टंट कलाकार सेवन आटर्स की हमला फिल्म के शूटिंग के दौरान असामयिक निधन। आप स्टंट (द्वन्द) विशेषज्ञ थे।

21. स्टंट कलाकार और फाइट कम्पोजर **माणेक इरानी** (बम्बई)। हमेशा हँसी मजाक करने वाले माणेक इरानी की फिल्में हम, मि. नटवर लाल, कोबरा, जोशीले और कालीचरण।

23. फिल्म फोटोग्राफर और पत्रकार राम ओरंगाबादकर (75) (बम्बई)। मीना कुमारी, नरगिस, मधुबाला, जैसी तारिकाओं के अंतरंग मित्र।

जुलाई

2 उन सत्तर वर्षीय फिल्म फोटोग्राफर - **प्रकाश मल्होत्रा**। चालीस के दशक में पंचोली प्रोडक्शन के साथ शुरूवात (खानदान) की। प्रमुख फिल्में आरसी/शुक्रिया/बरसात की एक रात/संगदिल/फरिशता/मेमसाहब/हमारा देश।

6. **अकबर बालम** फिल्म फोटोग्राफर (43)। नरीमन इराणी के सहयोगी के रूप में काम की शुरूआत। स्वतंत्र हैसियत से 'घर हो तो ऐसा/ बड़ी बहन/घर की इज्जत/ नसीबवाला का छायांकन। विज्ञापन फिल्मों के अग्रणी 'ये जो हैं जिन्दगी' दूरदर्शन धारावाहिक के निर्माता एस.एस. ओबेरॉय (57)

अगस्त

27. चंडीगढ़ के व्यापारी डी.के. चावला (43)। 'अपना देश पराए लोग' फिल्म निर्माण से बम्बई फिल्मी दुनिया में प्रवेश। फिल्म 'साहिबाँ' अंतिम कृति।

सितम्बर

5. हिन्दी के प्रसिद्ध व्यंगकार और अनेक फिल्मों के संवाद लेखक शरद जोशी (60)। 'दिल है कि मानता नहीं' के लेखक। 'ये जो है जिन्दगी, दाने अनार के, ये दुनिया गजब की शरद भाई के लोकप्रिय धारावाहिक हैं।

8. बय्यालीस वर्ष की आयु में अपनी प्रथम गुजराती फिल्म 'पर्सी' बनाकर **परवेज मेरवानजी** ने राष्ट्रीय पुरस्कार पाया था। इससे पहले कई विज्ञान की लघु व वृत्त चित्र बनाई।

8. अपने छोटे भाई के साथ विष्णु-देवा के फिल्म निर्माता शाकिर नुरानी (40) का बम्बई में निधन।

9. बी.पी. सिन्हा (79) बम्बई चालीस व पचास के दशक में कलकत्ता में इरान की एक रात न दो बातें तथा बम्बई में 'राही बदल गए' फिल्मों का निर्माण।

22. अनुभरी फिल्म अभिनेत्री व निर्देशिका **दुर्गा खोटे** (86)। 27 वर्ष की उम्र में (1932) फरेबी जाल फिल्म के माध्यम से सभ्रांत घराने की इस बहू ने प्रवेश लेकर 300 से अधिक फिल्मों में वैविध्य भूमिकाएं की। मुगले आजम/दादी माँ और बिदाई (फिल्म फेअर पुरस्कार) में इनकी उत्कृष्ट भूमिकाएं। कर्ज इनकी अंतिम फिल्म।

अक्टोबर

2. प्रसिद्ध फिल्म निर्माता **हितेन चौधरी**(79)। मिलन आरजू व बिराज बहू का निर्माण। बिमल राय प्रोडक्शनस के कार्यकारी निर्माता। 40 के दशक की संस्था बाम्बे टाकीज में कार्यरत रहे।

3. इन्दौर के अभिनेता **किशोरी लाल** आप पत्रकार भी थे। खूनी रात तथा कौन आपकी प्रमुख फिल्में रहीं।

10. प्रदीप एस.पाई (47) बम्बई। कैमरा मेन के रूप में फिल्म्स डिवीजन में कैरियर की शुरूआत। स्वतंत्र रुप से भोजपुरी/गुजराती व हिन्दी फिल्मों में छायांकन किया। फिल्म लंबू दादा के निर्माण में सहयोग।

24. उर्दू की मशहूर लेखिका **इस्मत चुगताई** (80)। बारह फिल्मों की पटकथा आपने लिखी। अपने निर्माता निर्देशक पति शाहिद लतीफ का भरपूर सहयोग लिया। जुनून फिल्म में आपने अभिनय भी किया और गरम हवा फिल्म की सर्वश्रेष्ट कथा के लिए राष्ट्रपति का स्वर्ण पदक भी पाया।

नवम्बर

1 संगीतकार अरुण पौडवाल (50)। पाश्र्व गायिका अनुराधा पौडवाल के पति। मराठी चित्रों में अनिल मोहिले की संगत के संगीत दिया। प्रथम फिल्म "गांव मोठा लक्षण खोटा" तथा कलावन्त विकणे आहे स्वतंत्र रूप से हिन्दी फिल्म 'मीरा का मोहन' के संगीत निर्देशक।

13. धीरेश घोष (73) निर्देशक एवं प्रोफेसर पूर्व फिल्म एवं टेलीविजन संस्थान पूना। आपने केवल हिन्दी व बंगाली में फिल्मों का निर्देशन। ही नहीं किया वरन् द्वितीय महायुद्ध के दौरान सिंगापुर में 95 मलेशियन फिल्में भी निर्देशित की।

21. दलजीत पुरी - (65)। निर्देशक अभिनेता। सत्यपुरी के पिता व पुनीत इस्सर के ससुर।

दिसम्बर

22. वी.एन. रेड्डी (77) फोटोग्राफर। फिल्म 'वसंत - सेना' में हरदीप के साथ काम की शुरूआत की। अंतिम फिल्म जमीन आसमान थी।

अलंकरण - सम्मान

दिलीप कुमार -	(अभिनेता)	: पद्म भूषण
श्याम बेनेगल	(निर्देशक)	: पद्म भूषण
अमला शंकर :	(नर्तकी)	: पद्मभूषण
पंडित शिवकुमार शर्मा:	(संतूर वादक)	: पद्म श्री
विजय तेन्दुलकर -	(कथा लेखक)	: पद्म श्री

ऑस्कर पुरस्कार

- *सत्यजित राय (फिल्मकार) विशेष ऑस्कर पुरस्कार*

राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार

- *'मरुपक्कम' (तमिल), सर्वोत्तम फिल्म एवं पटकथा : स्वर्ण कमल*
- *'घायल' (हिन्दी) (लोकप्रिय स्वस्थ मनोरंजनार्थ सर्वोत्तम कथा चित्र) स्वर्ण कमल*
- *'एक डाक्टर की मौत' (हिन्दी) द्वितीय सर्वोत्तम फिल्म एवं निर्देशन: रजत कमल*
- *'पेरुमथच्चन' (मलयालम) निर्देशक प्रथम कथा चित्र तथा छायांकन : स्वर्ण कमल*
- *'ओरू वीडू इरु वासल' (तमिल) सामाजिक विषय पर सर्वोत्तम कथा चित्र : रजत कमल*
- *'अग्नि पथ' (हिन्दी) श्रेष्ठ अभिनेता : अमिताभ बच्चन*
- *'कर्तव्यम्' (तेलुगु) श्रेष्ठ अभिनेत्री : विजया शांति*
- *हिज हायनेस अब्दुल्ला सर्वोत्तम सहायक अभिनेता: (नेडुमुडी वेणु)*
- *मलयालम सर्वोत्तम पाश्र्व गायक (एम. जी. श्रीकुमार)*
- *'अमारम' (मलयालम) सर्वोत्तम सहायक अभिनेत्री : ललिता*
- *'अंजलि' (मलयालम) श्रेष्ठ बाल कलाकार : श्रुति, शामली और तरूण*
- *'लेकिन' (हिन्दी) श्रेष्ठ पाश्र्व गायिका: लता मंगेशकर*

  संगीत निर्देशन : (हृदयनाथ मंगेशकर)

  गीतकार : गुलजार

  कला निर्देशन : नितिश रॉय

  वस्त्र विन्यास : भानु अथैय्या
- *दृष्टि (हिन्दी) सर्वोत्तम कथा चित्र :*

- हिंदी सिनेमा का इतिहास सर्वोत्तम पुस्तक : (मनमोहन चड्डा)
- श्रेष्ठ फिल्म समीक्षक : (शोमा ए चटर्जी

दादा साहब फालके अवार्ड 1991

- ए नागेश्वर राव (66) फिल्मकार एवं सफल अभिनेता। अपने 50 वर्ष के फिल्मी जीवन में 225 से अधिक फिल्मों में काम। पूर्व में पद्मश्री व पद्मभूषण से विभूषित। नट सम्राट अवार्ड भी अर्जित। हैदराबाद में भारत के सर्वसुविधायुक्त अन्नपूर्णा स्टुडियो का स्वामित्व

मान-सम्मान

- **लता मंगेशकर**, बी.आर चोपडा, अनिल कपूर को सिटीजन क्लब देहली द्वारा 'नेशनल सिटीजन अवार्ड 1989।
- **लता मंगेशकर** : पुणे विश्वविद्यालय द्वारा मानद् डी. लिट
- **कैफी आजमी** उर्दू कवि व गीतकार को गालिब संस्थान द्वारा गालिब अवार्ड
- **शबाना आजमी** :फिल्मों तथा उसके बाहर अपनी विशिष्ट उपलब्धियों व सेवा के लिए 'महिला शिरोमणि अवार्ड'।
- **उत्पल दत्त, नसीरूद्दीन शाह, भक्ति बर्वे इनामदार** को संगीत नाटक अकादमी (देहली) द्वारा अवार्ड 1990
- **भानुप्रिया, गुलशन कुमार** को सिटीजन क्लब देहली द्वारा 'नेशनल सिटीजन अवार्ड 1990।
- **अशोक कुमार, दिलीप कुमार, होमी वाडिया, जी.पी. सिप्पी, स्व.राजकपूर** इन फिल्मकारों को फिल्मोद्योग की बेहतरी के लिए की गई सेवाओं के प्रति 'इम्पा' ने ट्राफीज से सम्मानित किया।
- **सत्यजित राय** 'आंगन्तुक' फिल्म के लिए 'फिप्रक्सी' का वर्ल्ड क्रिटीक अवार्ड। वेनिस अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह।
- **मीरा नायर** 'मिसीसिप्पी मसाला' फिल्म की श्रेष्ठ पटकथा के लिए वेनिस अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह में सम्मान
- **लता मंगेशकर** 'लेकिन' को अधिकतम शास्त्रीय गीतों के लिए विशेष सुर-सिंगार संसद अवार्ड।
- **कल्याणजी-आनंदजी**: लोक श्री (भारतीय आर्थिक अध्ययन संस्थान देहली) द्वारा अवार्ड ऑफ एक्सलेंस फार पीपुल"
- **सुनील दत्त**: राजीव गाँधी स्मृति एक्सलेंस अवार्ड (शिरोमणि संस्थान देहली) कला भूषण इंदिरा गाँधी स्मृति पुरस्कार 1991
- **शम्मी कपूर**: कला रत्न (पंजाबी कला संगम)
- **विक्रम राजदान**: (राजीव गाँधी स्मृति अवार्ड)
- **कानन देवी** : इंदिरा गाँधी स्मृति पुरस्कार 1991।
- **सई परांजपे** कान अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह में "दिशा" फिल्म को विशेष जुरी अवार्ड
- **भालजी पेंढारकर**: 'चित्र भूषण अवार्ड'। (व्ही. शान्ताराम पुत्र प्रभात कुमार द्वारा स्थापित)

☐ **प्रस्तुति पी. आर. जोशी**

विषयवार विभाजनः
1991 में सेंसर बोर्ड द्वारा प्रमाणित फिल्म

श्रेणी	भारतीय	विदेशी	योग
सामाजिक	730	43	773
अपराध	108	28	136
फेंटेसी	13	9	22
हॉरर	14	1	15
कॉमेडी	2	8	10
एक्शन/रोमांच	-	9	9
बाल फिल्म	8	-	8
भक्ति पूर्ण	7	-	7
पौराणिक	6	-	6
राजनीतिक	6	-	6
एक्शन	-	5	5
आत्मकथात्मक	4	-	4
वैज्ञानिक	-	4	4
साहस गाथा	-	3	3
सामाजिक अपराध	2	-	2
सामाजिक कॉमेडी	1	1	2
सामाजिक बाल फिल्म	2	-	2
सामाजिक फेंटेसी	1	-	1
रहस्य	1	-	1
रोमांच	-	1	1
रोमांच/अपराध	-	1	1
अपराध/राजनीतिक	-	1	1
एक्शन/अपराध	-	1	1
फेंटेसी/कॉमेडी	-	1	1
कॉमेडी/सेक्स	-	1	1
महापुरुष	-	1	1
व्यंग्य	-	1	1
साहस/खेल	-	1	1
अन्य	5	4	9
महायोग	**910**	**124**	**1034**

1991 में फिल्म सेंसर बोर्ड द्वारा प्रमाणित
कथा फिल्में : क्षेत्रवार तथा भाषावार विभाजन

भाषा	बम्बई	कलकत्ता	मद्रास	बैंगलौर	त्रिवेन्द्रम	हैदराबाद	कटक	कुल
हिंदी	134	4	48	5	11	13	-	215
तमिल	4	-	136	10	3	33	-	186
तेलुगू	2	-	55	9	5	103	-	174
मलयालम	-	-	55	3	36	-	-	94
कन्नड़	-	-	2	89	-	-	-	91
बंगाली	6	44	-	-	-	-	1	51
मराठी	29	-	-	-	-	-	-	29
गुजराती	16	-	-	-	-	-	-	16
उड़िया	3	5	-	-	-	-	3	11
असमी	-	9	-	-	-	-	-	9
पंजाबी	9	-	-	-	-	-	-	9
भोजपुरी	5	3	-	-	-	-	-	8
नेपाली	8	-	-	-	-	-	-	8
राजस्थानी	5	-	-	-	-	-	-	5
अंग्रेजी	-	-	-	-	-	1	-	1
मणिपुरी	1	-	-	-	-	-	-	1
हरियाणवी	1	-	-	-	-	-	-	1
नगामीस	1	-	-	-	-	-	-	1
कुल	**224**	**65**	**296**	**116**	**55**	**150**	**4**	**910**

केवल बंगाली में 4 फिल्में श्वेत - श्याम में बनी हैं । शेष 906 रंगीन हैं।

दिल्ली में एक भी फिल्म प्रमाणित नहीं हुई।

1991 में फिल्म सेंसर बोर्ड द्वारा प्रमाणित फिल्में फिल्मों के प्रकार

प्रकार	संख्या	वीडियो फिल्में	योग
भारतीय कथा फिल्में	910	30	940
विदेशी कथा फिल्में	124	5	129
भारतीय लघु फिल्में	1112	426	1538
विदेशी लघु फिल्में	211	704	915
भारतीय दीर्घ फिल्में (वृत्त चित्र)	06	165	171
विदेशी दीर्घ फिल्में (वृत्त चित्र)	NL	75	75
योग	**2363**	**1405**	**3768.**

1991 में सेंसर बोर्ड द्वारा प्रमाणित फिल्में प्रमाणपत्र श्रेणियाँ

प्रकार	यू	यूए	ए	एस	योग
भारतीय कथा फिल्में	615	94	201	-	910
विदेशी कथा फिल्में	40	10	74	-	124
भारतीय लघु फिल्में	1088	7	17	-	1112
विदेशी लघु फिल्में	187	-	23	1	211
भारतीय दीर्घ फिल्में	6	-	-	-	6
योग	**1936**	**111**	**315**	**1**	**2363**

सेंसर बोर्ड द्वारा प्रमाणित वीडियो फिल्में (1991)

प्रकार	यू	यूए	ए	एस	योग
भारतीय कथा फिल्में	25	2	3	-	30
विदेशी कथा फिल्में	3	-	2	-	5
भारतीय लघु फिल्में	415	1	10	-	426
विदेशी लघु फिल्में	696	1	-	7	704
भारतीय दीर्घ फिल्में	159	4	2	-	165
विदेशी दीर्घ फिल्में	75	-	-	-	75
योग	**1373**	**8**	**17**	**7**	**1405**

☐ **प्रस्तुति : आदर्श गर्ग**

सेंसर बोर्ड द्वारा प्रमाणित देशी - विदेशी कथा फिल्मों का श्रेणीवार विवरण 1991

वर्ग	भारतीय	विदेशी	योग
यू (बगैर काट छांट)	361	21	382
यू (कांट छांट सहित)	254	19	273
योग	**615**	**40**	**655**
यू.ए	43	6	49
यू.ए (कटी हुई)	51	4	55
योग	**94**	**10**	**104**
ए	73	17	90
ए (कटी हुई)	128	57	185
योग	**201**	**74**	**275**
***कुल योग**	**910**	**124**	**1034**

1989-90 में निर्मित कथा फिल्मों का भाषावार विभाजन

भाषा	1989	1990
तेलुगू	152	204
हिंदी	176	200
तमिल	148	194
मलयालम	96	126
कन्नड़	75	81
गुजराती	9	14
बंगाली	50	50
मराठी	30	25
पंजाबी	2	7
उड़िया	13	13
भोजपुरी	10	5
राजस्थानी	7	5
असमी	4	8
मणिपुरी	-	2
नेपाली	1	4
हरियाणवी	3	2
अंग्रेजी	3	4
तुलू	1	1
गढ़वाली	-	1
बोडो	-	1
अन्य	1	1
कुल	**781**	**948**

1931 से 1990 तक दक्षिण भारत में प्रदर्शित फिल्मों की तालिका

भाषा	1931 से 1984 तक	1985	1986	1987	1988	1989	1990	1931 से 1990 (कुल योग)
तमिल	2875	166	155	143	132	130	176	3772
तेलुगू	2478	177	163	141	134	147	165	3405
कन्नड़	987	65	57	60	59	69	66	1363
मलयालम	1570	124	114	95	76	81	86	2146
हिंदी	395	39	37	48	51	42	67	679
बडुका	2	-	-	-	-	-	-	2
बंगाली	5	-	-	-	-	-	-	5
कुर्गी	2	-	-	-	-	-	-	2
गुजराती	2	-	-	-	-	-	1	3
कोकणी	6	1	-	-	-	-	-	7
मालवी	1	-	-	-	-	-	-	1
मराठी	2	-	-	-	1	-	-	3
संस्कृत	-	1	-	-	-	-	-	1
तुलु	20	-	-	1	1	-	1	23
सिंहलीज	38	-	-	-	-	-	-	38
अंग्रेजी	4	-	-	-	1	-	-	5
	8387	573	521	488	455	469	562	11455

सन् 1931 से 1990 तक दक्षिण भारत में प्रदर्शित कुल फिल्मों की संख्या 11455

सेंसर्ड लेकिन अप्रदर्शित;

मूल	463
डब	200
कुल	12,118

☐ **प्रस्तुति :शशि शर्मा**

भारत में सिनेमाघरों की स्थिति : 31 मार्च 1991

राज्यों के नाम	1988 - 89	1989-90	1990-91			
	कुल	कुल	स्थायी	चलित (टूरिंग)	मिलिट्री	कुल
1. आंध्र प्रदेश	2558	2612	1813	797	5	2615
2. अरुणाचल प्रदेश	3	3	3	-	-	3
3. असम	220	209	139	84	-	223
4. बिहार	370	348	296	98	-	394
5. गुजरात	553	523	452	72	-	524
6. हरियाणा	114	109	100	-	-	100
7. हिमाचल प्रदेश	20	16	13	1	1	15
8. जम्मू काश्मीर	31	29	24	-	-	24
9. कर्नाटक	1272	1253	676	571	-	1247
10. केरल	1393	1396	472	907	-	1379
11. मध्यप्रदेश	518	483	389	87	-	476
12. महाराष्ट्र	1328	1259	755	479	2	1236
13. मणिपुर	14	14	13	2	-	15
14. मेघालय	10	10	9	1	-	10
15. मिजोरम	2	2	2	-	-	2
16. नागालैंड	7	7	7	-	-	7
17. उड़ीसा	207	196	128	56	-	184
18. पंजाब	172	162	150	6	4	160
19. राजस्थान	258	258	220	31	-	251
20. सिक्किम	2	2	2	-	-	2
21. तमिलनाडु	2370	2431	1582	861	4	2447
22. त्रिपुरा	8	8	8	-	-	8
23. उत्तर प्रदेश	1006	957	946	81	-	1027
24. पश्चिम बंगाल	745	692	469	200	-	669
25. गोआ	31	30	27	-	-	27
संघ शासित क्षेत्र						
1. अंडमान, निकोबार	3	3	3	-	-	3
2. एपी. ओ.	3	2	-	-	2	2
3. चंडीगढ़	8	8	8	-	-	8
4 दादरा, नगर हवेली	2	2	2	-	-	2
5. दिल्ली	75	75	73	-	-	73
6. पांडिचेरी	52	52	39	9	-	48
कुल	**13355**	**13151**	**8820**	**4343**	**18**	**13181**

☐ प्रस्तुतिः शशि शर्मा

मध्यप्रदेश : एक नजर में

कुल सिनेमाघर	: 438
सी.आय. के 27 जिलों में सिनेमाघर	: 237
सी.पी. के 18 जिलों में सिनेमाघर	: 201
टूरिंग सिनेमाघर	: 116 (सी. आय. -79 तथा सी.पी. -37)
कुल मिलिट्री सिनेमाघर	: 10 (सी.आय. - 5 तथा सी.पी. - 5)
मध्यप्रदेश का क्षेत्रफल	: 4, 43, 446 वर्ग मील
मध्यप्रदेश की जनसंख्या	: 6, 61, 35, 862 (1991 के अनुसार)
कुल शहर	: 327
कुल गाँव	: 76,203
कुल जिले	: 45 संभाग : 12

मध्यप्रदेश : जिलावार सिनेमा घर

(सी.पी. सरकिट)

जिला एवं जनसंख्या	नगर/कस्बा	सिनेमाघर
1. **खंडवा** 14,32,855	खंडवा	अशोक
		अंजलि
		अभिषेक
		त्रियुग
	बुरहानपुर	
		किशोर
		चित्रमंदिर
		भारत
		चित्रा
		न्यू प्रकाश
		पारस
		कमल चित्र
		शंकर चित्र
	बीड़	मनोज
	नेपा नगर	पद्मा
छिंदवाड़ा 9,99,762	छिंदवाड़ा	राज
		अलकाचित्र
		शाला
		पाटनी पिक्चर
		पैलेस
		पंकज
		श्रेयांस
	सौंसर	सरस्वती
	चाँदामेटा	
		जयभारत
	जुन्नारदेव	अमर
	पांढुर्ना	सरगम
	परासिया	श्याम
जबलपुर 77,84,523	जबलपुर	श्याम
		ज्योति
		कल्पना
		श्रीकृष्ण
		आनंद
		विनीत

		डीलक्स
		जयंती
		वंदना
		प्रभु
		पंचशील
		एम्पायर
		डिलाइट
		श्रीशारदा
	कटनी	मोहन
		गजानन
		सिल्वर
		श्रीटॉकीज
		नीरज
		श्रीशंभु
	पनागर	नवीन ज्योति
	सिहौरा	नारायण
	कैमोर	श्रीप्रताप
दमोह 8,79,544	दमोह	मोहन
		जगदीश
		बहराम
	हटा	श्री दुर्गेश
दुर्ग 23,98,497	दुर्ग	प्रभात
		शरद
		अप्सरा
		तरूण

	नंदिनी	नंदिनी
	बालोद	श्रीगणेश
		विजया
	बमतरा	रतन
	चरोड़ा	सत्यम्
	चिखलासा	महावीर
	खमरिया	मीरा
	भिलाई	चित्रमंदिर
		उत्तम
		रशियन
		विजया
		सपना
		वेंकेटेश्वर
		मौर्य
		नेहरू हाउस
		न्यूबसन्त
		चन्द्रा
		गीत
नरसिंहपुर 12,91,313	नरसिंहपुर	सतीश
		श्याम सेवक
		श्यामानंद
		हरिहर
	गाडरवाड़ा	
		नरसिंह मंदिर
		अलका
	गोटे गाँव	अशोक/ पूनम

	करेली	श्याम
	केओलारी	नरसिंह मंदिर
बस्तर 22,70, 472	बस्तर	झकांर
	जगदलपुर	अनुपम
		न्यू नरेन्द्र
		नरेन्द्र
	काँकेर	महावीर
	कोंडागाँव	किशोर
	हेटामेटा	राज
	भानुप्रताप पुर	वनश्री
	चरोमा	विक्रांत
	पंडरिया	भगवती
बालाघाट 20,82,930	बालाघाट	जयहिंद
		मयूर
		श्याम
	बैहर	जयहिंद
	लालवर्रा	मधुसूदन
	लांजी	कमल
	बारासिवनी	धनेंद्र / सविता
	कटंगी	श्रीकृष्ण / कैलाश
	तिरोड़ी	आनंद / भावना
बिलासपुर 17,24,420	बिलासपुर	प्रताप
		बिहारी
		मनोहर
		सत्यम
		शिवा
		गंगाश्री
		लक्ष्मी
		श्याम
		सिद्धार्थ
		जीत
	वालोदा	दुर्गा
	बनाकी मगरे	सरोज
	बाराद्वार	बजरंग
	जाँजगीर	शारदा
	कोरबा	श्रीबजरंग
		नीहारिका
	कटघोरा	मीरा
	कुली पोला (जाँजगीर)	शारदा मंदिर
	लोरमी	नरेन्द्र
	मुंगेली	राधाकृष्ण
		कमल
	पेन्ड्रारोड	दुर्गेश
		नाज सिनेमा
		पूजा श्री
	रतनपुर	श्री गणेश
	सकती	रघुवीर
		गोपाल
		श्री संतोष
	तखतपुर	श्री गोपाल
	झाराण्डली	आशा
	अकलतरा	शारदा / रचना
		अनुराग
		सुदर्शन
	करघी रोड	श्याम

	नैला	गणेश
	चांपा	रूपबानी
	चकरभाटा	बसंत
	बाल्को नगर	विकास
बैतूल 12,85,970	बैतूल	ज्योति
		प्रभात
		कांति /शिवा
	आमला	मंजू
	सारणी	मयूर
	मुल्ताई	अलका /अशोक
मंडला 15,63,332	मंडला	सुदर्शन
	नैनपुर	मयूर
राजनांदगाँव 23,98,497	राजनांदगाँव	श्री कमल
		छाया
		श्रीराम
		दुर्गा
	डोंगरगाँव	श्री बालाजी
	कवर्धा	भुवनेश्री
	खैरागढ़	गायत्री
	सरायपल्ली	अलंकार
रायगढ़ 14,39,524	रायगढ़	रामनिवास
		गोपी
	जशपुर नगर	संजय

	कांकुरी	शिवगंगा
	खरसिया	सवारी
		अर्चना
	पाथलगाँव	महावीर
	राजिम	श्रीकृष्ण
	सारंगढ़	गणेश
रायपुर 39,02,609	रायपुर	अमरदीप
		बाबूलाल
		आनंद
		श्याम
		सम्राट
		राज
		प्रभात
	आरंग	अग्रवाल
	महासमुंद	श्री विठोबा
		श्रीराम
	नवापारा	राजिम / अपर्णा
	धमतरी	विमल
		देवश्री
		अमर
		थिएटर प्रशांत
	भाटापारा	विष्णु
	मुकुट	
	बालोदा बाजार	आनंद
	गरियावंद	किरण
	पिथोरा	सतीश
	सिमगा	वर्धमान
	संजर बालोद	गणेश
	तिल्दा	न्यू राज

सरगुजा 37,96,553	विश्रामपुर	ज्योति
		लाजवन्ती
	चिरिमिरी	अरूणा
		राजेन्द्र
	मनेंद्रगढ़	केड़िया
	अंबिकापुर	बसंत
		जैसवाल
सागर 16,46,198	सागर	मनोहर
		अमर
		अप्सरा
		विजय
		अलंकार
	बीना	प्रभात
		भारत
		शिवा
	गढाकोटा	श्री गणेश
	खुरई	हेमंत
		नटराज
	कैवलरी हिल्स	एम.जी. सिनेमा
	रेहली	कल्पना
सिवनी 13,62,737	सिवनी	अशोक
		योगिराज
		अमर
		श्री महावीर
	देवरी सुभाष	लक्ष्मी
	लखनादौन	श्री लक्ष्मी

होशंगाबाद 2,645,232	होशंगाबाद	महावीर
		मीनाक्षी
		बसंत
	बावई	उर्वशी
	हरदा	श्री नारायण प्रताप
	इटारसी	जनता
		राज
		पृथ्वीराज
		भारत
		विश्वनाथ
		मृत्युंजय सिनेमा
	खिरकिया	गुप्ता
	पचमढ़ी	प्रदीप
	पिपरिया	श्याम सेवक
		अलका
		पद्मश्री
	सिवनी मालवा	गीता
	टिमरनी	श्री कृष्ण
	सोहागपुर	भारत

सी. आय. सरकिट

जिला एवं जनसंख्या	नगर/कस्बा	सिनेमाघर
इंदौर 18,30,870	इंदौर	अलका
		अनूप
		ज्योति

			कस्तूर
			कुसुम
			स्मृति
			अभिनयश्री
			अजंता
			अमूलश्री
			चन्द्रगुप्त
			एलोरा
			श्रीकृष्णा
			महाराजा
			नवीन चित्रा
			नीलकमल
			प्रेमसुख
			सपना
			संगीता
			सत्यम्
			स्टारलिट
			रीगल
		बेटमा	सम्राट
		देपालपुर	श्रीमहालक्ष्मी
			भारत
		महू	ड्रीमलैण्ड
			मोहन
			महू टेरिटरी मिलिट्री
		साँवेर	जयहिन्द
उज्जैन	13,86,465	उज्जैन	अशोक
			भटवाल
			कमल
			मोहन

			मेट्रो
			नरेन्द्र
			निर्मलसागर
			प्रकाश
			रीगल
			सुन्दरम्
			स्वर्ग
			त्रिमूर्ति
		विचरोद	शंकर
		बड़नगर	नटराज
		खाचरोद	अशोक
		महिंदपुर	अप्सरा
			अशोक
		नागदा	अशोक
			दीपिका
			ग्रेसिमक्लब
			प्रकाश
		तराना	ओमप्रकाश
		माकडोन	शिवश्री/ लकीस्टार
खरगोन	20,26,317	बडूद	नीलकमल
			नवज्योति
		खरगोन	आरती
			श्रीकृष्ण
			मोहन
			रामेश्वर/जगदीश
		अंजड़	वीरेन्द्र
			अनिरूद्ध
		बमनाला	अशोक
		बालसमुद	चिराग

	बड़वाहा	ममता
		अंबर
		राज
	बड़वानी	लक्ष्मी चित्रमंदिर
		महेन्द्र
	भीकनगाँव	मोहन
		रेखा
	धरगाँव	विजया
	दवाना	नाज, श्याम
	जमालपुरा	भारत
	झिरनिया	कृष्णा
	कसरावाद	अभिषेक /न्यू निमाड़
	करीकस्बा	निमाड़ थिएटर
	कवड़िया	प्रकाश
	महेश्वर	जनता /श्री कृष्ण
	पारस	नीलकमल
	नांदरा	ओम
	पानसेमल	कृष्ण /महेश
	पीपलगाँव	अजय
	राजपुर	राजहंस
		इमरती
	रूपखेड़ा	
	सनावद	नीलकमल
		अफजल
	सेंधवा	रामेश्वर
	ठीकरी	अशोक
		ओम
ग्वालियर 14,14,948	ग्वालियर	चित्रा
		भारत

		फिल्मिस्तान
		हरि निर्मल
		काजल
		कैलाश
	बिरलानगर	अशोक/ तानसेन
	मुरार	अल्पना
		बसंत
		नाज
	डबरा	गीता
		कमल
	श्योपुरकलाँ	जीवन
		कृष्ण
	टेकनपुर	बी.एस.एफ. एकेडेमी
गुना 13,09,457	गुना	गणेश
		श्री दुर्गा
		ज्योति
		प्रकाश
		राम स्मृति
		जगत् दर्शन
	अशोक नगर	विवेक
		विनीत
	बीनागंज	मनोज
		गोपाल
	चंदेरी	वंदना /दीप
	मुँगावली	आनंद
छतरपुर 11,58,863	छतरपुर	गोवर्धन
		छत्रसाल

		महेश
	लौंड़ी	इन्द्र
झाबुआ 11,29,356	झाबुआ	कमल
	जोबट	नाखुदा
	पेटलावद	निर्मल
	थांदला	महावीर
		अलीराजपुर
टीकमगढ़ 9,40,609	टीकमगढ़	महालक्ष्मी
		शक्ति
[illegible] 3,97,743	दतिया	आनंद,
		लक्ष्मी
		शिवम्
	भांडेर	आनंद
देवास 10,32,522	देवास	अभिनय
		अंकुर
		आनंद
		नगर निवास
		महेश
	बागली	लक्ष्मी नवदुर्गा
		लक्ष्मी
	चापड़ा	राधा
	हाटपिपलिया	नयन /संजय
	होशियार खेड़ी	गरीब नवाज

	काँटाफोड़	शारदा
	कन्नौद	विजेश्वर
	खातेगाँव	शोभा किरण
	सतवास	श्याम
	सोनकच्छ	संजय
	नेवरी	आरती
	उदय नगर	अंजली
धार 13,66,628	धार	मोहन
		शेषनाग
		स्वप्निल
	अमझेरा	अंबिका
	बड़नगर	सुनील/ नौशाद
		अजंता
	गंधवानी	महेश /कृष्णा
		पंकज
	कुक्षी	सूर्य
	धरमपुरी	साईनाथ/ शक्ति
	खलघाट	आनंद
	मनावर	कृष्णा
		शिवाजी /अनिल
	राजगढ़	जयहिंद/ प्रेम रतन
	पीथमपुर	आशीर्वाद
	सिंघाना	अनुपम
	सुन्द्रैलफाटा	प्रिया
भोपाल 13,50,302	भोपाल	अल्पना
		अप्सरा
		भारत

		भोपाल
		गूँजबहादुर
		किशोर
		लिली
		लक्ष्मी
		रंगमहल
		रंभा
		राधा
		संगम
		सरगम
		संगीत
		ज्योति
	बैरागढ़	सिंधु
भिन्ड 12,14,480	भिंड	कृष्ण चित्र
		राज टाकीज
मंदसौर 15,55,481	मंदसौर	अशोक
		दयानंद
		श्रीजी
		सुचित्रा
	बोलिया	नमित
	भानपुरा	विजय /प्रकाश
	गरोठ	मारूति
	जीरन	नटराज
	जावद	प्रेम
		राज
	नीमच	खुर्शीद
		माणेक
		राजमंदिर
		सुंदरम्
		विजया
	पिपलियामंडी	अन्नपूर्णा
		अजय
	रामपुरा	कृष्णा
मुरैना 17,07,619	मुरैना	हरिराज
		कृष्णा
		मयूर
		मुरैना
		राधा
	अंबाह	महालक्ष्मी
	जावरा	रंगमहल अनिलजय
	कैलारस	विश्राम
	शैवपुरकलाँ	कृष्णा
		जीवन
	सबलगढ़	लक्ष्मी
पन्ना 6,48,721	पन्ना	गणेश
		कुमकुम
		मेनका
	अजयगढ़	अजयपाल
रतलाम 9,71,309	रतलाम	अजंता
		दर्शन
		दीपिका
		गायत्री
		किरण

		मोहन
		श्रीलोकेन्द्र
		श्रीकृष्ण
	जावरा	कंचन श्री
		शबनम
राजगढ़ 9,92,315	ब्यावरा	पुनीत
		प्रभात
		विवेक
	नरसिंहगढ़	चाणक्य
	पचोर	गगन
		कैलाश
	सारंगपुर	अशोक जीत
	तलेन	कृष्णा
	जीरापुर	कैलाश
रायसेन 8,77,369	बरेली	अलका
	बाड़ी	विजय
	बेगमगंज	अजंता
	कमटोन	राजश्री
	रायसेन	उपकार
	उदयपुरा	त्रिलोकी
	बोड़ा	सरिता
रीवा 15,50,140	रीवा	आकृति
		प्रियदर्शिनी
		पुष्पराज
		वेंकट
	मऊगंज	शंकर

विदिशा 9,71,079	विदिशा	मनोहर
		मेघदूत
	गंजबासोदा	गीता
	सिरोंज	निशात
सतना 14,62,412	नागोद	आनंद
	मैहर	कैलाश
		लव्हली
		शारदा
	सतना	चाँदनी
		ग्रीन
		कँवरराम
सीहोर 8,40,427	सीहोर	अमर
		संजय
		सीहोर
	आष्टा	मयूर
	नसरूल्लागंज	चित्रछाया
सीधी 13,71,935	सीधी	तिलक
	बैढ़न	मोहन चित्रमन्दिर
शहडोल 17,43,068	शहडोल	किरण
		राजेन्द्र
		एसी.एम.
		शंकर
	अनुपपुर	गणेश

	बुरहर	सत्यनारायण
	वीरसिंहपुर	हरिसिह
		संगीता
	धनपुरी	गुरूनानक
	कातमा	पुष्पेन्द्र
	नौरोजाबाद	कंचन गोपाल
	उमरिया	शिव
शाजापुर 10,32,520	शाजापुर	वंसी
		कृष्णा
	आगर	आनंद
		जयश्री
	बरोड़	नव ज्योति
	मक्सी	महेश
	नलखेड़ा	लक्ष्मी
	शुजालपुर	रामश्री
	सुसनेर	तारा
शिवपुरी 11,31,933	शिवपुरी	जयदुर्गे
		शिवपुरी
	करेरा	अनुपम

☐ **प्रस्तुति गोविन्द आचार्य**